प्रकाशक :

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
बापूबाजार, जयपुर ३०२००३

•

प्रथम संस्करण : १०००

•



महावीर २५००वीं जयन्ती वर्ष
दिनांक २१ मई, १९७५ ई०

•

मूल्य : ८ रु०

•

मुद्रक : जयपुर प्रिण्टर्स, जयपुर

प्रकाशकीय

हमें प्रसन्नता है कि दीर्घकाल से इस तरह का स्तवन-संग्रह प्रकाशित करने का मण्डल का विचार आज सुयोग पाकर मूर्त्त रूप ले रहा है। इस तरह का मण्डल का यह पहला प्रयास है। साधक वर्ग की विभिन्न रुचियों एवं आवश्यकताओं का इसमें पूरा-पूरा ध्यान रखा गया है।

इसके सुयोग्य सम्पादन के लिये संपादक द्वय श्री गजसिंहजी राठौड़, जैन न्यायतीर्थ एवं श्री प्रेमराजजी बोगावत के प्रति मण्डल अपना हार्दिक आभार प्रकट करता है।

ऐसे अवसर पर श्रीमान् राजमलजी सा० कोठारी की प्रेरणा, सहयोग एवं अर्थ संग्रह करने की धुन भुलाई नहीं जा सकती। मण्डल इसके लिये उनका कृतज्ञ है।

अर्थ सहयोगियों के रूप में सर्वश्री उग्रसिंहजी बोथरा, इन्द्रचन्द्रजी हीरावत, हीराचंदजी बोथरा, नथमलजी कोठारी, हेमचंदजी डागा एवं देवेन्द्र कुमारजी लूणावत की सेवाओं को भी मण्डल स्मरण किये बिना नहीं रह सकता, जिनके द्रव्य-सहयोग के बिना इतना सुन्दर प्रकाशन सम्भव नहीं था।

आशा है साधक वृन्द इससे अधिक से अधिक लाभ उठावेंगे।

सोहननाथ मोदी — अध्यक्ष

चन्द्रराज सिंघवी — मंत्री

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल

सम्पादकीय

सन् १९७३ के उत्तरार्द्ध की बात है कि चातुर्मास-काल के अनन्तर भी कारणवशात् श्रीमज्जैनाचार्य श्री हस्तिमलजी महाराज सा० के तपोनिष्ठ सुयोग्य सन्त श्री श्रीचन्दजी म० सा० का सुबोध कालेज-भवन, बापूनगर (जयपुर) में कुछ काल ठहरने का प्रसंग बना एवं तभी हमें उनके अधिक निकट सम्पर्क में आने का अवसर मिला। वे एक ऐसे कठोर तपोनिष्ठ साधक आत्मार्थी सन्त हैं, जिन्होंने वर्षों से रात्रि को लेटकर निद्रा लेने का त्याग कर रखा है। लेखन की एवं प्राचीन व नवीन स्तवनों आदि के संग्रह की ओर आपकी तीव्र रुचि है। कण्ठ एवं स्वर भी आपका सधा हुआ है। ऐसे ही उनके एक हस्त-लिखित विशाल स्तवन संग्रह को देखने का हमें अवसर मिला। संग्रह बड़ा सुन्दर लगा। इसे जन सुलभ बनाने की कुछ अग्रणी सद्गृहस्थों की प्रेरणा भी बड़ी प्रभावोत्पादक थी। बड़े विश्वास के साथ यह भार हमें सौंपने की उन्होंने इच्छा भी प्रकट की।

संग्रह बड़ा विशाल था। सारा संग्रह इसी रूप में प्रकाशित करना सम्भव नहीं था। भाषा की त्रुटियां भी थीं। अतः उन्हें शुद्ध करके एवं उनमें से काट-छांट कर पुस्तकाकार रूप देना एवं एक वैज्ञानिक क्रम से इन्हें क्रमबद्ध करना काफी कठिन, श्रमशील, एवं समय साध्य कार्य था। हमारे अपने कार्य ही इतने अधिक थे कि उनमें से समय निकालना बड़ा कठिन लग रहा था। इतना कुछ होते हुए भी संस्कारवश हम भी उनकी इस सात्विक इच्छा को टाल न सके। आन्तरिक इच्छा हमारी भी थी कि एक ऐसा संग्रह प्रकाशित किया जाय जिसमें आज तक उपलब्ध वैराग्य त्याग एवं भक्तिरस को जगाने वाले सभी प्राचीन एवं अर्वाचीन स्तवन स्तोत्रादि एक ही पुस्तक में यथा सम्भव आ जाएं एवं पुस्तक का कलेवर भी बड़ा नहीं हो, जिससे जिज्ञासु साधकों को अपनी साधना काल में, सामायिक करते समय अथवा प्रार्थना-काल में या जब

कभी भी किसी स्तवन-स्तोत्र आदि के बोलने की आन्तरिक इच्छा जगे तो एक ही सामान्य आकार वाली पुस्तक में उन्हें वह अनायास उपलब्ध हो जाय । कई प्रकार की अलग-अलग छोटी मोटी पुस्तकों एवं गुटकों को देखने एवं खोजने की आवश्यकता न रहे । इस दृष्टि से इसे एक सुयोग मान कर कई व्यावहारिक कठिनाइयों के रहते हुए भी इस कार्य के सम्पादन का भार सहर्ष हमने अपने हाथ में लिया ।

स्तवन एवं स्तोत्रादि प्रेमियों के साथ-साथ स्वाध्याय प्रेमियों के लिये भी इसे सुगम एवं उपयोगी बनाने की दृष्टि से मूल आगम शास्त्रों के वैराग्य रस से भरे पूरे अनेकों प्रकरणों में से कुछेक प्रकरण भी हमने इसमें सम्मिलित कर लिये हैं । जैसे दशवैकालिक सूत्र के प्रारम्भ के तीन अध्ययन, उत्तराध्ययन सूत्र के पांच अध्ययन (६–१३–१४–१६ एवं २०) तथा अन्य अध्ययनों की फुटकर गाथाओं के रूप में सुभाषित (क्रम संख्या २२ पृष्ठ ५८), सूत्र कृतांग का छठा अध्ययन (वीर स्तुति), एवं नन्दी सूत्र का आद्य मंगल पाठ ।

चूंकि हमारी दृष्टि पुस्तक का आकार बड़ा न हो जाय इस ओर भी बराबर लगी रही, इसलिये इनके मूल पाठ लेकर ही हमें सन्तोष करना पड़ा । जिज्ञासु साधक इनका अर्थ समझने के लिये अलग से उपयुक्त ग्रन्थों का सहारा लें । इनको तो वे कण्ठस्थ करके स्वाध्याय पाठ के तौर पर उपयोग में लें यही समीचीन होगा ।

यही स्थिति अन्य प्राकृत एवं संस्कृत के पाठों – स्तोत्रों आदि की है । एकाध जो चलन में आ गए हैं उनके हिन्दी-पाठ को छोड़ कर बाकी के हिन्दी अर्थ हम इसमें नहीं ले सके । इनका अर्थ भी जिज्ञासु साधक अन्य सहायक ग्रन्थों से समझने की चेष्टा करें । एक बार अर्थ हृदयंगम कर लेने के बाद मूल का स्वाध्याय शुद्ध उच्चारण के साथ, उच्च सधे हुए स्वर में, अकेले अथवा समवेत स्वरों में करने से निश्चय ही आन्तरिक आध्यात्मिक आनन्द की अनुभूति पाठक प्राप्त कर सकेंगे ।

इस संग्रह को सुगम एवं क्रमबद्ध बनाने की दृष्टि से इसे तीन खण्डों में बांटा गया है – प्राकृत, संस्कृत एवं हिन्दी ।

सामायिक सूत्र के पाठ, सामायिक लेने एवं पारने के पाठ, सामायिक महिमा-पाठ, व्रत प्रत्याख्यान लेने एवं पारने के पाठ, शांति-प्रकाश-पाठ, आलोयणा-पाठ, श्रावक के तीन मनोरथ, चौदह नियम, बारह भावना, मेरी भावना, सप्त कुव्यसन त्याग-पाठ, समाधि (पंडित) मरण-पाठ, आनुपूर्वी, चौवीस तीर्थंकर-बीस विहरमान – १६ सतियों के नाम, व्याख्यान के प्रारम्भ के एवं समापन के पाठ आदि भी हमने इसमें यथा क्रम लिये हैं। २४ तीर्थंकरों के कल्याणक तपों का विवरण एवं जैन ज्योतिष के अनुसार तिथि आदि का विचार भी हमने इसमें सम्मिलित किया है।

विनयचन्द चौवीसी, जो आध्यात्मिक जगत् में सुन्दर-सरस-सुबोध एवं लालित्यभरी सरल सामान्य जन भाषा में एवं विभिन्न पुरातन राग रागिनियों में भक्ति रस को प्रवाहित करने तथा भक्त हृदय की हृत्तंत्रियों को झंकृत कर देने में एक अनुपम कृति के रूप में अपना स्थान रखती है, को भी हमने इसमें सम्मिलित कर आध्यात्मिक-स्तवन प्रेमियों की इच्छा पूर्ति की है।

कुछ भक्ति एवं वैराग्य-रस प्रधान बहुप्रचलित अजैन सन्तों के भजन भी उपयोगी एवं हृदय के अन्तरतम को छूने वाले समझ कर इसमें सम्मिलित करने का लोभ हम संवरण नहीं कर सके हैं – जैसे सन्त नरसी महता, मीरां बाई, कबीर, सूरदास आदि। पाठक इनके भावों को ग्रहण करें, तत्वभेद की सूक्ष्म चर्चा में न पड़ें। इनमें से "सुनेरी मैंने निर्बल के बल राम" को तो जैन आध्यात्मिक जगत के सन्त भी गाते नहीं अघाते।

प्राकृत संस्कृत खण्डों के बाद हिन्दी खण्ड में हमने स्तवनों को दो श्रेणियों में विभाजित किया है। एक प्रभु-स्मरण-प्रधान एवं दूसरी हितोपदेश प्रधान। प्रभु- स्मरण प्रधान स्तवनों आदि को भी हमने एक क्रम से लेने का ध्यान रक्खा है। प्रथम अरिहन्त स्तुतियों को लिया है, फिर सिद्ध स्तुतियों को, फिर चौवीसी की स्तुतियों को एवं फिर आचार्य एवं गुरु-महिमा वाले स्तवन एवं स्तुतियों को। इस क्रम को सर्वत्र बनाये रखने का हमने पूरा प्रयास किया है। पर कई कारणों से, जो हमारे नियन्त्रण से बाहर थे, इस क्रम में व्यवधान आया है। अगली आवृत्ति में इसे ठीक करने का हम प्रयास करेंगे।

इनमें कई पाठों के मिलान करने में, कुछ अंश लेने एवं निकालने आदि में हमने कई अन्य बहुप्रचलित स्तवन संग्रहों, गुटकों आदि का भी उपयोग किया है जिसके लिये हम उनके रचनाकारों एवं प्रकाशकों के प्रति अपना आभार प्रकट करते हैं।

प्राकृत पाठों का स्वाध्याय करते समय साधक काल अकाल का भी ध्यान रख सकें इस दृष्टि से इसका विवरण भी हमने अन्त में दे दिया है। सामायिक के काल में अथवा जब इच्छा हो साधक अपनी-अपनी रुचि एवं देशकाल के अनुकूल नित्य नियम के तौर पर अपना एक क्रम स्वयं निर्द्धारित कर सकते हैं। जैसे सर्व प्रथम नवकार मंत्र, मूल आगम-पाठों के स्वाध्याय के लिए अगर स्वाध्यायकाल हो तो दशवैकालिक आदि का कोई एक अध्ययन, फिर भक्तामर एवं मंगल पाठ आदि में से कुछ श्लोक।

इसके बाद हिन्दी खण्ड में से प्रथम सिद्ध स्तुति, अरिहन्त स्तुति में से कोई एक पाठ, छोटी बड़ी साधुवन्दना, मेरी भावना, तथा एक दो स्तवन, बारह भावना, तीन मनोरथ, चौदह नियम, आनुपूर्वी-पाठ, विनयचन्द चौवीसी का कोई एक स्तवन अथवा शांति प्रकाश का पठन। विशेष दिनों में समाधि (पंडित) मरण पाठ एवं आलोचना-पाठ का भी पारायण।

अकारादि क्रम से एवं छन्द एवं राग रागिनी क्रम से भी स्तवनों की अलग से सूची देने का हमारा विचार था, पर पुस्तक के आकार-वृद्धि के भय से इस बार तो हमने यह विचार छोड़ दिया है। पाठकों का आग्रह हुआ तो अगली आवृत्ति में इस पर ध्यान देंगे।

जिस प्रकार मनुष्य को शारीरिक भूख की तृप्ति के लिए उसकी रुचि, देश, काल, ऋतु एवं पथ्य के अनुकूल भोजन दिया जाना उपयुक्त समझा जाता है, उसी तरह मनुष्य की आध्यात्मिक भूख की तृप्ति के लिये स्वाध्याय ध्यान-प्रार्थना आदि के रूप में उसकी रुचि, देश-काल एवं समय के अनुकूल वैराग्य एवं आध्यात्मिक तत्वों से भरा पूरा भोजन मिले, इस दृष्टि से हमारा यह प्रयास थोड़ा बहुत भी सहायक सिद्ध हुआ, तो हम अपने इस श्रम को सार्थक समझेंगे।

आज के तथाकथित प्रगतिशील वैज्ञानिक युग में भोग संस्कृति के उपासक मानव में भोग विलास के साधनों को अमर्यादित रूप से एकत्र करते चले जाने की तीव्र होड़ सी लग गई है। आज का तथा-कथित सारा सभ्य संसार अपनी नाक के नीचे भूख से छटपटाते, खुले आकाश एवं सूखी धरती पर बिलखते, व्याकुल, अर्द्धनग्न सूखी हड्डियों के कंकाल मात्र मानव के प्रति हृदयहीन बन कर उसके ही श्रम से निर्मित साधनों को छल कपट पूर्वक उनसे छीन कर उनकी नितान्त उपेक्षा करते हुए उन सारे साधनों को अपनी ही भोग-लिप्सा पूर्ति के लिए एकत्र करने की घुड़दौड़ में उलझा पड़ा है। इसके लिए आज उसके समक्ष कहीं विराम नहीं है, सीमा नहीं है। सारी मानव जाति को ही इस हेतु उसे विनष्ट कर देना पड़े तो वैसे साधन जुटाने में भी वह सभ्य संसार आज संकोच नहीं कर रहा है, हालांकि उस विनाश में वह स्वयं भी विनष्ट होने से नहीं बच पावेगा। इस सीधी सी बात को भी वह शायद नहीं समझ पा रहा है।

यह पाश्चात्य सभ्यता की देन है, जिसने आज सारे संसार को अपनी विषैली लपेट में समेट लिया है। एक तरफ मानव गगनचुम्बी शीतोष्ण निरोधक अट्टालिकाओं में अठखेलियां करने के एवं गगनगामी बनने के स्वप्न संजोये एकान्त भौतिकवाद में उलझ कर आज स्वयं विनाश के उस कगार पर पहुंच गया है, जहां वह स्वयं आत्मिक अशान्ति में विकल बना किंकर्त्तव्यविमूढ़ सा इधर उधर अन्धेरे में भटक रहा है।

इन असीम भोगों की लिप्सा का जो विनाशकारी परिणाम होना है वह शनैः-शनैः सामने आ रहा है।

उस पाश्चात्य सीमारहित भोगवादी संस्कृति की काली छाया इस देश की पुरातन समन्वित संस्कृति पर भी पड़ रही है। इस देश में भी आज ऐसे हृदयहीन नवकुबेर पनप रहे हैं जो आज इस सीमारहित भोग संस्कृति के उपासक बनकर अपने पड़ोस में पीड़ित पड़े, अपनी आंखों के सामने खड़े भूखे उत्पीड़ित, अर्द्धनग्न जर्जरित मानव को उपेक्षा भाव से देखा, अनदेखा करके हृदयहीन बन असीम भोग साधनों को एकत्र करने की दिशा में अविराम गति से बेलगाम दौड़े जा रहा है। इस दौड़ को लगाम लगानी होगी।

इस देश की सनातन संस्कृति को यह एक चुनौती है। निवृत्तिमूलक एवं मर्यादित भोगोपभोग को ही स्वीकार करने वाली हमारी संस्कृति, जो आज की सीमारहित भोग–प्रधान पाश्चात्य संस्कृति के सामने धूमिल हो गई है, उसकी पुनर्स्थापना करनी है एवं विनाश की कगार पर पहुंचे विश्व को पुनः भौतिक दौड़ में मर्यादित कर आत्मिक विकास की ओर उन्मुख करना है।

जैन दर्शन में निवृत्ति पर चलने की प्रेरणा ही प्रमुख रही है। इस निवृत्ति भाव को जगाना, आत्मा के कल्याणकारी सम्यग्-मार्ग का निरूपण करना प्रमुख ध्येय रहा है। इसमें आत्मजयी, शुद्ध, बुद्ध, वीतराग महापुरुषों के ध्यान, जप-स्मरण को साधन रूप में माना गया है। साधक इस मार्ग पर चलते हुए एवं स्व स्वरूप का चिंतन मनन करते हुए शनैः-शनैः सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन, एवं सम्यग्चारित्र की आराधना का बल प्राप्त कर सकता है, जिससे एक दिन वह स्वयं शुद्ध बुद्ध एवं अक्षय अजर अमर वीतराग पद को प्राप्त कर सकता है।

आज भोगों को प्रोत्साहन देने वाला अनैतिक साहित्य भी प्रचुर मात्रा में निकल रहा है – यह आज के उपलब्ध वैज्ञानिक साधनों का दुरुपयोग है। इसके निराकरण एवं अपनी शुद्ध सनातन संस्कृति के पुनर्संस्थापन के लिए उसी अनुपात में अथवा उससे अधिक सद्-साहित्य के प्रचार प्रसार की आवश्यकता है। सभी दिशाओं से सब तरह के प्रयत्न इसके लिए अपेक्षित हैं।

इसे लक्ष्य में रख कर इस दिशा में सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल द्वारा किये जा रहे प्रकाशनों की शृंखला की यह एक छोटी सी कड़ी है।

ऐसे ही प्रबल प्रयत्नों से सीमारहित भोग संस्कृति में आकण्ठ डूबे आज के विकल मानव को सही एवं सम्यग् दिशा मिलेगी जिस तरफ चलकर उसे पूर्ण शान्ति एवं सच्चा सुख मिल सकेगा। अपनी सीमारहित भोग की संस्कृति को बचाने के लिये मानव ने विनाश के जो प्रचुर साधन आज जुटा लिये हैं तथा जुटाता जा रहा है, उससे उसे विराम मिलेगा एवं आज के विज्ञान के एकान्त मानव हित में प्रयुक्त होने की शुद्ध भूमिका तैयार हो सकेगी। ऐसी भूमिका एवं वातावरण तैयार करने के लिए एवं उसे चिरस्थायी बनाए रखने के लिए भारत भूमि के जैन-अजैन आध्यात्मिक साधक सन्त-सतियों ने, ज्ञानियों

ने, भक्तों ने तपस्वियों ने अनादि काल से सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन एवं सम्यग् चारित्र तप, भक्ति तथा वैराग्यमय, एवं गहरे आध्यात्मिक रसों से ओतप्रोत अनेकों स्तोत्र-स्तवन-एवं भजनों की त्रिवेणी इस पवित्र धरती पर प्रवाहित की है। उस त्रिवेणी के पवित्र जल को यत्किंचित् "गागर में सागर वत्" इस छोटी सी पुस्तक में भरने का दुसाध्य प्रयत्न मुनिश्री श्रीचन्दजी महाराज ने किया है।

अन्त में हमें आशा है कि जिज्ञासु साधक वृन्द इसके आगम-पाठों को एवं अन्य अपनी रुचि के अनुकूल स्तवनों व स्तोत्रों को यथासम्भव कण्ठस्थ करके शुद्ध अन्तः करण पूर्वक इनका शुद्ध उच्चारण एवं उदात्त स्वर में एकाग्रचित्त होकर पठन, पाठन एवं मनन करेंगे तो निश्चय ही वे एक अनुपम आध्यात्मिक आनन्द का रसास्वादन कर सकेंगे।

गजसिंह राठौड़
प्रेमराज बोगावत
सम्पादक

बोधि रत्नम्
सी–११, मोतीमार्ग
बापूनगर–जयपुर–४
२१ मई, १९७५



अनुक्रम

(प्राकृत खण्ड)

(संस्कृत खण्ड)

(हिन्दी खण्ड)

क्रमसंख्या	विषय		पृष्ठ




प्राकृत

णमोत्थुणं समणस्स भगवओ महावीरस्स

(श्रुतकेवली श्री शय्यंभवस्वामि-विरचित)

दशवैकालिक सूत्र

(१)

दुमपुप्फिया–प्रथम अध्ययन

१. धम्मो मंगलमुक्किट्ठं, अहिंसा संजमो तवो।
देवा वि तं नमंसंति, जस्स धम्मे सया मणो ॥

२. जहा दुमस्स पुप्फेसु, भमरो आवियइ रसं।
ण य पुप्फं किलामेइ, सो य पीणेइ अप्पयं ॥

३. एमे ए समणा मुत्ता, जे लोए संति साहुणो।
विहंगमा व पुप्फेसु, दाणभत्तेसणे रया ॥

४. वयं च वित्तिं लब्भामो, ण य कोइ उवहम्मइ।
अहागडेसु रीयंते, पुप्फेसु भमरा जहा ॥

५. महुगार समा बुद्धा, जे हवंति अणिस्सिया।
नाणापिंडरया दंता, तेण वुच्चंति साहुणो ॥

– त्ति बेमि।

सामण्णपुव्वयं–द्वितीय अध्ययन

१. कहं नु कुज्जा सामण्णं, जो कामे न निवारए ।
पए पए विसीअंतो, संकप्पस्स वसं गओ ।।

२. वत्थगंधमलंकारं, इत्थीओ सयणाणि य ।
अच्छंदा जे न भुंजंति, न से चाइ त्ति वुच्चइ ।।

३. जे य कंते पिए भोए, लद्धे विपिट्ठी कुव्वइ ।
साहीणे चयइ भोए, से हु चाइ त्ति वुच्चइ ।।

४. समाइ पेहाइ परिव्वयंतो,
सिया मणो निस्सरई बहिद्धा ।
न सा महं नो वि अहं वि तीसे,
इच्चेव ताओ विणएज्ज रागं ।।

५. आयावयाही चय सोगमल्लं,
कामे कमाही कमियं खु दुक्खं ।
छिंदाहि दोसं विणएज्ज रागं,
एवं सुही होहिसि संपराए ।।

६. पक्खंदे जलियं जोइं, धूमकेउं दुरासयं ।
नेच्छंति वंतयं भोत्तुं, कुले जाया अगंधणे ।।

७. धिरत्थु तेऽजसोकामी, जो तं जीवियकारणा ।
वंतं इच्छसि आवेउं, सेयं ते मरणं भवे ।।

८. अहं च भोगरायस्स, तं चासि अंधगवण्हिणो ।
मा कुले गंधणा होमो, संजमं निहुओ चर ।।

९. जइ तं काहिसि भावं, जा जा दिच्छसि नारिओ ।
वाया विद्धुव्व हडो, अट्ठिअप्पा भविस्ससि ।।

१०. तीसे सो वयणं सोच्चा, संजयाए सुभासियं ।
अंकुसेण जहा नागो, धम्मे संपडिवाइओ ।।

११. एवं करंति संवुद्धा, पंडिया पवियक्खणा ।
विणियट्टंति भोगेसु, जहा से पुरिसुत्तमो ।।
–त्ति बेमि ।

(३)

खुड्डियायार–तृतीय अध्ययन

१. संजमे सुट्ठिअप्पाणं, विप्पमुक्काण ताइणं ।
तेसिमेयमणाइण्णं, निग्गंथाण महेसिणं ।।

२. उद्देसियं कीयगडं, नियागमभिहडाणि य ।
राइभत्ते सिणाणे य, गंधमल्ले य वीयणे ।।

३. संनिही गिहिमत्ते य, रायपिंडे किमिच्छए ।
संवाहणा दंत पहोयणा य, संपुच्छणा देहपलोयणा य ।।

४. अट्ठावए य नीलाए, छत्तस्स य धारणट्ठाए ।
तेगिच्छं पाहणा पाए, समारंभं च जोइणो ।।

५. सिज्जायरपिंडं च, आसंदी पलियंकए ।
गिहंतर निसिज्जा य, गायस्सुव्वट्टणाणि य ।।

६. गिहिणो वेयावडियं, जा य आजीव वत्तिया ।
तत्तानिव्वुडभोइत्तं, आउरस्सरणाणि य ।।

७. मूलए सिंगबेरे य, उच्छुखंडे अनिव्वुडे ।
कंदे मूले य सच्चित्ते, फले बीए य आमए ।।

८. सोवच्चले सिंधवे लोणे, रोमालोणे य आमए ।
सामुद्दे पंसुखारे य, कालालोणे य आमए ।।

९. धूवणे त्ति वमणे य, वत्थीकम्म विरेयणे ।
अंजणे दंतवणे य, गायाऽभंगविभूसणे ।।

१०. सव्वमेयमणाइण्णं, निग्गंथाण महेसिणं ।
संजमम्मि य जुत्ताणं, लहुभूय विहारिणं ।।

११. पंचासव परिण्णाया, तिगुत्ता छसु संजया ।
पंच निग्गहणा धीरा, निग्गंथा उज्जुदंसिणो ।।

१२. आयावयंति गिम्हेसु, हेमंतेसु अवाउडा ।
वासासु पडिसंलीणा, संजया सुसमाहिया ।।

१३. परीसह रिऊदंता, धूयमोहा जिइंदिया ।
सव्व दुक्खप्पहीणट्ठा, पक्कमंति महेसिणो ।।

१४. दुक्कराइं करित्ताणं, दुस्सहाइं सहित्तु य ।
के इत्थ देवलोएसु, केइ सिज्झंति नीरया ।।

१५. खवित्ता पुव्वकम्माइं, संजमेण तवेण य ।
सिद्धि – मग्गमणुप्पत्ता, ताइणो परिनिव्वुडा ।।

– त्ति बेमि ।

उत्तराध्ययन सूत्र

(भ० महावीर का अन्तिम उपदेश)

(४)

नमिपव्वज्जा-नवमां अध्ययन

१. चइऊण देवलोगाओ, उववन्नो माणुसम्मि लोगम्मि ।
उवसन्त-मोहणिज्जो, सरई पोराणियं जाइं ।।

२. जाइं सरित्तु भयवं, सहसंबुद्धो[1] अणुत्तरे धम्मे ।
पुत्तं ठवेत्तु रज्जे, अभि-णिक्खमई नमी राया ।।

३. से देवलोगसरिसे, अन्तेउर-वर-गओ वरे भोए ।
भुंजित्तु नमी राया, बुद्धो भोगे परिच्चयई ।।

४. मिहिलं स-पुर जण-वयं, बलमोरोहं च परियणं सव्वं ।
चिच्चा अभिनिक्खन्तो, एगन्त-महिड्डिओ भयवं ।।

५. कोला-हलग-संभूयं, आसी मिहिलाए पव्वयन्तम्मि ।
तइया रायरिसिम्मि, नमिम्मि अभिणिक्खमन्तम्मि ।।

६. अब्भुट्ठियं रायरिसिं, पव्वज्जा-ठाण-मुत्तमं ।
सक्को माहण-रूवेण, इमं वयणमब्बवी....

७. 'किण्णु भो ! अज्ज मिहिलाए, कोला-हलग-संकुला ।
सुव्वन्ति दारुणा सद्दा, पासाएसु गिहेसु य ?'

---

[1] 'सयंसंबुद्धो'-ऐसा पाठ भी उपलब्ध होता है ।

८. एयमट्ठं निसामित्ता, हेऊ-कारण-चोइओ।
तओ नमी रायरिसी, देविन्दं इणमब्बवी....

९. मिहिलाए चेइए वच्छे, सीयच्छाए मणोरमे।
पत्त-पुप्फ-फलो-वेए, बहूणं बहु-गुणे सया॥

१०. वाएण हीरमाणम्मि, चेइयम्मि मणोरमे।
दुहिया असरणा अत्ता, एए कन्दन्ति भो! खगा॥'

११. एयमट्ठं निसामित्ता, हेऊ-कारण-चोइओ।
तओ नमिं रायरिसिं, देविन्दो इणमब्बवी....

१२. 'एस अग्गी य वाऊ य, एयं डज्झइ मन्दिरं।
भयवं! अन्तेउरं तेणं, कीस णं नावपेक्खह?'

१३. एयमट्ठं निसामित्ता, हेऊ-कारण-चोइओ।
तओ नमी रायरिसी, देविन्दं इणमब्बवी....

१४. 'सुहं वसामो जीवामो, जेसिं मो नत्थि किंचणं[1]।
मिहिलाए डज्झमाणीए, न मे डज्झइ किंचणं[2]॥

१५. चत्त-पुत्त-कलत्तस्स, निव्वावारस्स भिक्खुणो।
पियं न विज्जई किंचि, अप्पियं पि न विज्जए॥

१६. बहुं खु मुणिणो भद्दं, अणगारस्स भिक्खुणो।
सव्वओ विप्पमुक्कस्स, एगन्तमणुपस्सओ॥'

१७. एयमट्ठं निसामित्ता, हेऊ-कारण-चोइओ।
तओ नमिं रायरिसिं, देविन्दो इणमब्बवी....

१८. 'पागारं कारइत्ताणं, गोपुरट्टालगाणि य।
उस्सूलगसयग्घीओ, तओ गच्छसि खत्तिया!॥

---

[1] और [2] 'किंचण'—पाठान्तर भी उपलब्ध होता है।

१९. एयमट्ठं निसामित्ता, हेऊ-कारण-चोइओ ।
तओ नमी रायरिसी, देविन्दं इणमब्बवी....

२०. 'सद्धं नगरं किच्चा, तव-संवर-मग्गलं ।
खन्ति निउण पागारं, तिगुत्तं दुप्पधंसयं ॥

२१. धणुं परक्कमं किच्चा, जीवं च ईरियं सया ।
धिइं च केयणं किच्चा, सच्चेण पलिमन्थए ॥

२२. तव-नारायजुत्तेण, भेत्तूण कम्म-कंचुयं ।
मुणी विगय-संगामो, भवाओ परिमुच्चए ॥'

२३. एयमट्ठं निसामित्ता, हेऊ-कारण-चोइओ ।
तओ नमिं रायरिसिं, देविन्दो इणमब्बवी....

२४. 'पासाए कारइत्ताणं बद्ध-माण-गिहाणि य ।
बालग्ग-पोइयाओ य, तओ गच्छसि खत्तिया ॥'

२५. एयमट्ठं निसामित्ता, हेऊ-कारण-चोइओ ।
तओ नमी रायरिसी, देविन्दं इणमब्बवी....

२६. संसयं खलु सो कुणई, जो मग्गे कुणई घरं ।
जत्थेव गन्तुमिच्छेज्जा, तत्थ कुव्वेज्ज सासयं ॥'

२७. एयमट्ठं निसामित्ता, हेऊ-कारण चोइओ ।
तओ नमिं रायरिसिं, देविन्दो इणमब्बवी....

२८. 'आमोसे लोमहारे य, गंठिभेए य तक्करे ।
नगरस्स खेमं काऊणं, तओ गच्छसि खत्तिया ॥'

२९. एयमट्ठं निसामित्ता, हेऊ-कारण-चोइओ ।
तओ नमी रायरिसी, देविन्दं इणमब्बवी....

३०. 'असइं तु मणुस्सेहिं, मिच्छा दंडो पजुञ्जई ।
अकारिणोऽत्थ बज्झन्ति, मुच्चइ कारओ जणो ॥'

३१. एयमट्ठं निसामित्ता, हेऊ-कारण-चोइओ।
तओ नमिं रायरिसिं, देविन्दो इणमब्बवी....

३२. 'जे केइ पत्थिवा तुज्झं, नानमन्ति नराहिवा!
वसे ते ठावइत्ताणं, तओ गच्छसि खत्तिया! ॥'

३३. एयमट्ठं निसामित्ता, हेऊ-कारण-चोइओ।
तओ नमी रायरिसी, देविन्दं इणमब्बवी....

३४. 'जो सहस्सं सहस्साणं, संगामे दुज्जए जिणे।
एगं जिणेज्ज अप्पाणं, एस से परमो जओ॥

३५. अप्पाणमेव जुज्झाहि, किं ते जुज्झेण बज्झओ?
अप्पाणमेवअप्पाणं,[1] जइत्ता सुहमेहए॥

३६. पंचिन्दियाणि कोहं, माणं मायं तहेव लोहं च।
दुज्जयं चेव अप्पाणं, सव्वं अप्पं जिए जियं॥'

३७. एयमट्ठं निसामित्ता, हेऊ-कारण-चोइओ।
तओ नमिं रायरिसिं, देविन्दो इणमब्बवी....

३८. 'जइत्ता विउले जन्ने, भोइत्ता समण-माहणे।
दच्चा भोच्चा य जिट्ठा य, तओ गच्छसि खत्तिया! ॥'

३९. एयमट्ठं निसामित्ता, हेऊ-कारण-चोइओ।
तओ नमी रायरिसी देविन्दं इणमब्बवी....

४०. 'जो सहस्सं सहस्साणं, मासे मासे गवं दए।
तस्सावि संजमो सेओ, अदिन्तस्सवि किंचण॥

४१. एयमट्ठं निसामित्ता, हेऊ-कारण-चोइओ।
तओ नमिं रायरिसिं, देविन्दो इणमब्बवी....

---

[1] 'अप्पणा चेव अप्पाणं' ऐसा पाठ भी कुछ प्रतियों में मिलता है।

४२. 'घोरासमं चइत्ताणं, अन्नं पत्थेसि आसमं ।
इहेव पोसह-रओ, भवाहि मणुयाहिवा ! ॥'

४३. एयमट्ठं निसामित्ता, हेऊ-कारण-चोइओ ।
तओ नमी रायरिसी, देविन्दं इणमब्बवी....

४४. 'मासे मासे तु जो बालो, कुसग्गेण तु भुंजए ।
न सो सुयक्खाय-धम्मस्स कलं अग्घइ सोलसिं ॥'

४५. एयमट्ठं निसामित्ता, हेऊ-कारण-चोइओ ।
तओ नमिं रायरिसिं देविन्दो इणमब्बवी....

४६. 'हिरण्णं सुवण्णं मणिमुत्तं, कंसं दूसं च वाहणं ।
कोसं वड्ढावइत्ताणं, तओ गच्छसि खत्तिया ! ॥'

४७. एयमट्ठं निसामित्ता, हेऊ-कारण-चोइओ ।
तओ नमी रायरिसी, देविन्दं इणमब्बवी....

४८. 'सुवण्ण-रुप्पस्स उ पव्वया भवे,
सिया हु केलाससमा असंखया ।
नरस्स लुद्धस्स न तेहिं किंचि,
इच्छा हु आगाससमा अणंतिया ॥

४९. पुढवी साली जवा चेव, हिरण्णं पसुभिस्सह ।
पडिपुण्णं नालमेगस्स, इइ विज्जा तवं चरे ॥'

५०. एयमट्ठं निसामित्ता, हेऊ-कारण-चोइओ ।
तओ नमिं रायरिसिं, देविन्दो इणमब्बवी....

५१. 'अच्छेरगमब्भुदए, भोए चयसि पत्थिवा! ।
असन्ते कामे पत्थेसि, संकप्पेण विहन्नसि ॥'

५२. एयमट्ठं निसामित्ता, हेऊ-कारण-चोइओ ।
तओ नमी रायरिसी, देविन्दं इणमब्बवी....

५३. सल्लं कामा विसं कामा, कामा आसीविसोवमा ।
कामे भोए पत्थेमाणा, अकामा जन्ति दोग्गइं ।।

५४. अहे वयइ कोहेणं, माणेणं अहमा गई ।
माया गई-पडिग्घाओ, लोभाओ दुहओ भयं ।।'

५५. अवउज्झिऊण माहण-रूवं, विउव्विऊण इन्दत्तं ।
वन्दइ अभित्थुणन्तो, इमाहिं महुराहिं वग्गूहिं ।।

५६. 'अहो ! ते निज्जिओ कोहो, अहो ! माणो पराजिओ ।
अहो! ते निरक्किया माया, अहो ! लोभो वसीकओ ।।

५७. अहो ! तें अज्जवं साहु, अहो ! ते साहु मद्दवं ।
अहो ते उत्तमा खन्ती, अहो ते मुत्ति उत्तमा ।।

५८. इहं सि उत्तमो भन्ते ! पच्छा होहिसि उत्तमो ।
लोगुत्त-मुत्तमं ठाणं, सिद्धिं गच्छसि नीरओ ।।'

५९. एवं अभित्थुणन्तो, रायरिसिं उत्तमाए सद्धाए ।
पयाहिणं करेन्तो, पुणो पुणो वन्दई सक्को ।।

६०. तो वन्दिऊण पाए, चक्कंकुस-लक्खणे मुणिवरस्स ।
आगासेणुप्पइओ, ललिय चवल-कुंडल-तिरीडी ।।

६१. नमी नमेइ अप्पाणं, सक्खं सक्केण चोइओ ।
चइऊण गेहं च वेदेही, सामण्णे पज्जुवट्ठिओ ।।

६२. एवं करेन्ति संबुद्धा, पंडिया पवियक्खणा ।
विणियट्टन्ति भोगेसु, जहा से नमी रायरिसी ।।

–त्ति बेमि ।

(५)

चित्तसम्भूइज्जं–तेरहवां अध्ययन

१. जाईपराजिओ खलु, कासि नियाणं तु हत्थिणपुरम्मि ।
चुलणीए बम्भदत्तो, उववन्नो पउमगुम्माओ ।।

२. कम्पिल्ले सम्भूओ, चित्तो पुण जाओ पुरिमतालम्मि ।
सेट्ठिकुलम्मि विसाले, धम्मं सोऊण पव्वइओ ।।

३. कम्पिल्लम्मि य नयरे, समागया दोवि चित्तसम्भूया ।
सुह-दुक्ख-फलविवागं, कहेन्ति ते एक्कमेक्कस्स ।।

४. चक्कवट्टी महिड्ढीओ, बम्भदत्तो महायसो ।
भायरं बहुमाणेणं, इमं वयणमब्बवी····

५. आसीमो भायरा दो वि अन्नमन्नवसाणुगा ।
अन्नमन्नमणूरत्ता, अन्नमन्नहिएसिणो ।।

६. दासा दसण्णे आसी, मिया कालिंजरे नगे ।
हंसा मयंगतीरे य, सोवागा कासिभूमिए ।।

७. देवा य देवलोयम्मि, आसि अम्हे महिड्ढिया ।
इमा णो छट्ठिया जाई, अन्नमन्नेण जा विणा ।।

८. कम्मा नियाणप्पगडा, तुमे राय ! विचिन्तिया ।
तेसिं फलविवागेण, विप्पओगमुवागया ।।

९. सच्चसोयप्पगडा, कम्मा मए पुरा कडा ।
ते अज्ज परिभुंजामो, किं नु चित्ते वि से तहा ?

१०. सव्वं सुचिण्णं सफलं नराणं, कडाण कम्माण न मोक्ख अत्थि ।
अत्थेहिं कामेहिं य उत्तमेहिं, आया ममं पुण्णफलोववेए ।।

११. जाणाहि संभूय ! महाणुभागं, महिड्ढियं पुण्णफलोववेयं ।
चित्तं सि जाणाहि तहेव रायं ! इड्ढी जुई तस्स वि य प्पभूया ॥

१२. महत्थरूवा वयणप्पभूया, गाहाणुगीया नरसंघमज्झे ।
जं भिक्खुणो सीलगुणोववेया, इहउज्जयन्ते समणोम्हि जाओ ॥

१३. उच्चोदए महु कक्के य बम्भे, पवेइया आवसहा य रम्मा ।
इमं गिहं चित्तधणप्पभूयं पसाहि पंचालगुणोववेयं ॥

१४. नट्टेहिं गीएहिं य वाइएहिं ! नारीजणाइं परिवारयन्तो ।
भुंजाहि भोगाइ इमाइ भिक्खू, मम रोयई पव्वज्जा हु दुक्खं ॥

१५. तं पुव्वनेहेण कयाणुरागं, नराहिवं कामगुणेसु गिद्धं ।
धम्मस्सिओ तस्स हियाणुपेही, चित्तो इमं वयणमुदाहरित्था ॥

१६. सव्वं विलवियं गीयं, सव्वं नट्टं विडम्बियं ।
सव्वे आभरणा भारा, सव्वे कामा दुहावहा ॥

१७. बालाभिरामेसु दुहावहेसु, न तं सुहं कामगुणेसु रायं !
विरत्तकामाण तवोधणाणं, जं भिक्खुणं सीलगुणे रयाणं ॥

१८. नरिंद ! जाई अहमा नराणं, सोवागजाई दुहओ गयाणं ।
जहिं वयं सव्वजणस्स वेस्सा, वसीअ सोवागनिवेसणेसु ॥

१९. तोसे य जाईइ उ पावियाए, वुच्छामु सोवाग-निवेसणेसु ।
सव्वस्स लोगस्स दुगंछणिज्जा, इहं तु कम्माइं पुरे कडाइं ॥

२०. सो दाणिसिं राय ! महाणुभागो, महिड्ढिओ पुण्णफलोववेओ ।
चइत्तु भोगाइं असासयाइं, आदाणहेउं अभिणिक्खमाहि ॥

२१. इह जीविए राय! असासयम्मि, धणियं तु पुण्णाइं अकुव्वमाणो ।
से सोयई मच्चुमुहोवणीए, धम्मं अकाऊण परंसि लोए ॥

२२. जहेह सीहो व मियं गहाय, मच्चू नरं नेइ हु अन्तकाले ।
न तस्स माया व पिया व भाया, कालम्मि तम्मं सहरा[1] भवन्ति ।।

२३. न तस्स दुक्खं-विभयन्ति नाइओ, न मित्तवग्गा न सुया न बंधवा ।
एक्को सयं पच्चणुहोइ दुक्खं, कत्तारमेव अणुजाइ कम्मं ।।

२४. चिच्चा दुप्पयं च चउप्पयं च, खेत्तं गिहं धण-धन्नं च सव्वं ।
सकम्मवीओ[2] अवसो पयाइ, परं भवं सुंदर पावगं वा ।।

२५. तं एक्कगं तुच्छसरीरगं से, चिईगयं डहिय उ पावगेणं ।
भज्जा य पुत्ता वि य नायओ य, दायारमन्नं अणुसंकमन्ति ।।

२६. उवणिज्जई जीवियमप्पमायं, वण्णं जरा हरइ नरस्स रायं !
पंचालराया ! वयणं सुणाहि, मा कासि कम्माइं महालयाइं ।।

२७. अहंपि जाणामि जहेह साहू ! जं मे तुमं साहसि वक्कमेयं ।
भोगा इमे संगकरा हवंति, जे दुज्जया अज्जो ! अम्हारिसेहिं ।।

२८. हत्थिणपुरम्मि चित्ता ! दट्ठूणं नरवइं महिड्ढियं ।
कामभोगेसु गिद्धेणं, नियाणमसुहं कडं ।।

२९. तस्स मे अपडिकन्तस्स, इमं एयारिसं फलं ।
जाणमाणोवि जं धम्मं, कामभोगेसु मुच्छिओ ।।

३०. नागो जहा पंकजलावसन्नो, दट्ठुं थलं नाभिसमेइ तीरं ।
एवं वयं कामगुणेसु गिद्धा, न भिक्खुणो मग्गमणुव्वयामो ।।

३१. अच्चेइ कालो तरन्ति राइओ, न यावि भोगा पुरिसाण निच्चा ।
उविच्च भोगा पुरिसं चयन्ति, दुमं जहा खीणफलं व पक्खी ।।

---

[1] 'तम्मिऽसहरा' यह पाठान्तर भी उपलब्ध होता है ।

[2] "स्वकर्म द्वितीयः"–इत्यर्थः ।

३२. जइ तं सि भोगे चइउं असत्तो, अज्जाइं कम्माइं करेहि रायं ।
धम्मे ठिओ सव्वपयाणुकम्पी, तो होहिसि देवो इओ विउव्वी ॥

३३. न तुज्झ भोगे चइऊण बुद्धी, गिद्धोसि आरम्भपरिग्गहेसु ।
मोहं कओ एत्तिउ विप्पलावो, गच्छामि रायं ! आमन्तिओसि ॥

३४. पंचालरायावि य बम्भदत्तो, साहुस्स तस्स वयणं अकाउं ।
अणुत्तरे भुंजिय काम-भोगे, अणुत्तरे सो नरए पविट्ठो ॥

३५. चित्तो वि कामेहि विरत्तकामो, उदग्गचारित्त तवो-महेसी ।
अणुत्तरं संजम पालइत्ता, अणुत्तरं सिद्धिगइं गओ ॥

–त्ति बेमि

(६)

उसुयारिज्जं-चौदहवां अध्ययन

१. देवा भवित्ताण पुरे भवम्मि, केई चुया एगविमाणवासी ।
पुरे पुराणे उसुयारनामे, खाए समिद्धे सुरलोगरम्मे ।।

२. स-कम्म-सेसेण पुराकएणं, कुलेसुदग्गेसु य ते पसूया ।
निव्विण्णसंसारभया जहाय, जिणिंद-मग्गं सरणं पवन्ना ।।

३. पुमत्तमागम्म कुमार दो वी, पुरोहिओ तस्स जसा य पत्ती ।
विसालकित्ती य तहेसुयारो,[1] रायत्थ देवी कमलावई य ।।

४. जाईजरामच्चुभयाभिभूया बहिंविहाराभिनिविट्ठचित्ता ।
संसारचक्कस्स विमोक्खणट्ठा, दट्ठूण ते कामगुणे विरत्ता ।।

५. पियपुत्तगा दोण्णिवि माहणस्स, सकम्मसीलस्स पुरोहियस्स ।
सरित्तु पोराणिय तत्थ जाइं, तहा सुचिण्णं तव संजमं च ।।

६. ते काम-भोगेसु असज्जमाणा, माणुस्सएसुं जे यावि दिव्वा ।
मोक्खाभिकंखी अभिजायसड्ढा, तातं उवागम्म इमं उदाहु ।।

७. असासयं दट्ठु इमं विहारं, बहुअन्तरायं न य दीहमाउं ।
तम्हा गिहंसि न रइं लहामो, आमन्तयामो चरिस्सामु मोणं ।।

८. अह तायगो तत्थ मुणीण तेसिं, तवस्स वाघायकरं वयासी ।
इमं वयं वेयविओ वयन्ति, जहा न होई असुयाण लोगो ।।

९. अहिज्ज वेए परिविस्स विप्पे, पुत्ते पडिट्ठप्प गिहंसि जाया !
भोच्चाण भोए सह इत्थियाहिं, आरण्णगा होह मुणी पसत्था ।।

१०. सोयग्गिणा आयगुणिन्धणेणं, मोहाणिला पज्जलणाहिएणं ।
संतत्तभावं परितप्पमाणं, लालप्पमाणं बहुहा बहुं च ।।

---

[1] "तहोसुयारो" पाठान्तर भी मिलता है, जो इस अध्ययन के नाम को देखते हुए ठीक लगता है ।

११. पुरोहियं तं कमसोऽणुणंतं, निमंतयंतं च सुए धणेणं ।
जहक्कमं कामगुणेहि चेव, कुमारगा ते पसमिक्ख वक्कं ।।

१२. वेया अहीया न भवन्ति ताणं, भुत्ता दिया निन्ति तमं तमेणं ।
जाया य पुत्ता न हवन्ति ताणं, को णाम ते अणुमन्नेज्ज एयं ।।

१३. खणमेत्तसुक्खा बहुकालदुक्खा, पगामदुक्खा अणिगामसुक्खा ।
संसारमोक्खस्स विपक्खभूया, खाणी अणत्थाण उ कामभोगा ।।

१४. परिव्वयन्ते अणियत्तकामे, अहो य राओ परितप्पमाणे ।
अन्नप्पमत्ते धणमेसमाणे, पप्पोति मच्चुं पुरिसे जरं च ।।

१५. इमं च मे अत्थि इमं च नत्थि, इमं च मे किच्चमिमं अकिच्चं ।
तं एवमेवं लालप्पमाणं, हरा हरंति त्ति कहं पमाए ? ।।

१६. धणं पभूयं सह इत्थियाहिं, सयणा तहा कामगुणा पगामा ।
तवं कए तप्पइ जस्स लोगो, तं सव्व-साहीणमिहेव तुब्भं ।।

१७. धणेण किं धम्मधुराहिगारे, सयणेण वा कामगुणेहिं चेव ।
समणा भविस्सामु गुणोहधारी, बहिंविहारा अभिगम्म भिक्खं ।।

१८. जहा य अग्गी अरणीउऽसन्तो, खीरे घयं तेल्ल महातिलेसु ।
एमेव जाया सरीरंसि सत्ता, संमुच्छई नासइ नावचिट्ठे ।।

१९. नोइन्दियग्गेज्झ अमुत्तभावा, अमुत्तभावा वि य होइ निच्चो ।
अज्झत्थहेउं नियस्स बन्धो, संसारहेउं च वयन्ति बन्धं ।।

२०. जहा वयं धम्ममजाणमाणा, पावं पुरा कम्ममकासि मोहा ।
ओरुज्झमाणा परिरक्खियन्ता, तं नेव भुज्जो वि समायरामो ।।

२१. अब्भाहयम्मि लोगम्मि, सव्वओ परिवारिए ।
अमोहाहिं पडन्तीहिं, गिहंसि न रइं लभे ।।

२२. केण अब्भाहओ लोगो, केण वा परिवारिओ ?
का वा अमोहा वुत्ता ? जाया ! चिन्तावरो हुमि ।।

२३. मच्चुणाऽब्भाहओ लोगो, जराए परिवारिओ।
अमोहा रयणी वुत्ता, एवं ताय ! विजाणह ॥

२४. जा जा वच्चइ रयणी, न सा पडिनियत्तई।
अहम्मं कुणमाणस्स, अफला जन्ति राइयो ॥

२५. जा जा वच्चइ रयणी, न सा पडिनियत्तई।
धम्मं च कुणमाणस्स, सफला जन्ति राइयो ॥

२६. एगओ संवसित्ताणं, दुहओ सम्मत्त – संजुया।
पच्छा जाया ! गमिस्सामो, भिक्खमाणा कुले कुले ॥

२७. जस्सत्थि मच्चुणा सक्खं, जस्स वऽत्थि पलायणं।
जो जाणे न मरिस्सामि, सो हु कंखे सुए सिया ॥

२८. अज्जेव धम्मं पडिवज्जयामो, जहिं पवन्ना न पुणब्भवामो।
अणागयं नेव य अत्थि किंचि, सद्धाखमं णे विणइत्तु रागं ॥

२९. पहीणपुत्तस्स हु नत्थि वासो, वासिट्ठि ! भिक्खायरियाइ कालो।
साहाहि रुक्खो लहए समाहिं, छिन्नाहि साहाहि तमेव खाणुं ॥

३०. पंखाविहूणो व्व जहेह पक्खी, भिच्चविहूणो व्व रणे नरिन्दो।
विवन्नसारो वणिओ व्व पोए, पहीणपुत्तो मि तहा अहं पि ॥

३१. सुसंभिया कामगुणा इमे ते, संपिण्डिया अग्गरसप्पभूया।
भुंजामु ता कामगुणे पगामं, पच्छा गमिस्सामु पहाणमग्गं ॥

३२. भुत्ता रसा भोइ ! जहाइ णे वओ, न जीवियट्ठा पजहामि भोए।
लाभं अलाभं च सुहं च दुक्खं, संचिक्खमाणो चरिस्सामि मोणं ॥

३३. मा हु तुमं सोयरियाण सम्मरे, जुण्णो व हंसो पडिसोत्तगामी।
भुंजाहि भोगाइं मए समाणं, दुक्खं खु भिक्खायरिया विहारो ॥

३४. जहा य भोई ! तणुयं भुयंगो, निम्मोयणिं हिच्च पलेइ मुत्तो।
एमेए जाया पयहन्ति भोए, ते हं कहं नाणुगमिस्समेक्को ?

३५. छिन्दित्तु जालं अवलं व रोहिया, मच्छा जहा कामगुणे पहाय ।
धोरेयसीला तवसा उदारा, धीरा हु भिक्खायरियं चरन्ति ॥
३६. नहेव कुंचा समइक्कम्मंता, तयाणि जालाणि दलित्तु हंसा ।
पलेन्ति पुत्ता य पई य मज्झं, ते हं कहं नाणुगमिस्समेक्का ॥
३७. पुरोहियं तं ससुयं सदारं, सोच्चाऽभिनिक्खम्म पहाय भोए ।
कुडुम्वसारं विउलुत्तमं तं, रायं अभिक्खं समुवाय देवी ॥
३८. वंतासी पुरिसो रायं ! न सो होइ पसंसिओ ।
माहणेण परिच्चत्तं, धणं आदाउमिच्छसि ॥
३९. सव्वं जगं जइ तुहं, सव्वं वावि धणं भवे ।
सव्वंपि ते अपज्जत्तं. नेव ताणाय तं तव ॥
४०. मरिहिसि रायं ! जया तया वा, मणोरमे कामगुणे पहाय ।
एक्को हु धम्मो नरदेव ! ताणं, न विज्जई अन्नमिहेह किंचि ॥
४१. नाहं रमे पक्खिणी पंजरे वा, संताणछिन्ना चरिस्सामि मोणं ।
अकिंचणा उज्जुकडा निरामिसा, परिग्गहारम्भनियत्तदोसा ॥
४२. दवग्गिणा जहा रण्णे, डज्झमाणेसु जन्तुसु ।
अन्ने सत्ता पमोयन्ति, रागद्दोसवसं गया ॥
४३. एवमेव वयं मूढा, कामभोगेसु मुच्छिया ।
डज्झमाणं न वुज्झामो, रागद्दोसऽग्गिणा जगं ॥
४४. भोगे भोच्चा वमित्ता य, लहुभूयविहारिणो ।
आमोयमाणा गच्छन्ति, दिया कामकमा इव ॥
४५. इमे य वद्धा फन्दन्ति, मम हत्थऽज्जमागया ।
वयं च सत्ता कामेसु भविस्सामो जहा इमे ॥
४६. सामिसं कुललं दिस्स, वज्झमाणं निरामिसं ।
आमिसं सव्वमुज्झित्ता, विहरिस्सामि निरामिसा ॥

४७. गिद्धोवमे उ नच्चाणं, कामे संसारवड्ढणे ।
उरगो सुवण्णपासे व्व, संकमाणो तणुं चरे ॥
४८. नागो व्व वंधणं छित्ता, अप्पणो वसहिं वए ।
एयं पत्थं महारायं ! उस्सुयारि त्ति मे सुयं ॥
४९. चइत्ता विउलं रज्जं, कामभोगे य दुच्चए ।
निव्विसया निरामिसा, निन्नेहा निप्परिग्गहा ॥
५०. सम्मं धम्मं वियाणित्ता, चेच्चा कामगुणे वरे ।
तवं पगिज्झहक्खायं, घोरं घोरपरक्कमा ॥
५१. एवं ते कमसो बुद्धा, सव्वे धम्मपरायणा ।
जम्ममच्चुभउव्विग्गा, दुक्खस्सन्तगवेसिणो ॥
५२. सासणे विगयमोहाणं, पुव्वि भावणभाविया ।
अचिरेणेव कालेण, दुक्खस्सन्तमुवागया ॥
५३. राया सह देवीए, माहणो य पुरोहिओ ।
माहणी दारगा चेव, सव्वे ते परिनिव्वुडे ॥
–त्ति बेमि ॥

(७)

मियापुत्तीयं-उन्नीसवां अध्ययन

१. सुग्गीवे नयरे रम्मे, काणणुज्जाणसोहिए ।
राया वलभद्दि त्ति, मिया तस्सऽग्गमाहिसी ।।

२. तेसिं पुत्ते वलसिरी, मियापुत्तेत्ति विस्सुए ।
अम्मापिऊण दइए, जुवराया दमीसरे ।।

३. नन्दणे सो उ पासाए, कीलए सह इत्थिहिं ।
देवो दोगुन्दगो चेव, निच्चं मुइय – माणसो ।।

४. मणि - रयण - कुट्टिमतले, पासाया - लोयणट्ठिओ ।
आलोएइ नगरस्स, चउक्कतियचच्चरे ।।

५. अह तत्थ अइच्छन्तं, पासई समणसंजयं ।
तव – नियम – संजमधरं, सीलड्ढं गुणआगरं ।।

६. तं देहई मियापुत्ते, दिट्ठीए अणिमिसाए उ ।
कहिं मन्नेरिसं रूवं, दिट्ठपुव्वं मए पुरा ।।

७. साहुस्स दरिसणे तस्स, अज्झवसाणम्मि सोहणे ।
मोहं गयस्स सन्तस्स, जाईसरणं समुप्पन्नं ।।

८. देवलोग – चुओ संतो, माणुसं भवमागओ ।
सन्निनाणे समुप्पन्ने जाई सरइ पुराणयं ।।

९. जाईसरणे समुप्पन्ने, मियापुत्ते महिड्ढिए ।
सरई पोराणियं जाइं, सामण्णं च पुरा कयं ।।

१०. विसएहि अरज्जन्तो, रज्जन्तो संजमम्मि य ।
अम्मा – पियरमुवागम्म, इमं वयणमव्ववी ।।

११. सुयाणि मे पंचमहव्वयाणि,
नरएसु दुक्खं च तिरिक्खजोणिसु ।

निव्विण्णकामोमि महण्णवाओ,
अणुजाणह पव्वइस्सामि अम्मो ॥

१२. अम्म ! ताय ! मए भोगा, भुत्ता विसफलोवमा ।
पच्छा कडुय–विवागा, अणुबन्धदुहावहा ॥

१३. इमं सरीरं अणिच्चं, असुइं असुइसंभवं ।
असासयावासमिणं, दुक्ख–केसाण भायणं ॥

१४. असासए सरीरम्मि, रइं नोवलभामहं ।
पच्छा पुरा व चइयव्वे, फेणवुब्बुयसन्निभे ॥

१५. माणुसत्ते असारम्मि, वाहीरोगाण आलए ।
जरा–मरण–घत्थम्मि, खणंपि न रमामहं ॥

१६. जम्मं दुक्खं जरा दुक्खं, रोगाणि मरणाणि य ।
अहो दुक्खो हु संसारो, जत्थ कीसन्ति जन्तवो ॥

१७. खेत्तं वत्थुं हिरण्णं च, पुत्तदारं च वन्धवा ।
चइत्ताणं इमं देहं, गन्तव्वमवसस्स मे ॥

१८. जहा किम्पाग–फलाणं, परिणामो न सुन्दरो ।
एवं भुत्ताणं भोगाणं, परिणामो न सुन्दरो ॥

१९. अद्धाणं जो महंतं तु, अपाहेओ पवज्जई ।
गच्छन्तो सो दुही होई, छुहातण्हाए पीडिओ ॥

२०. एवं धम्मं अकाऊणं, जो गच्छइ परं भवं ।
गच्छन्तो सो दुही होई, वाहीरोगेहिं पीडिओ ॥

२१. अद्धाणं जो महंतं तु, सपाहेओ पवज्जई ।
गच्छन्तो सो सुही होइ, छुहा तण्हा विवज्जिओ ॥

२२. एवं धम्मंपि काऊणं, जो गच्छइ परं भवं ।
गच्छन्तो सो सुही होइ, अप्पकम्मे अवेयणे ॥

२३. जहा गेहे पलित्तम्मि, तस्स गेहस्स जो पहू।
सारभण्डाणि नीणेइ, असारं अवउज्झइ ॥

२४. एवं लोए पलित्तम्मि, जराए मरणेण य।
अप्पाणं तारइस्सामि, तुब्भेहिं अणुमन्निओ ॥

२५. तं बिन्तऽम्मापियरो, सामण्णं पुत्त ! दुच्चरं।
गुणाणं तु सहस्साइं, धारेयव्वाइं भिक्खुणो ॥

२६. समया सव्वभूएसु, सत्तुमित्तेसु वा जगे।
पाणाइवायविरई, जावज्जीवाए दुक्करं ॥

२७. निच्चकालऽप्पमत्तेणं, मुसावाय-विवज्जणं।
भासियव्वं हियं सच्चं, निच्चाउत्तेण दुक्करं ॥

२८. दन्तसोहणमाइस्स, अदत्तस्स विवज्जणं।
अणवज्जेसणिज्जस्स, गिण्हणा अवि दुक्करं ॥

२९. विरई अबम्भचेरस्स, कामभोगरसन्नुणा।
उग्गं महव्वयं बम्भं, धारेयव्वं सुदुक्करं ॥

३०. धण-धन्न-पेस-वग्गेसु, परिग्गह-विवज्जणं।
सव्वारम्भपरिच्चाओ, निम्ममत्तं सुदुक्करं ॥

३१. चउव्विहेवि आहारे, राईभोयण-वज्जणा।
सन्निही संचओ चेव, वज्जेयव्वो सुदुक्करं ॥

३२. छुहा तण्हा य सीउण्ह, दंस-मसग वेयणा।
अक्कोसा दुक्खसेज्जा य, तण फासा जल्लमेव य ॥

३३. तालणा तज्जणा चेव, वहबन्ध-परीसहा।
दुक्खं भिक्खायरिया, जायणा य अलाभया ॥

३४. कावोया जा इमा वित्ती, केसलोओ य दारुणो।
दुक्खं बम्भव्वयं घोरं, धारेउं य महप्पणो ॥

प्राकृत

३५. सुहोइओ तुमं पुत्ता ! सुकुमालो सुमज्जिओ।
न हु सी पभू तुमं पुत्ता ! सामण्णमणुपालिउं ॥

३६. जावज्जीवमविस्सामो, गुणाणं तु महब्भरो।
गुरुओ लोहभारु व्व, जो पुत्ता ! होइ दुव्वहो ॥

३७. आगासे गंगसोउ व्व, पडिसोउ व्व दुत्तरो।
बाहाहिं सागरो चेव, तरियव्वो गुणोयही ॥

३८. वालुयाकवले चेव, निरस्सा ए उ संजमे।
असिधारा-गमणं चेव, दुक्करं चरिउं तवो ॥

३९. अहीवेगन्त-दिट्ठीए, चरित्ते पुत्त ! दुक्करे।
जवा लोहमया चेव, चावेयव्वा सुदुक्करं ॥

४०. जहा अग्गिसिहा दित्ता, पाउं होइ सुदुक्करं।
तहा दुक्करं करेउं जे, तारुण्णे समणत्तणं ॥

४१. जहा दुक्खं भरेउं जे, होई वायस्स कोत्थलो।
तहा दुक्खं करेउं जे, कीवेणं समणत्तणं ॥

४२. जहा तुलाए तोलेउं, दुक्करं मन्दरो गिरी।
तहा निहुयं नीसंकं, दुक्करं समणत्तणं ॥

४३. जहा भुयाहिं तरिउं, दुक्करं रयणागरो।
तहा अणुवसन्तेणं, दुक्करं दमसागरो ॥

४४. भुंज माणुस्सए भोगे, पंचलक्खणए तुमं।
भुत्तभोगी तओ जाया ! पच्छा धम्मं चरिस्ससि ॥

४५. सो बितऽम्मापियरो, एवमेयं जहा फुडं।
इह लोए निप्पिवासस्स, नत्थि किंचि वि दुक्करं ॥

४६. सारीरमाणसा चेव, वेयणाओ अनन्तसो।
मए सोढाओ भीमाओ, असइं दुक्खभयाणि य ॥

४७. जरामरणकन्तारे, चाउरन्ते भयागरे ।
मए सोढाणि भीमाणि, जम्माणि मरणाणि य ।।

४८. जहा इहं अगणी उण्हो, एत्तोऽणन्तगुणे तहिं ।
नरएसु वेयणा उण्हा, अस्साया वेइया मए ।।

४९. जहा इमं इहं सीयं, एत्तोऽणन्तगुणे तहिं ।
नरएसु वेयणा सीया, अस्साया वेइया मए ।।

५०. कन्दन्तो कन्दुकुम्भीसु, उड्ढपाओ अहोसिरो ।
हुयासणे जलन्तम्मि, पक्कपुव्वो अणन्तसो ।।

५१. महाद्वग्गिसंकासे, मरुम्मि वइरवालुए ।
कलम्बवालुयाए य, दड्ढपुव्वो अणन्तसो ।।

५२. रसन्तो कन्दुकुम्भीसु, उड्ढं बद्धो अबन्धवो ।
करवत्त – करकयाईहिं, छिन्नपुव्वो अणन्तसो ।।

५३. अइतिक्ख-कंटगाइण्णे, तुंगे सिम्बलिपायवे ।
खेवियं पासबद्धेणं, कड्ढोकड्ढाहिं दुक्करं ।।

५४. महाजन्तेसु उच्छू वा, आरसन्तो सुभेरवं ।
पीलिओऽमि सकम्मेहिं, पावकम्मो अणन्तसो ।।

५५. कूवन्तो कोलसुणएहिं, सामेहिं सबलेहिं य ।
पाडिओ फालिओ छिन्नो, विप्फुरन्तो अणेगसो ।।

५६. असीहि अयसिवण्णाहिं, भल्लीहिं पट्टिसेहिं य ।
छिन्नो भिन्नो विभिन्नो य, ओइण्णो पावकम्मुणा ।।

५७. अवसो लोहरहे जुत्तो, जलन्ते समिलाजुए ।
चोइओ तोत्तजुत्तेहिं, रोज्झो वा जह पाडिओ ।।

५८. हुयासणे जलन्तम्मि, चियासु महिसो विव ।
दड्ढो पक्को य अवसो, पावकम्मेहि पाविओ ।।

५९. वला संडासतुण्डेहिं, लोहतुण्डेहि पक्खिहिं ।
विलुत्तो विलवन्तो हं, ढंकगिद्धेहिऽणन्तसो ॥

६०. तण्हाकिलन्तो धावन्तो, पत्तो वेयरणिं नदिं ।
जलं पाहिंति चिन्तन्तो, खुरधाराहिं विवाइओ ॥

६१. उण्हाभितत्तो संपत्तो, असिपत्तं महावणं ।
असिपत्तेहिं पडन्तेहिं, छिन्नपुव्वो अणेगसो ॥

६२. मुग्गरेहिं मुसंढीहिं, सूलेहिं मुसलेहिं य ।
गयासंभग्गगत्तेहिं, पत्तं दुक्खं अणन्तसो ॥

६३. खुरेहिं तिक्खधारेहिं, छुरियाहिं कप्पणीहिं य ।
कप्पिओ फालिओ छिन्नो, उक्कित्तो य अणेगसो ॥

६४. पासेहिं कूडजालेहिं, मिओ वा अवसो अहं ।
वाहिओ बद्धरुद्धो अ, बहूसो चेव विवाइओ ॥

६५. गलेहिं मगरजालेहिं, मच्छो वा अवसो अहं ।
उल्लिओ फालिओ गहिओ, मारिओ य अणन्तसो ॥

६६. वीदंसएहिं जालेहिं, लेप्पाहिं सउणो विव ।
गहिओ लग्गो बद्धो य, मारिओ य अणन्तसो ॥

६७. कुहाड-फरसु-माईहिं, वड्ढईहिं दुमो विव ।
कुट्टिओ फालिओ छिन्नो, तच्छिओ य अणन्तसो ॥

६८. चवेडमुट्ठिमाईहिं, कुमारेहिं अयं पिव ।
ताडिओ कुट्टिओ भिन्नो, चुण्णिओ य अणन्तसो ॥

६९. तत्ताइं तम्ब-लोहाइं, तउयाइं सीसयाणि य ।
पाइओ कलकलन्ताइं, आरसन्तो सुभेरवं ॥

७०. तुहं पियाइं मंसाइं, खण्डाइं सोल्लगाणि य ।
खाइओमि स-मंसाइं अग्गिवण्णाइंऽणेगसो ॥

९४. अप्पसत्थेहिं दारेहिं, सव्वओ पिहियासवे ।
अज्झप्प-ज्झाण-जोगेहिं, पसत्थ-दमसासणे ।।

९५. एवं नाणेण चरणेण, दंसणेण तवेण य ।
भावणाहि य सुद्धाहिं, सम्मं भावेत्तु अप्पयं ।।

९६. बहुयाणि उ वासाणि, सामण्ण-मणुपालिया ।
मासिएण उ भत्तेण, सिद्धिं पत्तो अणुत्तरं ।।

९७. एवं करन्ति संबुद्धा, पण्डिया पवियक्खणा ।
विणियट्टन्ति भोगेसु, मियापुत्ते जहारिसी ।।

९८. महापभावस्स महाजसस्स,
मियाइ पुत्तस्स निसम्म भासियं ।
तवप्पहाणं चरियं च उत्तमं,
गईप्पहाणं च तिलोगविस्सुयं ।।

९९. वियाणिया दुक्खविवद्धणं धणं,
ममत्तवन्धं च महाभयावहं ।
सुहावहं धम्मधुरं अणुत्तरं,
धारेह निव्वाण-गुणावहं महं ।। त्ति वेमि ।।[1]

---

[1] अनेक प्रतियों में इस अध्ययन की गाथाओं की संख्या ९८ ही उल्लिखित है । पुनरावर्तन की आशंका से संभवतः गाथा संख्या ८ को कुछ प्रतियों में नहीं रखा गया है और कुछ में रख तो लिया है पर उस पर संख्या नहीं दी है । गाथा सं० ७, ८ और ९ को ध्यान पूर्वक देखा जाय तो पुनरावृत्ति का दोष कहीं दृष्टिगोचर नहीं होगा ।

(८)

महानियण्ठिज्ज-वीसवां अध्ययन

१. सिद्धाणं नमो किच्चा, संजयाणं च भावश्रो।
अत्थधम्मगइं तच्चं, अणुसट्ठिं सुणेह मे॥

२. पभूय-रयणो राया, 'सेणिश्रो' मगहाहिवो।
विहारजत्तं निज्जाश्रो, 'मण्डिकुच्छिसि' चेइए॥

३. नाणादुमलयाइण्णं, नाणापक्खिनिसेवियं।
नाणाकुसुमसंछन्नं, उज्जाणं नन्दणोवमं॥

४ तत्थ सो पासई साहुं, संजयं सुसमाहियं।
निसन्नं रुक्खमूलम्मि, सुकुमालं सुहोइयं॥

५. तस्स रूवं तु पासित्ता, राइणो तम्मि संजए।
अच्चन्तपरमो आसी, अउलो रूवविम्हश्रो॥

६. अहो ! वण्णो, अहो ! रूवं, अहो ! अज्जस्स सोमया।
अहो ! खन्ती, अहो ! मुत्ती, अहो ! भोगे असंगया॥

७. तस्स पाए उ वन्दित्ता, काऊण य पयाहिणं।
नाइदूरमणासन्ने, पंजली पडिपुच्छई॥

८. तरुणोऽसि अज्जो ! पव्वइश्रो, भोगकालम्मि संजया !
उवट्ठिश्रोऽसि सामण्णे, एयमट्ठं सुणेमि ता॥

९. अणाहो मि महाराय ! नाहो मज्झ न विज्जई।
अणुकम्पगं सुहिं वावि, कंचि नाभिसमेमहं॥

१०. तश्रो सो पहसिश्रो राया, सेणिश्रो मगहाहिवो ?
एवं ते इड्ढिमन्तस्स, कहं नाहो न विज्जई !

७१. तुहं पिया सुरा सीहू, मेरओ य महूणि य।
पाइओमि जलन्तीओ, वसाओ रुहिराणि य॥

७२. निच्चं भीएण तत्थेण, दुहिएण वहिएण य।
परमा दुहसंबद्धा, वेयणा वेइया मए॥

७३. तिव्वचण्डप्पगाढाओ, घोराओ अइदुस्सहा।
महब्भयाओ भीमाओ, नरएसु वेइया मए॥

७४. जारिसा माणुसे लोए, ताया दीसन्ति वेयणा।
एत्तो अणन्तगुणिया, नरएसु दुक्खवेयणा॥

७५. सव्वभवेसु अस्साया, वेयणा वेइया मए।
निमेसन्तरमित्तंऽपि, जं साता नत्थि वेयणा॥

७६. तं विन्तऽम्मापियरो, छन्देणं पुत्त! पव्वया।
नवरं पुण सामण्णे, दुक्खं निप्पडिकम्मया॥

७७. सो वित अम्मापियरो! एवमेवं जहा फुडं।
पडिकम्मं को कुणई, अरण्णे मियपक्खिणं?

७८. एगब्भूए अरण्णे वा, जहा उ चरई मिगे।
एवं धम्मं चरिस्सामि, संजमेण तवेण य॥

७९. जहा मिगस्स आयंको, महारण्णम्मि जायई।
अच्छन्तं रुक्खमूलम्मि, को णं ताहे तिगिच्छिई?

८०. को वा से ओसहं देइ? को वा से पुच्छई सुहं?
को से भत्तं च पाणं वा, आहरित्तु पणामए?

८१. जया य से सुही होई, तया गच्छइ गोयरं।
भत्तपाणस्स अट्ठाए, वल्लराणि सराणि य॥

८२. खाइत्ता पाणियं पाउं, वल्लरेहिं सरेहि य।
मिगचारियं चरित्ताणं, गच्छई मिगचारियं॥

८३. एवं समुट्ठिओ भिक्खू, एवमेव अणेगओ।
मिगचारियं चरित्ताणं, उड्ढं पक्कमई दिसं॥

८४. जहा मिए एग अणेगचारी,
अणेगवासे धुवगोयरे य।
एवं मुणी गोयरियं पविट्ठे,
नो हीलए नो वि य खिंसएज्जा॥

८५. मिगचारियं चरिस्सामि, एवं पुत्ता! जहासुहं।
अम्मापिऊहिं अणुन्नाओ, जहाहि उवहिं तओ॥

८६. मिगचारियं चरिस्सामि, सव्वदुक्खविमोक्खणिं।
तुब्भेहिं अम्म! ऽणुन्नाओ, गच्छ पुत्त! जहासुहं॥

८७. एवं सो अम्मापियरो, अणुमाणित्ताण वहुविहं।
ममत्तं छिन्दई ताहे, महानागो व्व कंचुयं॥

८८. इड्ढि वित्तं च मित्ते य, पुत्तदारं च नायओ।
रेणुयं व पडे लग्गं, निद्धुणित्ताण निग्गओ॥

८९. पंचमहव्वयजुत्तो, पंचसमिओ तिगुत्तिगुत्तो य।
सब्भिन्तरवाहिरओ, तवोकम्मंसि उज्जुओ॥

९०. निम्ममो निरहंकारो, निस्संगो चत्तगारवो।
समो य सव्वभूएसु, तसेसु थावरेसु य॥

९१. लाभालाभे सुहे दुक्खे, जीविए मरणे तहा।
समो निन्दापसंसासु, तहा माणावमाणओ॥

९२. गारवेसु कसाएसु, दण्डसल्लभएसु य।
नियत्तो हास-सोगाओ, अनियाणो अवन्धणो॥

९३. अणिस्सिओ इहं लोए, परलोए अणिस्सिओ।
वासीचन्दणकप्पो य, असणे अणसणे तहा॥

११. होमि नाहो भयन्ताणं, भोगे भुंजाहि संजया।
मित्तनाईपरिवुडो, माणुस्सं खु सुदुल्लहं॥

१२. अप्पणावि अणाहोसि, सेणिया! मगहाहिवा!
अप्पणा अणाहो सन्तो, कस्स नाहो भविस्ससि?

१३. एवं वुत्तो नरिन्दो सो, सुसंभन्तो सुविम्हिओ।
वयणं अस्सुयपुव्वं, साहुणा विम्हयन्निओ॥

१४. अस्सा हत्थी मणुस्सा मे, पुरं अन्तेउरं च मे।
भुंजामि माणुसे भोगे, आणा इस्सरियं च मे॥

१५. एरिसे सम्पयग्गम्मि, सव्वकामसमप्पिए।
कहं अणाहो भवई? मा हु भन्ते! मुसं वए॥

१६. न तुमं जाणे अणाहस्स, अत्थं पोत्थं च पत्थिवा!
जहा अणाहो भवई, सणाहो वा नराहिवा?

१७. सुणेह मे महाराय! अव्वक्खित्तेण चेयसा।
जहा अणाहो भवई, जहा मेयं पवत्तियं॥

१८. कोसम्वी नाम नयरी, पुराण-पुरभेयणी।
तत्थ आसी पिया मज्झ, पभूयधणसंचओ॥

१९. पढमे वए महाराय! अउला मे अच्छिवेयणा।
अहोत्था विउलो दाहो, सव्वगत्तेसु पत्थिवा!

२०. सत्थं जहा परमतिक्खं, सरीरविवरन्तरे।
आवीलिज्ज अरी कुद्धो, एवं मे अच्छिवेयणा॥

२१. तियं मे अन्तरिच्छं च, उत्तमंगं च पीडई।
इन्दासणिसमा घोरा, वेयणा परमदारुणा॥

२२. उवट्ठिया मे आयरिया, विज्जामन्ततिगिच्छगा।
अबीया सत्थकुसला, मन्तमूलविसारया ॥

२३. ते मे तिगिच्छं कुव्वन्ति, चाउप्पायं जहाहियं।
न य दुक्खा विमोयन्ति, एसा मज्झ अणाहया ॥

२४. पिया मे सव्वसारंपि, दिज्जाहि मम कारणा।
न य दुक्खा विमोयन्ति, एसा मज्झ अणाहया ॥

२५. माया वि मे महाराय ! पुत्तसोगदुहट्टिया।
न य दुक्खा विमोयन्ति, एसा मज्झ अणाहया ॥

२६. भायरो मे महाराय ! सगा जेट्ठकणिट्ठगा।
न य दुक्खा विमोयन्ति, एसा मज्झ अणाहया ॥

२७. भइणीओ मे महाराय ! सगा जेट्ठकणिट्ठगा।
न य दुक्खा विमोयन्ति, एसा मज्झ अणाहया ॥

२८. भारिया मे महाराय ! अणुरत्ता अणुव्वया।
अंसुपुण्णेहिं नयणेहिं, उरं मे परिसिंचई ॥

२९. अन्नं पाणं च ण्हाणं च, गन्ध-मल्ल-विलेवणं।
मए नायमणायं वा, सा वाला नेव भुंजई ॥

३०. खणंपि मे महाराय ! पासाओ वि न फिट्टई।
न य दुक्खा विमोएइ, एसा मज्झ अणाहया ॥

३१. तओ हं एवमाहंसु, दुक्खमाहु पुणो पुणो।
वेयणा अणुभविउं जे, संसारम्मि अणन्तए ॥

३२. सइं च जइ मुच्चेज्जा, वेयणा विउला इओ।
खन्तो दन्तो निरारम्भो, पव्वए अणगारियं ॥

३३. एवं च चिन्तइत्ताणं, पसुत्तो मि नराहिवा !
परियट्टन्तीए राईए, वेयणा मे खयं गया ॥

३४. तओ कल्ले पभायम्मि, आपुच्छित्ताण बन्धवे ।
खन्तो दन्तो निरारम्भो, पव्वइओऽणगारियं ॥

३५. तो हं नाहो जाओ, अप्पणो य परस्स य ।
सव्वेसिं चेव भूयाणं, तसाण थावराण य ॥

३६. अप्पा नई वेयरणी, अप्पा मे कूडसामली ।
अप्पा कामदुहा धेणू, अप्पा मे नन्दणं वणं ॥

३७. अप्पा कत्ता विकत्ता य, दुहाण य सुहाण य ।
अप्पा मित्तममित्तं च, दुप्पट्ठिय सुपट्ठिओ ॥

३८. इमा हु अन्ना वि अणाहया निवा ! तमेगचित्तो निहुओ सुणेहि ।
नियण्ठधम्मं लहियाण वि जहा, सीयन्ति एगे बहुकायरा नरा ॥

३९. जो पव्वइत्ताण महव्वयाइं, सम्मं च नो फासयई पमाया ।
अनिग्गहप्पा य रसेसु गिद्धे, न मूलओ छिन्नइ बन्धणं से ॥

४०. आउत्तया जस्स न अत्थि काइ, इरियाए भासाए तहेसणाए ।
आयाण-निक्खेव-दुगुंछणाए, न वीरजायं अणुजाइ मग्गं ॥

४१. चिरं पि से मुण्डरुई भवित्ता, अथिरव्वए तव नियमेहि भट्ठे ।
चिरं पि अप्पाण किलेसइत्ता, न पारए होइ हु संपराए ॥

४२. पोल्ले व मुट्ठी जह से असारे, अयन्तिए कूड-कहावणे वा ।
राढामणी वेरुलियप्पगासे, अमहग्घए होइ य जाणएसु ॥

४३. कुसीललिंगं इह धारइत्ता, इसिज्झयं जीविय वूहइत्ता ।
असंजए संजयलप्पमाणे, विणिग्घायमागच्छइ से चिरंपि ॥

४४. विसं तु पीयं जह कालकूडं, हणाइ सत्थं जह कुग्गहीयं।
एसे व धम्मो विसओववन्नो, हणाइ वेयाल इवाविवन्नो ॥

४५. जे लक्खणं सुविण पउंजमाणे, निमित्तकोऊहल-संपगाढे।
कुहेड-विज्जा-सवदारजीवी, न गच्छई सरणं तम्मि काले ॥

४६. तमंतमेणेव उ से असीले, सया दुही विप्परियासुवेइ।
संधावई नरग-तिरिक्खजोणिं, मोणं विराहेत्तु असाहुरूवे ॥

४७. उद्देसियं कीयगडं नियागं, न मुंचई किंचि अणेसणिज्जं।
अग्गी विवा सव्वभक्खी भवित्ता, इओ चुओ गच्छइ कट्टु पावं ॥

४८. न तं अरी कण्ठ छेत्ता करेइ, जं से करे अप्पणिया दुरप्पया।
से नाहिई मच्चुमुहं तु पत्ते, पच्छाणुतावेण दया विहूणो ॥

४९. निरट्ठिया नग्गरुई उ तस्स, जे उत्तमट्ठं विवज्जासमेइ।
इमे वि से नत्थि परे वि लोए, दुहओ वि से झिज्जइ तत्थ लोए ॥

५०. एमेवऽहा छन्दकुसीलरूवे, मग्गं विराहेत्तु जिणुत्तमाणं।
कुररी विवा भोग-रसाणुगिद्धा, निरट्ठसोया परियावमेइ ॥

५१. सोच्चाण मेहावि सुभासियं इमं, अणुसासणं नाणगुणोववेयं।
मग्गं कुसीलाण जहाय सव्वं, महानियंठाण वए पहेणं ॥

५२. चरित्तमायार-गुणन्निए तओ, अणुत्तरं संजम पालियाण।
निरासवे संखवियाण कम्मं, उवेइ ठाणं विउलुत्तमं धुवं ॥

५३. एवुग्गदन्ते वि महातवोधणे, महामुणी महापइन्ने महायसे।
महानियण्ठिज्जमिणं महासुयं, से काहए महया वित्थरेणं ॥

५४. तुट्ठो य सेणिओ राया, इणमुदाहु कयंजली।
"अणाहत्तं जहाभूयं, सुट्ठु मे उवदंसियं ॥

५५. तुज्भं सुलद्धं खु मणुस्सजम्मं, लाभा सुलद्धा य तुमे महेसी !
तुब्भे सणाहा य सबन्धवा य, जं भे ठिया मग्गे जिणुत्तमाणं ॥

५६. तं सि नाहो अणाहाणं, सव्वभूयाण संजया !
खामेमि ते महाभाग ! इच्छामि अणुसासिउं ॥

५७. पुच्छिऊण मए तुब्भं, भाणविग्घाओ जो कओ ।
निमन्तिया य भोगेहिं, तं सव्वं मरिसेहि मे ॥"

५८. एवं थुणित्ताण स रायसीहो, अणगारसीहं परमाइ भत्तिए ।
सओरोहो सपरियणो सबन्धवो, धम्माणुरत्तो विमलेण चेयसा ॥

५९. ऊस-सिय-रोम-कूवो, काऊण य पयाहिणं ।
अभिवन्दिऊण सिरसा, अइयाओ नराहिवो ॥

६०. इयरोवि गुणसमिद्धो, तिगुत्तिगुत्तो तिदण्डविरओ य ।
विहग इव विप्पमुक्को, विहरइ वसुहं विगयमोहो ॥

–त्ति बेमि ॥

सूत्रकृतांगसूत्र

(६)

वीरत्थुई–षष्ठ अध्ययन

१. पुच्छिस्सु णं समणा माहणा य, अगारिणो य पर-तित्थिया य ।
से केइ – णेगंतहियं धम्ममाहु, अणेलिसं साहु – समिक्खयाए ॥

२. कहं च नाणं कहं दंसणं से, सीलं कहं नाय-सुतस्स आसी ?
जाणासि णं भिक्खु ! जहातहेणं, अहासुतं बूहि जहा णिसंतं ॥

३. खेयन्नए से कुसले महेसी[1], अणंतनाणी य अणंतदंसी ।
जसंसिणो चक्खुपहे ठियस्स, जाणाहि धम्मं च धिइं च पेहि ॥

४. उड्ढं अहेयं तिरियं दिसासु, तसा य जे थावर जे य पाणा ।
से णिच्च-णिच्चेहि समिक्खपन्ने, दीवे व धम्मं समियं उदाहु ॥

५. से सव्वदंसी अभिभूयनाणी, णिरामगन्धे धिइमं ठियप्पा ।
अणुत्तरे सव्वजगंसि विज्जं, गंथा अतीते अभए अणाऊ ॥

६. से भूइपण्णे अणिए अचारी, ओहंतरे धीरे अणंत-चक्खू ।
अणुत्तरे तप्पइ सूरिए वा, वइरोयणिंदे व तमं पगासे ॥

७. अणुत्तरं धम्ममिणं जिणाणं, नेया मुणी कासव आसुपन्ने ।
इंदेव देवाण महाणुभावे, सहस्सणेता दिवि णं विसिट्ठे ॥

८. से पन्नया अक्खय–सायरे वा, महोदही वा वि अणंत–पारे ।
अणाइले वा अकसाइ मुक्के, सक्के व देवाहिवई जुईमं ॥

९. से वीरिएणं पडिपुण्ण–वीरिए, सुदंसणे वा नग–सव्व–सेट्ठे ।
सुरालए वासि–मुदागरे से, विरायए णेग–गुणोववेए ॥

---

[1] "खेयन्नए से कुसलासुपन्ने" – यह पाठान्तर भी उपलब्ध होता है ।

१०. सयं सहस्साण उ जोयणाणं, तिकंडगे पंडग–वेजयंते।
से जोयणे णव–णवते सहस्से, उद्धुस्सितो हेट्ठ सहस्समेगं ।।

११. पुट्ठे णभे चिट्ठइ भूमि–वट्ठिए, जं सूरिया अणु-परिवट्टयन्ति।
से हेमवन्ने वहुनन्दणे य, जंसी रतिं वेदयति महिंदा ।।

१२. से पव्वए सद्द–महप्पगासे, विरायती कंचण–मट्ठ–वण्णे।
अणुत्तरे गिरिसु य पव्व-दुग्गे, गिरिवरे से जलिए व भोमे ।।

१३. महीइ मज्झंमि ठिए णगिंदे, पन्नायते सूरिय–सुद्ध–लेसे।
एवं सिरीए उ स भूरि–वण्णे, मणोरमे जोयइ अच्चिमाली ।।

१४. सुदंसणस्से व जसो गिरिस्स, पवुच्चइ महतो पव्वयस्स।
एतोवमे समणे नाय–पुत्ते, जाई-जसो–दंसण–नाण–सीले ।।

१५. गिरीवरे वा निसहाययाणं, रुयए व सेट्ठे वलयाययाणं।
तओवमे से जग–भूइ-पन्ने, मुणीण मज्झे तमुदाहु पन्ने ।।

१६. अणुत्तरं धम्ममुईरइत्ता, अणुत्तरं झाणवरं झियाई।
सुसुक्क–सुक्कं, अपगंड – सुक्कं, संखिंदु – एगंतवदात – सुक्कं ।।

१७. अणुत्तरग्गं परमं महेसी, असेस–कम्मं स विसोहइत्ता।
सिद्धिं गते साइमणंतपत्ते, नाणेण सीलेण य दंसणेणं ।।

१८. रुक्खेसु णाए जह सामली वा, जंसी रतिं वेदयति सुवन्ना।
वणेसु वा णंदणमाहु सेट्ठं, नाणेण सीलेण य भूइपन्ने ।।

१९. थणियं व सद्दाण अणुत्तरे उ, चन्दो व ताराण महाणुभावे।
गंधेसु वा चन्दणमाहु सेट्ठं, एवं मुणीणं अपडिन्नमाहु ।।

२०. जहा सयंभू उदहीण सेट्ठे, नागेसु वा धरणिंदमाहु सेट्ठे।
खोओदये वा रस–वेजयंते, तवोवहाणे मुणि वेजयंते ।।

२१. हत्थीसु एरावणमाहु णाए, सीहो मियाणं सलिलाण गंगा।
पक्खीसु वा गरुले वेणुदेवे, णिव्वाणवादीणिह णायपुत्ते ।।

२२. जोहेसु णाए जह वीससेणे, पुप्फेसु वा जह अरविंदमाहु ।
खत्तीण सेट्ठे जह दंत-वक्के, इसीण सेट्ठे तह वद्धमाणे ।।

२३. दाणाण सेट्ठं अभय-प्पयाणं, सच्चेसु वा अणवज्जं वयंति ।
तवेसु वा उत्तम-बंभचेरं, लोगुत्तमे समणे नायपुत्ते ।।

२४. ठिईण सेट्ठा लवसत्तमा वा, सभा सुहम्मा व सभाण सेट्ठा ।
निव्वाण-सेट्ठा जह सव्वधम्मा, ण णायपुत्ता परमत्थि नाणी ।।

२५. पुढोवमे धुणइ विगय-गेही, न सण्णिहिं कुव्वइ आसुपन्ने ।
तरिउं समुद्दं व महाभवोघं, अभयंकरे वीर अणंत-चक्खू ।।

२६. कोहं च माणं च तहेव मायं, लोभं चउत्थं अज्झत्थ-दोसा ।
एआणि वंता अरहा महेसी, ण कुव्वई पाव ण कारवेइ ।।

२७. किरियाकिरियं वेणइयाणवायं, अण्णाणियाणं पडियच्च ठाणं ।
से सव्व-वायं इति वेयइत्ता, उवट्ठिए संजम-दीह-रायं ।।

२८. से वारिया इत्थि सराइभत्तं, उवहाणवं दुक्ख-खयट्ठयाए ।
लोगं विदित्ता आरं परं च, सव्वं पभू वारिय सव्व-वारं ।।

२९. सोच्चा य धम्मं अरिहन्तभासियं, समाहितं अट्ठ-पदोवसुद्धं ।
तं सद्दहाणा य जणा अणाऊ, इंदेव देवाहिव आगमिस्संति ।।

नन्दीसूत्र

(१०)

(आद्य मंगल)

तीर्थंकरों तथा आचार्यों की स्तुति

१. जयइ जग-जीव-जोणी-वियाणओ, जग-गुरू जगाणंदो।
जग-णाहो जग-बंधू, जयइ जग-प्पिया-महो भयवं॥

२. जयइ सुआणं पभवो, तित्थयराणं अपच्छिमो जयइ।
जयइ गुरू लोगाणं, जयइ महप्पा महावीरो॥

३. भद्दं सव्व-जगुज्जोयगस्स, भद्दं जिणस्स वीरस्स।
भद्दं सुरासुर-णमंसियस्स, भद्दं धुय-रयस्स॥

४. गुण-भवण-गहणसुय-रयण,भरिय दंसण-विसुद्ध-रत्थागा।
संघनगर! भद्दं ते, अखंड-चारित्त-पागारा॥

५. संजम-तव-तुंबारयस्स, नमो सम्मत्त-पारियल्लस्स।
अप्पडि-चक्कस्स जओ, होउ सया संघचक्कस्स॥

६. भद्दं सील-पडागूसियस्स, तव-नियम-तुरय-जुत्तस्स।
संघरहस्स भगवओ, सज्झाय-सुनन्दि-घोसस्स॥

७. कम्म-रय-जलोह-विणिग्गयस्स, सुय-रयण-दीहनालस्स।
पंच-महव्वय-थिर-कण्णियस्स गुणकेसरालस्स॥

८. सावग-जण-महुअरी परिवुडस्स, जिण-सूर-तेय-वुद्धस्स।
संघपउमस्स भद्दं, समण-गण-सहस्स-पत्तस्स॥

९. तव-संजम-मय-लंछण, अकिरिय-राहु-मुह-दुद्धरिस निच्चं।
जय संघचंद! निम्मल-सम्मत्त-विसुद्ध-जोण्हागा!॥

१०. पर-तित्थिय-गह-पह-नासगस्स, तव-तेय-दित्त-लेसस्स ।
नाणुज्जोयस्स जए, भद्दं दमसंघसूरस्स ।।

११. भद्दं धिइ-वेला-परिगयस्स, सज्झाय-जोग-मगरस्स ।
अक्खोहस्स भगवओ, संघसमुद्दस्स रुंदस्स ।।

१२. सम्म-द्दंसण-वर-वइर-दढ-रूढ-गाढावगाढ-पेढस्स ।
धम्म-वर-रयण-मंडिय, चामीयर-मेहलागस्स ।।

१३. नियमूसिय-कणय, सिलायलुज्जल-जलंत चित्त-कूडस्स ।
नंदण-वण-मणहर-सुरभि-सील-गंधुद्धुमायस्स ।।

१४. जीवदया-सुन्दर कंदरुद्दरिय, मुणिवर-मइंदइन्नस्स ।
हेउ-सय-धाउ-पगलंत, रयण-दित्तोसहिगुहस्स ।।

१५. संवर-वर-जल-पगलिय, उज्झर-प्पविरायमाण-हारस्स ।
सावग-जण-पउर-रवंत, मोर-नच्चंत-कुहरस्स ।।

१६. विणय-नय-प्पवर-मुणिवर, फुरंत-विज्जुज्जलंत-सिहरस्स ।
विविह-गुण-कप्प-रुक्खग, फल-भर-कुसुमाउल-वणस्स ।।

१७. नाण-वर-रयण-दिप्पंत, - कंत-वेरुलिय-विमल-चूलस्स ।
वंदामि विणय-पणओ, संघमहामंदरगिरिस्स ।।

१८. *(गुण-रयणुज्जल-कडयं, सील-सुगंधितव-मंडिउद्देसं ।
सुय-वारसंग-सिहरं, संघमहामंदरं वंदे) ।।

१९. *संगहणी-(नगर-रह-चक्क-पउमे, चंदे सुरे समुद्द-मेरुम्मि ।
जो उवमिज्जइ सययं, तं संघगुणायरं वंदे) ।।

२०. (वंदे) उसभं अजियं संभव-मभिनंदण-सुमइ-सुप्पभ-सुपासं ।
ससि पुप्फदंत सीयल, सिज्जंसं वासुपुज्जं च ।।

---

* तारांकित गाथाओं की चूर्णिकार तथा टीकाकारों ने व्याख्या नहीं की है अतः कतिपय विद्वान् इन्हें प्रक्षिप्त मानते हैं । किन्तु दूसरी ओर परंपरा से ये दोनों गाथाएं सर्वमान्य रही हैं ।

४२. *तत्तो य भूयदिन्नं, निच्चं तवसंजमे अनिव्विण्णं ।
पंडिय जण सामण्णं, वंदामो संजम-विहिण्णुं ॥

४३. वर-कणग-तविय चंपग,
विमउल-वर-कमल-गब्भ-सरिवन्ने ।
भविय-जण-हियय-दइए,
दया-गुण-विसारए धीरे ॥

४४. अड्ढ-भरह-प्पहाणे, बहुविह-सज्झाय-सुमुणियपहाणे ।
अणुओगिय-वर-वसभे, नाइल-कुल-वंस-नंदीकरे ॥

४५. भूय-हियअप्पगब्भे, वन्देऽहं भूयदिन्नमायरिए ।
भव-भय-वुच्छेय-करे, सीसे नागज्जुणरिसीणं ॥

४६. सुमुणिय-निच्चानिच्चं, सुमुणिय-सुत्तत्थ-धारयं वंदे ।
सब्भावुब्भावणया - तत्थं लोहिच्चणामाणं ॥

४७. अत्थ-महत्थ-क्खाणिं,
सुसमण-वक्खाण-कहण-निव्वाणिं ।
पयईए महुरवाणिं,
पयओ पणमामि दूसगणिं ॥

४८. तव-नियम-सच्च-संजम,
विणय-ज्जव-खंति मद्दव-रयाणं ।
सील-गुण-गद्दियाणं,
अणुओग-जुग-प्पहाणाणं ॥

४९. सुकुमाल-कोमल-तले, तेसिं पणमामि लक्खणपसत्थे ।
पाए पावयणीणं, पडिच्छय-सयएहिं पणिवइए ॥

५०. जे अन्ने भगवंते, कालिय-सुय-आणुओगिए धीरे ।
ते पणमिऊण सिरसा, "नाणस्स परूवणं" वोच्छं ॥

---

* गाथा सं० ४२ की वृत्तिकारों ने व्याख्या नहीं की है ।

आवश्यक सूत्र

(११)

मांगलिक

चत्तारि मंगलं,
अरिहंता मंगलं,
सिद्धा मंगलं,
साहू मंगलं,
केवलि-पण्णत्तो धम्मो मंगलं ।

चत्तारि लोगुत्तमा,
अरिहंता लोगुत्तमा,
सिद्धा लोगुत्तमा,
साहू लोगुत्तमा,
केवलि-पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो ।

चत्तारि सरणं पवज्जामि,
अरिहंते सरणं पवज्जामि,
सिद्धे सरणं पवज्जामि,
साहू सरणं पवज्जामि,
केवलि-पण्णत्तं धम्मं सरणं पवज्जामि ।

[ए चार शरणां,
दुःख हरणां,
और न शरणां कोय,
जे भवि-प्राणी आदरे,
ते अक्षय अमर पद होय]

२१. विमल-मणंतं य धम्मं, संतिं कुंथुं अरं च मल्लिं च ।
मुनिसुव्वय नमि नेमिं, पासं तह वद्धमाणं च ॥

२२. पढमित्थ इंदभूई, वीए पुण होई अग्गिभूइत्ति ।
तइए य वाउभूई, तओ वियत्ते सुहम्मे य ॥

२३. मंडिय-मोरियपुत्ते, अकंपिए चेव अयलभाया य ।
मेयज्जे य पहासे (य), गणहरा हुंति वीरस्स ॥

२४. निव्वुइ-पह-सासणयं, जयइ सया सव्व-भाव-देसणयं ।
कुसमय-मय-नासणयं, जिणिंद-वर-वीर-सासणयं[1] ॥

२५. सुहम्मं अग्गिवेसाणं, जंबूनामं च कासवं ।
पभवं कच्चायणं वंदे, वच्छं सिज्जंभवं तहा ॥

२६. जसभद्दं तुंगियं वंदे, संभूयं चेव माढरं ।
भद्दवाहुं च पाइन्नं, थूलभद्दं च गोयमं ॥

२७. एलावच्च सगोत्तं, वंदामि महागिरिं सुहत्थिं च ।
तत्तो कोसियगोत्तं, बहुलस्स सरिव्वयं वंदे ॥

२८. हारियगुत्तं साइं च, वंदिमो हारियं च सामज्जं ।
वंदे कोसियगोत्तं, संडिल्लं अज्जजीयधरं ॥

२९. ति-समुद्द-खाय-कित्तिं, दीव-समुद्देसु गहिय-पेयालं ।
वंदे अज्जसमुद्दं, अक्खुभिय-समुद्द-गंभीरं ॥

३०. भणगं करगं झरगं, पभावगं णाण-दंसण-गुणाणं ।
वंदामि अज्जमंगुं, सुय-सागर-पारगं धीरं ॥

---

[1] इस गाथा की चूर्णिकार ने तो नहीं, पर आचार्य हरिभद्र तथा मलय गिरि ने अपनी अपनी वृत्ति में टीका की है ।

३१. *वंदामि अज्जधम्मं, तत्तो वंदे य भद्दगुत्तं च ।
तत्तो य अज्जवइरं, तव-नियम-गुणेहि वइरसमं ॥

३२. *वंदामि अज्जरक्खिय, खमणे रक्खिय चरित्त सव्वस्से ।
रयण-करंडग-भूओ, अणुओगो रक्खिओ जेहिं ॥

३३. णाणम्मि दंसणम्मि य, तव-विणए णिच्च-काल-मुज्जुत्तं ।
अज्जं नंदिलखमणं, सिरसा वंदे पसन्नमणं ॥

३४. वड्ढउ वायगवंसो, जसवंसो अज्जनागहत्थीणं ।
वागरण-करण-भंगिय, कम्म-प्पयडी-पहाणाणं ॥

३५. जच्चंजण-धाउ-सम-प्पहाण, मुद्दिय-कुवलय-निहाणं ।
वड्ढउ वायगवंसो, रेवइनक्खत्त-नामाणं ॥

३६. अयलपुरा णिक्खंते, कालिय-सुय-आणुओगिए धीरे ।
बंभद्दीवग-सीहे, वायग-पय-मुत्तमं पत्ते ॥

३७. जेसिं इमो अणुओगो, पयरइ अज्जावि अड्ढ-भरहम्मि ।
बहु-नयर-निग्गय-जसे, ते वंदे खंदिलायरिए ॥

३८. तत्तो हिमवंत महंत, विक्कमे धिइ-परक्कम-मणंते ।
सज्झाय-मणंत-धरे, हिमवंते वंदिमो सिरसा ॥

३९. कालिय-सुय-अणुओगस्स, धारए धारए य पुव्वाणं ।
हिमवंत खमासमणे, वंदे णागज्जुणायरिये ॥

४०. मिउ-मद्दव-संपन्ने, आणुपुव्वि-वायगत्तणं पत्ते ।
ओह-सुय-समायारे, नागज्जुणवायए वंदे ॥

४१. *गोविंदाणं पि नमो, अणुओगे विउलधारिणिंदाणं ।
णिच्चं खंतिदयाणं, परूवणे दुल्लभिंदाणं ॥

---

* आर्य धर्म, भद्रगुप्त आर्य वज्र और वज्रसेन को संभवतः भिन्न आवलिका के आचार्य मान कर चूर्णिकार ने गाथा सं० ३१, ३२ व ४१ की व्याख्या नहीं की है ।

४२. *तत्तो य भूयदिन्नं, निच्चं तवसंजमे अनिव्विण्णं।
पंडिय जण सामण्णं, वंदामो संजम-विहिण्णुं ॥

४३. वर–कणग–तविय चंपग,
विमउल–वर–कमल–गब्भ–सरिवन्ने ।
भविय–जण–हियय–दइए,
दया–गुण–विसारए धीरे ॥

४४. अड्ढ–भरह-प्पहाणे, वहुविह-सज्झाय-सुमुणियपहाणे ।
अणुओगिय-वर-वसभे, नाइल-कुल-वंस-नंदीकरे ॥

४५. भूय-हियअप्पगब्भे, वन्देऽहं भूयदिन्नमायरिए ।
भव-भय-वुच्छेय-करे, सीसे नागज्जुणरिसीणं ॥

४६. सुमुणिय-निच्चानिच्चं, सुमुणिय-सुत्तत्थ-धारयं वंदे ।
सब्भावुब्भावणया – तत्थं लोहिच्चणामाणं ॥

४७. अत्थ–महत्थ–क्खाणिं,
सुसमण–वक्खाण–कहण–निव्वाणिं ।
पयईए महुरवाणिं,
पयओ पणमामि दूसगणिं ॥

४८. तव–नियम–सच्च–संजम,
विणय–ज्जव–खंति मद्दव–रयाणं ।
सील-गुण–गद्दियाणं,
अणुओग-जुग-प्पहाणाणं ॥

४९. सुकुमाल-कोमल-तले, तेसिं पणमामि लक्खणपसत्थे ।
पाए पावयणीणं, पडिच्छय-सयएहिं पणिवइए ॥

५०. जे अन्ने भगवंते, कालिय-सुय-आणुओगिए धीरे ।
ते पणमिऊण सिरसा, "नाणस्स परूवणं" वोच्छं ॥

---

* गाथा सं० ४२ की वृत्तिकारों ने व्याख्या नहीं की है ।

(११)

मांगलिक

चत्तारि मंगलं,
अरिहंता मंगलं,
सिद्धा मंगलं,
साहू मंगलं,
केवलि-पण्णत्तो धम्मो मंगलं ।

चत्तारि लोगुत्तमा,
अरिहंता लोगुत्तमा,
सिद्धा लोगुत्तमा,
साहू लोगुत्तमा,
केवलि-पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो ।

चत्तारि सरणं पवज्जामि,
अरिहंते सरणं पवज्जामि,
सिद्धे सरणं पवज्जामि,
साहू सरणं पवज्जामि,
केवलि-पण्णत्तं धम्मं सरणं पवज्जामि ।

[ए चार शरणां,
दुःख हरणां,
और न शरणां कोय,
जे भवि-प्राणी आदरे,
ते अक्षय अमर पद होय]

(१२)

मंगल पाठ

(श्रुतकेवली श्री भद्रबाहुस्वामी)

१. अरिहंत नमोक्कारो, जीवं मोयइ भवसहस्साओ।
भावेण कीरमाणो, होइ पुणो बोहि-लाभाए॥

२. अरिहन्त-नमोक्कारो, सव्व-पाव-प्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं॥

३. सिद्धाणं नमोक्कारो, जीवं मोयइ भवसहस्साओ।
भावेण कीरमाणो, होइ पुणो बोहि-लाभाए॥

४. सिद्धाणं नमोक्कारो, सव्व-पाव-प्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, बीयं हवइ मंगलं॥

५. आयरिय-नमोक्कारो, जीवं मोयइ भव सहस्साओ।
भावेण कीरमाणो, होइ पुणो बोहि-लाभाए॥

६. आयरिए - नमोक्कारो, सव्व-पाव - प्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, तइयं हवइ मंगलं॥

७. उवज्झाय-नमोक्कारो, जीवं मोयइ भवसहस्साओ।
भावेण कीरमाणो, होइ पुणो बोहि-लाभाए॥

८. उवज्झाय-नमोक्कारो, सव्व-पाव-प्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, चउत्थं हवइ मंगलं॥

९. साहूणं नमोक्कारो, जीवं मोयइ भवसहस्साओ।
भावेण कीरमाणो, होइ पुणो बोहि-लाभाए॥

१०. साहूणं नमोक्कारो, सव्व-पाव-प्पणासणो ।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पंचमं हवइ मंगलं ।।

११. एसो पंच-नमोक्कारो, जीवं मोयइ भवसहस्साओ ।
भावेण कीरमाणो, होइ पुणो वोहि-लाभाए ।।

१२. एसो पंच-नमोक्कारो, सव्व-पाव-प्पणासणो ।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं ।।

[आवश्यक निर्युक्ति]

(१३)

महामंगल

१. अरिहंता मज्झ मंगलं, अरिहंता मज्झ देवया ।
अरिहंते कित्तइत्ताणं, वोसिरामि त्ति पावगं ।।

२. सिद्धा य मज्झ मंगलं, सिद्धा य मज्झ देवया ।
सिद्धे य कित्तइत्ताणं, वोसिरामि त्ति पावगं ।।

३. आयरिया मज्झ मंगलं, आयरिया मज्झ देवया ।
आयरिए कित्तइत्ताणं, वोसिरामि त्ति पावगं ।।

४. उवज्झाया मज्झ मंगलं, उवज्झाया मज्झ देवया ।
उवज्झाए कित्तइत्ताणं, वोसिरामि त्ति पावगं ।।

५. साहू य मज्झ मंगलं, साहू य मज्झ देवया ।
साहू य कित्तइत्ताणं, वोसिरामि त्ति पावगं ।।

६. एए पंच मज्झ मंगलं, एए पंच मज्झ देवया ।
एए पंच कित्तइत्ताणं, वोसिरामि त्ति पावगं ।।

(१४)

श्री नवपद स्तुति

१. उप्पन्न - सन्नाण-महोदयाणं, सप्पाडिहेरासण - संठियाणं ।
सद्देसणाणंदिय-सज्जणाणं, नमो नमो होउ सया जिणाणं ॥

२. सिद्धाणमाणंदरमालयाणं, नमो नमोऽनंतचउक्कयाणं ।
सूरीणदूरीकयकुग्गहाणं, नमो नमो सूर-समप्पहाणं ॥

३. सुत्तत्थ-वित्थारण-तप्पराणं, नमो नमो वायग-कुंजराणं ।
साहूण संसाहिय-संजमाणं, नमो नमो सुद्ध-दया-दमाणं ॥

४. जिणुत्ततत्ते रुइलक्खणस्स, नमो नमो निम्मलदंसणस्स ।
अन्नाण-संमोह-तमोहरस्स, नमो नमो नाणदिवायरस्स ॥

५. आराहियाखंडियसक्कियस्स, नमो नमो संजम-वीरियस्स ।
कम्मद्दुमोम्मूलण-कुंजरस्स, नमो नमो तिव्वतवोभरस्स ॥

६. इय नव-पयसिद्धं, लद्धिविज्जासमिद्धं ।
पयडिय-सर-वग्गं, ह्रीं तिरेहा-समग्गं ॥
दिसवइ-सुरसारं, खोणि-पीढावयारं ।
तिजय-विजयचक्कं, सिद्धचक्कं नमामि ॥

(१५)

सिद्ध एवं वीर-वन्दना

१. सिद्धाणं – बुद्धाणं, पारगयाणं परंपरगयाणं ।
लोगग्गमुवगयाणं, नमो सया सव्व-सिद्धाणं ॥

२. जो देवाण वि देवो, जं देवा पंजली नमंसंति ।
तं देव देव-महियं, सिरसा वन्दे महावीरं ॥

३. इक्को वि नमोक्कारो, जिणवरवसहस्स वद्धमाणस्स ।
संसार - सागराओ, तारेई नरं व नारिं वा ॥

(१६)

उपसर्गहर-स्तोत्र

(आचार्य भद्रबाहुस्वामी)

१. उवसग्गहरं पासं, पासं वंदामि कम्मघणमुक्कं।
विसहर-विसनिन्नासं, मंगल – कल्लाण – आवासं ॥

२. विसहर फुल्लिगमंतं, कंठे धारेइ जो सया मणुओ।
तस्स गह रोगमारी-दुट्ठजरा जंति उवसामं ॥

३. चिट्ठउ दूरे मंतो, तुज्झ पणामो वि बहुफलो होइ।
नर-तिरिएसु वि जीवा, पावंति न दुक्ख-दोगच्चं ॥

४. तुह सम्मत्ते लद्धे, चिन्तामणिकप्पपायवब्भहिए।
पावंति अविग्घेणं, जीवा अयरामरं ठाणं ॥

५. इअ संथुओ महायस, भत्तिब्भर-निब्भरेण हियएण।
ता देव ! दिज्ज बोहिं, भवे भवे पास जिणचन्द ॥

६. ॐ अमर तरु कामधेणु, चिंतामणि-काम-कुंभ माईए।
सिरी पासनाह-सेवा, गयाण सव्वे वि दासत्तं ॥

७. ॐ ह्रीं श्रीं ऐं ॐ तुह दंसणेण सामिय, पणासेइ रोग-सोग-दोहग्गं।
कप्पतरुमिव जायइ, ॐ तुह दंसणेण समफलहेउ स्वाहा ॥

८. ॐ ह्रीं नमिऊण पणवसहियं, माया बीएण धरण नागिंदं।
सिरी काम राय कलियं, पासजिणंदं नमंसामि ॥

९. ॐ ह्रीं श्रीं पास विसहर – विज्जामन्तेण झाण झाएज्जा।
धरणे पउमादेवी, ॐ ह्रीं क्ष्मलँर्व्यूं स्वाहा ॥

१०. ॐ थुणे मि पासं ॐ ह्रीं पणमामि परम भत्तीए।
अट्ठक्खर धरणिंदो, पउमावइ पयडिया कित्ती ॥

११. ॐ नट्ठट्ठ-मयट्ठाणे, पणट्ठ-कम्मट्ठ-नट्ठसंसारे।
परमट्ठ-निट्ठियट्ठे, अट्ठ गुणाधीसरं वन्दे ॥

(१७)

श्री शांतिकर स्तोत्र

(आचार्य श्री मुनि सुन्दर)

१. संतिकरं संतिजिणं, जगसरणं जयसिरीइ दायारं।
समरामि भत्तपालग-निव्वाणी गरुडकयसेवं ॥

२. ॐ स नमो विप्पोसहि-पत्ताणं संतिसामि-पायाणं।
झ्रौं स्वाहा-मंतेणं, सव्वासिव-दुरिय-हरणाणं ॥

३. ॐ संति-नमुक्कारो, खेलोसहिमाइ-लद्धिपत्ताणं।
सौं ह्रीं नमो सव्वो-सहिपत्ताणं च देइ सिरिं ॥

४. वाणी तिहुअणसामिणी, सिरिदेवी जक्खराय गणिपिडगा।
गह-दिसिपाल सुरिंदा, सया वि रक्खंतु जिणभत्ते ॥

५. रक्खंतु मम रोहिणि, पन्नत्ती वज्जसिंखला य सया।
वज्जंकुसि चक्केसरि, नरदत्ता कालि महाकाली ॥

६. गोरी तह गंधारी, महजाला माणवी य वइरुट्टा।
अच्छुत्ता माणसिया, महामाणसियाओ देवीओ ॥

७. जक्खागोमुह महजक्ख, तिमुह जक्खेस तुंवरु कुसुमो।
मायंगो विजयाऽजिअ, वंभो मणुओ सुरकुमारो ॥

८. छम्मुह पयाल किन्नर, गरुडो गन्धव्व तह य जक्खिन्दो।
कूवर वरुणो भिउडी, गोमेहो पास मायंगो ॥

९. देवीओ चक्केसरि, अजिया दुरियारि कालि महाकाली।
अच्चुअ संता जाला, सुतारयाऽसोअ सिरिवच्छा ॥

१०. चंडा-विजयंकुसि, पन्नइत्ति निव्वाणि अच्चुआ धरणी।
वइरुट्ट दत्त गंधारि, अंब पउमावई सिद्धा ॥

११. इय तित्थ-रक्खण-रया, अन्ने वि सुरा सुरी य चउहा वि ।
वंतर-जोइणी-पमुहा, कुणंतु रक्खं सया अम्हं ।।

१२. एवं सुदिट्ठि-सुरगण-सहिओ संघस्स संति जिणचन्दो ।
मज्झ वि करेउ रक्खं, मुणि सुन्दरसूरि-थुअमहिमा ।।

१३. इअ संति नाह-सम्मद्दिट्ठि रक्खं सरइ तिकालं जो ।
सव्वोवद्दव-रहिओ, स लहइ सुह-संपयं परमं ।।

(१८)

श्री तिजय पहुत्त स्तोत्र

(आचार्य श्री मानदेव)

१. तिजय पहुत्त पयासय – अट्ठ महापाडिहेर जुत्ताणं ।
समयक्खित्तठियाणं, सरेमि चक्कं जिणंदाणं ।।

२. पणवीसा य असीआ, पनरस पन्नासजिणवरसमूहो ।
नासेउ सयल – दुरियं, भवियाणं भत्ति-जुत्ताणं ।।

३. वीसा पणयाला वि य, तीसा पन्नत्तरी जिणवरिंदा ।
गह-भूअ-रक्ख-साइणि – घोरुवसग्गं पणासंतु ।।

४. सत्तरि पणतीसा वि य, सट्ठी पंचेव जिणगणो एसो ।
वाहि-जल-जलण-हरि-करि – चोरारि-महाभयं हरउ ।।

५. पणपन्ना य दसेव य, पन्नट्ठी तह य चेव चालीसा ।
रक्खंतु मे सरीरं, देवासुरपणमिया सिद्धा ।।

६. ॐ हर हुंहः सर सुंसः, हरहुंहः तह य चेव सरसुंसः ।
आलिहिय-नाम-गब्भं, चक्कं किर सव्वओभद्दं ।

७. ॐ रोहिणि पन्नत्ति, वज्जसिखला तह य वज्जअंकुसिया ।
चक्के सरि नरदत्ता, कालि महाकालि तह य गोरी ।

८. गंधारी महजाला, माणवि वइरुट्ट तह य अच्छुत्ता ।
माणसि महामाणसिया, विज्जादेवीओ रक्खंतु ॥

९. पंचदसकम्मभूमिसु, उप्पन्नं सत्तरि जिणाण सयं ।
विविह-रयणाइवन्नो, वसोहियं हरउ दुरियाइं ॥

१०. चउतीस-अइसयजुआ, अट्ठ महापाडिहेर-कयसोहा ।
तित्थयरा गयमोहा, झाएअव्वा पयत्तेणं ॥

११. ॐ वर कणय-संख विद्दुम, मरगय-घण-सन्निहं विगयमोहं ।
सत्तरिसयं जिणाणं, सव्वामरपूइयं वन्दे स्वाहा ॥

१२. ॐ भवणवई वाणवंतर, जोइसवासी विमाणवासी अ ।
जे के वि दुट्ठ देवा, ते सव्वे उवसमंतु मम स्वाहा ॥

१३. चन्दण – कप्पूरेणं, फलए लिहिऊण खाइयं पीअं ।
एगंतराई गह – भूअ, साइणिमुग्गं पणासेई ॥

१४. इय सत्तरिसयजंतं, सम्मं मंतं दुवारि पडिलिहियं ।
दुरिआरि-विजयवंतं, निब्भन्तं निच्चमच्चेह ॥

(१६)

श्री सर्वतोभद्र यन्त्र

२५ ह	८० र	क्षि	१५ हुं	५० हः
२० स	४५ र	प	३० सुं	७५ सः
क्षि	प	ॐ	स्वा	हा
७० ह	३५ र	स्वा	६० हुं	५ हः
५५ स	१० र	हा	६५ सुं	४० सः

(२०)

श्री नमिऊरण स्तोत्र

(आचार्य श्री मानतुंग)

१. नमिऊरण परणय-सुरगरण, चूडामरिण-किरणरंजिग्रं मुरिणरणो ।
चलरणजुयलं महाभय – परणासरणं संथवं वुच्छं ।।

२. सडियकर-चरण-नह-मुह, निव्वुड्डनासा विवन्नलावन्ना ।
कुट्ठ महारोगानल – फुलिग - निद्दड्ढ - सव्वंगा ।।

३. ते तुह-चलरणाराहरण – सलिलंजलिसेयवुड्ढि-उच्छाहा ।
वरणदवदड्ढा गिरि, पायवव्व पत्ता पुरणो लच्छि ।।

४. दुव्वायखुभिय जलनिहि, उब्भड-कल्लोलभीसरणारावे ।
संभंत भयविसंठुल – निज्जामय – मुक्कवावारे ।।

५. अविदलिय – जारणवत्ता, खरणेरण पावंति इच्छियं कूलं ।
पासजिरण-चलरणजुयलं, निच्चं चिग्र जे नमन्ति नरा ।।

६. खरपवरणद्धुय वरणदव – जालावलिमिलियसयलदुमगहरणे ।
डज्झन्तमुद्धमयवहु – भीसरणरव-भीसरणंमि वरणे ।।

७. जगगुरुरणो कमजुयलं – निव्वाविय-सयलतिहुग्ररणाभोग्रं ।
जे संभरंति मरणुग्रा, न कुरणइ जलरणो भयं तेसिं ।।

८. विलसंत – भोगभीसरण – फुरिग्रारुरणनयरणतरल जीहालं ।
उग्गभुयंगं नवजलय – सच्छहं भीसरणायारं ।।

९. मन्नंति कीडसरिसं, दूरपरिच्छूढविसम-विसवेगा ।
तुह नामक्खर – फुडसिद्ध – मन्तगुरुग्रा नरा लोए ।।

१०. अडवीसु भिल्ल-तक्कर – पुलिंद-सद्दूल-सद्दभीमासु ।
भयविहुर वुन्नकायर – उल्लूरिय - पहियसत्थासु ।।

११. अविलुत्तविहवसारा, तुह नाह ! परणामत्त वावारा ।
ववगयविग्घा सिग्घं, पत्ता हियइच्छियं ठारणं ।।

१२. पज्जलियानलनयणं, दूर-वियारियमुहं महाकायं ।
नहकुलिसघायविअलिय – गइंद - कुंभत्थलाभोअं ।।
१३. पणयससंभमपत्थिव – नहमणिमाणिक्कपडियपडिमस्स ।
तुहवयण-पहरणधरा, सीहं कुद्धं पि न गणंति ।।
१४. ससिधवल-दंतमुसलं, दीहकरुल्लाल - वुड्ढि-उच्छाहं ।
महुपिंगनयणजुयलं, ससलिल-नव जलहरारावं ।।
१५. भीमं महागइंदं, अच्चासन्नंपि ते न वि गणंति ।
जे तुम्ह चलण-जुयलं, मुणिवइ ! तुंगं समल्लीणा ।।
१६. समरम्मि तिक्खखग्गा, भिघायपव्विद्धउद्धुयकबन्धे ।
कुन्तविणिभिन्नकरिकलह, मुक्कसिक्कारपउरम्मि ।।
१७. निज्जियदप्पुद्धुररिउ – नरिंदनिवहा भडा जसं धवलं ।
पावंति पावपसमिण ! पासजिण ! तुहप्पभावेण ।।
१८. रोग-जल-जलण-विसहर – चोरारि-मइंद-गय-रणभयाइं ।
पासजिणनामसंकि, त्तणेण पसमन्ति सव्वाइं ।।
१९. एवं महाभयहरं – पासजिणं संथवमुआरं ।
भवियजणाणंदयरं, कल्लाण - परंपर - निहाणं ।।
२०. रायभय-जक्ख-रक्खस, कुसुमिण-दुस्सउण-रिक्खपीडासु ।
संझासु दोसु पन्थे, उवसग्गे तह य रयणीसु ।।
२१. जो पढइ जो अ निसुणइ, ताणं कइणो य माणतुंगस्स ।
पासो पावं पसमेउ, सयल-भुवणच्चिि अच्चलणो ।।
२२. उवसग्गंते कमठा – सुरम्मि झाणाओ जो न संचलिओ ।
सुर-नर-किन्नर-जुवईहिं, संथुओ जयउ पासजिणो ।।
२३. एयस्स मज्झयारे, अट्ठारस अक्खरेहिं जो मंतो ।
जो जाणइ सो झायइ, परमपयत्थं फुडं पासं ।।
२४. पासहं समरण जो कुणइ, संतुट्ठ-हियएण ।
अट्ठुत्तरसय वाहिभय, नासइ-तस्स दूरेण ।।

(२१)

श्री महावीर स्तोत्र

(आचार्य श्री अभयदेव)

१. जइज्जा समरणो भयवं, महावीरे जिरणुत्तमे ।
लोगनाहे सयंबुद्धे, लोगंतिय विबोहिए ।।

२. वच्छरं दिण्णदाणोहे, संपूरियजणासए ।
नाणत्तयसमाउत्ते, पुत्ते सिद्धत्थराइणो ।।

३. चिच्चा रज्जं च रट्ठं च, पुरं अन्तेउरं तहा ।
निक्खमित्ता अगाराओ, पव्वइए अणगारियं ।।

४. परिसहाण नो भीइ, भेरवाण खमाखमे ।
पंचहा समिए गुत्ते, बंभयारी अकिंचणे ।।

५. निम्मम्मे निरहंकारे, अकोहे माणवज्जिए ।
अमाए लोभनिम्मुक्के, पसन्ते छिन्न-बन्धणे ।।

६. पुक्खरं व्व अलेवे य, संखो इव निरंजणे ।
जीवे वा अप्पडिग्घाए, गयणं व निरासए ।।

७. वाए वा अपडिबद्धे, कुम्मो वा गुत्तइन्दिए ।
विप्पमुक्को विहंगुव्व, खग्गिसिंगव्व एगगे ।।

८. भारंडे वाऽपमत्ते य, वसहे वा जायथामए ।
कुंजरो इव सोंडीरे, सीहो वा दुद्धरिस्सए ।।

९. सागरो इव गम्भीरे, चन्दो व सोमलेसए ।
सूरो वा दित्ततेउल्ले, हेमं वा जायरूवए ।।

१०. सव्वंसहे धरित्ति व्व, सायरिंदु व्व सच्छहे ।
सुट्ठु हुयहुआस व्व, जलमाणे य तेयसा ।।

११. वासी चन्दणकप्पे य, समाणे लेट्ठुकंचणे ।
समे पूयावमाणेसु, समे मुक्खे भवे तहा ।।

१२. नाणेणं दंसणेणं च, चरित्तेणमणुत्तरे ।
आलएणं विहारेणं, मद्दवेणाऽज्जवेण य ।।
१३. लाघवेणं च खंतीए, गुत्ती मुत्ती-अणुत्तरे ।
संजमेणं तवेणं च, संवरेणमणुत्तरे ।।
१४. अणेग-गुणगणाइण्णे, धम्मसुक्काण झायए ।
घाइक्खएण संजाए, अणन्तवर केवली ।।
१५. वीयराए य निग्गन्थे, सव्वन्नू सव्वदंसणे ।
देविंद-दाणविंदेहिं, निव्वत्तिय - महामहे ।।
१६. सव्वभासाणगाए य, भासाए सव्वसंसए ।
जुगवं सव्व जीवाणं, छिंदिउं भितगोयरे ।।
१७. हिए सुहे य निस्सेस-कारए सव्वपाणिणं ।
महव्वयाणि पंचे व, पणवित्ता सभावणे ।।
१८. संसारसायरे वुड्ड - जन्तु - सन्ताणतारए ।
जाणव्व देसियं तित्थं, संपत्ते पंचमिं गइं ।।
१९. से सिवे अयले निच्चे, अरुए अयरामरे ।,
कम्मप्पवंचनिम्मुक्के, जएवीरे जए जिणे ।।
२०. से जिणे वद्धमाणे य, महावीरे महायसे ।
असंखदुक्ख-खिण्णाणं अम्हाणं देउ निव्वुइं ।।
२१. इय परमपमोआ संथुओ वीरनाहो,
परमपसमदाणा देउ तुल्लत्तणं मे ।
असमसुहदुहेसुं सग्गसिद्धी भवेसुं,
कणय-कयवरेसुं सत्तुमित्तेसु वावि ।।
२२. पयडी व सइ पहाणं,
सीसेहिं जिणेसराण सुगुरूणं ।
वीर जिण-थवं एयं,
पढउ कयं अभयसूरीहिं ।।

(२२)

सुभाषित

१. अणासवा थूलवया कुसीला, मिउं पि चण्डं पकरेंति सीसा।
चित्ताणुया लहु दक्खोववेया, पसायए ते हु दुरासयं पि॥

२. अप्पा चेव दमेयव्वो, अप्पा हु खलु दुद्दमो।
अप्पा दन्तो सुही होइ, अस्सि लोए परत्थ य॥

३. चत्तारि परमंगाणि, दुल्लहाणीह जन्तुणो।
माणुसत्तं सुई सद्धा, संजमम्मि य वीरियं॥

४. असंखयं जीविय मा पमायए, जरोवणीयस्स हु नत्थिताणं।
एवं वियाणाहि जणे पमत्ते, कण्णू विहिंसा अजया गहिन्ति॥

५. संसारमावन्न परस्स अट्ठा, साहारणं जं च करेइ कम्मं।
कम्मस्स ते तस्स उ वेयकाले, न वन्धवा वन्धवयं उवेंति॥

६. वित्तेण ताणं न लभे पमत्ते, इमं मि लोए अदुवा परत्था।
दीवप्पणट्ठे व अणन्त-मोहे, नेयाउयं दट्ठुमदट्ठुमेव॥

७. सुत्तेसु यावी पडिवुद्ध-जीवी, न वीससे पण्डिए आसु-पन्ने।
घोरा मुहुत्ता अबलं सरीरं, भारण्ड पक्खीव चरेऽप्पमत्तो॥

८. माया पिया ण्हुसा भाया, भज्जा पुत्ता य ओरसा।
नालं ते मम ताणाय, लुप्पन्तस्स सकम्मुणा॥

९. अज्झत्थं सव्वओ सव्वं, दिस्स पाणे पियायए।
न हणे पाणिणो पाणे, भयवेराओ उवरए॥

१०. वहिया उड्ढमादाय, नावकंखे कयाइ वि।
पुव्वकम्म खयट्ठाए, इमं देहं समुद्धरे॥

११. विजहित्तु पुव्वसंजोगं, न सिणेहं कहिंचि कुव्वेज्जा।
असिणेह सिणेहकरेहिं, दोस पओसेहिं मुच्चए भिक्खू॥

१२. दुपरिच्चया इमे कामा, नो सुजहा अधीर पुरिसेहिं।
अह सन्ति सुव्वया साहू, जे तरन्ति अतरं वणिया व ।।

१३. जहा लाहो तहा लोहो, लाहा लोहो पवड्ढई।
दो मास-कयं कज्जं, कोडीए वि न निट्ठियं ।।

१४. नो रक्खसीसु गिज्झेज्जा, गंड-वच्छासुऽणेग-चित्तासु।
जाओ पुरिसं पलोभित्ता, खेल्लन्ति जहा व दासेहिं ।।

१५. नारीसु नोव गिज्झेज्जा, इत्थी विप्पजहे अणगारे।
धम्मं च पेसलं नच्चा, तत्थ ठवेज्ज भिक्खू अप्पाणं ।।

१६. दुल्लहे खलु माणुसे भवे, चिरकालेण वि सव्व पाणिणं।
गाढा य विवाग कम्मुणो, समयं गोयम ! मा पमायए ।।

१७. एवं भव संसारे, संसरइ सुहासुहेहिं कम्मेहिं।
जीवो पमाय बहुलो, समयं गोयम ! मा पमायए ।।

१८. तिण्णो हु सि अण्णवं महं, किं पुण चिट्ठसि तीरमागओ।
अभितुर पारं गमित्तए, समयं गोयम ! मा पमायए ।।

१९. वसे गुरुकुले निच्चं, जोगवं उवहाणवं।
पियंकरे पियंवाई, से सिक्खं लद्ध मरिहइ ।।

२०. समुद्दगम्भीर-समा दुरासया, अचक्किया केणइ दुप्पहंसया।
सुयस्स पुण्णा विउलस्स ताइणो खवित्तु कम्मं गइमुत्तमं गया ।।

२१. सक्खं खु दीसइ तवो विसेसो, न दीसई जाइ विसेस कोई।
सोवागपुत्ते हरिएस साहू, जस्सेरिस्सा इड्ढि महाणुभागा ।।

२२. तवो जोई जीवो जोइठाणं, जोगा सुया सरीरं कारिसंगं।
कम्म एहा संजमजोग सन्ती, होमं हुणामी इसिणं पसत्थं ।।

२३. धम्मे हरए बंभे सन्तितित्थे, अणाविले अत्तपसन्नलेसे।
जहिंसि ण्हाओ विमलो विसुद्धो, सुसीइभूओ पजहामि दोसं ॥

२४. धम्मारामे चरे भिक्खू, धिइमं धम्म सारही।
धम्मारामरए दन्ते, बम्भचेर समाहिए ॥

२५. देव दाणव गन्धव्वा, जक्ख-रक्खस किन्नरा।
बम्भयारिं नमं-सन्ति, दुक्करं जे करन्ति तं ॥

२६. वासुदेवो य णं भणइ, लुत्तकेसं जिइन्दियं।
संसारसागरं घोरं, तर कन्ने लहुँ लहुँ ॥

२७. एगे जिए जिया पंच, पंच जिए जिया दस।
दसहा उ जिणित्ताणं सव्वसत्तू जिणामहं ॥

२८. जरामरणवेगेणं, बुज्झमाणाण पाणिणं।
धम्मो दीवो पइट्ठा य, गई सरणमुत्तमं ॥

२९. सरीरमाहु नाव त्ति, जीवो वुच्चइ नाविओ।
संसारो अण्णवो वुत्तो, जं तरन्ति महेसिणो ॥

३०. न वि मुण्डिएण समणो, न ओंकारेण बम्भणो।
न मुणी रण्ण वासेणं, कुसचीरेण न तावसो ॥

३१. समयाए समणो होइ, बम्भचेरेण बम्भणो।
नाणेण य मुणी होई, तवेण होइ तावसो ॥

३२. कम्मुणा बम्भणो होइ, कम्मुणा होइ खत्तिओ।
वइस्से कम्मुणा होइ, सुद्दो हवइ कम्मुणा ॥

३३. उवलेवो होइ भोगेसु, अभोगी नोवलिप्पई।
भोगी भमइ संसारे, अभोगी विप्पमुच्चई ॥

३४. नादंसणिस्स नाणं, नाणेण विणा न हुन्ति चरणगुणा ।
अगुणिस्स नत्थि मोक्खो, नत्थि अमोक्खस्स निव्वाणं ।।

३५. जिणवयणे अणुरत्ता जिणवयणं जे करेंति भावेण ।
अमला असंकिलिट्ठा, ते हुंति परित्त संसारी ।।

३६. सारं दंसणनाणं, सारं तव-नियम-सीलं ।
सारं जिणवरधम्मं, सारं संलेहणा-मरणं ।।

३७. एगो मे सासओ अप्पा, नाणदंसण-संजुओ ।
सेसा मे बाहिरा भावा, सव्वे संजोगलक्खणा ।।

३८. मज्जं विसय-कसाया निद्दा विकहा य पंचमी भणिया ।
एए पंच पमाया, जीवा पाडंति संसारे ।।

३९. लब्भन्ति विमला भोए, लब्भन्ति सुरसंपया ।
लब्भन्ति पुत्त-मित्तं च, एगो धम्मो न लब्भई ।।

४०. रागो य दोसो विय कम्मबीयं, कम्मं च मोहप्पभवं वयंति ।
कम्मं च जाईमरणस्स मूलं, दुक्खं च जाईमरणं वयंति ।।

४१. दुक्खं हयं जस्स न होइ मोहो, मोहो हओ जस्स न होइ तण्हा ।
तण्हा हया जस्स न होइ लोहो, लोहो हओ जस्स न किंचणाइं ।।

४२. नाणेण जाणइ भावे, दंसणेण य सद्दहे ।
चरित्तेण निगिण्हाइ, तवेण परिसुज्झई ।।

४३. खड्डुया मे चवेडा मे, अक्कोसा य वहाय मे ।
कल्लाणमणु–सासन्तो, पावदिट्ठि त्ति मन्नई ।।

(२३)

सम्यक्त्व का स्वरूप और फल

१. अरिहंतो मह देवो, जावज्जीवं सुसाहुणो गुरुणो।
जिणपण्णत्तं तत्तं, इअ सम्मत्तं मए गहियं ॥
२. कुप्पवयणपासंडी, सव्वे उम्मग्गपट्ठिया।
सम्मग्गं तु जिणक्खायं, एस मग्गे हि उत्तमे ॥
३. जीवाइ नव पयत्थे, जो जाणइ तस्स होइ सम्मत्तं।
भावेण सद्दहन्ते, अयाणमाणेवि सम्मत्तं ॥
४. सव्वाइं जिणेसर भासिआइं, वयणाइं नन्नहा हुंति।
इअ वुद्धि जस्स मणे, सम्मत्तं निच्चलं तस्स ॥
५. अंतोमुहुत्तमित्तंपि, फासियं हुज्ज जेहिं सम्मत्तं।
तेसिं अवड्ढपुग्गल, परियट्टो चेव संसारो ॥
६. गहिऊण य सम्मत्तं, सुणिम्मलं सुरगिरीव णिक्कंपं।
तं झाणे झाइज्जइ, सावय ! दुक्खखयट्ठाए ॥
७. ते धण्णा सुकयत्था, ते सूरा तेवि पंडिया मणुया।
सम्मत्तं सिद्धियरं सिविणे वि ण मइलियं जेहिं ॥
किं वहुणा भणिएणं, जे सिद्धा णरवरा एगकाले।
सिज्झिहहि जे भविया, तं जाणह सम्मत्तं माहप्पं ॥

(२४)

सामायिक का स्वरूप एवं फल

१. जस्स सामाणिओ अप्पा, संजमे णियमे तवे।
तस्स सामाइयं होइ, इइ केवलिभासियं ॥
२. जो समो सव्व भूएसु, तसेसु थावरेसु य।
तस्स सामाइयं होइ, इइ केवलिभासियं ॥
३. मण-वय-तणुहिं करणे, कारवणम्मि य सपावजोगाणं।
जं खलु पच्चक्खाणं, तं सामाइयं मुहुत्ताई ॥
४. सामाइयम्मि उ कए, समणो व्व सावओ हवइ जम्हा।
एएण कारणेणं, वहुसो सामाइयं कुज्जा ॥
५. जीवो पमायवहुलो, वहुसो वि य वहुविहेसु अत्थेसु।
एएण कारणेणं, वहुसो सामाइयं कुज्जा ॥
६. दिवसे दिवसे लक्खं, देइ सुवण्णस्स खंडियं एगो।
एगो पुण सामाइयं, करेइ ण पहुप्पए तस्स ॥
७. सामाइयं कुणन्तो समभावं, सावओ य घडियदुगं।
आउं सुरेसु वंधइ, इत्तियमित्ताइं पलियाइं ॥
८. वाणवई कोडीओ लक्खा गुणसट्ठि सहस्स पणवीसं।
णवसय पणवीसाए, सतिहा अडभागपलियस्स[1] जुयलं ॥
९. तिव्वतवं तवमाणो, जं न वि निट्ठवइ जम्मकोडीहिं।
तं समभावियचित्तो, खवेइ कम्मं खणद्धेणं ॥
१०. जे के वि गया मोक्खं, जे वि य गच्छंति जे गमिस्संति।
ते सव्वे सामाइयमाहप्पेणं मुणेयव्वं ॥

---

[1] विशुद्ध भाव से एक सामायिक करने वाला व्यक्ति एक पल्योपम के ८ भागों में से तीन भाग सहित ९२,५९,२५,९२५ पल्योपम के देवायुष्य का वन्ध करता है।

(२५)

श्री सामायिक सूत्र

श्री पंचपरमेष्ठी मन्त्र

णमो अरिहंताणं ।
णमो सिद्धाणं ।
णमो आयरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं ।
णमो लोए सव्वसाहूणं ।

एसो पंच णमोक्कारो, सव्व पावप्पणासणो ।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं ॥

तिक्खुत्तो का पाठ

तिक्खुत्तो, आयाहिणं, पयाहिणं, करेमि, वंदामि, णमंसामि, सक्कारेमि, सम्माणेमि, कल्लाणं, मंगलं, देवयं, चेइयं, पज्जुवासामि, मत्थएण वंदामि ।

इरियावहियं का पाठ

इच्छा कारेण संदिसह भगवं ! इरियावहियं पडिक्कमामि ? इच्छं । इच्छामि पडिक्कमिउं, इरियावहियाए, विराहणाए । गमणागमणे, पाणक्कमणे, बीयक्कमणे, हरियक्कमणे, ओसा-उत्तिंग-पणग-दग-मट्टी-मक्कड़ा-संताणा-संक्कमणे । जे मे जीवा विराहिया-एगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया, पंचिंदिया, अभिहया, वत्तिया, लेसिया, संघाइया, संघट्टिया, परियाविया, किलामिया, उद्दविया, ठाणाओ ठाणं संकामिया, जीवियाओ ववरोविया, तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

तस्स उत्तरी का पाठ

तस्स उत्तरी करणेणं, पायच्छित्त करणेणं, विसोहि करणेणं, विसल्ली करणेणं, पावाणं कम्माणं निग्घायणट्ठाए, ठामि, काउस्सग्गं। अन्नत्थ ऊससिएणं, निसस्सिएणं, खासिएणं, छीएणं, जंभाइएणं, उड्डुएणं, वायनिसग्गेणं, भमलीए, पित्त-मुच्छाए। सुहुमेहिं अंग संचालेहिं सुहुमेहिं खेल संचालेहिं, सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं, एवमाइएहिं, आगारेहिं, अभग्गो, अविराहिओ हुज्ज मे काउस्सग्गो। जाव अरिहंताणं, भगवंताणं, नमोक्कारेणं न पारेमि, ताव कायं ठाणेणं, मोणेणं झाणेणं, अप्पाणं वोसिरामि।

लोगस्स का पाठ

१. लोगस्स उज्जोयगरे, धम्मतित्थयरे जिणे।
अरिहंते कित्तइस्सं, चउवीसं पि केवली॥

२. उसभमजियं च वंदे, संभवमभिणंदणं च सुमइं च।
पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे॥

३. सुविहिं च पुप्फदंतं, सीयल-सिज्जंस-वासुपुज्जं च।
विमलमणंतं च जिणं, धम्मं संतिं च वंदामि॥

४. कुन्थुं अरं च मल्लिं, वन्दे मुणिसुव्वयं नमिजिणं च।
वन्दामि रिट्ठनेमिं, पासं तह वद्धमाणं च॥

५. एवं मए अभित्थुआ, विहुयरयमला पहीणजरमरणा।
चउवीसं पि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु॥

६. कित्तिय वन्दिय महिया, जे ए लोगस्स उत्तमा सिद्धा।
आरुग्ग बोहिलाभं समाहिवरमुत्तमं दिन्तु॥

७. चन्देसु निम्मलयरा, आइच्चेसु अहियं पयासयरा।
सागरवरगम्भीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसन्तु॥

सामायिक लेने का पाठ

करेमि भन्ते ! सामाइयं, सावज्जं जोगं पच्चक्खामि । जाव नियमं* पज्जुवासामि । दुविहं तिविहेणं न करेमि न कारवेमि, मणसा वयसा कायसा । तस्स भन्ते ! पडिक्कमामि, निन्दामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि ।

नमोत्थुणं का पाठ

(अरिहन्त-सिद्ध-स्तुति)

१. नमोत्थु णं ! अरिहंताणं भगवंताणं ॥

२. आइगराणं तित्थयराणं सयंसंबुद्धाणं ॥

३. पुरिसुत्तमाणं पुरिससीहाणं पुरिसवर-
पुण्डरियाणं पुरिसवर गंधहत्थीणं ॥

४. लोगुत्तमाणं लोगनाहाणं लोगहियाणं ।
लोगपईवाणं लोगपज्जोयगराणं ॥

५. अभयदयाणं, चक्खुदयाणं, मग्गदयाणं ।
सरण-दयाणं, जीव दयाणं बोहिदयाणं ॥

६. धम्मदयाणं धम्मदेसयाणं धम्मनायगाणं ।
धम्मसारहीणं धम्मवरचाउरंत-चक्कवट्टीणं ॥

७. दीवोताणं सरण-गइपइट्ठाणं अप्पडिहयवरनाण-
दंसणधराणं विअट्टछउमाणं ॥

---

* जितनी सामायिक लेनी हों उनकी गिनती प्रकट कहकर आगे पाठ बोलना चाहिये । एक सामायिक एक मुहूर्त (४८ मिनिट) की गिनी जाती है ।

८. जिणाणं जावयाणं तिन्नाणं तारयाणं।
बुद्धाणं बोहयाणं मुत्ताणं मोयगाणं ।।

९. सव्वण्णूणं, सव्वदरिसिणं सिव-मयल-मरुय-मणंत-मक्खय-मव्वावाह-मपुणरावित्ति सिद्धिगइ नामधेयं ठाणं संपत्ताणं[1] णमो जिणाणं जिय-भयाणं ।।

सामायिक पारने का पाठ

१. एयस्स नवमस्स सामाइयवयस्स पंच अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा । तंजहा मणदुप्पणिहाणे, वयदुप्पणिहाणे, कायदुप्पणिहाणे, सामाइयस्स सइ अकरणया, सामाइयस्स अणवट्ठियस्स करणया, तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।।

२. सामाइयं सम्मं काएण न फासियं, न पालियं, न तीरियं, न किट्टियं, न सोहियं, न आराहियं, आणाए अणुपालियं न भवइ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

सामाइए मणस्स दसदोसा, वयणस्स दसदोसा, सरीरस्स बारस दोसा एया ३२ दोसा कया तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

सामाइए इत्थीकहा, भत्तकहा, देसकहा, रायकहा, एया चउ विकहा कया तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

सामाइए आहारसन्ना, भयसन्ना, मेहुणसन्ना, परिग्गहसन्ना, एया चउसन्ना कया तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

सामाइए अइक्कमं, वइक्कमं, अइयारं, अणायारं कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

---

[1] अरिहंत स्तुति में 'ठाणं सम्पत्ताणं' के स्थान पर 'ठाणं संपाविउं कामाणं' कहना चाहिये ।

सामायिक लेने की विधि

शान्त तथा एकान्त स्थान हो, भूमि को अच्छी तरह परिमार्जित की हो, श्वेत तथा शुद्ध आसन हो, गृहस्थोचित पगड़ी, टोपी, कोट, कमीज, पैंट, बुशशर्ट आदि उतार कर यथासम्भव श्वेत शुद्ध चादर एवं धोती का उपयोग किया जाय। मुखवस्त्रिका मुख पर लगाई जाय। पूर्व तथा उत्तर की ओर मुख करके पद्मासन से बैठकर या जिनमुद्रा से खड़े होकर गुरु वन्दन-सूत्र, तिक्खुत्तो-तीन बार, सम्यक्त्व सूत्र-अरिहंतो एक बार तथा वन्दन कर आलोचना की आज्ञा लेनी चाहिये।

आलोचना सूत्र-इरियावहियं-एक बार, उत्तरी करण-सूत्र-तस्स उत्तरी-एक बार, आगार सूत्र-अन्नत्थ-एक बार, पद्मासन आदि आसन से बैठ या जिनमुद्रा से खड़े होकर कायोत्सर्ग करना चाहिये।

कायोत्सर्ग-ध्यान में लोगस्स-एक बार, 'णमो अरिहंताण' पढ़कर ध्यान खोलना, प्रकट रूप में लोगस्स-एक बार पढ़ना चाहिये। गुरु-वन्दन सूत्र-तिक्खुत्तो-तीन बार, गुरु से या वे न हों तो भगवान् की साक्षी से सामायिक की आज्ञा लेनी चाहिये। प्रतिज्ञा सूत्र-करेमि भंते ! एक बार, दाहिना घुटना भूमि पर टेक कर, बायां घुटना खड़ा कर उस पर अंजलिबद्ध दोनों हाथ रखकर, प्रणिपात सूत्र-नमोत्थुणं-दो बार पढ़ना चाहिये।[1]

सामायिक पारने की विधि

गुरु-वन्दनसूत्र-तिक्खुत्तो-तीन वार, आलोचना सूत्र-इरियावहियं-एक वार, उत्तरी करण सूत्र-तस्स उत्तरी एक वार, आगारसूत्र-अन्नत्थ-एक वार। पद्मासन आदि से वैठकर या जिन-मुद्रा से खड़े

---

[1] नोट: दो नमोत्थुणं में पहला सिद्धों का एवं दूसरा अरिहंतों का है। अरिहंतो के नमोत्थुणं में 'ठाणं सम्पत्ताणं' के स्थान पर 'ठाणं संपाविउं कामाणं' बोलना चाहिये।

होकर कायोत्सर्ग करना चाहिये। कायोत्सर्ग ध्यान में लोगस्स एक वार पढ़ना चाहिये और 'नमो अरिहंताणं' पढ़ कर ध्यान खोलना चाहिये।

४८ मिनिट का सामायिक का काल स्वाध्याय, धर्म-चर्चा, समताभाव, शुभभाव प्रभुस्तुति स्तवन-स्तोत्रादि के उच्चारण पठन-पाठन एवं धर्म ध्यान करने में विताना चाहिये।

सामायिक-महिमा

समता सर्वभूतेषु, संयमः शुभ-भावना।
आर्त्त – रौद्र-परित्यागः, तद्धि सामायिकं व्रतम्॥

दिवसे दिवसे लक्खं, देई सुवण्णस्स खंडियं एगो।
एगो पुण सामाइयं, करेइ न पहुप्पए तस्स॥

प्राणिमात्र में समभाव रखना, संयम एवं शुभ भावनाओं में रमण करना, आर्त्त-ध्यान एवं रौद्र ध्यान का परित्याग कर देना, ये ही सामायिक व्रत के लक्षण हैं। इसी को सामायिक कहते हैं।

ऐसे सामायिक (व्रत) की साधना करने वाले साधक व्यक्ति की तुलना वह व्यक्ति भी नहीं कर सकता, जो व्यक्ति प्रतिदिन एक लाख स्वर्णमुद्राओं का दान करता हो।

"ॐ शांति प्रभु, जय शान्ति प्रभु,
पार्श्वनाथ महावीर प्रभु"

इस जाप की ११५८ मालाएं फेरने से १। लाख के जाप की पूर्ति होती है। इस जाप की वहुत वड़ी महिमा है।

(२६)

सामायिक के बत्तीस दोष

मन के दस दोष

अविवेक-जसो-कित्ती, लाभत्थी-गव्व-भय-नियाणत्थी ।*
संसयरोसअविणउ, अबहुमाण ए दोसा भणियव्वा ।।

वचन के दस दोष

कुवयणसहसाकारे, सछंदसंखेय कलहं च ।
विगहा विहासोऽसुद्धं, निरवेक्खो मुणमुणा ए दस वय दोसा ।।*

काया के बारह दोष

कुआसणं चलासणं चलदिट्ठी
सावज्जकिरिया-लंबणाकुञ्चणपसारणं ।
आलस्स मोडण मल विमासणं,
निद्दा वेयावच्चंत्ति बारस कायदोसा ।।१।।*

---

*१. विवेक विना सामायिक करे तो अविवेक दोष ।
२. यशकीर्त्ति के लिए सामायिक करे तो यशोवांछा दोष ।
३. धनादि के लाभ की इच्छा से करे तो लाभवांछा दोष ।
४. घमण्ड (अहंकार) सहित सामायिक करे तो गर्व दोष ।
५. राजादिक के अपराध के भय से करे तो भय दोष ।
६. सामायिक में निदान करे तो निदान दोष ।
७. फल में सन्देह रख कर सामायिक करे तो संशय दोष ।
८. सामायिक में क्रोध, मान, माया, लोभ करे तो रोष दोष ।

(२७)

दस पच्चक्खाण सूत्र

१. नमोक्कार सहियं

(नवकारसी)

उग्गए सूरे नमोक्कार सहियं पच्चक्खामि चउव्विहं पि आहारं असणं, पाणं, खाइमं, साइमं, अन्नत्थऽणाभोगेणं, सहसागारेणं वोसिरामि ।।

---

९. विनयपूर्वक सामायिक न करे तथा सामायिक में देव, गुरु, धर्म की अविनय आशातना करे तो अविनय दोष ।

१०. वहुमान तथा भक्तिभावपूर्वक सामायिक न करके वेगारी की तरह सामायिक करे तो अवहुमान दोष ।

११. कुवचन-कुत्सित वचन बोले तो कुवचन दोष ।

१२. विना विचारे बोले तो सहसाकार दोष ।

१३. सामायिक में गीत, ख्यालादि राग उत्पन्न करने वाले संसार सम्बन्धी गाने गावे तो स्वच्छन्द दोष ।

१४. सामायिक के पाठ और वाक्य को संक्षिप्त करके बोले तो संक्षेप दोष ।

१५. सामायिक में क्लेश का वचन बोले तो कलह दोष ।

१६. राजकथा, देशकथा, स्त्रीकथा, भोजनकथा, इन चार कथाओं में से कोई कथा करे तो विकथा दोष ।

१७. सामायिक में हँसी, मसखरी, ठट्ठा, रौल करे तो हास्य दोष ।

१८. सामायिक में गड़वड़ करके उतावला २ बोले, विना उपयोग और अशुद्ध पढ़े, बोले तो अशुद्ध दोष ।

१९. सामायिक में उपयोग विना बोले तो निरपेक्षा दोष ।

२. पोरिसि सूत्र
(पोरसी)

उग्गए सूरे पोरिसिं पच्चक्खामि, चउव्विहं पि आहारं असणं, पाणं, खाइमं, साइमं, अन्नत्थऽणाभोगेणं, सहसागारेणं, पच्छन्नकालेणं, दिसामोहेणं, साहुवयणेणं, सव्व समाहिवत्तियागारेणं वोसिरामि ॥

---

२०. स्पष्ट उच्चारण न करके गुण गुण बोले तो मुम्मण दोष।

२१. सामायिक में अयोग्य आसन में बैठे, जैसे कि ठासणी मार के बैठे, पाँव पर पाँव रख कर बैठे, पग पसार कर बैठे, ऊँचा आसन पल्थी मारकर बैठे इत्यादि, अभिमान के आसन से बैठे तो कुआसन दोष।

२२. सामायिक में स्थिर आसन न रक्खे, तो चलासन दोष।

२३. सामायिक में दृष्टि को स्थिर न करे, इधर-उधर दृष्टि फेरे तो चल-दृष्टि दोष।

२४. सामायिक में शरीर से कुछ सावद्य क्रिया करे, घर की रखवाली करे, शरीर से इशारा करे तो सावद्य क्रिया दोष।

२५. सामायिक में भित्ती आदि का टेका (सहारा) लेवे तो आलंबन दोष।

२६. सामायिक में बिना प्रयोजन के हाथ पांव को संकोचे पसारे तो आकुंचन-प्रसारण दोष।

२७. सामायिक में अंग मोड़े तो आलस्य दोष।

२८. सामायिक में हाथ पैर का कड़का काढ़े (चटकाये) तो आलस्य मोचन दोष।

२९. सामायिक में मैल उतारे तो मल दोष।

३०. गले में तथा गाल में हाथ लगाकर शोकासन से बैठे तो विमासण दोष।

३१. सामायिक में निद्रा लेवे तो निद्रा दोष।

३२. सामायिक में बिना कारण दूसरों से वैयावच्च करावे तो वैयावृत्य दोष।

३. पुरिमड्ढ सूत्र
(दो पोरसी)

उग्गए सूरे पुरिमिड्ढं पच्चक्खामि । चउव्विहं पि आहारं असणं, पाणं, खाइमं, साइमं, अन्नत्थऽणाभोगेणं, सहसागारेणं, पच्छन्नकालेणं, दिसामोहेणं साहुवयणेणं महत्तरागारेणं, सव्व समाहिवत्तियागारेणं वोसिरामि ॥

४. एगासण सूत्र

एगासणं पच्चक्खामि तिविहंपि आहारं असणं, खाइमं, साइमं अन्नत्थऽणाभोगेणं सहसागारेणं, सागारियागारेणं, आकुंचण पसारणेणं, गुरुअब्भुट्ठाणेणं, परिट्ठावणियागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्व समाहि-वत्तियागारेणं वोसिरामि ।

५. एगट्ठाण सूत्र

एगासणं एगट्ठाणं पच्चक्खामि, तिविहंपि आहारं असणं खाइमं, साइमं, अन्नत्थऽणाभोगेणं, सहसागारेणं, सागारियागारेणं, गुरु-अब्भुट्ठाणेणं, परिट्ठावणियागारेणं, महत्तरागारेणं सव्वसमाहि-वत्तियागारेणं वोसिरामि ।

६. आयंबिल सूत्र

आयंबिलं पच्चक्खामि, अन्नत्थऽणाभोगेणं, सहसागारेणं, लेवा-लेवेणं, उक्खित्तविवेगेणं, गिहि-संसट्ठेणं, परिट्ठावणियागारेणं महत्त-रागारेणं सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरामि ।

७. अभत्तट्ठ सूत्र (उपवास)

उग्गए सूरे अभत्तट्ठं पच्चक्खामि, चउव्विहंपि आहारं असणं, पाणं, खाइमं, साइमं, अन्नत्थऽणाभोगेणं, सहसागारेणं, परिट्ठावणि-यागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरामि ॥

४. आयारमायरंता, पंचपयारं सया पयासंता ।
आयरिआ तह तित्थं, निहय – कुतित्थं पयासंतु ।।

५. सम्म – सुअ – वायगा, वायगा य सिअवाया वायगा वाए ।
पवयण – पडिणीअकए, वण्णन्तु सव्वस्स संघस्स ।।

६. निव्वाण – साहणुज्जय-साहूणं जणिअ – सव्व – साहज्जा ।
तित्थप्पभावगा ते, हवंतु सुहवद्धिणो जइणो ।।

७. जेणाणुगयं नाणं, निव्वाण – फलं च चरणमुव्वहइ ।
तित्थस्स दंसणं तं, मंगलमुवणेउ सिद्धिकरं ।।

८. तित्थ इमो सुअ-धम्मो, समग्ग भव्वंगिवग्गकयसम्मो ।
गुण सुट्ठिअस्स संघस्स, मंगलं सम्ममिह दिसउ ।।

९. रम्मो चरित्त-धम्मो, संपाविअ – भव्व–सत्त – सिव सम्मो ।
निस्सेस किलेसहरो, हवउ सया सयल – संघस्स ।।

१०. गुणगण – गुरुणो गुरुणो, सिवसुहमइणो कुणंतु तित्थस्स ।
सिरि – वद्धमाणपहुपयडि-अस्स कुसलं समग्गस्स ।।

११. जिअ परिवक्खा जक्खा, गोमुह–मायंग – गयमुह – पमुखा ।
सिरि – बंभ – संति सहिआ, कय – नय – रक्खा सिवे दिंतु ।।

१२. अंबा पडिहयडिंबा, सिद्धा सिद्धाइआ पवयणस्स ।
चक्केसरि – वयरुट्टा, संति – सुरा दिसउ सुक्खाणि ।।

१३. सोलस – विज्जा-देवीओ, दिंतु संघस्स मंगलं विउलं ।
अच्छुत्ता – सहिआओ, विस्सुअ – सुअ – देवयाइ समं ।।

१४. जिणसासण-कय-रक्खा, जक्खा चउवीस सासण – सुरा वि ।
सुहभावा संतावो – तित्थस्स सया पणासंतु ।।

१५. जिणपवयणम्मि निरया, विरया कुपहाउ सव्वहा सव्वे ।
वेआवच्चकरा वि अ, तित्थस्स हवंतु संतिकरा ।।

१६. जिण-समय-सिद्धि सम्मग्ग-विहिअ भव्वाण जणिअ साहज्जो
गीअरई गीयजसो, सप्परिवारो सुहं दिसउ ।

१७. गिह-गुत्त-खित्त-जल-थल-वणपव्वय-वासि देव-देवीओ ।
जिण – सासणट्ठिआणं, दुहाणि सव्वाणि निहणंतु ।।

१८. दसदिसिवाला सखित्त – वलिया, नवग्गह सनक्खत्ता ।
जोइणि राहुग्गह – काल-पास कुलिअद्ध - पहरेहिं ।।

१९. सह काल कंटएहिं, सविट्ठि वत्थेहि कालवेलाहिं ।
सव्वे सव्वट्ठ सुहं, दिसंतु सव्वस्स तित्थस्स ।।

२०. भवणवइ वाणमंतर – जोइस वेमाणिआ य जे देवा ।
धरणिदसक्क-सहिआ, दलंतु दुरिआइ तित्थस्स ।।

२१. चक्कं जस्स जलंतं, गच्छइ पुरओ पणासिअ तमोहं ।
तं तित्थस्स भगवओ, नमो नमो वद्धमाणस्स ।।

२२. सो जयउ जिणो वीरो, जस्सज्जवि सासणं जए जयइ ।
सिद्धि – पह – सासणं कु-पहनासणं सव्व भय-पहणं ।।

२३. सिरि उसभसेण पमुहा, हय-भय-निवहा दिसंतु तित्थस्स ।
सव्व जिणाणं गणहारिणो णहं वंछिए सव्वं ।।

२४. सिरि वद्धमाण तित्थाहिवेण तित्थं समप्पिअं जस्स ।
सम्मं सुहम्म सामी, दिसउ सुहं सयल संघस्स ।।

२५. पयईइभद्दया जे भद्दाणि दिसंतु सयल संघस्स ।
इअर सुरावि हु सम्मं, जिणगणहर कहिअ कारस्स ।।

२६. इय जओ पढइ तिसंझं, दुस्संज्झं तस्स नत्थि किं पि जए ।
जिणदत्ताणाइट्ठिओ, सुनिट्ठिअट्ठो सुही होइ ।।

८. दिवसचरिम सूत्र

दिवसचरिमं पच्चक्खामि, चउव्विहं पि आहारं-असणं, पाणं, खाइमं, साइमं, अन्नत्थऽणाभोगेणं, सहसागारेणं, महत्तरागारेणं सव्व समाहिवत्तियागारेणं वोसिरामि ॥

९. अभिग्गह सूत्र

अभिग्गहं पच्चक्खामि चउव्विहं पि आहारं असणं, पाणं, खाइमं, साइमं, अन्नत्थऽणाभोगेणं, सहसागारेणं, महत्तरागारेणं सव्व समाहिवत्तियागारेणं वोसिरामि ॥

१०. विगइय सूत्र

विगइओ पच्चक्खामि, अन्नत्थऽणाभोगेणं, सहसागारेणं, लेवालेवेणं, गिहत्थ संसट्ठेणं, उक्खित्तविवेगेणं, पडुच्चमक्खिएणं पारिट्ठावणियागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्व समाहिवत्तियागारेणं वोसिरामि ।[1]

(२८)

सम्यक्त्व (समकित) सूत्र पाठ

अरिहंतो मह देवो, जावज्जीवं सुसाहुणो गुरुणो ।
जिणपण्णत्तं तत्तं, इअ सम्मत्तं मए गहियं ॥

(२९)

सात कुव्यसनों का निषेध

जुआ खेलना, मांस, मद, वैश्या – व्यसन, शिकार ।
चोरी, पर – रमणी-रमण, सातों नरक द्वार ॥

१. जुआ – शर्त लगा कर ताश आदि खेलना, चांदी का व अन्य पदार्थों का सट्टा व रेस का भी सट्टा एक प्रकार का जुआ है । यदि सर्वथा त्याग न कर सकें तो परिमाण अवश्य करना चाहिये ।

---

[1] कृपया पृष्ठ ४५४ एवं ४५५ पर भी पच्चक्खाण पाठ हैं, वे भी देखें ।

२. मांस – भक्षण करना, अण्डे, मछली आदि का प्रयोग करना,

३. मदिरापान करना, भंग, गांजा, सुलफा, चरस, तम्बाखू, आदि का सेवन करना,

४. वैश्यागमन करना,

५. शिकार खेलना, अथवा विना अपराध किसी भी त्रस प्राणी को संकल्प पूर्वक मारना, घातक हमला या वार करना,

६. चोरी करना यानि विना दी हुई वस्तु लेना, अथवा

७. परस्त्री गमन करना।

नोट – ये सातों नरक के द्वार हैं। प्रत्येक साधक व्यक्ति को इन सातों ही कुव्यसनों का जीवन-भर के लिये त्याग कर देना चाहिये। इनका त्याग करने से प्राणिमात्र के लिये कल्याण का मार्ग प्रशस्त हो सकता है, अन्यथा नहीं। जीवन को उन्नत बनाने व चरित्र-निर्माण के लिये निर्व्यसनी होना आवश्यक है। ये सातों व्यसन दुर्गति के कारण एवं अधर्म को बढ़ाने वाले हैं। अतः व्रती बनने वालों को इन कुव्यसनों का पहले त्याग करना आवश्यक है।

(३०)

सर्वाधिष्ठायक स्तोत्र

१. तं जयउ जए तित्थं, जमित्थ तित्थाहिवेण वीरेण।
सम्मं पवत्तिअं, भव्व – सत्त – सत्थाण सुह – जणयं॥

२. नासिअ – सयल – किलेसा, निहय-कुलेसा पसत्थ-सुहलेसा।
सिरिवद्धमाण – तित्थस्स, मंगलं दिंतु ते अरहा॥

३. निद्दड्ढ – कम्मवीआ, वीआ परमिट्ठिणो गुण-समिद्धा।
सिद्धा तिजय – पसिद्धा, हणंतु दुक्खाणि तित्थस्स॥

(३१)

नवग्रह स्तुतिर्गभित पार्श्व स्तोत्रम्

१. दोसाऽवहार – दक्खो, नालीयायर – वियास गो-पसरो।
रयणत्तयस्स जणश्रो, पास-जिणो जयइ जय-चक्खू ॥
२. कय कुवलय पड़िवोहो, इरिणंकिय[1] विग्गहो कलानिलश्रो।
विहियारविन्द – महणो, दियराश्रो जयइ पास-जिणो ॥
३. कंत्तीय-णिज्जणंतो, सिन्दूरं पुहविनंदणो सूरो।
जय-जन्तु – श्रमय – वक्को, सुमंगलो जयइ पहु पासो ॥
४. उप्पल-दल-नील-रुई, हरि – मंडल-संथुवो इलाणन्दो।
रयणियर – दारश्रो मह, बुहो पसीइज्ज पास-पहु ॥
५. नाहिय-वाय-वियड्ढो, नायत्थो नायराय-कय-पूश्रो।
सिरि पास-नाह देवो, देवायरिश्रो सुहं दिसउ ॥
६. राया-वट्ट - समुज्जल - तणुप्पहा - मंडलो महाभूई।
श्रसुरेहिं नमिज्जंतो, पास जिणिंदो कवी जयइ ॥
७. तिमिरासि समारूढ़ो, संतो दुक्खावहो जयंमि थिरो।
वहुलतमासरिससिरी, जय चक्खु सुश्रो जयइ पासो ॥
८. कवलीकयदोसायर, मायं डरहं श्रहोतणु विमुक्कं।
लोयाभरणीभूयं, पास – जिणं सत्तमं सरह ॥
९. दुरियाइं पास नाहो, सिहावमालिय – नहो भुवण केऊ।
दूरं तम – रासीश्रो, सत्तम – ठाणठिश्रो हरउ ॥
१०. इय नवगह थुई गब्भं, जिणपहसूरीहिं गुंफियं - थवणं।
तुह पास पढ़ई जो तं, श्रसुहावि गहा ण पीडंति ॥

---

[1] इरिणा – सर्पेण श्रंकित इत्यर्थः


संस्कृत

(१)

मंगल–पाठ

१. अर्हन्तो भगवन्त इन्द्रमहिताः सिद्धाश्च सिद्धिस्थिताः,
आचार्या जिनशासनोन्नतिकराः पूज्या उपाध्यायकाः ।
श्रीसिद्धान्तसुपाठका मुनिवरा, रत्नत्रयाराधकाः,
पञ्चैते परमेष्ठिनः प्रतिदिनं कुर्वन्तु वो मंगलम् ।।

२. वीरः सर्वसुरासुरेन्द्रमहितो, वीरं बुधाः संश्रिताः,
वीरेणाभिहतः स्वकर्मनिचयो, वीराय नित्यं नमः ।
वीरात्तीर्थमिदं प्रवृत्तमतुलं, वीरस्य घोरं तपो,
वीरे श्रीधृतिकीर्त्तिकान्तिनिचयो, भो वीर ! भद्रं दिश ।।

३. ब्राह्मी चन्दनबालिका भगवती राजीमती द्रौपदी,
कौशल्या च मृगावती च सुलसा सीता, सुभद्रा शिवा ।
कुन्ती शीलवती नलस्य दयिता चूला प्रभावत्यपि,
पद्मावत्यपि सुन्दरिर्दिनमुखे कुर्वन्तु वो मंगलम् ।।

४. मंगलं भगवान् वीरो मंगलं गौतमप्रभुः ।
मंगलं स्थूलिभद्राद्याः जैनधर्मोऽस्तु मंगलम् ।।

५. सर्वमंगल-मांगल्यं, सर्वकल्याणकारणम् ।
प्रधानं सर्वधर्माणां, जैनं जयतु शासनम् ।।

६. अर्हन्तो ज्ञान-भाजः सुरवर-महिताः, सिद्धि-सौधस्थ-सिद्धाः ।
पंचाचार प्रवीणाः प्रगुण गणधराः पाठकाश्चागमानाम् ।।
लोके लोकेश-वन्द्याः, सकल यतिवराः साधु धर्माभिलीनाः ।
पंचाप्येते सदाप्ताः विदधतु कुशलं विघ्ननाशं विधाय ।।

७. संसार-दावानल-दाह-नीरं, सम्मोह-धूलीहरणे समीरम् ।
माया-रसा-दारण-सार-सीरं, नमामि वीरं गिरिसार-धीरम् ।।

८. भावावनाम-सुर-दानव मानवेन-,
चूला-विलोल-कमलावलि-मालितानि ।।
सम्पूरिताभिनत-लोक-समीहितानि ।
कामं नमामि जिनराज-पदानि तानि ।।

९. तज्जयति परं ज्योतिः, समं समस्तैरनन्त-पर्यायैः ।
दर्पणतल इव सकला, प्रतिफलति पदार्थ-मालिका यत्र ।।

१०. मोक्ष मार्गस्य नेतारं, भेत्तारं कर्म-भूभृताम् ।
ज्ञातारं विश्व-तत्वानां, वन्दे तद्गुण-लब्धये ।।

११. दिक्-कालाद्यनवच्छिन्ना-अनन्त-चिन्मात्र-मूर्तये ।
स्वानु-भूत्येक-मानाय, नमः शान्ताय तेजसे ।।

१२. अपवित्रः पवित्रो वा, सुस्थितो दुःस्थितोऽपि वा ।
यः स्मरेत्परमात्मानं, स बाह्याभ्यन्तरे शुचिः ।।

१३. नमः समय-साराय, स्वानु-भूत्या चकासते ।
चिन्स्वभावाय भावाय, सर्व-भावान्तर-च्छिदे ।।

१४. अनन्त-धर्मणस्तत्त्वं, पश्यन्ती प्रत्यगात्मनः ।
अनेकान्तमयी मूर्तिर्, नित्यमेव प्रकाशताम् ।।

१५. नमः श्री वर्द्धमानाय, निर्द्धूत-कलिलात्मने ।
सालोकानां त्रिलोकानां, यद्-विद्या दर्पणायते ।।

१६. भवबीजांकुर-जनना, रागाद्याः क्षयमुपागता यस्य ।
ब्रह्मा वा विष्णुर्वा, हरो जिनो वा नमस्तस्मै ॥

१७. तव पादौ मम हृदये, मम हृदयं तव पदद्वये लीनम् ।
तिष्ठतु जिनेन्द्र ! तावद्, यावन्निर्वाण-सम्प्राप्तिः ॥

१८. शास्त्राभ्यासो जिन-पतिनुतिः संगतिः सर्वदाऽऽर्यैः ।
सत्साधूनां गुण-गण-कथा, दोष-वादे च मौनम् ॥

१९. सर्वस्यापि प्रिय हितवचो, भावना चात्मतत्वे ।
सम्पद्यन्तां मम भव-भवे, यावदेतेऽपवर्गः ॥

२०. शिवमस्तु सर्वजगतः परहित-निरता भवन्तु भूतगणाः ।
दोषाः प्रयान्तु नाशं, सर्वत्र सुखी भवतु लोकः ॥

२१. सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद्दुख भाग् भवेत् ॥

२२. श्रूयतां धर्मसर्वस्वं, श्रुत्वा चैवावधार्यताम् ।
आत्मनः प्रतिकूलानि, परेषां न समाचरेत् ॥

२३. अष्टादशपुराणेषु, व्यासस्य वचनद्वयम् ।
परोपकारः पुण्याय, पापाय परपीड़नम् ॥

२४. विरम विरम संगान्मुंच मुंच प्रपंचम् ।
विसृज विसृज मोहं, विद्धि विद्धि स्वतत्त्वम् ॥
कलय कलय वृत्तं, पश्य पश्य स्वरूपम् ।
कुरु कुरु पुरुषार्थं निर्वृतानन्द - हेतोः ॥

२५. अतुलसुखनिधानं ज्ञानविज्ञानबीजम् ।
विलयगतकलंकं शान्तविश्वप्रचारम् ॥
गलितसकलशंकं विश्वरूपं विशालम् ।
भज विगत-विकारं स्वात्मनात्मानमेव ॥

२६. यदि विषय-पिशाची निर्गता देहगेहात् ।
सपदि यदि विशीर्णो मोहनिद्रातिरेकः ।
यदि युवतिकरंके निर्ममत्वं मे प्रपन्नो ॥
झटिति ननु विधेहि ब्रह्मवीथिविहारम् ॥

२७. मूढ जहीहि धनागमतृष्णां, कुरु सद्बुद्धिं मनसि वितृष्णाम् ।
यल्लभसे निजकर्मोपात्तं, वित्तं तेन विनोदय चित्तम् ॥

२८. अर्थमनर्थं भावय नित्यं, नास्ति ततः सुखलेशः सत्यम् ।
पुत्रादपि धनभाजां भीतिः, सर्वत्रैषा विहिता रीतिः ॥

२९. कामं क्रोधं लोभं मोहं, त्यक्त्वात्मानं भावय कोऽहम् ।
आत्मज्ञानविहीना मूढाः, ते पच्यन्ते नरक निगूढ़ाः ॥

३०. नलिनीदलगतसलिलं तरलं, तद्वज्जीवितमतिशय चपलम् ।
विद्धि व्याध्यभिमान-ग्रस्तं, लोकं शोकहतं च समस्तम् ॥

(२)

श्री चतुर्विंशति जिन स्तोत्र

१. आदौ नेमिजिनं नौमि, संभवं सुविधिं तथा ।
धर्मनाथं महादेवं, शान्तिं शान्तिकरं सदा ॥

२. अनन्तं सुव्रतं भक्त्या, नमिनाथं जिनोत्तमम् ।
अजितं जितकन्दर्पं चन्द्रं चन्द्र-समप्रभम् ॥

३. आदिनाथं तथा देवं, सुपार्श्वं विमलं जिनम् ।
मल्लिनाथं गुणोपेतं, धनुषां पंच-विंशतिम् ॥

४. अरनाथं महावीरं, सुमतिं च जगद्गुरुम् ।
श्री पद्मप्रभनामानं, वासुपूज्यं सुरैर्नतम् ॥

५. शीतलं शीतलं लोके, श्रेयांसं श्रेयसे सदा ।
कुन्थुनाथं च वामेयं, तथाभिनन्दनं जिनम् ॥

६. जिनानां नामभिर्बद्धः पंचषष्टि-समुद्भवः ।
यंत्रोऽयं राजते यत्र, तत्र सौख्यं निरन्तरम् ॥

७. यस्मिन् गृहे सदाभक्त्या, यंत्रोऽयं धृयते बुधैः ।
भूत - प्रेत - पिशाचादेर् - भयं तत्र न विद्यते ॥

८. सकलगुणनिधानं यन्त्रमेनं विशुद्धं,
हृदय-कमलकोषे धीमतां ध्येयरूपम् ।
जयतिलकगुरु-श्री सूरिराजस्य शिष्यो,
वदति सुख निदानं मोक्ष लक्ष्मी-निवासम् ॥

(३)

महावीराष्टक स्तोत्र

१. यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचितः,
समं भान्ति ध्रौव्य-व्यय-जनि-लसन्तोऽन्तरहिताः।
जगत् साक्षी मार्ग-प्रकटनपरो भानुरिव यो,
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु नः॥

२. अताम्रं यच्चक्षुः कमल-युगलं स्पन्दरहितं,
जनान् कोपापायं प्रकटयति वाऽभ्यन्तरमपि।
स्फुटं मूर्तिर्यस्य प्रशमितमयी वाति विमला,
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु नः॥

३. नमन्नाकेन्द्राली-मुकुट – मणि-भा-जाल-जटिलं,
लसत्पादाम्भोजद्वयमिह यदीयं तनुभृताम्।
भवज्वाला-शान्त्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि,
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु नः॥

४. यदर्चाभावेन प्रमुदितमना दर्दुर इह,
क्षणादासीत् स्वर्गी गुण-गण-समृद्धः सुखनिधिः।
लभन्ते सद्भक्ताः शिवसुखसमाजं किमु तदा?
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु नः॥

५. कनत्स्वर्णाभासोऽप्यपगततनुर् ज्ञान-निवहो,
विचित्रात्माऽप्येको नृपतिवर–सिद्धार्थ-तनयः।
अजन्माऽपि श्रीमान् विगत-भवरागोऽद्भुतगतिर्,
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु नः॥

जिन्हों की प्रज्ञा में मुकुर-सम चैतन्य जड़ भी,
सदा ध्रौव्योत्पादस्थितियुत सभी साथ झलकें।
जगत्साक्षी मार्ग-प्रकटन-विधाता तरणि ज्यों,
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी सतत हों ।।

जिन्हों की नेत्राभा अचल, अरुणाई-रहित हो,
सुझाती भक्तों को हृदयगत क्रोधादि-शमता।
विशुद्धा सौम्या आकृति अमित ही भव्य लगती,
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी सतत हों ।।

नमस्कर्ता इन्द्र-प्रभृति अमरों के मुकुट की,
प्रभा श्रीपादाम्भोरुह-युगल-मध्ये झलकती।
भव-ज्वालाओं का शमन करते वे स्मरण से,
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी सतत हों ।।

जिन्हों की अर्चा से मुदित-मन हो दर्दुर कभी,
हुआ था स्वर्गी तत्क्षण सुगुण-धारी अति सुखी।
शिवश्री के भागी यदि सुजन हों तो अति कहाँ,
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी सतत हों ।।

तपे सोने-जैसे तनु-रहित भी ज्ञान-गृह हैं,
अकेले नाना भी जनि-रहित सिद्धार्थ-सुत हैं।
महाश्री के धारी विगत-भव-रागी अति-गति,
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी सतत हों ।।

६. यदीया वाग्गंगा विविध नय-कल्लोल—विमला,
बृहज्ज्ञानाम्भोभिर्जगति जनतां या स्नपयति ।
इदानीमप्येषा बुधजन–मरालैः परिचिता,
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु नः ॥

७. अनिर्वारोद्रेकस् त्रिभुवनजयी कामसुभटः,
कुमारावस्थायामपि निजबलाद्येन विजितः ।
स्फुरन्नित्यानन्द-प्रशमपदराज्याय स जिनः,
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु नः ॥

८. महामोहातंक–प्रशमनपराऽऽकस्मिक-भिषग्,
निरापेक्षो बन्धुर्विदितमहिमा मङ्गल-करः ।
शरण्यः साधूनां भव-भय-भृतामुत्तमगुणो,
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु नः ॥

महावीराष्टकं स्तोत्रं,
भक्त्या भागेन्दुना कृतम् ।
यः पठेच्छृणुयाच्चापि,
स याति परमां गतिम् ॥

जिन्हों की वाग्गंगा विविध-नय-कल्लोल-विमला,
न्हिलाती भक्तों को विमल अति सद् ज्ञान जल से ।
अभी भी सेते हैं बुध जन महाहंस जिसको,
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी सतत हों ॥

त्रिलोकी का जेता मदन भट जो दुर्जय महा,
युवावस्था में भी विदलित किया ध्यान-बल से ।
महा—नित्यानन्द-प्रशम पद पाया जिन-पति,
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी सतत हों ॥

महा—मोहातंक-प्रशम करने में भिषग हैं,
विना इच्छा बन्धु, प्रथित जगकल्याण—कर हैं ।
सहारा भक्तों के भवभय-भृतों के, वर गुणी,
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी सतत हों ॥

(४)

श्री चिन्तामणि पार्श्वनाथ स्तोत्र

१. किं कर्पूर-मयं सुधारसमयं किं चन्द्ररोचिर्मयं,
किं लावण्यमयं महामणिमयं कारुण्यकेलीमयम्।
विश्वानन्दमयं महोदयमयं शोभामयं चिन्मयं,
शुक्लध्यान - मयं वपुर्जिनपतेर्भूयाद् भवालम्बनम्॥

२. पातालं कलयन् धरां धवलयन्नाकाशमापूरयन्
दिक्चक्रं क्रमयन् सुरासुरनरश्रेणि च विस्मापयन्।
ब्रह्माण्डं सुखयन् जलानि जलधेः फेनच्छलाल्लोलयन्
श्री चिन्तामणि-पार्श्वसंभवयशो हंसश्चिरं राजते॥

३. पुण्यानां विपणिस्तमोदिनमणिः कामेभ कुम्भेसृणिः
मोक्षै निस्सरणिः सुरद्रुकरिणी ज्योतिः प्रकाशारणिः।
दाने देवमणिर्नतोत्तमजन श्रेणिः कृपा-सारिणिः,
विश्वानन्दसुधाघृणिर् भवभिदे श्री पार्श्वचिन्तामणिः॥

४. श्री चिन्तामणिपार्श्वविश्व जनता संजीवनस्त्वं मया,
दृष्टस्तात! ततः श्रियः समभवन्नाशक्रमाचक्रिणम्।
मुक्तिः क्रीडति हस्तयोर्बहुविधं सिद्धं मनोवांछितं,
दुर्दैवं दुरितं च दुर्दिनभयं कष्टं प्रणष्टं मम॥

५. यस्य प्रौढतम-प्रतापतपनः प्रोद्दामधामा जगज्,
जंघालः कलिकालकेलिदलनो मोहान्धविध्वंसकः।
नित्योद्द्योतपदं समस्तकमलाकेलीगृहं राजते,
स श्री पार्श्वजिनो जने हितकरश्चिन्तामणिः पातु माम्॥

६. विश्वव्यापितमो हिनस्ति तरणिर्बालोऽपि कल्पांकुरो,
दारिद्र्याणि गजावलीं हरिशिशुः काष्ठानि वह्नेः कणः ।
पीयूषस्य लवोऽपि रोगनिवहं यद्वत्तथा ते विभो,
मूर्तिःस्फूर्तिमती सती त्रिजगती-कष्टानि हर्तुं क्षमा ॥

७. श्री चिन्तामणिमन्त्रमोंकृतियुतं ह्रींकारसाराश्रितम्,
श्रीमर्हन् नमिऊणपासकलितं त्रैलोक्य-वश्यावहम् ।
द्वेधाभूतविषापहं विषहरं श्रेयः प्रभावाश्रयं,
सोल्लासं वसहांकितं जिनफुलिंगानन्ददं देहिनाम् ॥

८. ह्रीं श्रींकारवरं नमोऽक्षरपरं ध्यायन्ति ये योगिनो,
हृत्पद्मे विनिवेश्य पार्श्वमधिपं चिन्तामणी संज्ञकम् ।
भाले वामभुजे च नाभिकरयोर् भूयो भुजे दक्षिणे,
पश्चादष्टदलेषु ते शिवपदं द्वित्रैर्भवैर् यान्त्यहो ॥

९. नो रोगा नैव शोका,
न कलह-कलना,
नारि-मारि-प्रचारा ।
नैवाधिर्नासमाधिर्
न च दर-दुरिते,
दुष्ट-दारिद्रता नो ॥
नो शाकिन्यो ग्रहा नो,
न हरि-करि-गणा,
व्याल वेताल-जालाः ।
जायन्ते पार्श्व चिन्ता –
मणि-नति-वशतः,
प्राणिनां भक्ति-भाजाम् ॥

१०. गीर्वाणद्रुमधेनु कुम्भमणयस्तस्यांगणे रिंगिणो,
देवा दानवमानवाः सविनयं तस्मै हितध्यायिनः।
लक्ष्मीस्तस्य वशाऽवशेव गुणिनां ब्रह्माण्डसंस्थायिनी,
श्री चिन्तामणि पार्श्वनाथमनिशं संस्तौति यो ध्यायति ॥

११. इति जिनपति-पार्श्वः पार्श्व पार्श्वाख्ययक्षः,
प्रदलितदुरितौघः प्रीणित-प्राणिसार्थः।
त्रिभुवन जन वाञ्छादान-चिन्तामणीकः,
शिवपद-तरुबीजं बोधिबीजं ददातु ॥

(५)

श्री जिन-पञ्जर स्तोत्र

(आचार्य श्री कमलप्रभ)

१. ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं अर्हद्भ्यो नमो नमः
ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं सिद्धेभ्यो नमोः
ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं आचार्येभ्यो नमो नमः
ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं उपाध्यायेभ्यो नमो नमः
ॐ ह्रीं श्रीं अर्हंगौतमस्वामिप्रमुखसर्वसाधुभ्यो नमो नमः ।।

२. एष पंच नमस्कारः सर्व - पाप - क्षयंकरः ।
मंगलानां च सर्वेषां, प्रथमं भवति मंगलम् ।।

३. ॐ ह्रीं श्रीं जये विजये, अर्हं परमात्मने नमः ।
कमलप्रभ-सूरीन्द्रो, भाषते जिनपंजरम् ।।

४. एकभक्तोपवासेन त्रिकालं यः पठेदिदम् ।
मनोभिलषितं सर्वं, फलं स लभते ध्रुवम् ।।

५. भूशय्या - ब्रह्मचर्येण, क्रोध - लोभ - विवर्जितः ।
देवताग्रे पवित्रात्मा, षण्मासैर्लभते फलम् ।।

६. अर्हन्तं स्थापयेन्मूर्ध्नि, सिद्धं चक्षुर्ललाटके ।
आचार्यं श्रोत्रयोर्मध्ये, उपाध्यायं तु नासिके ।।

७. साधुवृन्दं मुखस्याग्रे, मनःशुद्धिं विधाय च ।
सूर्य - चन्द्र - निरोधेन, सुधीः सर्वार्थसिद्धये ।।

८. दक्षिणे मदन - द्वेपी, वामपार्श्वे स्थितो जिनः।
अङ्ग - सन्धिषु सर्वज्ञः, परमेष्ठी शिवंकरः ॥

९. पूर्वाशां च जिनो रक्षेद्, आग्नेयीं विजितेन्द्रियः।
दक्षिणाशां परं ब्रह्म, नैऋतीं च त्रिकालवित् ॥

१०. पश्चिमाशां जगन्नाथो, वायव्यां परमेश्वरः।
उत्तरां तीर्थंकृत् सर्वामीशानेऽपि निरञ्जनः ॥

११. पातालं भगवानर्हन्नाकाशं पुरुषोत्तमः।
रोहिणी - प्रमुखादेव्यो रक्षन्तु सकलं कुलम् ॥

१२. ऋषभो मस्तकं रक्षेद्, अजितोऽपि विलोचने।
सम्भवः कर्णयुगलेऽभिनन्दनस्तु नासिके ॥

१३. ओष्ठौ श्रीसुमती रक्षेद् दन्तान् पद्मप्रभो विभुः।
जिह्वां सुपार्श्वदेवोऽयं तालु चन्द्रप्रभाऽभिधः ॥

१४. कण्ठं श्री सुविधी रक्षेद् हृदयं जिनशीतलः।
श्रेयांसो वाहु युगलं, वासुपूज्यः कर - द्वयम् ॥

१५. अंगुलीर्विमलो रक्षेद् अनन्तोऽसौ नखानपि।
श्रीधर्मोऽप्युदरास्थीनि श्री शान्तिर्नाभिमण्डलम् ॥

१६. श्री कुन्थुर्गुह्यकं रक्षेद्, अरो लोमकटीतटम्।
मल्लिरुरुपृष्ठमंशं, पिण्डिकां मुनिसुव्रतः ॥

१७. पादांगुलीर्नमी रक्षेत्, श्री नेमिश्चरणद्वयम्।
श्री पार्श्वनाथः सर्वांगं, वर्धमानं चिदात्मकम् ॥

१८. पृथिवी - जल तेजस्क-वायुवाकाशमयं जगत् ।
रक्षेदशेषपापेभ्यो, वीतरागो निरंजनः ।।

१९. राजद्वारे श्मशाने च, संग्रामे शत्रु-संकटे ।
व्याघ्र - चौराग्नि - सर्पादि - भूत - प्रेत - भयाश्रिते ।।

२०. अकाले मरणे प्राप्ते, दारिद्र्यापत्समाश्रिते ।
अपुत्रत्वे महादुःखे, मूर्खत्वे रोग-पीड़िते ।।

२१. डाकिनी - शाकिनी - ग्रस्ते, महाग्रह - गणार्दिते ।
नद्युत्तारेऽध्ववैषम्ये व्यसने चापदि स्मरेत् ।।

२२. प्रातरेव समुत्थाय, यः स्मरेज्जिनपञ्जरम् ।
तस्य किंचिद् भयं नास्ति, लभते सुखसम्पदः ।।

२३. जिनपंजर नामेदं यः स्मरेदनुवासरम् ।
कमल-प्रभसूरीन्द्र-श्रियं स लभते नरः ।।

२४. प्रातः समुत्थाय पठेत् कृतज्ञो,
यः स्तोत्रमेतज्जिन-पंजरस्य ।
आसादयेत् सः कमलप्रभाख्यो,
लक्ष्मीं मनोवाञ्छितपूरणाय ।।

२५. श्री रुद्रपल्लीय-वरेण्य-गच्छे,
देव प्रभाचार्य-पदाब्ज-हंसः ।
वादीन्द्र-चूड़ामणिरेष जैनो,
जीयादसौ श्री कमल-प्रभाख्यः ।।

(६)

श्री भक्तामर स्तोत्र

(आचार्य श्री मानतुंग)

१. भक्तामर-प्रणत-मौलिमणि-प्रभाणा-
मुद्द्योतकं दलित-पाप-तमोवितानम् ।
सम्यक् प्रणम्य जिनपादयुगं युगादा-
वालम्वनं भवजले पततां जनानाम् ॥

२. यः संस्तुतः सकल-वाङ्मयतत्त्व वोधा-
दुद्भूतवुद्धिपटुभिः सुरलोकनाथैः ।
स्तोत्रैर्जगत्त्रितयचित्तहरैरुदारैः,
स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम् ॥

३. वुद्ध्या विनाऽपि विवुधार्चितपादपीठ !
स्तोतुं समुद्यत-मतिर्विगतत्रपोऽहम् ।
वालं विहाय जलसंस्थितमिन्दु विम्व-
मन्यः क इच्छति जनः सहसा ग्रहीतुम् ॥

४. वक्तुं गुणान् गुणसमुद्र ! शशाङ्ककान्तान्,
कस्ते क्षमः सुरगुरुप्रतिमोऽपि वुद्ध्या ।
कल्पान्त-काल-पवनोद्धत-नक्रचक्रं,
को वा तरीतुमलमम्वुनिधिं भुजाभ्याम् ॥

५. सोऽहं तथापि तव भक्तिवशान्मुनीश !
कर्तुं स्तवं विगतशक्तिरपि प्रवृत्तः ।
प्रीत्याऽऽत्मवीर्यमविचार्य मृगो मृगेन्द्रं,
नाभ्येति किं निजशिशोः परिपालनार्थम् ॥

६. अल्पश्रुतं श्रुतवतां परिहासधाम,
त्वद्भक्तिरेव मुखरीकुरुते बलान्माम् ।
यत्कोकिल: किलमधौ मधुरं विरौति,
तच्चाम्र-चारु-कलिकानिकरैकहेतु: ॥

७. त्वत्संस्तवेन भवसंतति-सन्निवद्धं,
पापं क्षणात्क्षयमुपैति शरीरभाजाम् ।
आक्रान्त-लोकमलिनीलमशेषमाशु,
सूर्यांशुभिन्नमिव शार्वरमन्धकारम् ॥

८. मत्वेति नाथ ! तव संस्तवनं मयेद-
मारभ्यते तनुधियापि तव प्रभावात् ।
चेतो हरिष्यति सतां नलिनीदलेषु,
मुक्ताफल-द्युतिमुपैति ननूदबिन्दु: ॥

९. आस्तां तव स्तवनमस्तसमस्त-दोषं,
त्वत्संकथापि जगतां दुरितानि हन्ति ।
दूरे सहस्रकिरण: कुरुते प्रभैव,
पद्माकरेषु जलजानि विकाशभाञ्जि ॥

१०. नात्यद्भुतं भुवनभूषण ! भूतनाथ !
भूतैर्गुणैर्भुवि भवन्तमभिष्टुवन्त: ।
तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा,
भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति ॥

११. दृष्ट्वा भवन्तमनिमेषविलोकनीयं,
नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य चक्षु: ।
पीत्वा पय: शशिकरद्युतिदुग्धसिन्धो:,
क्षारं जलं जलनिधेरसितुं क इच्छेत् ॥

१२. यैः शान्तरागरुचिभिः परमाणुभिस्त्वं,
निर्मापितस्त्रिभुवनैक-ललामभूत !
तावन्त एव खलु तेऽप्यणवः पृथिव्यां,
यत्ते समानमपरं नहि रूपमस्ति ॥

१३. वक्त्रं क्व ते सुरनरोरगनेत्रहारि,
निःशेषनिर्जितजगत्-त्रितयोपमानम् ।
विम्बं कलङ्कमलिनं क्व निशाकरस्य,
यद्वासरे भवति पाण्डुपलाशकल्पम् ॥

१४. सम्पूर्णमण्डल-शशाङ्ककलाकलाप-
शुभ्रा गुणास्त्रिभुवनं तव लङ्घयन्ति ।
ये संश्रितास्त्रिजगदीश्वर ! नाथमेकं,
कस्तान् निवारयति संचरतो यथेष्टम् ॥

१५. चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशांगनाभि-
र्नीतं मनागपि मनो न विकार-मार्गम् ।
कल्पान्तकालमरुता चलिताचलेन,
किं मन्दराद्रिशिखरं चलितं कदाचित् ॥

१६. निर्धूमवर्तिरपवर्जित-तैलपूरः,
कृत्स्नं जगत्त्रयमिदं प्रकटीकरोषि ।
गम्यो न जातु मरुतां चलिताचलानां,
दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ ! जगत्प्रकाशः ॥

१७. नास्तं कदाचिदुपयासि न राहुगम्यः,
स्पष्टीकरोषि सहसा युगपज्जगन्ति ।
नाम्भोधरोदरनिरुद्धमहाप्रभावः,
सूर्यातिशायिमहिमासि मुनीन्द्र ! लोके ॥

१८. नित्योदयं दलितमोहमहान्धकारं,
गम्यं न राहुवदनस्य न वारिदानाम् ।
विभ्राजते तव मुखाब्जमनल्पकान्ति,
विद्योतयज्जगदपूर्वशशाङ्कविम्वम् ॥

१९. किं शर्वरीषु शशिनाऽह्नि विवस्वता वा ?
युष्मन्मुखेन्दुदलितेषु तमस्सु नाथ ।
निष्पन्नशालिवनशालिनि जीवलोके
कार्यं कियज्जलधरैर्जलभारनम्रैः ॥

२०. ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाशं,
नैवं तथा हरिहरादिषु नायकेषु ।
तेजः स्फुरन्मणिषु याति यथा महत्वं
नैवं तु काचशकले किरणाकुलेऽपि ॥

२१. मन्ये वरं हरिहरादय एव दृष्टा,
दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोषमेति ।
किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः,
कश्चिन्मनो हरति नाथ ! भवान्तरेऽपि ! ॥

२२. स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान्,
नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता ।
सर्वा दिशो दधति भानि सहस्ररश्मिं,
प्राच्येव दिग् जनयति स्फुरदंशुजालम् ॥

२३. त्वामामनन्ति मुनयः परमं पुमांस–
मादित्यवर्णममलं तमसः परस्तात् ।
त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयन्ति मृत्युं,
नान्यः शिवः शिवपदस्य मुनीन्द्र ! पन्थाः ॥

२४. त्वामव्ययं विभुमचिन्त्यमसंख्यमाद्यं,
ब्रह्माणमीश्वरमनन्तमनङ्गकेतुम् ।
योगीश्वरं विदितयोगमनेकमेकं,
ज्ञानस्वरूपममलं प्रवदन्ति सन्तः ॥

२५. बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चित् ! बुद्धि-बोधात्,
त्वं शङ्करोऽसि भुवनत्रय शङ्करत्वात् ।
धाताऽसि धीर ! शिवमार्गविधेर्विधानात्,
व्यक्तं त्वमेव भगवन् ! पुरुषोत्तमोऽसि ॥

२६. तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्तिहराय नाथ !
तुभ्यं नमः क्षितितलामलभूषणाय ।
तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय
तुभ्यं नमो जिन ! भवोदधि-शोषणाय ॥

२७. को विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणैरशेषै-
स्त्वं संश्रितो निरवकाशतया मुनीश !
दोषैरुपात्त-विविधाश्रय-जातगर्वैः,
स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि ॥

२८. उच्चैरशोकतरुसंश्रितमुन्मयूख,
माभाति रूपममलं भवतो नितान्तम् ।
स्पष्टोल्लसत्किरणमस्ततमो वितानं,
बिम्बं रवेरिव पयोधर-पार्श्ववर्ति ॥

२९. सिंहासने मणिमयूखशिखाविचित्रे,
विभ्राजते तव वपुः कनकावदातम् ।
बिम्बं वियद्विलसदंशुलता-वितानं,
तुङ्गोदयाद्रिशिरसीव सहस्ररश्मेः ॥

३०. कुन्दावदात-चलचामर-चारु शोभं,
विभ्राजते तव वपुः कलधौतकान्तम् ।
उद्यच्छशाङ्क-शुचिनिर्झर-वारिधार-
मुच्चैस्तटं सुरगिरेरिव शातकौम्भम् ।।

३१. छत्रत्रयं तव विभाति शशाङ्ककान्त
मुच्चैः स्थितं स्थगित भानुकर-प्रतापम् ।
मुक्ताफल-प्रकरजाल-विवृद्धशोभं,
प्रख्यापयत् त्रिजगतः परमेश्वरत्वम् ।।

३२. गम्भीरताररवपूरित-दिग्विभाग-
स्त्रैलोक्यलोक-शुभसङ्गम-भूतिदक्षः ।
सद्धर्मराजजयघोषणा-घोषकः सन्
खे दुन्दुभिर्ध्वनति ते यशसः प्रवादी ।।

३३. मन्दार-सुन्दर-नमेरु-सुपारिजात-
सन्तानकादिकुसुमोत्करवृष्टिरुद्धा ।
गन्धोदविन्दु-शुभमन्द-मरुत्प्रपाता,
दिव्या दिवः पतति ते वचसां ततिर्वा ।।

३४. शुम्भत्प्रभावलय-भूरिविभा विभोस्ते
लोकत्रयद्युतिमतां द्युतिमाक्षिपन्ती ।
प्रोद्यद्-दिवाकर-निरन्तरभूरिसंख्या,
दीप्त्या जयत्यपि निशामपि सोम-सौम्याम् ।।

३५. स्वर्गापवर्गगममार्ग-विमार्गणेष्टः
सद्धर्मतत्त्वकथनैक-पटुस्त्रिलोक्याः ।
दिव्यध्वनिर्भवति ते विशदार्थसर्व-
भाषास्वभाव-परिणामगुणैः प्रयोज्यः ।।

३६. उन्निद्रहेमनवपङ्कज-पुञ्जकान्ती,
पर्युल्लसन्नखमयूखशिखाभिरामौ ।
पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्र ! धत्तः
पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति ।।

३७. इत्थं यथा तव विभूतिरभूज्जिनेन्द्र !
धर्मोपदेशनविधौ न तथा परस्य ।
यादृक् प्रभा दिनकृतः प्रहतान्धकारा,
तादृक् कुतोग्रह-गणस्य विकाशिनोऽपि ।।

३८. श्च्योतन्मदाविलविलोलकपोलमूल-
मत्त-भ्रमद्भ्रमरनादविवृद्धकोपम् ।
ऐरावताभमिभमुद्धतमापतन्तं,
दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदाश्रितानाम् ।।

३९. भिन्नेभकुम्भगलदुज्ज्वल-शोणिताक्त-
मुक्ताफल प्रकर-भूषित-भूमिभागः ।
वद्धक्रमः क्रमगतं हरिणाधिपोऽपि,
नाक्रामति क्रमयुगाचलसंश्रितं ते ।।

४०. कल्पान्तकाल-पवनोद्धत-वह्निकल्पं,
दावानलं ज्वलितमुज्ज्वलमुत्स्फुलिङ्गम् ।
विश्वं जिघत्सुमिव सम्मुखमापतन्तं,
त्वन्नामकीर्तनजलं शमयत्यशेषम् ।।

४१. रक्तेक्षणं समदकोकिल-कण्ठनीलं,
क्रोधोद्धतं फणिनमुत्फणमापतन्तम् ।
आक्रामति क्रमयुगेन निरस्तशङ्क-
स्त्वन्नामनागदमनी हृदि यस्य पुंसः ।।

४२. वल्गत्तुरङ्गगजगर्जित-भीमनाद-
माजौ बलं बलवतामपि भूपतीनाम् ।
उद्यद्दिवाकरमयूख-शिखापविद्धं,
त्वत्कीर्तनात् तम इवाशुभिदामुपैति ॥

४३. कुन्ताग्रभिन्नगज-शोणितवारिवाह-
वेगावतार-तरणातुरयोध-भीमे ।
युद्धे जयं विजितदुर्जयजेयपक्षा-
स्त्वत्पाद-पङ्कजवनाश्रयिणो लभन्ते ॥

४४. अम्भोनिधौ क्षुभितभीषणनक्रचक्र
पाठीनपीठभयदोल्वणवाडवाग्नौ ।
रङ्गत्तरङ्गशिखरस्थितयानपात्रा-
स्त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद् व्रजन्ति ॥

४५. उद्भूतभीषणजलोदर-भारभुग्नाः
शोच्यां दशामुपगताश्च्युतजीविताशाः ।
त्वत्पाद-पङ्कजरजोऽमृतदिग्धदेहा,
मर्त्या भवन्ति मकरध्वजतुल्यरूपाः ॥

४६. आपाद-कण्ठमुरुशृंखल-वेष्टिताङ्गा,
गाढं बृहन्निगडकोटिनिघृष्टजङ्घाः ।
त्वन्नाममन्त्रमनिशं मनुजाः स्मरन्तः,
सद्यः स्वयं विगतबन्धभया भवन्ति ॥

४७. मत्तद्विपेन्द्र-मृगराजदवानलाहि,
संग्रामवारिधिमहोदरबन्धनोत्थम् ।
तस्याशु नाशमुपयाति भयं भियेव
यस्तावकं स्तवमिमं मतिमानधीते ॥

४८. स्तोत्रस्रजं तवजिनेन्द्र ! गुणैर्निवद्धां,
भक्त्या मया विविधवर्ण विचित्रपुष्पाम् ।
धत्ते जनो य इह कंठगतामजस्रं,
तं मानतंगमवशा समुपैति लक्ष्मीः ॥

(७)

श्री कल्याण-मन्दिर स्तोत्र

(आचार्य श्री सिद्धसेन)

१. कल्याण-मन्दिरमुदारमवद्य-भेदि,
भीताभयप्रदमनिन्दितमङ्घ्रि-पद्मम् ।
संसार-सागर-निमज्जदशेष-जन्तु-
पोतायमानमभिनम्य जिनेश्वरस्य ॥

२. यस्य स्वयं सुर-गुरुर्गरिमाम्बुराशेः,
स्तोत्रं सुविस्तृतमतिर्न विभुर्विधातुम् ।
तीर्थेश्वरस्य कमठस्मय-धूमकेतोस्-
तस्याहमेष किल संस्तवनं करिष्ये ॥

३. सामान्यतोऽपि तव वर्णयितुं स्वरूप-
मस्मादृशाः कथमधीश ! भवन्त्यधीशाः ।
धृष्टोऽपि कौशिक-शिशुर्यदिवा दिवान्धो,
रूपं प्ररूपयति किं किल घर्मरश्मेः ॥

४. मोहक्षयादनुभवन्नपि नाथ ! मर्त्यो,
नूनं गुणान् गणयितुं न तव क्षमेत ।
कल्पान्तवान्तपयसः प्रकटोऽपि यस्मान्-
मीयेत केन जलधेर्ननु रत्नराशिः ? ॥

५. अभ्युद्यतोऽस्मि तव नाथ ! जडाशयोऽपि,
कर्तुं स्तवं लसदसंख्य-गुणाकरस्य ।
वालोऽपि किं न निज-वाहुयुगं वितत्य,
विस्तीर्णतां कथयति स्वधियाम्बुराशेः ? ॥

६. ये योगिनामपि न यान्ति गुणास्तवेश !
वक्तुं कथं भवति तेषु ममावकाशः ।
जाता तदेवमसमीक्षित-कारितेयं,
जल्पन्ति वा निजगिरा ननु पक्षिणोऽपि ॥

७. आस्तामचिन्त्यमहिमा जिन ! संस्तवस्ते,
नामाऽपि पाति भवतो भवतो जगन्ति ।
तीव्रातपोपहत-पान्थ-जनान् निदाघे,
प्रीणाति पद्मसरसः सरसोऽनिलोऽपि ॥

८. हृद्वर्तिनि त्वयि विभो ! शिथिलीभवन्ति,
जन्तोः क्षणेन निविडा अपि कर्म बन्धाः ।
सद्यो भुजङ्गममया इव मध्यभाग-
मभ्यागते वनशिखंडिनी चन्दनस्य ॥

९. मुच्यन्त एव मनुजाः सहसा जिनेन्द्र !
रौद्रै रुपद्रवशतैस्त्वयि वीक्षितेऽपि ।
गो-स्वामिनि स्फुरित-तेजसि दृष्टमात्रे,
चौरैरिवाशु पशवः प्रपलायमानैः ॥

१०. त्वं तारको जिन ! कथं भविनां त एव,
त्वामुद्वहन्ति हृदयेन यदुत्तरन्तः ।
यद्वा दृतिस्तरति यज्जलमेष नून-
मन्तर्गतस्य मरुतः स किलानुभावः ॥

११. यस्मिन् हर-प्रभृतयोऽपि हतप्रभावाः,
सोऽपि त्वया रतिपतिः क्षपितः क्षणेन ।
विध्यापिता हुतभुजः पयसाथ येन,
पीतं न किं तदपि दुर्धर-वाडवेन ॥

१२. स्वामिन्ननल्प-गरिमाणमपि प्रपन्नास्
त्वां जन्तवः कथमहो हृदये दधानाः ?
जन्मोदधिं लघु तरन्त्यतिलाघवेन,
चिन्त्यो न हन्त महतां यदि वा प्रभावः ॥

१३. क्रोधस्त्वया यदि विभो प्रथमं निरस्तो,
ध्वस्तास्तदा वद कथं किल कर्म-चौराः ।
प्लोषत्यमुत्र यदि वा शिशिरापि लोके,
नीलद्रुमाणि विपिनानि न किं हिमानी ॥

१४. त्वां योगिनो जिन ! सदा परमात्मरूप-
मन्वेषयन्ति हृदयाम्बुज-कोशदेशे ।
पूतस्य निर्मलरुचेर्यदि वा किमन्य-
दक्षस्य संभवि पदं ननु कर्णिकायाः ॥

१५. ध्यानाज्जिनेश ! भवतो भविनः क्षणेन,
देहं विहाय परमात्मदशां व्रजन्ति ।
तीव्रानला-दुपलभावमपास्य लोके,
चामीकरत्वमचिरादिव धातुभेदाः ॥

१६. अन्तः सदैव जिन ! यस्य विभाव्यसे त्वं,
भव्यैः कथं तदपि नाशयसे शरीरम् ।
एतत्स्वरूपमथ मध्यविवर्तिनो हि,
यद्विग्रहं प्रशमयन्ति महानुभावाः ॥

१७. आत्मा मनीषिभिरयं त्वदभेदबुद्ध्या,
ध्यातो जिनेन्द्र ! भवतीह भवत्प्रभावः ।
पानीयमप्यमृतमित्यनुचिन्त्यमानं,
किं नाम नो विषविकारमपाकरोति ।।

१८. त्वामेव वीततमसं परवादिनोऽपि,
नूनं विभो हरिहरादिधिया प्रपन्नाः ।
किं काचकामलिभिरीश सितोऽपि शंखो
नो गृह्यते विविध-वर्ण-विपर्ययेण ।।

१९. धर्मोपदेशसमये सविधानुभावा-
दास्तां जनो भवति ते तरुरप्यशोकः ।
अभ्युद्गते दिनपतौ समहीरुहोऽपि,
किं वा विबोधमुपयाति न जीवलोकः ।।

२०. चित्रं विभो ! कथमवाङ्मुखवृन्तमेव
विष्वक् पतत्यविरला सुरपुष्पवृष्टिः ।
त्वद्गोचरे सुमनसां यदि वा मुनीश !
गच्छन्ति नूनमध एव हि बन्धनानि ।।

२१. स्थाने गभीरहृदयोदधिसम्भवायाः
पीयूषतां तव गिरः समुदीरयन्ति ।
पीत्वा यतः परमसम्मदसंगभाजो
भव्या व्रजन्ति तरसाऽप्यजरामरत्वम् ।।

२२. स्वामिन् ! सुदूरमवनम्य समुत्पतन्तो
मन्ये वदन्ति शुचयः सुरचामरौघाः ।
येऽस्मै नतिं विदधते मुनि-पुङ्गवाय
ते नूनमूर्ध्वगतयः खलु शुद्ध-भावाः ।।

२३. श्यामं गभीर-गिरमुज्ज्वलहेमरत्न-
सिंहासनस्थमिह भव्यशिखण्डिनस्त्वाम्
आलोकयन्ति रभसेन नदन्तमुच्चैश्-
चामीकराद्रिशिरसीव नवाम्बुवाहम् ॥

२४. उद्गच्छता तव शितिद्युतिमण्डलेन,
लुप्तच्छदच्छविरशोकतरुर्बभूव !
सांनिध्यतोऽपि यदि वा तव वीतराग !
नीरागतां व्रजति को न सचेतनोऽपि ॥

२५. भो भोः प्रमादमवधूय भजध्वमेन-
मागत्य निर्वृतिपुरीं प्रति सार्थवाहम् ।
एतन्निवेदयति देव ! जगत्त्रयाय,
मन्ये नदन्नभिनभः सुरदुन्दुभिस्ते ॥

२६. उद्योतितेषु भवता भुवनेषु नाथ !
तारान्वितो विधुरयं विहताधिकारः ।
मुक्ताकलाप-कलितोल्लसितातपत्र-
व्याजात् त्रिधा धृततनु-र्ध्रुवमभ्युपेतः ॥

२७. स्वेन प्रपूरित-जगत्त्रय-पिण्डितेन,
कान्ति - प्रताप - यशसामिव संचयेन ।
माणिक्य-हेम-रजतप्रविनिर्मितेन
साल-त्रयेण भगवन्नभितो विभासि ॥

२८. दिव्यस्रजो जिन ! नमत्-त्रिदशाधिपाना-
मुत्सृज्य रत्नरचितानपि मौलिबन्धान् ।
पादौ श्रयन्ति भवतो यदि वा परत्र,
त्वत्संगमे सुमनसो न रमन्त एव ॥

२९. त्वं नाथ ! जन्मजलधेर्विपराङ्मुखोऽपि,
यत् तारयस्यसुमतो निजपृष्ठलग्नान् ।
युक्तं हि पार्थिव-निपस्य सतस्तवैव,
चित्रं विभो ! यदसि कर्मविपाकशून्यः ॥

३०. विश्वेश्वरोऽपि जनपालक ! दुर्गतस्त्वं,
किं वाक्षर-प्रकृतिरप्यलिपिस्त्वमीश ।
अज्ञानवत्यपि सदैव कथंचिदेव,
ज्ञानं त्वयि स्फुरति विश्वविकाशहेतु ॥

३१. प्राग्भार-संभृत-नभांसि रजांसि रोषा-
दुत्थापितानि कमठेन शठेन यानि ।
छायाऽपि तैस्तव न नाथ ! हता हताशो,
ग्रस्तस्त्वमीभिरयमेव परं दुरात्मा ॥

३२. यद्गर्जदूर्जित घनौघमदभ्र-भीमं,
भ्रश्यत्-तडिन्मुसलमांसल-घोरधारम् ।
दैत्येन मुक्तमथ दुस्तरवारि दध्रे,
तेनैव तस्य जिन ! दुस्तरवारिकृत्यम् ॥

३३. ध्वस्तोर्ध्वकेश-विकृताकृति-मर्त्यमुण्ड–
प्रालम्वभृद्-भयद्-वक्त्रविनिर्यदग्निः
प्रेतव्रजः प्रतिभवन्तमपीरितो यः,
सोऽस्याभवत्प्रतिभवं भवदुःखहेतुः ॥

३४. धन्यास्त एव भुवनाधिप ! ये त्रिसन्ध्य-
माराधयन्ति विधिवद् विधुतान्यकृत्याः ।
भक्त्योल्लसत्पुलक-पक्ष्मल-देहदेशाः,
पाद-द्वयं तव विभो ! भुवि जन्मभाजः ॥

३५. अस्मिन्नपार-भववारिनिधौ मुनीश !
मन्ये न मे श्रवण-गोचरतां गतोऽसि ।
आकर्णिते तु तव गोत्रपवित्रमंत्रे,
किं वा विपद् विषधरी सविधं समेति ॥

३६. जन्मांतरेऽपि तव पादयुगं न देव !
मन्ये मया महितमीहितदान-दक्षम् ।
तेनेह जन्मनि मुनीश ! पराभवानां,
जातो निकेतनमहं मथिताशयानाम् ॥

३७. नूनं न मोहतिमिरावृतलोचनेन
पूर्वं विभो ! सकृदपि प्रविलोकितोऽसि ।
मर्माविधो विधुरयन्ति हि मामनर्थाः
प्रोद्यत्प्रबन्ध-गतयः कथमन्यथैते ॥

३८. आकर्णितोऽपि महितोऽपि निरीक्षितोऽपि
नूनं न चेतसि मया विधृतोऽसि भक्त्या ।
जातोऽस्मि तेन जनबान्धव ! दुःख पात्रं,
यस्मात्क्रियाः प्रतिफलन्ति न भावशून्याः ॥

३९. त्वं नाथ ! दुःखिजनवत्सल ! हे शरण्य !
कारुण्यपुण्यवसते ! वशिनां वरेण्य !
भक्त्या नते मयि महेश ! दयां विधाय
दुःखांकुरोद्दलन - तत्परतां विधेहि ॥

४०. निःसंख्यसारशरणं शरणं शरण्य –
मासाद्य सादितरिपु - प्रथितावदातम् ।
त्वत्पाद-पङ्कजमपि प्रणिधानवन्ध्यो,
वध्योऽस्मि चेद् भुवनपावन ! हा हतोऽस्मि ॥

४१. देवेन्द्रवन्द्य ! विदिताखिल वस्तुसार !
संसार-तारक ! विभो ! भुवनाधिनाथ !
त्रायस्व देव ! करुणाह्रद ! मां पुनीहि
सीदन्तमद्य भयदव्यसनाम्बुराशेः ।।

४२. यद्यस्ति नाथ ! भवदंघ्रिसरोरुहाणां,
भक्तेः फलं किमपि सन्तत-सञ्चितायाः ।
तन्मे त्वदेकशरणस्य शरण्य ! भूयाः
स्वामी त्वमेव भुवनेऽत्र भवान्तरेऽपि ।।

४३. इत्थं समाहितधियो विधिवज्जिनेन्द्र !
सान्द्रोल्लसत्पुलककंचुकिताङ्ग-भागाः ।
त्वद्बिम्ब-निर्मल-मुखाम्बुजबद्धलक्ष्या,
ये संस्तवं तव विभो ! रचयन्ति भव्याः ।।

४४. जननयनकुमुदचन्द्र !
प्रभास्वराः स्वर्ग-सम्पदो भुक्त्वा ।
ते विगलितमलनिचया
अचिरान्मोक्षं प्रपद्यन्ते ।।

(८)

श्री रत्नाकर पंचविंशतिका

(आलोचना)

१. श्रेयः श्रियां मङ्गल-केलिसद्म !
नरेन्द्र-देवेन्द्र-नताङ्घ्रिपद्म !
सर्वज्ञ ! सर्वातिशय-प्रधान !
चिरं जय ज्ञान-कला निधान !

२. जगत्त्रयाधार ! कृपावतार !
दुर्वार-संसार-विकार-वैद्य !
श्री वीतराग ! त्वयि मुग्धभावाद्,
विज्ञ ! प्रभो ! विज्ञपयामि किंचित् ॥

३. किं वाललीलाकलितो न वालः,
पित्रोः पुरो जल्पति निर्विकल्पः ?
तथा यथार्थं कथयामि नाथ !
निजाशयं सानुशयस्तवाग्रे ॥

४. दत्तं न दानं, परिशीलितं च,
न शालि शीलं, न तपोऽभितप्तम् ।
शुभो न भावोऽप्यभवद् भवेऽस्मिन्,
विभो ! मया भ्रान्तमहो ! मुधैव ॥

५. दग्धोऽग्निना क्रोधमयेन दष्टो,
दुष्टेन लोभाख्य-महोरगेण ।
ग्रस्तोऽभिमानाजगरेण माया-जालेन,
वद्धोऽस्मि कथं भजे त्वाम् ?

शुभकेलि के आनन्द के घन के मनोहर धाम हो,
नरनाथ से सुरनाथ से पूजितचरण गतकाम हो।
सर्वज्ञ हो, सर्वोच्च हो सब से सदा संसार में,
प्रज्ञा कलाके सिन्धु हो, आदर्श हो आचार में ॥

संसार-दुःख के वैद्य हो, त्रैलोक्य के आधार हो,
जयश्रीश ! रत्नाकर प्रभो ! अनुपम कृपा-अवतार हो।
गतराग ! है विज्ञप्ति मेरी मुग्ध की सुन लीजिए,
क्योंकि प्रभो ! तुम विज्ञ हो, मुझको अभयवर दीजिए ॥

माता पिता के सामने बोली सुना कर तोतली,
करता नहीं क्या अज्ञ बालक बाल्य-वश लीलावली ?
अपने हृदय के हाल को वैसे यथोचित रीति से –
मैं कह रहा हूं, आपके आगे विनय से प्रीति से ॥

मैंने नहीं जग में कभी कुछ दान दीनों को दिया,
मैं सच्चरित भी हूँ नहीं, मैंने नहीं तप भी किया।
शुभ भावना मेरी हुई अब तक न इस संसार में,
मैं घूमता हूँ व्यर्थ ही भ्रम से भवोदधि-धार में ॥

क्रोधाग्नि में मैं रातदिन हा ! जल रहा हूँ हे प्रभो !
मैं लोभ नामक साँप से काटा गया हूँ हे विभो !
अभिमान के खल ग्राह से अज्ञानवश मैं ग्रस्त हूँ,
किस भाँति हों स्मृत आप माया-जाल में मैं व्यस्त हूँ ॥

६. कृतं मयाऽमुत्र हितं न चेह,
लोकेऽपि लोकेश ! सुखं न मेऽभूत् ।
अस्मादृशां केवलमेव जन्म,
जिनेश ! जज्ञे भव-पूरणाय ।।

७. मन्ये मनो यन्न मनोज्ञवृत्त !
त्वदास्यपीयूष मयूखलाभात् ।
द्रुतं महानन्दरसं कठोर –
मस्मादृशां देव ! तदश्मतोऽपि ।।

८. त्वत्तः सुदुष्प्राप्यमिदं मयाप्तं,
रत्नत्रयं भूरिभव-भ्रमेण ।
प्रमाद-निद्रावशतो गतं तत्,
कस्याग्रतो नायक ! पूत्करोमि ?

९. वैराग्य-रङ्गः पर-वञ्चनाय,
धर्मोपदेशो जन-रञ्जनाय ।
वादाय विद्याध्ययनं च मेऽभूत्,
कियद् ब्रुवे हास्यकरं स्वमीश !

१०. परापवादेन मुखं सदोषं,
नेत्रं परस्त्रीजन-वीक्षणेन ।
चेतः परापाय-विचिन्तनेन,
कृतं भविष्यामि कथं विभोऽहम् ?

११. विडम्बितं यत् स्मर-घस्मरार्ति –
दशावशात् स्वं विषयांधलेन ।
प्रकाशितं तद् भवतो ह्रियैव,
सर्वज्ञ ! सर्वं स्वयमेव वेत्सि ।।

लोकेश ! पर-हित भी किया मैंने न दोनों लोक में,
सुख-लेश भी फिर क्यों मुझे हो, चीखता हूं शोक में ।।
मुझ तुल्य ही नर-नारियों का जन्म जग में व्यर्थ है,
मानो जिनेश्वर ! वह भवों की पूर्णता के अर्थ है ।।

प्रभु ! आपने निज मुख-सुधा का दान यद्यपि दे दिया,
यह ठीक है, पर चित्त ने उसका न कुछ भी फल लिया ।।
आनन्द-रस में डूब कर सद्वृत्त वह होता नहीं,
है वज्र-सा मेरा हृदय, कारण बड़ा बस है यही ।।

रत्नत्रयी दुष्प्राप्य है, प्रभु से उसे मैंने लिया,
बहुकाल तक बहुबार जब जग का भ्रमण मैंने किया,
हा ! खो गया वह भी अलस, मैं नींद में सोता रहा,
अब बोलिए उसके लिये रोऊँ प्रभो ! किसके यहां ?

संसार ठगने के लिये वैराग्य को धारण किया ।
जग को रिझाने के लिये उपदेश धर्मों का दिया ।
झगड़ा मचाने के लिये मम जीभ पर विद्या बसी,
निर्लज्ज हो कितनी उड़ाई, हे प्रभो ! अपनी हँसी ।।

पर दोष को कह जीभ मेरी है सदा दूषित हुई,
लखकर पराई नारियाँ हा ! आंख भी दूषित हुई ।
मन भी मलिन है सोच कर पर की बुराई हे प्रभो !
किस भाँति होगी लोक में मेरी भलाई ऐ विभो !

मैंने बढ़ाई निज विवशता, हो अवस्था के वशी,
भक्षक रतीश्वर से हुई उत्पन्न जो दुख राक्षसी ।
हा ! आपके सम्मुख उसे अति लाज से प्रकटित किया,
सर्वज्ञ ! हो सब जानते स्वयमेव संसृति की क्रिया ।।

१२. ध्वस्तोऽन्य-मंत्रैः परमेष्ठिमंत्रः,
कुशास्त्रवाक्यैर् निहतागमोक्तिः ।
कर्तुं वृथा कर्म कुदेवसङ्गा-
दवाञ्छि ही नाथ ! मतिभ्रमो मे ।।

१३. विमुच्य दृग्लक्ष्यगतं भवन्तं,
ध्याता मया मूढ़धिया हृदन्तः ।
कटाक्ष-वक्षोज-गभीर-नाभि-
कटीतटीयाः सुदृशां विलासाः ।।

१४. लोलेक्षणावक्त्र निरीक्षणेन,
यो मानसे रागलवो विलग्नः ।
न शुद्धसिद्धान्त-पयोधिमध्ये,
धौतोऽप्यगात् तारक ! कारणं किम् ।।

१५. अंगं न चंगं न गणो गुणानां,
न निर्मलः कोऽपि कलाविलासः ।
स्फुरत्प्रभा न प्रभुता च काऽपि,
तथाऽप्यहंकार-कदर्थितोऽहम् ।।

१६. आयुर्गलत्याशु न पापबुद्धिर्,
गतं वयो नो विषयाभिलाषः ।
यत्नश्च भैषज्य-विधौ न धर्मे,
स्वामिन् ! महामोह-विडम्बना मे ।।

१७. नात्मा न पुण्यं न भवो न पापं,
मया विटानां कटुगीरपीयम् ।
आधारि कर्णे त्वयि केवलार्के,
परिस्फुटे सत्यपि देव ! धिग्माम् ।।

अन्यान्य मंत्रों से परम परमेष्ठि मन्त्र हटा दिया,
सच्छास्त्र वाक्यों को कुशास्त्रों से दबा मैंने दिया।
विधि उदय को करने वृथा, मैंने कुदेवाश्रय लिया,
हे नाथ यों भ्रमवश अहित, मैंने नहीं क्या-क्या किया ?

हा तज दिया मैंने प्रभो ! प्रत्यक्ष पाकर आपको,
आराधना की मूढ़तावश मूढ़ लोगों की विभो !
वामांगियों के कुच कटाक्षों पर सदा मरता रहा,
उनके विलासों का हृदय में ध्यान मैं धरता रहा ॥

लखकर चपल दृग युवतियों के मुख मनोहर रसमयी,
मम मन पटल पर राग-भावों की मलिनता बस गई।
वह शास्त्र निधि के शुद्ध जल से, भी न क्यों धोई गई,
बतलाइये प्रभु आपही, मम बुद्धि तो खोई गई ॥

मुझ में न अपने अंग के सौंदर्य का आभास है,
मुझमें न गुण-गण है विमल, मुझमें न कला–विलास है।
प्रभुता न मुझ में स्वप्न की भी है चमकती देखिये,
तो भी भरा हूँ गर्व से मैं मूढ़ हो किसके लिये ॥

हा ! नित्य घटती आयु है पर पाप-मति घटती नहीं,
आई बुढ़ौती पर विषय अरु वासना हटती नहीं।
मैं यत्न करता हूँ दवा में, धर्म में करता नहीं,
दुर्मोह-महिमा से ग्रसित हूँ, नाथ ! बच सकता नहीं ॥

अघ पुण्य को, जग, आत्म को मैंने कभी माना नहीं,
हा ! आप आगे हैं खड़े सर्वज्ञ रवि यद्यपि यहीं।
तो भी खलों के वाक्य को मैंने सुना कानों वृथा,
धिक्कार मुझको है गया, मम जन्म ही मानो वृथा ॥

१८. न देव पूजा न च पात्रपूजा,
न श्राद्धधर्मश्च न साधुधर्मः ।
लब्ध्वाऽपि मानुष्यमिदं समस्तं,
कृतं मयारण्य-विलापतुल्यम् ।।

१९. चक्रे मयाऽसत्स्वपि कामधेनु-
कल्पद्रु-चिन्तामणिषु स्पृहार्तिः ।
न जैनधर्मे स्फुटशर्मदेऽपि,
जिनेश ! मे पश्य विमूढ़भावम् ।।

२०. सद्भोग–लीला न च रोगकीला,
धनागमो नो निधनागमश्च ।
दारा न कारा नरकस्य चित्ते,
व्यचिन्ति नित्यं मयकाऽधमेन ।

२१. स्थितं न साधोर्हृदि साधुवृत्तात्,
परोपकारान्न यशोर्जितं च ।
कृतं न तीर्थोद्धरणादि-कृत्यं,
मया मुधा हारितमेव जन्म ।।

२२. वैराग्यरङ्गो न गुरूदितेषु,
न दुर्जनानां वचनेषु शान्तिः ।
नाऽध्यात्मलेशो मम कोऽपिदेव,
तार्यः कथंकारमयं भवाब्धिः ?

२३. पूर्वे भवेऽकारि मया न पुण्य-
मागामि जन्मन्यपि नो करिष्ये ।
यदीदृशोऽहं मम तेन नष्टा,
भूतोद्भवद्भावि-भवत्रयीश !

सत्पात्र-पूजन देव-पूजन कुछ नहीं मैंने किया,
मुनि धर्म श्रावक धर्म, भी विधिवत् नहीं पालन किया।
नर-जन्म पाकर भी वृथा ही, मैं उसे खोता रहा,
मानो अकेला घोर वन में व्यर्थ ही रोता रहा ॥

प्रत्यक्ष सुखकर जैन मत में, प्रीति मेरी थी नहीं,
जिननाथ ! मेरी देखिये, है मूढ़ता भारी यही।
हा ! कामधुक् कल्पद्रुमादिक, के यहाँ रहते हुए,
मैंने गंवाया जन्म को, धिक् लाख-दुःख सहते हुए ॥

मैंने न रोका रोग-दुःख, संभोग-सुख देखा किया,
मन में न माना मृत्यु-भय, धन-लाभ का लेखा किया।
हा ! मैं अधम पुद्गल सुखों का, ध्यान नित करता रहा,
पर नरक-कारागर से, मन में न मैं डरता रहा ॥

सद्वृत्ति से मन में न मैंने, साधुता हा ! साधिता,
उपकार करके कीर्ति भी, मैंने नहीं कुछ अर्जिता।
चउ तीर्थ के उद्धार आदिक, कार्य कर पाया नहीं,
नर-जन्म पारस-तुल्य निज, मैंने गंवाया व्यर्थ ही ॥

शास्त्रोक्त-विधि वैराग्य भी, करना मुझे आता नहीं,
खल-वाक्य भी गत-क्रोध हो, सहना मुझे आता नहीं।
अध्यात्म-विद्या है न मुझमें, है न कोई सत्कला,
फिर देव ! कैसे यह भवोदधि पार होवेगा भला ॥

सत्कर्म पहले जन्म में, मैंने किया कोई नहीं,
आशा नहीं जन्मान्य में, उसको करूंगा मैं कहीं।
इस भांति का यदि हूँ जिनेश्वर ! क्यों न मुझको कष्ट हो ?
संसार में फिर जन्म मेरे, त्रिविध कैसे नष्ट हों ॥

२४. किं वा मुधाऽहं वहुधा सुधाभुक्-
पूज्य ! त्वदग्रे चरितं स्वकीयम् ?
जल्पामि यस्मात् त्रिजगत्स्वरूप-
निरूपकस्त्वं कियदेतदत्र ?

२५. दीनोद्धार-धुरंधरस्त्वदपरो,
नास्ते मदन्यः कृपा-
पात्रं नाऽत्र जने जिनेश्वर ! तथा-
ऽप्येतां न याचे श्रियम् ।
किंत्वर्हन्निदमेव केवलमहो,
सद्बोधि-रत्नं शिवं ।
श्री रत्नाकर-मंगलैकनिलय !
श्रेयस्करं प्रार्थये ॥



हे पूज्य ! अपने चरित को, वहुभाँति गाऊं क्या वृथा
कुछ भी नहीं तुझ से छिपी है पापमय मेरी कथा।
क्योंकि त्रिजग के रूप हो तुम, ईश हो सर्वज्ञ हो,
पथ के प्रदर्शक हो तुम्हीं, मम चित्त के मर्मज्ञ हो॥

दीनोद्धारक धीर आप सा अन्य नहीं है,
कृपा-पात्र भी नाथ ! न मुझसा अपर कहीं है।
तो भी मांगू नहीं धान्य धन कभी भूल कर,
अर्हन् ! केवल बोधिरत्न दें मुझे मंगल-कर॥
श्री रत्नाकर गुण-गान यह दुरित दुःख सब के हरे।
अब एक यही है प्रार्थना मंगल मय जग को करे॥

(६)

श्री परमात्म-द्वात्रिंशिका

(आचार्य अमितगति)

१. सत्त्वेषु मैत्रीं गुणिषु प्रमोदं, क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वम् ।
माध्यस्थ्यभावं विपरीत-वृत्तौ, सदा ममात्मा विदधातु देव !

२. शरीरतः कर्तुमनन्तशक्तिं, विभिन्नमात्मानमपास्तदोषम् ।
जिनेन्द्र ! कोषादिव खड्गयष्टिं, तव प्रसादेन ममास्तु शक्तिः ।।

३. दुःखे सुखे वैरिणि बन्धुवर्गे, योगे वियोगे भवने वने वा ।
निराकृताशेषममत्वबुद्धेः, समं मनो मेऽस्तु सदाऽपि नाथ !

४. मुनीश ! लीनाविव कीलिताविव,
स्थिरौ निखाताविव बिम्बिताविव ।
पादौ त्वदीयौ मम तिष्ठतां सदा,
तमो धुनानौ हृदि दीपकाविव ।।

५. एकेन्द्रियाद्या यदि देव ! देहिनः,
प्रमादतः संचरता यतस्ततः ।
क्षता विभिन्ना मिलिता निपीड़िता,
ममास्तु मिथ्या दुरनुष्ठितं तदा ।।

६. विमुक्ति-मार्ग-प्रतिकूल-वर्तिना, मया कषायाक्षवशेन दुर्धिया ।
चारित्र-शुद्धेर्यदकारि लोपनं, तदस्तु मिथ्या मम दुष्कृतं विभो !

७. विनिन्दनालोचन-गर्हणैरहं, मनोवचःकाय-कषायनिर्मितम् ।
निहन्मि पापं भवदुःखकारणं, भिषग् विषं मंत्र गुणैरिवाखिलम् ।।

८. अतिक्रमं यं विमतेर्व्यतिक्रमं, जिनातिचारं स्वचरित्र-कर्मणः ।
व्यधामनाचारमपि प्रमादतः, प्रतिक्रमं तस्य करोमि शुद्धये ।।

९. क्षतिं मनः शुद्धिविधेरतिक्रमं, व्यतिक्रमं शीलवृतेर्विलंघनम् ।
प्रभोऽतिचारं विषयेषु वर्तनं, वदन्त्यनाचारमिहातिसक्तताम् ।।

१०. यदर्थमात्रा-पद-वाक्यहीनं, मया प्रमादाद् यदि किंचनोक्तम् ।
तन्मे क्षमित्वा विदधातु देवी, सरस्वती केवल-वोधलब्धिम् ।।

११. वोधिः समाधिः परिणामशुद्धिः, स्वात्मोपलब्धिः शिवसौख्यसिद्धिः ।
चिन्तामणिं चिन्तितवस्तुदाने, त्वां वन्द्यमानस्य ममास्तु देवि ! ।।

१२. यः स्मर्यते सर्व-मुनीन्द्र-वृन्दैर्, यः स्तूयते सर्वनरामरेन्द्रैः ।
यो गीयते वेद-पुराणशास्त्रै, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ।।

१३. यो दर्शन-ज्ञान-सुखस्वभावः, समस्त संसार-विकार-वाह्यः ।
समाधिगम्यः परमात्म-संज्ञः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ।।

१४. निषूदते यो भवदुःखजालं, निरीक्षते यो जगदन्तरालम् ।
योऽन्तर्गतो योगि-निरीक्षणीयः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ।।

१५. विमुक्ति मार्ग-प्रतिपादको यो, यो जन्म-मृत्युर्व्यसनाद् व्यतीतः ।
त्रिलोकलोकी सकलोऽकलंकः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ।।

१६. क्रोडीकृताशेष-शरीरि-वर्गा, रागादयो यस्य न सन्ति दोषाः ।
निरीन्द्रियो ज्ञानमयोऽनपायः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ।।

१७. यो व्यापको विश्वजनीन-वृत्तिः, सिद्धो विवुद्धोधुतकर्मवन्धः ।
ध्यातो धुनीते सकलं विकारं, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ।।

१८. न स्पृश्यते कर्मकलंक दोषैर्, यो ध्वान्तसंघैरिव तिग्मरश्मिः ।
निरंजनं नित्यमनेकमेकं, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ।।

१९. विभासते यत्र मरीचिमाली, न विद्यमाने भुवनावभासी ।
स्वात्मस्थितं वोधमय-प्रकाशं, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ।।

२०. विलोक्यमाने सति यत्र विश्वं, विलोक्यते स्पष्टमिदं विविक्तम् ।
शुद्धं शिवं शान्तमनाद्यनन्तं, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ।।

२१. येन क्षता मन्मथ-मान-मूर्छा, विषाद-निद्रा-भयशोक-चिन्ताः ।
क्षयानलेनेव तरु-प्रपंचस्, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ।।

२२. न संस्तरोऽश्मा न तृणं न मेदिनी,
विधानतो नो फलको विनिर्मितः।
यतो निरस्ताक्ष-कषायविद्विषः,
सुधीभिरात्मैव सुनिर्मलो मतः ॥

२३. न संस्तरो भद्र ! समाधि-साधनं, न लोकपूजा न च संघमेलनम् ।
यतस्ततोऽध्यात्मरतो भवानिशं, विमुच्य सर्वामपि वाह्यवासनाम् ॥

२४. न सन्ति बाह्या मम केचनार्था, भवामि तेषां न कदाचनाऽहम् ।
इत्थं विनिश्चित्य विमुच्य वाह्यं, स्वस्थः सदा त्वं भव भद्र! मुक्त्यै ॥

२५. आत्मानमात्मन्यवलोक्यमानस्, त्वं दर्शनज्ञानमयो विशुद्धः ।
एकाग्रचित्तः खलु यत्र तत्र, स्थितोऽपि साधुर्लभते समाधिम् ॥

२६. एकः सदा शाश्वतिको ममात्मा, विनिर्मलः साधिगमस्वभावः ।
वहिर्भवाः सन्ति परे समस्ता, न शाश्वताः कर्मभवाः स्वकीयाः ॥

२७. यस्यास्ति नैक्यं वपुषाऽपि सार्द्धं, तस्यास्ति किं पुत्र-कलत्र-मित्रैः ?
पृथक् कृते चर्मणि रोमकूपाः, कुतो हि तिष्ठन्ति शरीर-मध्ये ॥

२८. संयोगतो दुःखमनेकभेदं, यतोऽश्नुते जन्मवने शरीरी ।
ततस्त्रिधाऽसौ परिवर्जनीयो, यियासुना निर्वृतिमात्मनीनाम् ॥

२९. सर्वं निराकृत्य विकल्पजालं, संसार-कान्तार-निपातहेतुम् ।
विविक्तमात्मानमवेक्षमाणो, निलीयसे त्वं परमात्मतत्त्वे ॥

३०. स्वयं कृतं कर्म यदात्मना पुरा, फलं तदीयं लभते शुभाशुभम् ।
परेण दत्तं यदि लभ्यते स्फुटं, स्वयं कृतं कर्म निरर्थकं तदा ॥

३१. निजार्जितं कर्म विहाय देहिनो, न कोऽपि कस्याऽपि ददाति किंचन ।
विचारयन्नेवमनन्यमानसः, परो ददातीति विमुंच शेमुषीम् ॥

३२. यैः परमात्माऽमितगतिवन्द्यः, सर्वविविक्तो भृशमनवद्यः ।
शाश्वदधीतो मनसि लभन्ते, मुक्तिनिकेतं विभववरं ते ॥

(१०)

श्री ऋषभदेव स्तोत्र

१. आदिजिनं वंदे गुणसदनं, सदनन्तामल-बोधं रे!
बोधकता-गुणविस्तृतकीर्ति, कीर्त्तित-पथमविरोधं रे-आदि० ॥

२. रोधरहित-विस्फुरदुपयोगं, योगं दधतमभंगं रे!
भंगं नय-व्रज-पेशलवाचं, वाचंयम-सुख-संगं रे-आदि० ॥

३. संगतपद-शुचि-वचनतरंगं, रंगं जगति ददानं रे!
दान-सुरद्रुम-मंजुलहृदयं, हृदयंगम-गुण - भानं रे-आदि० ॥

४. भानन्दित-सुर-नर-पुन्नागं, नागर-मानस-हंसं रे!
हंसगतिं पंचम-गतिवासं, वासव-विहिताशंसं रे-आदि० ॥

५. शंसन्तं नयवचनमनवमं, नव-मंगल-दातारं रे!
तारस्वरमघघनपवमानं, मान-सुभट-जेतारं रे-आदि० ॥

६. इत्थं स्तुतः प्रथमतीर्थपतिः प्रमोदात्,
श्री मद्-यशोविजय-वाचकपुंगवेन ।
श्री पुण्डरीक-गिरिराज-विराजमानो,
मानोन्मुखानि वितनोतु सतां सुखानि ॥

(११)

श्री पार्श्वनाथ स्तोत्र

(वाचक यशोविजय-विरचित)

१. ॐ नमः पार्श्वनाथाय, विश्व-चिन्तामणीयते ।
ह्रीं धरणेंद्र - वैरोट्या-पद्मादेवी-युतायते ॥

२. शांति - तुष्टि - महापुष्टि - धृतिकीर्तिविधायिने ।
ॐ ह्रीं द्विड्-व्याल-वेताल-सर्वाधिव्याधिनाशिने ॥

३. जया जिताख्या विजयाख्याऽपराजितयान्वितः ।
दिशां पालैर्ग्रहैर्यक्षैर्' विद्यादेवीभिरन्वितः ॥

४. ॐ असिआउसाय नमस्-तत्र त्रैलोक्यनाथताम् ।
चतुः षष्टि-सुरेन्द्रास्ते, भासन्ते छत्र-चामरैः ॥

५. श्री शंखेश्वरमण्डनपार्श्वजिन ! प्रणतकल्पतरुकल्प !
चूरय दुष्टव्रातं, पूरय मे वाञ्छितं नाथ !



(१२)

सर्वजिन स्तोत्र

(आचार्य कनकप्रभ)

१. जयति जंगम-कल्पमहीरुहो,
जयति दुःखमहार्णवतारकः ।
जयति विश्वसनातनदीपको,
जयति भूतल-शीतरुचिर्जिनः ।।

२. जयति कोपदवानल-नीरदो,
जयति मान-महीरुह-कुंजरः ।
जयति कूटकुडंगि-हिमागमो,
जयति लोभमहोदधि-मन्दरः ।।

३. विजयते जगदेकविलोचनो,
विजयते निरुपाधिक बान्धवः ।
विजयते भवरोग-चिकित्सको,
विजयते शिव-पत्तन-पण्डितः ।।

४. जयति मारविकार-निशाकर-
प्रसर – संवरणैकदिवाकरः ।
जयति संसृतिकाननसम्भ्रम,
भ्रमण – खिन्नजनैकसुधासरः ।।

५. विषय पंकिलमोहजलोल्लसद्,
वहुलराग - तरंग - भराकुले ।
विजयते विपुले भवपल्वले,
कमलमेकमहो जिन-पुंगवः ।।

(१३)

श्री वज्रपंजर स्तोत्र

१. परमेष्ठिनमस्कारं, सारं नवपदात्मकम् ।
आत्मरक्षाकरं वज्र-पञ्जराभं स्मराम्यहम् ।।

२. ॐ नमो अरिहंताणं, शिरस्कं शिरसि स्थितम् ।
ॐ नमो सव्वसिद्धाणं, मुखे मुखपटं वरम् ।।

३. ॐ नमो आयरियाणं, अंगरक्षाऽतिशायिनी ।
ॐ नमो उवज्झायाणं, आयुधं हस्तयोर्दृढम् ।।

४. ॐ नमो लोए सव्वसाहूणं, मोचके पादयोः शुभे ।
एसो पंच-नमुक्कारो, शिला वज्रमयी तले ।।

५. सव्वपाव-प्पणासणो, वप्रो वज्रमयो वहिः ।
मंगलाणं च सव्वेसिं, खादिराङ्गारखातिका ।।

६. स्वाहान्तं च पदं ज्ञेयं, पढमं हवइ मंगलं ।
वप्रोपरि वज्रमयं, पिधानं देह रक्षणे ।।

७. महाप्रभावा रक्षेयं, क्षुद्रोपद्रव-नाशिनी ।
परमेष्ठिपदोद्भूता, कथिता पूर्वसूरिभिः ।।

८. यश्चैवं कुरुते रक्षां, परमेष्ठि-पदैः सदा ।
तस्य न स्याद् भयं व्याधिराधिश्चापि कदाचन ।।

(१४)

घंटाकर्ण मन्त्र

१. ॐ घंटाकर्णो महावीरः सर्वव्याधि-विनाशकः ।
विस्फोटकभयं प्राप्ते, रक्ष-रक्ष महाबलः ॥

२. यत्र त्वं तिष्ठसे देव, लिखितोऽक्षर पंक्तिभिः ।
रोगास्तत्र प्रणश्यन्ति, वातपित्तकफोद्भवाः ॥

३. तत्र राजभयं नास्ति, यान्ति कर्णेजपात्क्षयम् ।
शाकिनी भूतवेताला, राक्षसाः प्रभवन्ति नो ॥
नाकाले मरणं तस्य, न च सर्पेण दश्यते ।
अग्निचौरभयं नास्ति, ॐ ह्रीं श्रीं घंटाकर्ण !
नमोस्तु ते ! ॐ नर वीर ! ठः ठः ठः स्वाहा ! !

धर्म-महिमा

यस्मिन्नैव पिता हिताय यतते, भ्राता च माता सुतः ।
सैन्यं दैन्यमुपैति चापचपलं, यत्राफलं दोर्बलम् ॥
तस्मिन्कष्टदशाविपाकसमये, धर्मस्तु संवर्द्धितः ।
सज्जः सत्वरमैव सर्वजगतस्त्राणाय वद्धोद्यमः ॥

(१५)

सोलह सती स्तोत्र

१. आदौ सती सुभद्रा च, पातु पश्चात्तु सुन्दरी,
ततश्चन्दनबाला च, सुलसा च मृगावती।

२. राजीमती ततश्चूला, दमयन्ती ततः परम्,
पद्मावती शिवा सीता, ब्राह्मी पुनश्च द्रौपदी।

३. कौशल्या च ततः कुन्ती, प्रभावती सतीवरा,
सतीनामांक – यंत्रोऽयं, चतुस्त्रिंशत् समुद्भवः।

४. यस्य पार्श्वे सदा यन्त्रो, वर्तते तस्य साम्प्रतम्,
भूरिनिद्रा न चायाति, नायान्ति भूतप्रेतकाः।

५. ध्वजायां नृपतेर्यस्य, यन्त्रोऽयं वर्तते सदा,
तस्य शत्रुभयं नास्ति संग्रामेऽस्य जयः सदा।

६. गृहद्वारे सदा यस्य यन्त्रोऽयं ध्रियते वरः,
कार्मणादिकतन्त्रैश्च, न स्यात् तस्य पराभवः।

७. स्तोत्रं सतीनां सुगुरुप्रसादात्, कृतं मयोद्योत-मृगाधिपेन,
यः स्तोत्रमेतत् पठति प्रभाते, स प्राप्नुते शं सततं मनुष्यः।

(१६)

श्री सती-यंत्र

९	१६	२	७
६	३	१३	१२
१५	१०	८	१
४	५	११	१४

(१७)

मंगल भावना

१. जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिः सदास्तु मे,
सम्यक्त्वमेव संसार - वारणं मोक्षकारणम् ।

२. श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः, श्रुते भक्तिः सदास्तु मे,
सज्ज्ञानमेव संसार - वारणं मोक्षकारणम् ।

३. गुरौ भक्तिर् गुरौ भक्तिर्, गुरौ भक्तिः सदास्तु मे,
चारित्रमेव संसार - वारणं मोक्षकारणम् ।

(१८)

श्री सरस्वती स्तोत्र

१. धिषणा धीर्मतिर्मेधा, वाग् विभवा सरस्वती ।
गीर्वाणी भारती भाषा, ब्रह्माणी मागध - प्रिया ।।

२. सर्वेश्वरी महागौरी, शंकरी भक्त - वत्सला ।
रौद्री चांडालिनी चंडा, भैरवी वैष्णवी जया ।।

३. गायत्री च चतुर्बाहुः, कुमारी परमेश्वरी ।
देवमाताऽक्षया चैव, नित्या त्रिपुर - भैरवी ।।

४. त्रैलोक्य-स्वामिनी देवी, शंदा कारुण्य-सूत्रिणी ।
शूलिनी पद्मिनी रुद्रा, लक्ष्मी पंकज - वासिनी ।।

५. चामुंडा खेचरी शांता, हुंकारा चन्द्र - शेखरा ।
वाराही विजया तर्का, कर्त्री हर्त्री, सुरेश्वरी ।।

६. चंद्रानना जगद्धात्री, वीणांबुज - कर - द्वया ।
सुभगा सर्वगा स्वाहा, जंभिनी स्तंभिनीश्वरी ।।

७. काली कपालिनी कौली, विज्ञा राज्ञी त्रिलोचना ।
पुस्तक-व्यग्र-हस्ता च, योगिन्यमितविक्रमा ।।

८. सर्व-सिद्धिकरी संज्ञा, खड्गिनी कामरूपिणी ।
सर्व-सत्त्व-हिता प्राज्ञा, शिवा शुक्ला मनोरमा ।।

९. मांगल्या रूचिराकारा, धन्या काननवासिनी ।
अज्ञाननाशिनी जैनी, अज्ञान-निशि-भास्करा ।।

१०. अज्ञान - जन - माता त्व - मज्ञानोदधि - शोषिणी ।
ज्ञानदा निर्मदा गंगा, शीता वागीश्वरी धृतिः ।।

११. ऐंकार-मस्तका प्रीतिः, ह्लींकार वदनाहुतिः ।
क्लींकार-हृदया सष्टिरष्ट-वीजा निराकृतिः ।।

१२. निरामया जगत्संस्था, निष्प्रपंचा चलाचला ।
निरुत्पन्ना समुत्पन्ना, चानन्ता गगनोपमा ।।

१३. पठत्यमूनि नामानि, अष्टोत्तर शतानि यः ।
वत्से धेनुरिवायाति, तस्मिन् देवी सरस्वती ।।

१४. त्रिकालं च शुचिर्भूत्वा, ह्यष्ट-मासान् निरन्तरं ।
पठतो सौख्य-समृद्धिर्जायते कविषु यशः ।।

द्रुहिण-वदन-पद्मे, राजहंसीव शुभ्रा ।
सकलकलुषवल्ली-कंद-कुद्दाल कल्पा ।
अमर-शतनुतांघ्रीः, कामधेनुः कवीनां ।
दहतु कमल-हस्ता, भारती कल्मषं मे ।

(१६)

श्री ऋषभ स्तोत्र

१. सुरवरेश नरेश शिरोमणि-प्रकट संघटित क्रम-पंकजम् ।
पढम तित्थयरं रिसहेसरं, तह कहं थुणिमो मुणिमो जहा ।।

२. विमल-नाभि-नरेश-कुलांवर-प्रकटनैकविभाभर भासुर !
वहु भवज्जिय कम्मतमोभरं, हण पहो भुवविक्क पहायर ।।

३. जन-मनः कुमुदाकर वोधन-प्रणव पार्वण-चन्द्र-समानन !
तुह पलोयणओ मह माणसं, हरिस संभरियं जलही जहा ।।

४. जगदनर्घ्य-गुण-प्रगुणैकधी-धनवशीकृत-विश्व-मनोरथ !
भुवण वंछिय कप्पतरूसया-मह जिणेसर देहि समीहियं ।।

५. सदुपदेशसुधारस-दूरिता-खिल महीतल दुःख दवानल !
तियस-नाह-निसेविय मे पहो ! कुणसु दुग्गइ दुक्ख निवारणं ।।

६. शशि सुधारस कुंद समुज्वल-स्फुट यशो विशदी कृत दिग्गज !
महमणो वि तहा नणु तेण किं, नहु भवे गरुयाण सु-संगओ ।।

७. सुजननी-मरुदेवि-सुधाभृतो-दर-सरोवरतामरसोपम !
तुह मुहे रिसहेस पुणो पुणो, रमइ मे नयणं भमरोवमं ।।

८. शम-सुधारस-पान-निराकृत-प्रवल-मोह-महाविष-विप्लव !
तयणु देहि पहो निरुवद्दवं, सिवसुहं वसुहा-सुह-दायग ।।

९. यः संस्कृत प्राकृत भाषया स्तवं, शत्रुंजय श्री हृदयाधिपस्य ।
कंठे विधत्ते मणि-मालिकोपमं, सदाशिवश्रीः श्रयति स्वयं तम् ।।

१०. इत्थं प्रभु श्री जयचन्द्रसुरि-शिष्याणुना संस्तुतपादपद्मः ।
श्री नाभि-राजेन्द्र-कुलावतंशो, देवो सुदेवोऽस्तु युगादिनाथः ।।

(२०)

श्री श्रुतदेवी-सरस्वती-स्तोत्र

१. कल-मराल-विहङ्गम:वाहना, सित-दुकूल-विभूपण-भूषिता ।
प्रणत-भूमिरुहामृत-सारिणी, प्रवर-देह-विभाम्वर-धारिणी ।।

२. अमृत-पूर्ण-कमण्डलु-धारिणी, त्रिदश-दानव-मानव-सेविता ।
भगवती परमैव सरस्वती, मम पुनातु सदा नयनाम्बुजे ।।

३. जिनपति-प्रथिताखिल-वाङ्मयी, गणधराऽनन-मण्डलनर्तकी ।
गुरु-मुखाम्बुज-खेलन-हँसिका, विजयते जगती श्रुति-देवता ।।

४. अमृत-दीधिति-बिम्ब-समाननां, त्रिजगती निर्मित माननाम् ।
नवरसामृत-वीचि-सरस्वतीं, प्रमुदित: प्रणमामि सरस्वतीम् ।।

५. वितत-केतकि-पत्र-विलोचने, विहित-संस्कृत-दुष्कृत-मोचने ।
धवल-पक्ष-विहङ्गम-लांछिते, जय सरस्वति पूरित-वांछिते ।।

६. भवदनुग्रह-लेश-तरंगिता-स्तदुचितं प्रवदंति विपश्चित: ।
नृपसभा-सुजिता: कमलावला, कुचकला-कलनानि वितन्वते ।।

७. गतधना अपिहि त्वदनुग्रहात्, कलित-कोमल-वाक्य-सुधोर्मय: ।
चकित-बालकुरंगमलोचना, जन-मनांसि हरन्ति-तरां नरा: ।।

८. करसरोरुह-खेलन-चंचला, तव विभाति वरा जप-मालिका ।
श्रुत-पयोनिधि-मध्य-पिकस्वरा: जल-तरङ्ग-कलाग्रह-संग्रहा ।।

९. द्विरद-केसरि-मारि-भुजंगमाऽपसद-तस्करराज-रुजां भयम् ।
तव गुणाऽवलिगान-तरंगिणां, न भविनां भवति श्रुतदेवते ! ।।

१०. ॐ ह्रीं क्लीं ब्लूं ततः श्री तदनुह सकलां ह्रीं मथो ऐं नमो ते ।
लक्षं साक्षाज्जपेद्यः कर-शुभ-विधिना[1] सत्तपो ब्रह्मचारी ॥
निर्यान्तीं चन्द्र-बिम्बात् कलयति मनसा त्वां जगच्चन्द्रिकाऽऽभाम् ।
सत्यं तद् ब्रह्मकुण्डे विहित-व्रत-विधिः स्यादशङ्कः स विद्वान् ॥

११. रे रे लक्षण-काव्य-नाटक-कथा चंपू-समालोकने ।
क्वायासं वितनोति बालिश ! मुधा किं नम्र-वक्त्राम्बुजः ॥
भक्त्याऽऽराधय मंत्रराज मनिशं, स्याद् भारती तोषिता ।
तेन त्वं कविता-वितान-सविता-द्वैत प्रबुद्धो भव ॥

१२. चञ्चच्चन्द्रमुखी-प्रसिद्ध-महिमा, स्वच्छंद-राज्यप्रदा-
नायासेन सुरासुरेश्वर-गणैरभ्यर्चिता भावतः ॥
देवी संस्तुत-वैभवा मलयजा, लेपांग-रागद्युतिः ।
सा मां पातु सरस्वती भगवती, त्रैलोक्यसञ्जीविनी ॥
स्तवनमेतदनेकगुणान्वितं, पठति यो मनुजः प्रमुदा प्रगे ।
स सहसा मधुरैर्वचनामृतैर्नृपगणानपि रञ्जयति स्फुटम् ॥

---

[1] करस्य करयोर्वा या शुभा विधि-तेन-करशुभविधिना-इत्यर्थः

(२१)

श्री चतुर्विंशति स्तोत्र

१. वन्दे धर्म-जिनं सदा सुखकरं, चन्द्रप्रभं नाभिजं ।
श्रीमद् वीर-जिनेश्वरं जयकरं, कुन्थुं च शान्ति जिनम् ।।
मुक्ति-श्री-फलदाय्यनन्तमुनिपं, वन्दे सुपार्श्वं विभुं ।
श्रीमन्मेघनपात्मजं च सुखदं, पार्श्वं मनोऽभीष्टदम् ।।

२. श्री नेमीश्वरसुव्रतौ च विमलं, पद्मप्रभं सांवरं ।
सेवे संभव-शङ्करं नमिजिनं, मल्लिं जयानन्दनम् ।।
वन्दे श्री जिन-शीतलं च सुविधिं, सेवेऽजितं मुक्तिदं ।
श्री संघं त्वथ पञ्चविंशतितमं, साक्षादरं वैष्णवम् ।।

३. स्तोत्रं सर्व-जिनेश्वरैरभिगतं, मन्त्रेषु मंत्रं वरं ।
एतत्सङ्गतयन्त्र एव विजयो, द्रव्यैर्लिखित्वा शुभैः ।।
पार्श्वे सन्ध्रियमाण एव सुखदो माङ्गल्यमालाप्रदो ।
वामाङ्गे वनिता नरास्तदितरे, कुर्वन्ति ये भावतः ।।

४. प्रस्थाने स्थिति-युद्ध-वाद-करणे, राजादिसन्दर्शने,
वश्यार्थे सुतहेतवे धनकृते, रक्षन्तु पार्श्वे सदा ।
मार्गे संविषमे दवाग्निज्वलिते, चिन्तादि-निर्नाशने,
यन्त्रोऽयं मुनिनेत्रसिंह कविना, संग्रन्थितः सौख्यदः ।।

(२२)

श्री चक्रेश्वरी स्तोत्र

१. श्री चक्रेश्वरि ! चक्रचुम्बितकरे ! चंचच्चलत्-कुंडला–
लंकारकृत-मस्तकोरु-मुकुटे, ग्रैवेयकालंकृते ।।
स्फारोदार-भुजाग्र भूषणकरे, सन्नूपुरैः वंधुरे ।
मातर्मां तनयं स्वमिष्टविनयं, त्रायस्व संत्रासतः ।।

२. श्री चक्रेश्वरि ! चन्द्रमंडलमिव ध्वस्तांधकारोत्करं ।
भव्य-प्राणि-चकोर-चुम्बितकरं संतापसंपद्धरम् ।।
सम्यग्दृष्टि-सुखप्रदं सुविशदं कांत्यास्पदं संपदा–
पात्रं जीवमनप्रसाद-जनकं भाति त्वदीयं मुखम ।।

३. श्री चक्रेश्वरि ! युष्मदाननरविं पश्यन्ति नैवोदितं ।
ध्वस्त-ध्वान्ततर्ति प्रदत्तसुगतिं संप्राप्त-मार्ग-स्थितिं ।।
ते ज्ञेया इह कौशिका इव जना हेयाः सतां सर्वथा ।
नादेयाः कुदृशो भवंति भगवत्युच्चैः शिवं वांछताम् ।।

४. श्री चक्रेश्वरि ! युष्मदंघ्रि चरितं सर्वत्र तद्विश्रुतं ।
कस्याज्ञस्य मनोमुदे भवति नो निष्पुण्यचूड़ामणेः ।।
कारुण्यान्वित-भंगि-संमत–मति भ्रान्ति-प्रशान्त-प्रियं ।
श्री संकेतगृहं सदास्तविरहं पुण्यानुवंधि स्फुटम् ।।

५. श्री चक्रेश्वरि ! ये स्तुवंति भवतीं भव्याभवद्भक्तयः ।
श्री सर्वज्ञ-पदारविंद-युगले विश्राममातन्वतीम् ।।
भृंगीवत् सुदृशां सुखं त्वसदृशं संप्रार्थयन्तो जना–
स्ते स्युर्ध्वस्तविपत्तयः सुमतयः स्पष्टं जितारातयः ।।

६. श्री चक्रेश्वरि ! नित्यमेव भवती नामापि ये सादरं।
संतः सत्यशमाश्रिताः प्रतिपदं सम्यक् स्मरंति स्फुरत् ॥
तेषां किं दुरितानि यांति निकटे, नायाति किं श्री गृहे ?
नोपैति द्विषतां गणोऽपि विलयं नाभीष्ट सिद्धिर्भवेत् ?

७. श्री चक्रेश्वरि ! ये भवंति भवती पादारविंदाश्रिता–
स्ते भृंगा इव कामितार्थः मधुनः पात्रं सदैवांगिनः ॥
जायंते जगति प्रतीति-भवनं भव्याः स्फुरत्कीर्तयः।
तेषां क्वापि कदापि सा भवति नो, दारिद्रयमुद्रा गृहे ॥

८. श्री चक्रेश्वरि ! यः स्तवं तव करोत्युच्चैः स किं मानवः।
कस्मादंत्यजनाच्च याचत इह क्लेशैर्विमुक्ताशयः ?
कास-श्वास-शिरोगल-ग्रहकटी-वातातिसार-ज्वर–
श्रोतो नेत्रगतामयैरपि न स श्रेयानिह प्रार्थ्यते ॥

९. श्री चक्रेश्वरि ! शासनं जिनपतेस्तद्रक्षसि त्वं मुदा।
ये केचिज्जिनभावितान्यवितथान्युच्चैः प्रजल्पंति च ॥
भव्यानां पुरतो हितानि कुरुषे तेषां तु तुष्टिं सदा।
क्षुद्रोपद्रवविद्रवं प्रतिपदे कृत्वा कृतान्तादपि ॥

१०. श्री चक्रेश्वरि ! विश्व-विस्मयकरी त्वं कल्पवृक्षोपमा।
धत्सेऽभीष्ट-फलानि-वस्तु-निकृतिं दत्से विना संशयं ॥
तेन त्वं विनुता मयाऽपि भवती मत्वेति मन्निश्चयं।
कुर्याः श्री जिनदत्त-भक्तिषु मनो मे सर्वदा सर्वथा ॥

(२३)

श्री जिनेन्द्र स्तवन

१. नम्राखिलाऽखण्डल-मौलिरत्न-रश्मिच्छटापल्लवितांघ्रिपीठः ।
विध्वस्त-विश्व-व्यसन-प्रवन्धः त्रिलोकवंधुः जयताज्जिनेन्द्रः ॥

२. मूढ़ोस्म्यहं विज्ञपयामि यत्वा-मपेतरागं भगवन् ! कृतार्थम् ।
नहि प्रभूणामुचित-स्वरूप-निरूपणाय क्षमतेऽर्थिवर्गः ॥

३. मुक्तिं गतेऽपीश विशुद्धचित्ते गुणाधिरोपेण ममासि साक्षात् ।
भानुर्दवीयानपि दर्पणांशु-सङ्गान्न किं द्योतयते गृहान्तः ॥

४. तव स्तवेन क्षयमङ्गभाजां, भजन्ति जन्मार्जित-पातकानि ।
कियच्चिरं चण्डरुचेर्मरीचेः स्तोमे तमांसि स्थितिमुद्वहन्ति ॥

५. शरण्य ! कारुण्यपरः परेषां, निहंसि मोहज्वरमाश्रितानाम् ।
मम त्वदाज्ञां वहतोऽपि मूर्ध्ना, शान्ति न यात्येष कुतोऽपि हेतोः ॥

६. भवाटवी-लङ्घन-सार्थवाहं, त्वामाश्रितो मुक्तिमहं यियासुः ।
कषाय-चौरैर्जिन ! लुंप्यमानं रत्नत्रयं मे तदुपेक्षसे किम् ?

७. लब्धोसि स त्वं हि मया महात्मा, भवाम्बुधौ वंभ्रमता कथंचित् ।
आ पापपिण्डेन नतो न भक्त्या, न पूजितो नाथ न तु स्तुतोऽसि ॥

८. संसार-चक्रे भ्रमयन् कुवोध-दण्डेन मां कर्ममहाकुलालः ।
करोति दुःख-प्रचयस्य भाण्डं, ततः प्रभो ! रक्ष जगच्छरण्य ! ॥

९. कदा त्वदाज्ञा-करणाप्ततत्वस्त्यक्त्वा ममत्वादि भवैककन्दम् ।
आत्मैकसारो निरपेक्षवृत्तिर्मोक्षेऽप्यनिच्छो भवितास्मि नाथ !

१०. तवत्रियामापतिकान्तिकान्तै-र्गुणैर्नियम्यात्ममन-प्लवङ्गम् ।
कदा त्वदाज्ञाऽमृतपानलोलः, स्वामिन् ! परब्रह्मरतिं करिष्ये ॥

११. एतावतीं भूमिमहं त्वदंघ्रि-पद्म-प्रसादात्-गतवानधीश !
हठेन पापास्तदपि स्मराद्याः, हा मामकार्येषु नियोजयन्ति ।।

१२. भद्रं न किं त्वय्यपि नाथ ! नाथे, सम्भाव्यते मे यदपि स्मराद्याः ।
अपाक्रियन्ते शुभभावनाभिः, पृष्ठं न मुंचन्ति तथापि पापाः ।।

१३. भवाम्बुराशौ भ्रमतः कदापि मन्ये न मे लोचनगोचरोऽभूः ।
निस्सीम-सीमन्तक-नारकादि-दुःखातिथित्वं कथमन्यथेश !

१४. चक्रासिचापाङ्कुशवज्रमुख्यैः, सल्लक्षणैर्लक्षितमंघ्रियुग्मम् ।
नाथ ! त्वदीयं शरणं गतोऽस्मि, दुर्वार-मोहादि विपक्ष-भीतः ।।

१५. अगम्य-कारुण्य-शरण्यपुण्यः ! सर्वज्ञ ! निष्कण्टक ! विश्वनाथ !
दीनं हताशं शरणागतञ्च, मां रक्ष-रक्ष, स्मरभिल्ल-भल्लात् ।।

१६. त्वया विना दुष्कृतचक्रवालं, नान्यः क्षयं नेतुमलं ममेश ।
किं वा विपक्षप्रतिचक्रमूलं, चक्रं विना च्छेत्तुमलं भविष्णु ।।

१७. यद्देवदेवोऽसि महेश्वरोसि, बुद्धोसि, विश्वत्रय-नायकोऽसि ।
तेनान्तरङ्गारिगणाभिभूतस्तवाग्रतो रोदिमि हा सखेदम् ।।

१८. स्वामिन्नधर्मव्यसनानि हित्त्वा, मनः समाधौ निदधामि यावत् ।
तावत् क्रुधेवान्तरवैरिणो मामनल्प मोहान्ध्यवशं नयन्ति ।।

१९. त्वदागमाद्देव ! सदैव भीताः मोहादयो यन्मम वैरिणोऽमी ।
तथापि मूढ़स्य पराप्तवुद्ध्या तत्सन्निधौ हा न किमप्यकृत्यम् ।।

२०. म्लेच्छैर्नृशंसैरतिराक्षसैश्च, विडम्बितोऽमीभिरनेकशोऽहम् ।
प्राप्तस्त्विदानीं भुवनैकवीर ! त्रायस्व मां यत्तव पादलीनम् ।।

२१. हित्त्वा स्वदेहेऽपि ममत्वबुद्धिं, श्रद्धापवित्रीकृतसद्विवेकः ।
मुक्तान्यसंगः समशत्रुमित्रः स्वामिन् ! कदा संयममातनिष्ये ।।

२२. त्वमेव देवो मम वीतराग-धर्मो भवद्दर्शितधर्म एव ।
इति स्वरूपं परिभाव्य तस्मान्-नोपेक्षणीयो भवति स्व भृत्यः ।।

२३. जिताजिताशेप सुराऽसुराद्याः कामादयः काममभी त्वयेश !
त्वां प्रत्यसक्तास्तव सेवकं तु, विघ्नन्ति हा ते पुरुषं रूषेव ।।

२४. सामर्थ्यमेतद्भवतोऽस्ति सिद्धं, सत्वानशेषानपि नेतुमीशः ।
क्रिया-विहीनं भवदङ्घ्रि-लीनं, दीनं न किं रक्षसि मां शरण्यम् ।।

२५. त्वत्पादपद्मद्वितयं जिनेन्द्र ! स्फुरत्यजस्रं हृदि यस्य पुंसः ।
विश्वत्रयीश्रीरपि नूनमेति, तत्राश्रमार्थं सहचारिणीव ।।

२६. अहं प्रभो ! निर्गुणचक्रवर्ती, क्रूरो दुरात्मा हतकः स पाप्मा ।
हा दुःखराशौ भव-वारिराशौ, यस्मान्निमग्नोस्मि भवद्विमुक्तः ।।

२७. स्वामिन्निमग्नोस्मि सुधासमुद्रे, यन्नेत्रपात्रातिथिरद्य मेऽभूः ।
चिन्तामणौ स्फूर्जति पाणि-पद्मे, पुंसामसाध्यो नहि कश्चिदस्ति ।।

२८. त्वमेव संसारमहाम्बुराशौ, निमज्जतो मे जिन ! यानपात्रम् ।
त्वमेव मे श्रेष्ठसुखैकधाम, विमुक्तिरामा-घटनाऽभिरामः ।।

२९. चिन्तामणिस्तस्य जिनेश ! पाणौ, कल्पद्रुमस्तस्य गृहांगणस्थः ।
नमस्कृतो येन सदातिभक्त्या, स्तोत्रैः स्तुतो भाववलार्चितोऽसि ।।

३०. निमील्य नेत्रे मनसः स्थिरत्वं, विधाय यावज्जिन ! चिन्तयामि ।
त्वमेव तावन्न परोऽस्ति देव ! निःशेष-कर्मक्षय-हेतुरत्र ।।

(२४)

श्री वर्द्धमान भक्तामर स्तोत्र

(श्री घासीलालजी महाराज)

१. भक्तामरप्रवरमौलिमणिव्रजेषु,
ज्योतिः प्रभूतसलिलेषु सरोवरेषु ।
चेतोऽलिमंजु-विकसत्कमलायमानं,
श्री वर्द्धमानचरणं शरणं व्रजामि ।।

२. आनन्दनन्दनवनं सवनं सुखानां,
सद्भावनं शिवपदस्य परं निदानम् ।
संसारपारकरणं करणं गुणानां,
नाथ ! त्वदीयचरणं शरणं प्रपद्ये ।

३. सिद्धौषधं सकलसिद्धिपदं समृद्धं,
शुद्धं विशुद्धसुखदं च गुणैः समिद्धम् ।
ज्ञानप्रदं शरणदं विगताघवृन्दं,
ध्यानास्पदं शिवपदं शिवदं प्रणौमि ।।

४. बालो विवेकविकलो निजबालभावा–
दाकाशमानमपि कर्त्तुमिव प्रवृत्तः ।
ज्ञानाद्यनन्तगुणवर्णनकर्त्तुकामः,
कामं भवामि करुणाकर ! ते पुरस्तात् ।।

५. स्पर्शो मणिर्नयति चेन्निजसन्निधानात्,
लोहं हिरण्यपदवीमिति नात्र चित्रम् ।
किन्तु त्वदीयमनुचिन्तनमेव दूरात्,
साम्यं तनोति तव सिद्धिपदे स्थितस्य ।।

६. कुन्देन्दुहाररमणीयगुणान् जिनेन्द्र !
वक्तुं न पारयति कोऽपि कदापि लोके ।
कः स्यात् समस्तभुवनस्थितजीवराशे-
रेकैकजीवगणनाकरणे समर्थः ?

७. शक्त्या विनाऽपि मुनिनाथ ! भवद्गुणानां,
गाने समुद्यतमतिर्नहि लज्जितोऽस्मि ।
मार्गेण येन गरुडस्य गतिः प्रसिद्धा,
तेनैव किं न विहगस्य शिशुः प्रयाति ?

८. त्वद्वाक् सुधासुरुचिरेव विभो ! बलान्मां,
वक्तुं प्रवर्तयति नाथ ! भवद्गुणानाम् ।
यद् वर्द्धते जलनिधिस्तरलैस्तरंगैस्-
तत्रास्ति चन्द्रकिरणोदय एव हेतुः ॥

९. अज्ञानमोहनिकरं भगवन् ! हृदि स्थं,
हर्त्तुं प्रभुः प्रवचनं भवदीयमेव ।
गाढ-स्थिरं चिरतरं तिमिरं दरीस्थं,
हर्त्तुं प्रभुः सुरुचिरा रुचिरेव नान्यत् ॥

१०. वाक्य-प्रमाणनयरीतिगुणैर्विहीनं,
निर्भूषणं यदपि बोधिद ! मामकीनम् ।
स्यादेव देवनरलोकहिताय युष्मत्,
संगाद् यथा भवति शुक्तिगतोदविन्दुः ॥

११. आस्तां तव स्तुतिकथा मनसोऽप्यगम्या,
नामापि ते त्वयि परं कुरुतेऽनुरागम् ।
जम्बीरमस्तु खलु दूरतरेऽपि देव !
नामापि तस्य कुरुते रसनां रसालाम् ॥

१२. नानामणिप्रचुरकांचनरत्नरम्यम्,
स्वीयं प्रयच्छति पदं जनकः सुताय ।
त्वद्ध्यानमेव जिनदेव ! पदं त्वदीयं,
भव्याय नित्यसुखदं प्रकटीकरोति ॥

१३. ज्ञानाद्यनन्तगुणगौरवपूर्ण – सिन्धुं,
वन्धुं भवन्तमपहाय परं क इच्छेत् ?
प्राज्यं प्रलभ्य भुवनत्रितयस्य राज्यं,
कः कामयेत किल किंकरतामवुद्धिः ॥

१४. त्वद्गात्रतो परिणताः परमाणवोऽपि,
सर्वोत्तमा निरुपमाः सुषमा भवन्ति ।
लब्ध्वा शरण्य ! शरणं चरणं जनास्ते,
सिद्धाः भवेयुरिति नाथ ! किमत्र चित्रम् ॥

१५. कश्चण्डकौशिकसमं भवसिन्धुपार–
नेता सुदर्शनसमं च जगत्त्रयेऽपि ।
हे नाथ ! तत् कथय ते चरणाम्वुजस्य,
येनोपमा गुणलवेन घटेत लोके ॥

१६. लोकोत्तरं सकलमंगलमोदकन्दं,
स्यन्दं वचोऽमृतरसस्य जगत्यमन्दम् ।
स्वर्गापवर्गसुखदं भवदास्यचन्द्रं,
दृष्ट्वा मुदं भजति भव्यचकोरवृन्दम् ॥

१७. भ्रान्त्याऽपि भद्रमुदितं भवदीयनाम,
सिद्धेर्विवाग्नि भगवन् ! सुकृतानि सूते ।
अज्ञानतोयि पतितं सितखण्डखण्डं,
धत्ते मुखे मधुरिमाणमखण्डमेव ॥

१८. यो मस्तकं नमयते जिन ! तेंऽघ्रिपद्मे,
सर्वर्द्धिसिद्धिनिचयः श्रयते तमेव ।
तीर्थंकरः शुभकरः प्रविभूय सोऽयं,
स्थानं प्रयाति परमं ध्रु वनित्यशुद्धम् ॥

१९. पृच्छामि नावमधुना मुनिनाथ ! नित्यं,
प्राप्ता त्वया तरणतारणता हि कस्मात् ।
सा नोत्तरं वितनुते त्वमपि प्रयातस्-
तद् ब्रू हि कोऽस्ति परितोषकरस्तृतीयः ॥

२०. पीयूषमत्र निजजीवनसारहेतुं,
पीत्वाऽऽप्नुवन्ति मनुजास्तनुमात्ररक्षाम् ।
स्याद्वादसुन्दररुचं भवतस्तु वाच,
पीत्वा प्रयान्ति सुतरामजरामरत्वम् ॥

२१. चक्री यथा विपुलचक्रबलादखण्डं,
भूमण्डलं प्रभुतया समलंकरोति ।
रत्नत्रयेण मुनिनाथ ! तथा पृथिव्यां,
जैनेन्द्रशासनपरान् भविनो विधत्से ॥

२२. कालस्य मानमखिलं शशिभास्कराभ्यां,
पक्षद्वयेन गगने गमनं खगानाम् ।
तद्वद् भवानपि भवाद् भगवन् ! जनानां,
ज्ञानक्रियोभयवशादिह मुक्तिमाह ॥

२३. आनादिकं हृदिगतं विषमं विषात्कम्,
संसारकाननपरिभ्रमणैकहेतुम् ।
मिथ्यात्वदोषमखिलं मलिनस्वरूपम्,
क्षिप्रं प्रणाशयति ते विमलः प्रभावः ॥

२४. प्रामादिका विषयमोहवशं गता ये,
कर्त्तव्यमार्गविमुखाः कुमतिप्रसक्ताः ।
अज्ञानिनो विषयघूर्णितमानसाश्च,
सन्मार्गमानयति तान् भवतः प्रभावः ॥

२५. कल्पद्रुमानिव गुणांस्तव चन्द्रशुभ्रान्,
चिन्तामणीनिव समीहितकामपूर्णान् ।
ज्ञानादिकान् जनमन-परितोषहेतून्,
संस्मृत्य को न परितोषमुपैति भव्यः ॥

२६. चिन्तामणिः सुरतरुर्निधयस्तथैव,
तेभ्यः सुखं क्षणिकनश्वरमाप्नुवन्ति ।
त्वत्सेविनो भविजना ध्रुवनित्यसौख्यं,
तस्मादितोऽप्यधिकतां समुपैसि नाथ !

२७. ध्वान्तं न याति निकटे रविमण्डलस्य,
चिन्तामणेश्च सविधे खलु दुःखलेशः ।
रागादिदोषनिचया भगवंस्तथैव,
नो यान्ति किंचिदपि देव ! भवत्समीपे ॥

२८. शीतांशुमण्डल-जलामृतफेनपुंजं,
प्रोत्फुल्लितेप्सितसुपुष्पविशालकुंजम् ।
धर्मं निरूप्य परमं खलु दुखभंजं,
नित्यं विकासयसि भव्यद ! भव्यकंजम् ॥

२९. दूरस्थितोऽपि सितरश्मिरलं स्वकीयैः,
शुभ्रैर्विकासिकिरणैः सुविकासभावम् ।
अन्तर्गतं वितनुते किल कैरवाणां,
तद्वज्जिनेन्द्र ! गुणराशिरयं जनानाम् ॥

३०. शीतांशुरश्मिनिकरप्रसरानुषंगाद्,
यच्चन्द्रकान्तमणयः परितो द्रवन्ति ।
तद्वत्त्वदीयमहिमश्रवणेन भव्याः,
शान्ताः प्रवृद्धकरुणा-द्रविता भवन्ति ।।

३१. दुःखप्रधानशिववर्जितहीयमाने,
काले सदा विषयजालमहाकराले ।
भव्या भवत्प्रवचनं शिवदं जिनेन्द्र !
पीत्वाऽऽत्मशान्तिमुपयान्ति नितान्त शुद्धाम् ।।

३२. षट्कायनाथ ! मुनिनाथ ! गुणाधिनाथ !,
देवाधिनाथ ! भविनाथ ! शुभैकनाथ !
अस्मान् प्रबोधय जिनाधिप ! दूरतोऽपि,
किं नो स्मितानि कुरुते कुमुदानि चन्द्रः ।।

३३. वृक्षोऽपि शोकरहितो भवदाश्रयेण,
जातस्ततः स यदशोक इति प्रसिद्धः ।
भव्याः पुनर्जिन ! भवच्चरणाश्रयेण,
किं नाम कर्मरहिता न भवन्त्यशोकाः ।।

३४. सिंहासने मणिमये परिभासमानं,
नाथं निरीक्ष्य किल सन्दिहते विधिज्ञाः ।
इन्दुः किमेष ? नहि यत् स कलंकरंकुः,
किं वा रविर्न स तु चण्डतरप्रकाशः ?

३५. पुंजस्त्विषामिति पुरा निरणायि पश्चाद्,
व्यक्ताकृतिस्तनुधरोऽयमिति प्रबुद्धैः ।
भव्यैः पुमानिति पुनः प्रशमस्वभावः,
कारुण्यराशिरिति वीरजिनः क्रमेण ।।

३६. देवैरचित्तकुसुमप्रकरस्य वृष्टया,
दिङ्मण्डलं सुरभितं भवतोऽतिशेपात् ।
स्याद्वादचारुरचनावचनावलीनां,
वृष्टया भवन्ति भविनः प्रशमे निमग्नाः ॥

३७. लोकोत्तरा सकलजीववचोविलास-
पीयूषवत्परिणता भवदीय भाषा ।
सर्वर्द्धिसिद्धिगुणवृद्धिविधानदक्षा,
साक्षात्तनोति कुशलं सकलं सुलक्षा ॥

३८. गोक्षीर-नीर-शशि-कुन्द-तुषार-हार-
शुक्लैर्वियद्विलसितैः शुभचामरौघैः ।
ध्यानं सितं तव विभो ! विनिवेद्यते यत्,
सर्वज्ञता तदनु कर्मसमूलनाशः ॥

३९. आखण्डलैरवनिमण्डलमागतैस्तैर्-
भामण्डलं तव नुतं मुनिमण्डलैश्च ।
मोहान्धकारपरिहारकरं जिनेन्द्र !
तुल्यं कथं भवति तद् रविमण्डलेन ॥

४०. यत्कर्मवृन्दसुभटं विकटं विजेता,
लोकत्रयप्रभुरसावति-शेषधारी ॥
तस्माज्जिनेन्द्रसरणिं शरणीकुरुध्वं,
भव्या ! इति ध्वनति खे किल दुन्दुभिस्ते ॥

४१. अत्युज्ज्वलं विजितशारदचन्द्रविम्वं,
सम्मोदकं सकलमंगलमंजुकन्दम् ।
छत्रत्रयं तव निवेदयते जिनेन्द्र !
रत्नत्रयं प्रभुपदं शिवदं ददाति ॥

४२. यत्र त्वदीयपदपंकजसन्निधानं,
सन्धानभूमिरसमाऽपि समा समन्तात् ।
सर्वर्त्तवश्च सुखदा विलसन्ति लोका,
मन्ये नु कल्पतरुरेव भवत्पदाब्जम् ।।

४३. दिव्यो ध्वनिर्गुणगणश्च यशोऽपि दिव्यं,
दिव्याऽपि भावसमता प्रभुताऽपि दिव्या ।
तस्माद् विभो ! क्व तुलना भुवनत्रयेऽपि,
ज्योतिर्गणाः किमिह भानुसमा विभान्ति ।।

४४. दिव्यं प्रभावमवलोक्य सुरादयस्ते,
पीयूषसारवचनानि निशम्य सम्यक् ।
आनन्दवारिधितरंगनिमग्नचित्तास्–
त्वद्वर्णनाक्षमतया प्रणमन्ति भावात् ।।

४५. तुभ्यं नमः सकलमंगलकारकाय,
तुभ्यं नमः सकलनिर्वृतिदायकाय ।
तुभ्यं नमः सकलकर्मविनाशकाय,
तुभ्यं नमः सकलतत्त्वनिरूपकाय ।।

४६. तुभ्यं नमः सकलजीवदयापराय,
तुभ्यं नमः शिवदशासनभास्कराय ।
तुभ्यं नमः सकललोकशुभंकराय,
तुभ्यं नमः सततमस्तु जिनेश्वराय ।।

४७. रक्षःपिशाचनिकरैरदयोपसृष्टं,
दुर्वृत्त-दुष्ट-खलसृष्टविसृष्टमुष्टम् ।
दारिद्रयदुखगदजालविशालकष्टं,
नष्टं भवत्यखिलमाशु भवत्प्रभावात् ।।

४८. चौरारि-सिंह-गजपन्नग-दुष्ट-दाव–
हिंस्रप्रचार–खलवन्धनदुर्ग–भूमौ ।
सर्वं भयं भयकरं प्रणिहन्ति नाथ !
त्वद्ध्यानमात्रमखिलं भुवनत्रयेऽस्मिन् ॥

४९. सिंहोरग–प्रखरसूकर–हिंस्रजालैर्–
व्याप्ताऽटवी विकटलुण्ठक-कण्टनालैः ।
सर्वर्त्तु-पुष्प-फल-पल्लवशोभमाना,
सा नन्दनं भवति ते स्मरणाज्जिनेन्द्र !

५०. घोरातिघोरविकटे सुभटेऽतिकष्टे,
भ्रष्टे वले विविधदुःखशतैर्विशिष्टे ।
शस्त्राहतिप्रविचलद्रुधिरप्रवृद्धे,
युद्धे तनोति तव नाम विशुद्धशान्तिम् ॥

५१. सर्वर्द्धि-सिद्धिदमिदं परमं पवित्रं,
स्तोत्रं च यः पठति वीरजिनेश्वरस्य ।
चिन्तामणिः सुरतरुः सकलार्थसिद्धिः,
संसेवितुं तमनुकूलयितुं समेति ॥

५२. श्री वर्द्धमान–शुभनामगुणानुवद्धां,
शुद्धां विशुद्धगुणपुष्पसुकीर्तिगन्धाम् ।
यो घासिलालरचितां स्तुतिमंजुमालां,
कण्ठे विभर्त्ति खलु तं समुपैति लक्ष्मीः ॥

(२५)

श्री परमानन्द-पंचविंशतिका

१. परमानन्द-संयुक्तं, निर्विकारं निरामयम् ।
ध्यानहीना न पश्यन्ति, निज-देहे व्यवस्थितम् ।।

२. अनन्तसुख-सम्पन्नं, ज्ञानामृत-पयोधरम् ।
अनन्तवीर्य-सम्पन्नं, दर्शनं परमात्मनः ।।

३. निर्विकारं निराधारं, सर्वसंगविवर्जितम् ।
परमानन्द-संपन्नं, शुद्धचैतन्य-लक्षणम् ।।

४. उत्तमाऽध्यात्मचिन्ता च, मोह-चिन्ता च मध्यमा ।
अधमा कामचिन्ता च, परचिन्ताऽधमाधमा ।।

५. निर्विकल्पं समुत्पन्नं, ज्ञानमेव सुधारसम् ।
विवेकमंजलिं कृत्वा, तं पिबन्ति तपस्विनः ।।

६. सदानंदमयं जीवं, यो जानाति स पण्डितः ।
स सेवते निजात्मानं, परमानन्द-कारणम् ।।

७. नलिन्यां च यथा नीरं, भिन्नं तिष्ठति सर्वदा ।
तथैवात्मा स्वभावेन, देहे तिष्ठति सर्वदा ।।

८. द्रव्यकर्म-विनिर्मुक्तं, भावकर्म-विवर्जितम् ।
नोकर्म-रहितं विद्धि, निश्चयेन चिदात्मनम् ।।

९. अनंतब्रह्मणो रूपं, निजदेहे व्यवस्थितम् ।
ध्यानहीना न पश्यन्ति, जात्यन्धा इव भास्करम् ।।

१०. तद् ध्यानं क्रियते भव्यैर्, येन कर्म विलीयते ।
तत् क्षणं दृश्यते शुद्धं, चिच्-चमत्कारलक्षणम् ।।

११. चिदानंदमयं शुद्धं, निराकारं निरामयम् ।
अनंत - सुखसम्पन्नं, सर्वसंगविवर्जितम् ॥

१२. लोकमात्रप्रमाणो हि, निश्चये न हि संशयः ।
व्यवहारे देहमात्रो, कथयन्ति मुनीश्वराः ॥

१३. यत्क्षणं दृश्यते शुद्धं, तत्क्षणं गतविभ्रमः ।
स्वस्थचित्तं स्थिरीभूतं, निर्विकल्पं समाधिना ॥

१४. स एव परमं ब्रह्म, स एव जिनपुंगवः ।
स एव परमं तत्त्वं, स एव परमो गुरुः ॥

१५. स एव परमं ज्योतिः, स एव परमं तपः ।
स एव परमं ध्यानं, स एव परमात्मकम् ॥

१६. स एव सर्वकल्याणं, स एव सुखभाजनम् ।
स एव शुद्धचिद्रूपं, स एव परमं शिवम् ॥

१७. स एव ज्ञानरूपो हि, स एवात्मा न चाऽपरः ।
स एव परमा शान्तिः, स एव भवतारकः ॥

१८. स एव परमानंदः, स एव सुखदायकः ।
स एव घन-चैतन्यं, स एव गुण-सागरः ॥

१९. परमाह्लाद - संपन्नं, राग - द्वेषविवर्जितम् ।
सोऽहं तु देहमध्यस्थं, यो जानाति स पण्डितः ॥

२०. आकार-रहितं शुद्धं, स्वस्वरूपे व्यवस्थितम् ।
सिद्धमष्टगुणोपेतं, निर्विकारं निरंजनम् ॥

२१. तत्समं तु निजात्मानं, यो जानाति स पण्डितः ।
सहजानंद-चैतन्यं, प्रकाशयति महीयसे ॥

२२. पाषाणेषु यथा हेमं, दुग्ध-मध्ये यथा घृतम् ।
तिल-मध्ये यथा तैलं, देह-मध्ये तथा शिवः ।।

२३. काष्ठमध्ये यथा वह्निः, शक्तिरूपेण तिष्ठति ।
अयमात्मा शरीरेषु, यो जानाति स पण्डितः ।।

२४. आनन्द-रूपं परमात्मतत्त्वं,
समस्त - संकल्पविकल्प- मुक्तम् ।
स्वभावलीना निवसन्ति नित्यं,
जानाति योगी स्वयमेव तत्त्वम् ।।

२५. ये धर्मशीला मुनयः प्रधानास्,
ते दुःखहीना नियतं भवन्ति ।
संप्राप्य शीघ्रं परमात्मतत्त्वं,
व्रजन्ति मोक्षं क्षणमेकमध्ये ।।

(२६)

त्रिकाल-चतुर्विंशति-जिनस्तवः

(आचार्य देवेन्द्र)

अतीतजिनाः

१. केवलज्ञानिनं निर्वाणिनं सागरमेव च ।
महायशोऽभिधं वन्दे भक्त्या विमलनामकम् ।।

२. सर्वानुभूतिं प्रणुमः श्रीधरं दत्तसंज्ञकम् ।
दामोदरं सुतेजस्कं स्वामिनं मुनिसुव्रतम् ।।

३. सुमतिं शिवगत्याख्यमस्ताघं च नमीश्वरम् ।
अनिलं यशोधराह्वं कृतार्घं च नमाम्यहम् ।।

४. जिनेश्वरं शुद्धमतिं सेवे शिवकरं तथा ।
स्यन्दभं सम्प्रतिं चेत्यतीताः सन्तु श्रिये जिनाः ।।

वर्तमानजिनाः

५. ऋषभं चाजितं चैव सम्भवं चाभिनन्दनम् ।
सुमतिं पद्मप्रभाख्यं सुपार्श्वं नौम्यहं जिनम् ।।

६. चन्द्रप्रभं च सुविधिं कलये हृदि शीतलम् ।
श्रेयांसं वासुपूज्यं च विमलानन्तजिज्जिनौ ।।

७. धर्मनाथं तथा शांतिनाथ कुन्थुं तथाह्यरम् ।
मल्लिं मुनिसुव्रताह्वं पूजयामितमां नमिम् ।।

८. नेमिनं पार्श्वनाथं च वर्द्धमानमभिष्टुमः ।
इत्यमी वर्तमानास्ते भूयासुर्भूतये जिनाः ।।

भाविजिनाः

९ पद्मनाभं सूरदेवं सुपार्श्व च स्वयंप्रभम् ।
सर्वानुभूतिमभितो वंदे देवश्रुताह्वयम् ।।

१०. उदयाख्यं च पेढालं पोट्टिलं शतकीर्तिकम् ।
सुव्रतं चाममं निष्कषायं हृदि निवेशय ।।

११. निःपलासं निर्ममाख्यं चित्रगुप्तं तथा श्रये ।
समाधि-संवर-यशोधरान् विजय मल्लकौ ।।

१२. देवं चानन्तवीर्यं च स्तुवे भद्रकरं तथा ।
इत्येते भाविनोऽर्हन्तो निघ्नंतु मेऽन्धमन्वहम् ।।

१३. इत्याद्या भरतक्षेत्रेऽतीताद्या जिनपुंगवाः ।
संस्तुता अद्भुतां दद्युः श्रीसंघतिलक-श्रियम् ।।

(२७)

श्री गौतमस्वामी स्तोत्र

(आचार्य जिनप्रभ)

१. ॐ नमस्त्रिजगन्नेतुर्, वीरस्याग्रिमसूनवे ।
समग्रलब्धिमाणिक्य-रोहणायेन्द्रभूतये ॥

२. पादाम्भोजं भगवतो गौतमस्य नमस्यताम् ।
वशीभवन्ति त्रैलोक्यसम्पदो विगतापदः ॥

३. तव सिद्धस्य बुद्धस्य पादाम्भोजरजः कणः ।
पिपर्ति कल्पशाखीव कामितानि तनूमताम् ॥

४. श्री गौतमाक्षीणमहानसस्य तव कीर्तनात् ।
सुवर्णपुष्पां पृथिवीमुच्चिनोति नरश्चिरम् ॥

५. अतिशेषेतरां धाम्ना, भगवन् ! भास्करीं श्रियम् ।
अतिसौम्यतया चान्द्रीमहो ते भीमकान्तता ॥

६. विजित्य संसारमायावीजं मोहमहीपतिम् ।
नरः स्यान्मुक्तिराजश्रीनायकस्त्वत्प्रसादतः ॥

७. द्वादशांगीविधौ वेधाः श्रीन्द्रादिसुरसेवितः ।
अगण्यपुण्यनैपुण्यं तेषां साक्षात् कृतोऽसि यैः ॥

८. नमः स्वाहापतिज्योतितिरस्कारितनुत्विषे ।
श्री गौतमगुरो ! तुभ्यं वागीशाय महात्मने ॥

९. इति श्री गौतम ! स्तोत्र – मंत्रं ते स्मरतोऽन्वहम् ।
श्री जिनप्रभसूरेस्त्वं, भव सर्वार्थ-सिद्धये ॥

(२८)

नमस्कार स्तवनम्

१. नम्रामरेश्वर-किरीट-निविष्टशोण–
रत्नप्रभा-पटलपाटलिताङ्घ्रिपीठाः ।
तीर्थेश्वराः शिवपुरी-पथसार्थवाहा,
निःशेषवस्तुपरमार्थविदो जयन्ति ॥

२. लोकाग्रभागभवना भवभीति-मुक्ता,
ज्ञानावलोकित-समस्त-पदार्थसार्थाः ।
स्वाभाविकस्थिरविशिष्टसुखैः समृद्धाः,
सिद्धा विलीनघनकर्ममला जयन्ति ॥

३. आचारपंचकसमाचरण-प्रवीणाः,
सर्वज्ञ-शासन-धुरैकधुरंधरा ये ।
ते सूरयो दमितदुर्दमवादिवृन्दा,
विश्वोपकार-करणप्रवणा जयन्ति ॥

४. सूत्रं यतीनति-पटु-स्फुट-युक्तियुक्त–
युक्तिप्रमाण-नयभंगगमैर्गभीरम् ।
ये पाठयन्ति वरसूरिपदस्य योग्यास्–
ते वाचकाश्चतुरचारु-गिरो जयन्ति ॥

५. सिद्धांगनासुखसमागम-बद्धवाञ्छाः,
संसार-सागर-समुत्तरणैक-चित्ताः ।
ज्ञानादिभूषण-विभूषित-देहभागा,
रागादिघातरतयो यतयो जयन्ति ॥

(२९)

श्री पद्मावती अष्टक स्तोत्र

[पूर्वाचार्य]

१. श्रीमद्-गीर्वाणचक्रस्फुट-मुकुटतटी-दिव्य-माणिक्यमाला ।
ज्योतिर्ज्वालाकरालस्फुरित-मुकुरिका-घृष्ट-पादारविन्दे ॥
व्याघ्रोरोल्का-सहस्र-ज्वलदनलशिखा, लोल-पाशांकुशाढ्ये !
ॐ क्रीं ह्रीं मंत्र रूपे ! क्षपित-कलिमले, रक्ष मां देवि ! पद्मे ॥

२. भित्त्वा पातालमूलं चलच्चलचलिते ! व्याल-लीला-कराले !
विद्युद्दण्ड-प्रचण्ड-प्रहरणसहिते, सद्भुजैस्तर्जयन्ती ॥
दैत्येन्द्रं क्रूरदंष्ट्रा-कटकटघटित-स्पष्ट-भीमाट्टहासे !
मायाजीमूतमाला-कुहरितगगने ! रक्ष मां देवि ! पद्मे ॥

३. कूजत्कोदण्ड-काण्डोड्डमर-विधुरित-क्रूर घोरोपसर्गं ।
दिव्यं वज्रातपत्रं प्रगुणमणिरणत्-किङ्किणी-क्वाण-रम्यम् ॥
भास्वद् वैडूर्य-दण्डं मदनविजयिनो, विभ्रतीपार्श्व-भर्तुः !
सा देवी पद्महस्ता विघटयतु महा-डामरं मामकीनम् ॥

४. भृङ्गी काली कराली परिजनसहिते ! चण्डि ! चामुण्डि ! नित्ये !
क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षणार्द्धक्षतरिपुनिवहे ! ह्लौं महामन्त्रवश्ये !
भ्रां भ्रीं भ्रूं भृङ्ग-सङ्ग भ्रकुटि-पुटतट-त्रासितोद्दामदैत्ये ॥
स्रां स्रीं स्रूं स्रौं प्रचण्डे ! स्तुतिशतमुखरे ! रक्षा मां देवि ! पद्मे !

५. चञ्चत् काञ्ची-कलापे ! स्तनतटविलुठत्-तारहारावलीके !
प्रोत्फुल्लत्पारिजातद्रुम-कुसुममहा-मञ्जरी-पूज्यपादे !
ह्लां ह्लीं क्लीं ब्लूं समेतैर्भुवनवशकरी क्षोभिणी द्राविणी त्वं !
आँ इं ओं पद्महस्ते कुरु कुरु घटने रक्ष मां देवि ! पद्मे !

६. लीला-व्यालोल-नीलोत्पलदलनयने ! प्रज्वलद्-वाडवाग्नि –
त्रुट्यज्ज्वालास्फुलिङ्गस्फुरदरुणकणो-दग्र-वज्राग्रहस्ते !
ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं हरन्ती हरहरहर हुं-कारभीमैकनादे !
पद्मे ! पद्मासनस्थे ! व्यपनय दुरितं देवि ! देवेन्द्रवन्द्ये !

७. कोपं वं झं सहंसः कुवलयकलितोद्-दामलीला-प्रबन्धे !
ह्रां ह्रीं ह्रूं पक्षवीजैः शशिकरधवले ! प्रक्षरत्-क्षीरगौरे ! !
व्याल-व्याबद्धकूटे ![1] प्रबलबलमहा-कालकूटं हरन्ती ।
हा हा हुंकारनादे ! कृतकरमुकुलं रक्ष मां देवि ! पद्मे ॥

८. प्रातर्बालार्क-रश्मिच्छुरितघनमहा-सान्द्रसिन्दूर-धूली !
सन्ध्यारागारुणाङ्गी : त्रिदशवर-वधू-वन्द्य-पादारविन्दे !
चञ्चच्चण्डासिधारा-प्रहतरिपुकुले ! कुण्डलोद्घृष्टगल्ले ।
श्रां श्रीं श्रूं श्रौं स्मरन्ती मदगजगमने ! रक्ष मां देवि ! पद्मे !

९. दिव्यं स्तोत्रं पवित्रं पटुतरपठतां-भक्ति-पूर्वं त्रिसन्ध्यम् ।
लक्ष्मी-सौभाग्य रूपं दलितकलिमलं मङ्गलं मङ्गलानाम् ॥
पूज्यं कल्याणमालां जनयति सततं पार्श्वनाथ-प्रसादात् ।
देवी-पद्मावती सा प्रहसितवदना या स्तुता दानवेन्द्रैः ॥

---

[1] 'व्याल-व्याबद्धजूटे !' – इति पाठान्तरम्

भवपाश-मोचक-स्तोत्र

(गर्जसिंह राठोड़)

१. तीर्थेश्वरस्य वीरस्य, कोटिसूर्यसमप्रभम् ।
स्वरूपं बिम्बितं मेऽस्तु, मुक्तिदं हृदि सर्वदा ॥

२. नाथस्त्वमसि मे वीर ! सर्वस्वश्च प्रियोऽसि मे ।
शरणं सर्वभावेन, त्वां प्रपन्नोस्मि पाहि माम् ॥

३. भवाटव्यामटंतं माम्, भयत्रस्तमितस्ततः ।
भवभूरिभराक्रान्तं, त्रायस्व करुणानिधे !

४. उन्मज्जन्तं निमज्जन्तं, भवाम्भोधौ पुनः पुनः ।
निरालम्बावलम्बेश ! पाहि माम् त्राहि पाहि माम् ॥

५. भेदय भवपाशानि, छेदयाशेषसंशयान् ।
यद्गत्वा न निवर्तन्ते, प्रभो ! तद्धाम देहि मे ॥

६. जन्म-मृत्यु-जराव्याधीन्, नाशयार्त्तस्य मूलतः ।
ध्रुवां, शुभां शिवां सिद्धिं, विभो देहि प्रसीद मे ॥

७. यावत् शुद्धश्च बुद्धश्च, निष्कलंको निरामयः ।
भवामि न विभो तावत्, भक्तिं मह्यं प्रदेहि ते ॥

८. तवैवास्तु सदा ध्यानं, हृदि मे निखिलेश्वर !
स्मृतिश्चाव्याहता मेऽस्तु, त्वदीयैव भवे भवे ॥

९. भवे भवे च मे लक्ष्यं, भवानेवास्तु सर्वशः ।
कार्यं ममास्तु प्रत्येकं, तव प्राप्त्यैरहर्निशम् ॥

१०. भवे भवे दिवारात्रं, निश्चलं सुसमाहितम् ।
संपृक्तं वै मनो मेऽस्तु, तीर्थेश ! त्वयि सर्वदा ॥

११. तादात्म्यं शाश्वतं मेऽस्तु, वीरेणाद्वैतरूपकम् ।
द्वैतभावं च वीरे मे, शीघ्रमेव विनश्यतु ॥

१२. सोऽहं सोऽहं ध्रुवं सोऽहं, सोऽहमस्मि न संशयः ।
दुःखमज्ञानजं सर्वं, चिदानन्दोऽहमन्यथा ॥


हिन्दी

(१)

धर्म मंगल

(दशवैकालिक सूत्र का प्रथम अध्ययन)

१. धम्मो मंगल महिमानिलो, धर्म-समो नहिं कोय।
धर्म-थकी नमे देवता, धर्मे शिव सुख होय ॥ध०॥

२. जीवदया नित पालिये, संजम सतरह प्रकार।
बारा-भेदे तप तपे, धर्मतणो यह सार ॥ध०॥

३. जिम तरुवरने फूलड़े, भमरो रस लेवा जाय।
तिम संतोपे आतमा, फूलने पीड़ा नहिं थाय ॥ध०॥

४. इण विध जावे गोचरी, वेहरे[1] सूझतो आहार।
ऊंच-नीच मध्यम कुले, धन-धन ते अणगार ॥ध०॥

५. मुनिवर मधुकर-सम कह्या, नहिं तृष्णा नहिं लोभ।
लाध्यो भाड़ो देवे देहने, अणलाध्यां संतोप ॥ध०॥

६. अध्ययन पहले द्रुमपुष्फिये, सखरा अर्थ-विचार।
पुण्यकलश-शिष्य जेतसी, धर्मे जय-जयकार ॥ध०॥

---

[1] वेहरे=बटोरे

(२)

१. अरिहन्त जय जय, सिद्ध प्रभु जय जय।
साधु जीवन जय जय, जिन धर्म जय जय॥

२. अरिहंत मंगल, सिद्ध प्रभु मंगल।
साधु जीवन मंगल जिन धर्म मंगल॥

३. अरिहन्त उत्तम, सिद्ध प्रभु उत्तम।
साधु जीवन उत्तम, जिन धर्म उत्तम॥

४. अरिहन्त शरणं, सिद्ध प्रभु शरणं।
साधु जीवन शरणं, जिन धर्म शरणं॥

५. ए चार शरण दुःखहरण जगत् में,
और न शरणा कोई होगा।
जो भव्य प्राणी करें आराधन,
उनका अजर अमर पद होगा॥

---

(३)

१. अरिहन्त प्रभु का शरणा लेकर, क्रोध भाव को दूर करें।
क्षमा भाव से शान्ति धर कर, मीठा ही व्यवहार करें॥

२. सिद्ध प्रभु का शरणा लेकर, मान बड़ाई दूर करें।
विनीत भाव से छोटे बनकर, लघुता का व्यवहार करें॥

३. आचार्य का शरणा लेकर, झूठ कपट का त्याग करें।
सीधा सादा रहना अच्छा, जीवन सारे सरल बनें॥

४. उपाध्याय का शरणा लेकर खोटी तृष्णा दूर करें।
मर्यादा से ज्यादा लक्ष्मी रख कर क्या कल्याण करें॥

५. मुनियों के चरणों में गिरकर अपना कुछ उद्धार करें।
मूल कषायों को क्षय करके वीतराग पद प्राप्त करें॥

---

(४)

आनंद मंगल करूं आरती संत चरण की सेवा।
शिव सुखकारण विघ्न निवारण पंच परमेष्टि देवा।।

१. पहली आरती अरिहन्त देवा कर्म खपे तत्खेवा।
चौसठ इन्द्र करे तुम सेवा, वाणी अमृत मेवा – आनंद०

२. बीजी आरती सिद्ध निरंजन भंजन भवभय केरा।
चिदानंद चिद्रूप अखंडित मिटे भवोभव फेरा।।आनंद०

३. त्रीजी आरती श्री आचारज छत्रीस गुण गंभीरा।
संघ शिरोमणि सोहे दिवमणि देहित बोध अनेरा।।आनंद०

४. चौथी आरती उपाध्यायजी, भणे भणावे एवा।
सूत्र अर्थ करे तत्खेवा सेवा करे तस देवा।।आनंद०

५. पंचमी आरती सर्व साधुजी भारंड पंखी जेवा।
महाव्रत पाले दूषण टाले अविचल शिव सुख लेवा।।आनंद०

६. भाव धरीने गावे आरती पंच परमेष्टि देवा।
विनय चंद मुनि गुण गावे लेवा शिव सुख मेवा।।आनंद०



(५)

ॐ जय अरिहन्ताणं, प्रभु जय अरिहन्ताणं।
भाव भक्ति से नित्य प्रति, प्रणमूं सिद्धाणं ।।ॐ जय।।

दर्शन ज्ञान अनन्ता, शक्ति के धारी ।।स्वामी।।
यथाख्यात समकित है, कर्मशत्रु-हारी ।।ॐ जय।।

हे सर्वज्ञ ! सर्व दर्शी ! बल, सुख अनन्त पाये ।।स्वामी।।
अगुरुलघु अमूरत अव्यय कहलाये ।।ॐ जय।।

णमो आयरियाणं, छत्तीस गुण पालक ।।स्वामी।।
जैन धर्म के नेता, संघ के संचालक ।।ॐ जय।।

णमो उवज्झायाणं, चरण करण ज्ञाता ।।स्वामी।।
अंग-उपांग पढ़ाते, ज्ञान दान दाता ।।ॐ जय।।

णमो लोए सव्व साहूणं, ममता मद हारी ।।स्वामी।।
सत्य अहिंसा अस्तेय, ब्रह्मचर्य धारी ।।ॐ जय।।

चौथमल कहे शुद्ध मन, जो नर ध्यान धरे ।।स्वामी।।
पावन पंच-परमेष्ठी, मंगलाचार करे ।।ॐ जय।।



(६)

जपो जपो नवकार, जासे होवे मंगलाचार ।
महामंत्र की महिमा है अपरम्पार ।। टेर ।।

१. नमो अरिहंत सिद्ध नमूं आयरिय,
नमो उवज्झाय सव्व साहू वन्दीय ।
चवदह पूरव का है सार,
भव्य जीवों का आधार – महामंत्र ।।

२. इसी नाम से तरी चन्दनबाला,
श्रीमती के सर्प हुआ पुष्पों की माला ।
सुनो सुनो नर नार,
हुवा जय जयकार – महामंत्र ।।

३. द्रौपदी सती का चीर वढ़ा है,
सीता के अग्नि का नीर बना है ।
सुभद्रा की सुनी पुकार,
खुल गये खट-खट चंपा द्वार – महामंत्र ।।

४. श्रीपाल मैना ने ध्यान लगाया,
कष्ट मिटे हुई कंचन काया ।
आई जीवन में बहार,
छाया हर्ष अपार – महामंत्र ।।

५. इसी मंत्र से कई रोते हंसे हैं,
बिगड़े बने कई उजड़े वसे हैं ।
जपो जपो बारम्बार,
केवल मुनि हो बेड़ा पार – महामंत्र ।।

(७)

१. जपो नवकार मंत्र ज्ञाता, स्वर्ग अपवर्ग सौख्य दाता।
भीत[1] रूज तन में नहीं आता, रिपू कोई कर न सके घाता।
क्रोड केवली गुण करे, तो पिण नावे पार।
महा प्रभाविक मंत्र परमेष्ठि, जपतां जय-जय-कार।
मिटावे जनम मरण खाता ।। ज० ।।

२. प्रथम अरिहंत देव नामें, दोष नहिं अष्टादश जामें।
अखिल गुण द्वादश ही पामें, गिरागुण पणतीसे (३५) तामें।
जघन्य दोय क्रोड केवली, उत्कृष्टा नव मान।
करम घातिया वेद खपावी, पाम्या केवल ज्ञान।
विड़ौजा (इन्द्र) चउसठ गुण गाता ।। ज० ।।

३. नमो पद दूजे श्री सिद्धा, ज्ञान दर्शन करि समृद्धा।
करम वसु[2] हणि वसु गुण लीधा, अंत भव अर्णव का कीधा।
द्रव्य प्राण नहीं एक भी, भाव प्राण हैं चार।
ज्योतिरूप निकलंक निरंजन, अविनासी अविकार।
ध्यान उर योगीन्दर ध्याता ।। ज० ।।

४. नमो पद आचारज तीजे, सम्पदा अष्ट देख रीझे।
छत्तीसे गुण गिरवा लीजे, ओपमा सुरतरु की दीजे।
हरि समान चउ संघ में, गीतारथ गुण-धाम।
पंडित योग अखण्डित पाले धरम जहाज निरयाम।
सुजस वर लोक मांहि ख्याता ।। ज० ।।

---

[1] भय, रोग [2] आठ

५. नमों पद चौथे उवझाया, विमल गुण पच्चीसे पाया।
भारती वक्त्रवास ठाया, मिथ्या दर्शन सल अगडाया।
भणे भणावे सूत्र सव, चरण करण को धार।
डिगता प्राणी धरमसूं स कोई, थिर कर राखण हार।
भविक ने वोध वीज दाता ॥ ज० ॥

६. नमो पद पंचम उपकारी, साधु गुण सप्त-विंसधारी।
अमल चित्त स्व-जंघाचारी, तपो घन घोर ब्रह्मचारी।
नमो ज्ञान दर्शन भणी, तप चारित्र उदार।
अष्ट सिद्धि नव निधि मंगल माला, पग पग मिले अपार।
विघन घन मेटणने वातार ॥ ज० ॥

७. भणे जो भव्य शुद्ध भावे, थोक मन वे छल सव धावे।
अचिंती कमला घर आवे, लावणी किसनलाल गावे।
सार चतुर्दश पूर्व को, परम मंत्र नवकार।
सव मंगल में धुर एह मंगल, सकल पाप क्षयकार।
सिमरतां वरते सुख साता ॥ जपो० ॥

(८)

१. नवकार की महिमा क्या कहिये, इस जैसा प्यारा कोई नहीं।
विना इस के वंधु! भवजल से, वस तारनहारा कोई नहीं ॥
२. नौ लाख वार जो ध्याता है, नहीं नर्क गति में जाता है।
जीवन नैया जो पार करे, वो और सहारा कोई नहीं ॥
३. स्वार्थ की है सारी दुनिया, हम ने सारा जग छान लिया।
इक महा मंत्र नवकार विना, दुखहर्ता जग का कोई नहीं ॥
४. नवकार सदा सुखकारी है, गुण इकसो आठ का धारी है।
इस मन में 'चन्दन' अति रोशन, रविचन्द्र सितारा कोई नहीं ॥

(६)

नवकार मंत्र है महामंत्र इस मंत्र की महिमा भारी है।
आगम में कही गुरुवर से सुनी, अनुभव में जिसे उतारी है ।।टेर।

१. 'अरिहंताणं' पद पहिला है, अरि आरति दूर भगाता है।
'सिद्धाणं' सुमिरण करने से, मन वांछित सिद्धि पाता है ।।
'आयरियाणं' तो अष्ट सिद्धि, नव निधि के भंडारी है।
—नवकार मंत्र है०

२. 'उवज्झायाणं' अज्ञान तिमिर हर, ज्ञान प्रकाश फैलाता है।
'सव्वसाहूणं' सब सुखसाता, तन मन को स्वच्छ बनाता है ।।
पद पाँचों के सुमिरण करने से, मिट जाती सकल बिमारी है।
—नवकार मंत्र है०

३. श्री पाल सुदर्शन मयणरया, जिसने भी जपा आनन्द पाया।
जीवन के सूने पतझड़ में, फिर फूल खिले सौरभ छाया ।।
मन नन्दन वन में रमण करे, ये ऐसा मंगलकारी है।
—नवकार मंत्र है०

४. नित नई बधाई सुने कान, लक्ष्मी वरमाला पहनाती है।
अशोक मुनि जय विजय मिले, शांति प्रसन्नता बढ़ जाती है ।।
सन्मान मिले सत्कार मिले, भव जल से नैया तारी है।
—नवकार मंत्र है०

(१०)

परमेष्ठि नवकार भविक जन ! नित जपिये ।।टेर।।

१. अरिहन्त प्रभु केवलज्ञानी,
अनुपम मोक्ष सुखों के दानी।
चोंतीस अतिशय पेंतीस वाणी,
करुणा के भंडार – भविक०

२. दूजे सिद्ध प्रभु को ध्याओ,
सच्चिदानन्द सदा सुख पावो।
अपने में ही लक्ष्य बनाओ,
टले कर्म परिवार – भविक०

३. तीजे आचार्य के गुण गावो,
ज्ञान दर्शन चारित्र पावो।
जो आज्ञा निज शीश चढ़ाओ,
शासन के शृंगार – भविक०

४. उपाध्याय श्री ज्ञान के दाता,
प्रवचन सार शास्त्र के ज्ञाता।
हृदय में प्रकाश वढ़ाता,
ज्ञान नैत्र दातार – भविक०

५. पंचम पद सेवो सुखकारी,
मुनिवर पंच महाव्रत धारी।
दें उपदेश सदा सुख कारी,
सम दम खम चित धार – भविक०

६. सेठ सुदर्शन मन्त्र प्रभावे,
सूली का सिंहासन थावे।
भूपति चरणन में सिर नावे,
सब बोले जय जय कार – भविक०

७. अग्नि कुण्ड जब सम्मुख आया,
जगदम्बा सीता ने ध्याया।
सुर ने अग्नि नीर बनाया,
मिटे दुःख अपार – भविक०

८. शत्रु जन मित्र बन जावे,
विषम स्थान सम मारग पावे।
आपत्ति सब दूर नसावे,
मन्त्र श्री नवकार – भविक०

९. कालकूट अमृत सम प्रगमें,
ऋद्धि सिद्धि सुख पावे जगमें।
शक्र कुबेर पड़े आ पग में,
मूल मन्त्र आधार – भविक०



(११)

१. प्रणमुं सरसती, होय वर सती, चित हुलसे अति, गुण थुणवा ।
शुद्ध भावे ध्यावे, सो सुख पावे, एकचित्त चावे, यश सुणवा ।।

२. जय-जय परमेष्ठी, जग में श्रेष्ठी, दे पद ज्येष्ठी जग-धारं ।
त्रिलोकमँभारं, नाम उदारं, जग-सुखकारं, नवकारं ।।

३. वारे गुणवंता, श्री अरिहन्ता, लोक-महंता, गुणगहरा ।
घनघाती कर्मं, मिथ्या भर्मं, त्याग अधर्मं विष लहरा ।।

४. शुक्ल मन ध्याया, केवल पाया, इन्दर आया, तिण वारं ।
त्रिलोकमँभारं, नाम उदारं, जग-सुखकारं, नवकारं ।।

५. वर परिषद् वारे, हर्ष अपारे, सुणि अवधारे, जिनवाणी ।
अमृत सम प्यारी, जग हितकारी, सुन नर नारी पहिचाणी ।।

६. कई संजम धारे, कई व्रत धारे, कर्मं विदारे, शिव तारं ।
त्रिलोकमँभारं, नाम उदारं, जग-सुखकारं नवकारं ।।

७. दूजे पद ध्यावो, सिद्ध गुण गावो, फिर नहीं आवो, जिहां जाई ।
जे अलख निरंजन, भविमन रंजन, कर्म के भंजन, शिव साँई ।।

८. पुद्गलना फंदा, दूर निकंदा, परमानंदा, अविकारं ।
त्रिलोकमँभारं, नाम उदारं, जग-सुखकारं, नवकारं ।।

९. अष्ट गुणों को धारे, जगत निहारे, काल न मारे, उण ताँई ।
जहाँ सुक्ख अनन्ता, केवलवंता, गुण उच्चरंता, छै नाँई ।।

१०. निज वास बताई, दो मुझ ताँई, तुमसा नहीं, दातारं ।
त्रिलोकमँझारं, नाम उदारं, जग-सुखकारं नवकारं ॥

११. गणिवर पद तीजे, नित्य नमीजे, सेवा कीजे, हर्ष धरी ।
पंच महाव्रत पालें, दूषण टालें, गज जिम चालें, शूर हरी ॥

१२. पाँचूं वश करते, पांच उच्चरते, पाँचों ही हरते, दुखकारं ।
त्रिलोकमँझारं, नाम उदारं, जग-सुखकारं नवकारं ॥

१३. शीतल जिम चंदा, अचल गिरिन्दा, गणपति इन्दा, शिरदारं ।
सागर जिम गहरा, ज्ञान सुलहरा, मिथ्यात्व अँधेरा, परिहारं ॥

१४. संपद वसु पावें, न्याय वढ़ावें, पालें पलावें, आचारं ।
त्रिलोकमँझारं, नाम उदारं, जग-सुखकारं नवकारं ॥

१५. गुरु-सेवा साधी, विनय अराधी, चित्त समाधी, ज्ञान भणे ।
बारे अंग वाणी, पेटी समाणी, पूरण नाणी, संशय हणे ॥

१६. निरवद सच भाखे, शास्तर साखे, गुण अभिलाखे, निज सारं ।
त्रिलोकमँझारं नाम उदारं, जग-सुखकारं नवकारं ॥

१७. उवझाया स्वामी, अन्तर्यामी, शिव-गति-गामी, हितकारी ।
शीखण ने आवे, जोग सिखावे, न्याय वतावे, उपकारी ॥

१८. दुर्गति मां पड़तो, कादव गड़तो, चित्त कर चढ़तो, तिणवारं ।
त्रिलोकमँझारं, नाम उदारं जग-सुखकारं, नवकारं ॥

१९. कंचुक अहि त्यागे, दूरे भागे, तिम वैरागे, पाप हरे ।
झूठा परछन्दा, मोहिनी-फन्दा, प्रभु का वन्दा, जोग धरे ॥

२०. सब माल खजाना, त्यागन कीना, महाव्रत लीना, अणगारं ।
त्रिलोकमँझारं, नाम उदारं, जग-सुखकारं, नवकारं ॥

२१. करे शुद्ध करणी, भवजल तरणी, आपद हरणी, दृष्टि रखें ।
बोले सत वाणी, गुप्ति ठाणी, जग का प्राणी, सम लखें ॥

२२. शिव-मारग ध्यावे, पाप हटावे, धर्म बढ़ावे, सत्य सारं ।
त्रिलोकमँझारं, नाम उदारं, जग-सुखकारं नवकारं ॥

२३. जे प्रणमें भावे, विघ्न हटावे, अरि हरि जावे, दूर सही ।
ते ताव तेजरा, दुक्ख बिमारी, सोग-सवारी, आत नहीं ॥

२४. ग्रह-पीड़ा भागे, दृष्टि न लागे, शत्रु न जागे, लीगारं ।
त्रिलोकमँझारं, नाम उदारं, जग-सुखकारं, नवकारं ॥

२५. यह मन्तर नीको, तारक जी को, तिहुँ जग-टीको, सुखदाता ।
यह मन्त्र करारी, महिमा भारी, लहे नर नारी, सुख साता ॥

२६. सरजीवन बेली, दे धन ठेली, भव-भव केली, यह सारं ।
त्रिलोकमँझारं, नाम उदारं, जग-सुखकारं, नवकारं ॥

२७. पद्मासनवाली रंग निहाली, आरत टाली, ध्यान धरे ।
त्रिलोक पयंपे, भावसुं जंपे, ऋद्धि सिद्धि संपे, तेह घरे ॥

२८. यह छन्द त्रिभंगी, गावे उमंगी, भव-भव संगी, जयकारं ।
त्रिलोकमँझारं, नाम उदारं, जग-सुखकारं, नवकारं ॥

(१२)

मनाऊँ मैं तो श्री अरिहन्त महन्त ॥टेर॥

१. तरु अशोक जाको अवलोकत, शोक समूह नशन्त ।
सुरकृत वाण वरण के नभसे, अचित सुमन वरसन्त ॥

२. अर्धमागधी वाणी जांकी, योजन इक परयन्त ।
सुनत अमर नर पशु हिलमिल के, समझ सुबोध लहन्त ॥

३. मुनि मन सम सित भमर अमरगण, प्रमुदित व्है ढ़ारन्त ।
स्फटिक रत्न के सिंहासन पर, त्रिजगतपति राजन्त ॥

४. प्रभा-वलय तम-प्रलय करन हित, दिनकर सम दमकन्त ।
पृष्ठ भाग रहि प्रभुजी कैसो, प्रवल प्रकाश करन्त ॥

५. जो सुमिरे सुख सम्पति पावे, नर सुर पद प्रणमन्त ।
अष्ट सिद्धि नव निधि झट प्रकटै, तेरो जो जाप जपन्त ॥

६. माधव मुनि कर जोड़ वीनवे, विनय सुनो भगवन्त ।
ऋद्धि वृद्धि बुद्धि-वैभव दो, अरु सुख सादि अनन्त ॥



(१३)

१. सुख कारण, भवियण, सुमरो नित नवकार।
जिन शासन आगम, चौदह पूर्व नो सार॥
इण मंत्रनी महिमा, कहेतां न लहिये पार।
सुर तरु-जिम चिंतित, वांछित फल दातार॥

२. सुर दानव मानव, सेवा करें कर जोड़।
भू मंडल विचरें, तारें भवियण कोड़॥
सुर छन्दे विलसें, अतिशय जास अनन्त।
पद पहिले नमिये, अरिगंजन अरिहन्त॥

३. जे पनरे भेदे, सिद्ध थया भगवन्त।
पंचम गति पहुंचे, अष्ट कर्म करि अन्त॥
कल अकल स्वरूपी, पंचानन्तक देह।
जिनवर-पद प्रणमूं, बीजे पद वलि एह॥

४. गच्छ-भार-धुरंधर, सुन्दर शशिहर शोभ।
कर सारण वारण, गुण छत्रीसे थोभ॥
श्रुतजाण शिरोमणि, सागर जिम गंभीर।
तीजे पद नमिये, आचारज गुणधीर॥

५. श्रुतधर गुण-आगर, सूत्र भणावें सार।
तप विधि संयोगे, भाखें अर्थ विचार॥
मुनिवर गुण-युक्ता, कहिये ते उवज्झाय।
पद चौथे नमिये, अह-निश तेहना पाय॥

६. पंचाश्रव टालें, पालें पंचाचार।
तपसी गुणधारी, वारें विषय-विकार॥
त्रस थावर-पीहर, लोक मांहि जे साध।
त्रिविधे ते प्रणमूं, परमारथ जिण लाध॥

७. अरि करि हरि सायण, डायण भूत बेताल।
सब पाप पणासे, वरते मंगल-माल॥
इण सुमर्यां संकट, दूर टले तत्काल।
इम जंपै जिनप्रभ, सूरी शिष्य रसाल॥

(१४)

१. सुमरो मंत्र भलो नवकार, ये छे चौदह पूर्व नो सार।
एहनी महिमा नो नहिं पार, एहनो अर्थ अनंत अपार॥

२. सुख मां सुमरो, दुखः मां सुमरो, सुमरो दिन ने रात।
जीवंता सुमरो, मरतां सुमरो, सुमरो सौ संगात॥

३. योगी सुमरे भोगी सुमरे, सुमरे राजा रंक।
देवा सुमरे दानव सुमरे, सुमरे सौ निशंक॥

४. अड़सठ अक्षर एहना जाणो अड़सठ तीरथ सार।
आठ संपदा दायी परमाणो, अष्ट सिद्धि दातार॥

५. नव पद एहना नव निधि आपे, भवो भवना दुखकापे।
'चन्द' वचन थी हृदये व्यापे, परमातम पद आपे॥

(१५)

अजर अमर अखिलेश निरंजन जयति सिद्ध भगवान् ।।टे

१. अगम अगोचर तूं अविनाशी, निराकार निर्भय सुख राशी।
निर्विकल्प निर्लेप निरामय, निष्कलंक निष्काम -ज०

२. कर्म न काया मोह न माया, भूख न तिरखा रंक न राया।
एक स्वरूप अरूप अगुरु लघु, निर्मल ज्योति महान् -ज०

३. हे अनन्त! हे अन्तरयामी! अष्ट गुणों के धारक स्वामी!
तुम बिन दूजा देव न पाया, त्रिभुवन से उपराम -ज०

४. गुरु निर्ग्रन्थों ने समझाया, सच्चा प्रभु का रूप बताया।
अब मैं तुम में ही मिल जाऊं, ऐसा दो वरदान -ज०

५. सूर्य चन्द्र है शरण तुम्हारी, प्रभु मेरी करना रखवारी।
तुझ में मुझ में भेद न पाऊं, ऐसा हो संधान -ज०
—जय जय जय भगवान्!

(१६)

१. अविनाशी अविकार, परम रसधाम हे!
समाधान सर्वज्ञ, सहज अभिराम हे!

२. शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध, अनादि अनंत हे!
जगत शिरोमणि सिद्ध, सदा जयवंत हे!

(१७)

१. तुम तरण-तारण दुःख निवारण, भविक जीव आराधनम् ।
श्री नाभिनन्दन जगत-वन्दन, नमो सिद्ध निरंजनम् ।।

२. जगत-भूषण विगत दूषण, प्रणव प्राण निरूपकम् ।
ध्यान-रूपं अनूप उपमं, नमो सिद्ध निरंजनम् ।।

३. गगन-मंडल मुक्ति-पदवी, सर्व-ऊर्ध्व-निवासनम् ।
ज्ञान-ज्योति अनन्त राजे, नमो सिद्ध निरंजनम् ।।

४. अज्ञाननिद्रा विगत-वेदन, दलित मोह निरायुषम् ।
नाम-गोत्र-निरंतरायं, नमो सिद्ध निरंजनम् ।।

५. विकट क्रोधा मान योधा, माया लोभ विसर्जनम् ।
रागद्वेष-विमर्द अंकुर, नमो सिद्ध निरंजनम् ।।

६. विमल केवलज्ञान-लोचन, ध्यान-शुक्ल-समीरितम् ।
योगिनां अतिगम्य रूपं, नमो सिद्ध निरंजनम् ।।

७. योग ने समोसरण मुद्रा, परिपल्यंक-आसनम् ।
सर्वं दीसे तेज-रूपं, नमो सिद्ध निरंजनम् ।।

८. जगत जिनके दास दासी, तास आस निरासनम् ।
चन्द्र पै परमानन्द-रूपं, नमो सिद्ध निरंजनम् ।।

९. स्व-समय समकित दृष्टि जिनकी, सोय योगी अयोगिकम् ।
देखतामां लीन होवे, नमो सिद्ध निरंजनम् ।।

१०. चन्द्र सूर्य दीप मणि की, ज्योति येन उल्लंघितम् ।
ते ज्योति थी परम ज्योति, नमो सिद्ध निरंजनम् ॥
११. तीर्थसिद्धा अतीर्थ सिद्धा, भेद पंचदशाधिकम् ।
सर्व-कर्म-विमुक्त चेतन, नमो सिद्ध निरंजनम् ॥
१२. एक मांहीं अनेक राजे, अनेक माँहीं एककम् ।
एक अनेक की नाहिं संख्या, नमो सिद्ध निरंजनम् ॥
१३. अजर अमर अलख अनंत, निराकार निरंजनम् ।
परब्रह्म ज्ञान अनंत दर्शन, नमो सिद्ध निरंजनम् ॥
१४. अतुल सुख की लहर में, प्रभु लीन रहे निरंतरम् ।
धर्मध्यान थी सिद्ध दर्शन, नमो सिद्ध निरंजनम् ॥
१५. ध्यान धूपं मनः पुष्पं, पंचेन्द्रिय-हुताशनम् ।
क्षमा जाप संतोप पूजा, पूजो देव निरंजनम् ॥
१६. तुम मुक्ति-दाता कर्म-घाता, दीन जानि दया करो ।
सिद्धार्थ-नन्दन जगत-वन्दन, महावीर जिनेश्वरम् ॥

(१८)

सेवो सिद्ध सदा जयकार, जांसे होवे मंगलाचार – टेर

१. अज, अविनाशी, अगम, अगोचर, अमल, अचल, अविकार।
अन्तर्यामी त्रिभुवन स्वामी, अमित शक्ति भंडार – सेवो०

२. कर पणट्ठ कम्मट्ठ अट्ठ–गुण, युक्त मुक्त–संसार।
पायो पद परमिट्ठ तास पद, वन्दों वारंवार – सेवो०

३. सिद्ध प्रभु को सुमिरण जग में, सकल सिद्धि दातार।
मनवाञ्छित पूरण सुरतरु सम, चिन्ता चूरण हार – सेवो०

४. जपे जाप योगीश रात दिन, ध्यावे हृदय मंझार।
तीर्थंकर भी प्रणमें उनको, जब होवें अणगार – सेवो०

५. सूर्योदय के समय भक्तियुत, स्थिर चित दृढ़ता धार।
जपे 'सिद्ध' यह जाप तास घर, होवे ऋद्धि अपार – सेवो०

६. सिद्ध स्तुति यह पढ़े भाव से, प्रतिदिन जो नर नार।
सो दिव-शिव-सुख पावे निश्चय, बना रहे सरदार – सेवो०

७. 'माधव' मुनि कहे सकल संघ में बढ़े हमेशा प्यार।
विद्या विनय विवेक समन्वित, पावे प्रचुर प्रचार – सेवो०



(१६)

१. प्रात उठी ने सुमरिये हो,
भविजन ! मंगलिक शरणा चार ।
आपदा मिटे संपदा हुवे हो,
भविजन ! दौलतनां दातार ॥
हिरदै राखिए हो,
भविजन ! मंगलिक शरणा चार ॥ टेर ॥

२. अरिहंत सिद्ध साधू तणां हो,
भविजन ! केवलिभाषित धर्म ।
ये शरणा नित ध्यावतां हो,
भविजन ! टूटें आठों कर्म ॥

३. वाटे घाटे चालतां हो,
भविजन ! रात दिवस मंझार ।
ग्राम नगर पुर विचरतां हो,
भविजन ! कष्ट निवारण हार ॥

४. ये चारों सुखकारिया हो,
भविजन ! ये चारों जग सार ।
ये चारों उत्तम कह्या हो,
भविजन ! ये चारों हितकार ॥

५. डायण सायण भूतड़ा हो,
भविजन ! सिंह बाघ ने सूर ।
वैरी दुश्मन चोरटा हो,
भविजन ! रहें ते सगला दूर ॥

६. राखो शरणारी आसथा हो,
भविजन ! नेड़ो नहिं आवे रोग ।
आनन्द वरते इण नामथी हो,
भविजन ! व्हाला तणों संयोग ॥

७. सुख साता वरते घणी हो,
भविजन ! जो ध्यावे नर नार ।
परभव जातां जीव ने हो,
भविजन ! एह तणो आधार ॥

८. मनचिन्तित मनोरथ फले हो,
भविजन ! बरते कोड़ कल्याण ।
शुद्ध मने नित ध्यावतां हो,
भविजन ! निश्चय कर निरवाण ॥

९. इण सरिखो शरणो नहीं हो,
भविजन ! इण सरिखो नहिं नाम ।
इण सरिखो मित्र नहीं हो,
भविजन ! गाँव नगर पुर ठाम ॥

१०. दान शील तप भावना हो,
भविजन ! ए जग में तत्व सार ।
करो अराधो भाव से हो,
भविजन ! पामो मोक्ष द्वार ॥

११. जोड़ कीधी छै जुगति से हो,
भविजन! 'पाली' शेखे काल ।
'ऋषि चौथमल' इम भणे हो,
भविजन ! सुणजो वाल गोपाल ॥

(२०)

प्रातः उठ चौवीस जिनन्द को, सुमिरण कीजे भाव धरी ।।टेर।।

१. रिषभ अजित संभव अभिनंदन, सुमति कुमति सब दूर हरी ।।
पद्म सुपास चंदा प्रभु ध्यावो, पुष्पदंत हण्या कर्म अरी ।।

२. शीतल जिन श्रेयांस वासुपूज्य, विमल विमल बुध देत खरी ।
अनन्त धर्म श्री शांति जिनेश्वर, हरियो रोग असाध्य मरी ।।

३. कुंथु अरह मल्लि मुनिसुव्रत, नमी नेमि शिव-रमणी वरी ।
पार्श्वनाथ वर्द्धमान जिनेश्वर, केवल लह्यो भव ओघ हरी ।।

४. तुम सम नहिं कोई तारक दूजो, इण निश्चय मन मांही धरी ।
तिलोकरिख कहे जिम-तिम करिने, मुक्ति-श्री द्यो मेहर करी ।।

(२१)

श्री पैंसठिया यन्त्र का छन्द

(चतुर्विंशति जिन स्तवन)

श्री नेमीश्वर संभव स्वाम,
सुविधि धर्म शांति अभिराम ।
अनन्त सुव्रत नमिनाथ सुजाण,
श्री जिनवर मुझ करो कल्याण ।।१।।

अजितनाथ चन्दा प्रभु धीर,
आदीश्वर सुपार्श्व गंभीर ।
विमलनाथ विमल जग जाण,
श्री जिनवर मुझ करो कल्याण ।।२।।

मल्लिनाथ जिन मंगल-रूप,
धनुष पचीस सुन्दर शुभरूप ।
श्री अरनाथ नमूं वर्धमान,
श्री जिनवर मुझ करो कल्याण ।।३।।

सुमति पद्म प्रभु अवतंस,
वासुपूज्य शीतल श्रेयंस।
कुंथु पार्श्व अभिनन्दन भाण,
श्री जिनवर मुझ करो कल्याण ॥४॥

इणपरे जिनवर संभारिए,
दुख दारिद्र विघ्न निवारिए।
पच्चीसे पैंसठ परमाण,
श्री जिनवर मुझ करो कल्याण ॥५॥

इण भणतां दुख नावे कदा,
जो निज पासे राखो सदा।
धरिये पंचतणूं मन ध्यान,
श्री जिनवर मुझ करो कल्याण ॥६॥

श्री जिनवर नामें वांछित मिले,
मन-वांछित सहु आशा फले।
धर्म सिंह मुनि नाम निधान,
श्री जिनवर मुझ करो कल्याण ॥७॥

२२	३	९	१५	१६
१४	२०	२१	२	८
१	७	१३	१९	२५
१८	२४	५	६	१२
१०	११	१७	२३	४

(२२)

श्रीजिन मुझ ने पार उतारो।
प्रभु मैं चाकर चरणां रो – श्रीजिन०

१. ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन, निरंजन निराकारो।
सुमति पद्म सुपारस चंदा प्रभु, मेट्या है विषय विकारो – श्रीजिन०

२. सुविधि शीतल श्रेयांस वासुपूज्य, मुक्ति तणा दातारो।
विमल अनंत धर्म शांति जिनेश्वर, साताकारी संसारो – श्रीजिन०

३. कुंथु अरह मल्लि मुनिसुव्रतजी, निवर्त्या संसारो।
नमिनाथ नेम पारस महावीरजी, शासन रा सिरदारो – श्रीजिन०

४. ग्यारह गणधर वीस विहरमान, सर्व साधु अणगारो।
अनंत चौवीसी ने नित नित वंदूं, कर दिया खेवापारो – श्रीजिन०

५. अधम उधारण विरुद सुणि प्रभु, शरणो लियो चरणा रो।
अधम उधारण परम पदारथ, अजर अमर अविकारो – श्रीजिन०

६. राग द्वेष कर्म बीज महाबलियो, बालि कीनो सर्व चारो।
केवलज्ञान ने केवल दर्शन, निज गुण लीना धारो – श्रीजिन०

७. दान शील तप भावना भावो, दया धर्म तत्व सारो।
ऋषि लालचन्द इण पर विनवे प्रभु मारो करो निस्तारो – श्री०



(२३)

जगत में नवपद जयकारी, सेवतां रोग टरे भारी ।।टेर।।

१. प्रथम पद तीर्थंपति राजे, दोष अष्टादश को त्याजे ।
आठ प्रतिहारज नित छाजे, जगत प्रभु गुण वारे साजे ।।
अष्ठ कर्मदल जीत के, सकल सिद्ध ते थाय ।
सिद्ध अनन्त भजो वीजे पद, एक समय शिव जाय ।।
प्रकट भयो निज स्वरूप भारी – जगत०

२. सूरि पद में गौतम, केसी, ओपमा चन्द्र सूरज जैसी ।
उधार्यो राजा परदेशी, एक भव माँहे शिव लेसी ।।
चौथे पद पाठक नमूं, श्रुतधारी उवज्झाय ।
सर्व साहू पंचम पदे, धन धन्नो मुनिराय ।।
वखाण्यो वीर जिनन्द भारी – जगत०

३. द्रव्यषट् की श्रद्धा आवे और सम सम्वेगादिक पावे ।
विना शुद्ध ज्ञान नहीं किरिया, जैन दर्शन से सव तिरिया ।।
ज्ञान पदारथ सातमें, पद में आतम राम ।
रमता रम्य अध्यात्म में, निज पद साधे काम ।।
देखता वस्तु जगत सारी – जगत०

४. जोग की महिमा वहु जाणी, चक्रधर छोड़ी सव राणी ।
सती दश धरम करी सोहे, मुनि श्रावक सव मन मोहे ।।
कर्म निकाचित कापवा, तप कुठारकर ध्याय ।
क्षमा सहित नवमां पद धारे, कर्म मूल कट जाय ।।
भजो तुम नवपद सुख कारी – जगत०

५. श्री सिद्ध चक्र भजो भाई, आचाम्ल तप विधि से पाई ।
पाप तिहूँ जोगे परिहरजो, भाव श्रीपाल तणो करजो ।।
संवत उगणीस सतरा समे, जैपुर श्रीजिन पास ।
चैत्र धवल पूनम दिने, सफल फली मुझ आस ।।
बाल कहे नवपद छवि प्यारी – जगत०

(२४)

१. देखो रे आदेश्वर बाबा, कैसा ध्यान लगाया है ।।टेर।।
नाभिराय के पुत्र कहीजे, माँ मरुदेवी जाया है – देखो०

२. कर ऊपर कर अधिक विराजे, आसन अचल जमाया है ।
केवल ज्ञान उपाय जिनेश्वर, शिव-रमणी को ध्याया है – देखो०

३. सुर नर जिनकी भक्ति करत हैं, जिनवर सूं लिव लाया है ।
सेवा कियां मिले सुख संपत, सब जीवन सुख पाया है – देखो०

४. देवी देव मिले बहुतेरे, भवि-जन मंगल गाया है ।
तीन लोक में महिमा प्रभु की, 'चंद्रकुशल' गुण गाया है – देखो०

५. देखो रे आदेश्वर बाबा, कैसा ध्यान लगाया है ।
कैसा ध्यान लगाया रे बाबा, कैसा मन समझाया है – देखो०

(२५)

वोल वोल आदेश्वर व्हाला।
कांई थारी मरजी रे, मांसूं मूंडे वोल ॥टेर॥

१. मां मरुदेवी वाट जोवती, इतरे वधाई आई रे।
आज ऋषभजी उतर्या वाग में, सुन हरसाई रे – मांसूं०

२. न्हाय धोयने गज असवारी, करी मरुदेवी माता रे।
जाय वाग में नन्दन निरख्यो, पाई साता रे – मांसूं०

३. राज छोड़ने निकल्या ऋषभजी, आ लीला अद्भूती रे।
चमर छत्र ने अरु सिंहासन, मोहनी मूरती रे – मांसूं०

४. दिन भर वैठी वाट जोवती, कद मारो ऋषभो आवे रे।
कहती भरत ने आदिनाथ की, खवरां लादे रे – मांसूं०

५. किस्या देश में गयो वालेश्वर, तुझ विन वनिता सूनी रे।
वात कहो दिल खोल लालजी, क्यूं वरणगा थे मूनी रे – मांसूं०

६. रिया मजा में है सुखसाता, खूव किया दिल चाया रे।
अव तो वोल आदेश्वर म्हांसूं, कलपे काया रे – मांसूं०

७. खैर हुई सो हो गई वाला, वात भली नहीं कीनी रे।
गया पछै कागद नहीं दीनूं, म्हारी खवर न लीनी रे – मांसूं०

८. ओलम्वा मैं देऊं कठा तक, पाछो क्यों नहीं वोले रे।
दुख जननी का देख आदेश्वर, हिवड़ो डोले रे – मांसूं०

९. अनित्य भावना भाई माता, निज आतम ने तारी रे ।
केवल पाम्यां मोक्ष सिधाया, ज्यांने वन्दना मारी रे – मांसूं०

१०. मुकती रा दरवाजा खोल्या, मोरां देवी माता रे ।
काल असंख्या रह्या उघाड़ा, जम्बू जड़ गया ताला रे – मांसूं०

११. साल बहत्तर तीरथ ओसियां, घेवर प्रभु गुण गाया रे ।
सुरत मोहनी प्रथम जिनन्द की, प्रणमूं पाया रे – मांसूं०

(२६)

तूं ही तूं ही प्रभु मेरा मन मांही वसियो ।
मन मांही वसियो, दिल मांही वसियो ।।टेर।।

१. ऊठत वैठत सोवत जागत,
नाम तिहारो उर विच वसियो – तूं ही०

२. तुम सम दूजो देव न दीसे,
केवल ज्ञान कला गुण रसियो – तूं ही०

३. ध्यान दिलूं दी भक्ति भाव सूं,
तुम पद सेवत पातक नसियो – तूं ही०

४. पदम कमल सम गुण मकरंद रस,
मेरो मन मधु पीवण तसियो – तूं ही०

५. सुविधि नाथ जिन सुध वुध वगसो,
"सुजान" तुम गुण प्रेम हुलसियो – तूं ही०



(२७)

नेमजी की जान वणी भारी, देखण को आये नर नारी ।।टेर।।

१. हींसता घोड़ा रथ हाथी, मनुष्य की गिणती नहीं आती ।
ऊंट पे ध्वजा जो फर्राती, धमक से धरती थर्राती ।।
समुद्र विजयजी का लाडला, नेम कुंवरजी नाम ।
राजुल दे को आये परणवा, उग्रसेन घर धाम ।।
प्रसन्न भई नगरी सब सारी – नेमजी०

२. कसुंवल वागा अति भारी, कानन कुंडल की छवि न्यारी ।
किलंगी तुर्रा सुखकारी, माल मोतियन की गल डारी ।।
काने कुंडल झिगमिगे, शीष मुकुट सुखकार ।
कोटि भानु की बनी ओपमा, शोभा अधिक अपार ।।
बाज रया बाजा टक सारी – नेमजी०

३. छूट रही हुक्का सरणाई, ब्याह में आये बड़े भाई ।
झरोखे राजुल दे आई, जान को देखत सुख पाई ।।
उग्रसेनजी देख के, मन में कियो विचार ।
बहुत जीव को करी एकठा, बाड़ो भर्यो तिवार ।।
करी जब भोजन की त्यारी – नेमजी०

४. नेमजी तोरण पर आये, पशु सब मिलकर कुर्राये ।
नेमजी वचन यूं उच्चारे , पशु ये काहे को लाये ।।
इणको भोजन होवसी, जान वास्ते त्यार ।
एह वचन सुण नेमजी, थरथर कंपी काय ।।
भाव से चढ़ गये गिरनारी – नेमजी०

५. पीछे से राजुलदे आई, हाथ जब पकड़्यो छिन मांई।
कहां तूं जावे मोरी जाई, और वर हेरुं सुखदाई।।
मेरे तो वर एक ही, हो गये नेम कुमार।
और भुवन में वर नहीं चाहे, करो क्रोड़ उपचार।।
झूरती छोड़ी मां प्यारी – नेमजी०

६. सहेल्यां सब ही समझावे, दाय नहीं राजुल के आवे।
जगत सब झूठो दर्शावे, मेरे मन नेमकुंवर भावे।।
तोड़्या कांकण डोरड़ा, तोड़्यो नवसर हार।
काजल टीकी पान सुपारी, त्याग्यो सब सिणगार।।
करी अब संयम की त्यारी – नेमजी०

७. तज्या सब सोले सिणगारा, आभूषण रत्न जड़ित सारा।
लगे मोय सब ही सुख खारा, छोड़ कर चाली परिवारा।।
मात पिता परिवार को, तजतां न लागी वार।
रहनेमी समझाय के, जाय चढी गिरनार।।
दीक्षा फिर राजुल ने धारी – नेमजी०

८. दया दिल पशुअन की आई, त्याग जब कीनो छिन मांही।
नेमजिन गिरनारे जाई, पशु के बंधन छुड़वाई।।
नेम राजुल गिरनार पे, कीनो अविचल ध्यान।
"नवलमल" यह करी लावणी, ऊपजो केवल ज्ञान।।
जिनों की किरिया शुद्ध सारी – नेमजी०

(२८)

१. श्री शीतल जिन साहिबाजी सुन सेवक अरदास,
शिवदाता विरुद तिहारो तो दो शिवपुर वास।

जिनेश्वर वंदियेजी पोह उगंते सूर–जिनेश्वर वंदियेजी – टेर–

२. पामे परमानंद जिनेश्वर वंदियेजी दुख टल जाय।
दूरक पाप निकंदियेजी, पामे सुख भरपूरजी – जि०

३. छेदन भेदन तर्जनाजी, मैं तो सही अनन्त।
इण दुखमी आरे आयने, अब भेट्या भगवन्त – जि०

४. तारो श्री जिनरायजी! टालो न करो कोय।
केड़े लग्यो किम छूटसीजी, हिये विमासी जोय – जि०

५. जैसे चन्द्र चकोर सूं जी, मेंह मगन जिम मोर।
तुम गुण हिरदा में वसे, हूं नितका करूं निहोर – जि०

६. काम भोग नी लालसाजी, थिरता न धरे मन।
पिण तुम भजन प्रताप थी, दाझे दुरमति वन – जि०

७. लोह अड़े पारस जइ जी, सोनो न हुवे तेह।
लोहनो कछु विगड़े नहीं, पारस पड़े संदेह – जि०

८. चिन्तामणि संग्रह्या जी, नर सुखियो नहीं होय।
तद मन में शंका पड़े, ओ रतन न दीसे कोय – जि०

९. निशदिन सेवा सारतां जी, साम सारे जो काम।
जिणरी इधकाई किसी, पिणहुं तार्या को नाम – जि०

१०. सेवक साहब ने कयां जी, काम न सारे कोय ।
चाकर ने सुमेहणी, पिण मोटा ने होय – जि०

११. बालक जो हठ ही करे जी, तो हारे माईत ।
हूँ बालक तुम आगले, बोलुं हुं इण रीत – जि०

१२. चेतन तूं ही तारसी जी, तुम परमेश्वर रूप ।
पिण प्रभुना गुण गावतां जी, प्रगटे निज स्वरूप – जि०

(२९)

१. प्रातः ऊठ श्री शांति जिनन्द को, सुमिरण कीजे घड़ी घड़ी ।
संकट कोटि कटे भव-संचित, जो ध्यावे मन भाव धरी ।।टेर।।

२. जनमत पाण जगत दुख टलियो, गलियो रोग असाध्य मरी ।
घट घट अन्तर आनन्द प्रकट्यो, हुलस्यो हिवड़ो हरष भरी –प्रातः०

३. आपद व्यंतर पिशुन भय भाजे, जैसे पेखत मिरग हरी ।
एकण चित्ते शुद्ध मन ध्यातां, प्रकटै परिचय परम सिरी –प्रातः०

४. गये विलाय भरम के बादल, परमारथ-पद-पवन करी ।
अवर देव एरंड कुण रोपै, जो निज मंदिर केल फली –प्रातः०

५. प्रभु तुम नाम जग्यो घट अन्तर, तो शुं करिए कर्म अरी ?
"रतनचंद" शीतलता व्यापी, पातक जाय कषाय टरी –प्रातः०

(३०)

१. शारद मांय नमूं शिर नामी, हुं गुण गाऊं त्रिभुवन स्वामी।
शांति शांति जपे सब कोई, ते घर शांति सदा सुख होई ॥

२. शांति जपी जे कीजे काम, सो ही काम होय अभिराम।
शांति जपी परदेश सिधावे, ते कुशले कमला लेई आवे ॥

३. गर्भ थकी प्रभु मारि निवारी, शांतिजी नाम दियो हितकारी।
जे नर शांति तणा गुण गावे, ऋद्धि अचिंती ते नर पावे ॥

४. जे नर कूं प्रभु शान्ति सहाई, ते नर कूं कुछ आरति नाहीं।
जो कछु वांछे सो ही पूरे, दुःख दारिद्र मिथ्या मति चूरे ॥

५. अलख निरंजन ज्योति प्रकाशी, घट घट अंतर के प्रभु वासी।
स्वामी स्वरूप कह्यो नहिं जाय, कहतां मुझ मन अचरज थाय ॥

६. डार दिये सब ही हथियारा, जीत्या मोह तणा दल सारा।
नारी तजी शिव से रंग राचो, राज तज्यो पिण साहिब सांचो ॥

७. महा बलवंत कहीजे देवा, कायर कुंथु एक हणेवा।
रिद्धि सबल प्रभु पास लहीजे, भिक्षा-आहारी नाम धरीजे ॥

८. निंदक पूजक कूं है सुखदायक, तजि परिग्रह हुआ जगनायक।
नाम अतिथि पण सब सिद्धि दायक ॥

९. शत्रु मित्र सम चित्त गणीजे, नाम देव अरिहंत भणीजे।
सकल जीव हितवंत कहीजे, सेवक जानि महापद दीजे ॥

१०. सागर जैसा होत गंभीरा, दूषण एक न मांहिं शरीरा।
मेरु अचल जिमी अंतरजामी, पण न रहे प्रभु एकण ठामी।

११. लोक कहे जिनजी सब देखे, पण सुपनांतर कबहु न पेखे।
रीस बिना बावीश परीसा, सेना जीती ते जगदीशा ॥

१२. मान विना जग आण मनाई, माया विना शिव से लिव लाई।
लोभ विना गुण राशि ग्रहीजे, भिक्षु भावे त्रिगडी सेवीजे ।।

१३. निर्ग्रन्थपणे शिर छत्र धरावे, नाम यती पण चमर ढुलावे।
अभयदान दाता सुख कारण, आगल चक्र चले अरि दारण ।।

१४. श्री जिनराज दयाल भणीजे, कर्म सर्व को मूल खणीजे।
चउविह संघज तीरथ थापे, लच्छी घणी देखे नवि आपे ।।

१५. विनयवंत भगवंत कहावे, नांहि किसी कूं शीश नमावे।
अंकिचन को विरुद धरावे, पण सोवन पद पंकज ठावे ।।

१६. राग नहीं पण सेवक तारे, द्वेष नहीं निगुणा संग वारे।
तजि आरंभ निज आतम ध्यावे, शिव रमणी को साथ चलावे ।।

१६. तेरी महिमा अद्भुत कहिए, तेरे गुणों का पार न लहिए।
तूं प्रभु समरथ साहेव मेरा, हूं मनमोहन ! सेवक तेरा ।।

१७. तूं है त्रिलोक तणो प्रतिपाल, हूँ रे अनाथ ने तूं है दयाल।
तूं शरणागत राखत धीरा, तूँ प्रभु तारक है वड़ वीरा ।।

१८. तुम समो वडभागज पायो, तो मेरो काज चढ्योरे सवायो।
कर जोड़ी प्रभु विनवूं तुम से, करो कृपा जिनवरजी हमपे ।।

१६. जनम मरणनी भीति निवारो, भवसागर से पार उतारो।
श्री हत्थिणापुर मंडल सोहे, त्यां श्री शांति सदा मन मोहे ।।

२०. पद्मसागर गुरुराय पसाया, श्री गुणसागर कहे मन भाया।
जे नर नारी एक चित्त गावे, ते मनवांछित निश्चय पावे ।।

(३१)

१. सदा शांतिजी आश पूरो हमारी।
करूं वीनती अंग उच्छाह धारी ॥
२. दयावंत! तूँ दुःख दारिद्र हारी।
कृपावंत! तूं करत कल्लोलकारी ॥
३. महाविपुल मतिवंत ए जिनराया!
षट काय राखे सदा छत्र छाया ॥
४. महामोह मिथ्यातनां मान मोड़ी ॥
जिन मुक्ति पहुंच्या कर्मकंठ तोड़ी ॥
५. भड़भूत वैताल भय जाय दोड़ी।
जग मांहि तुम सम नहीं कोई जोड़ी ॥
६. सदा सिद्धि दाता नमूं कुटिल छोड़ी।
तुम नामे कल्याण कोड़ान कोड़ी ॥
७. तुम नामे सुर असुर भय दूर नासे।
धनवान धोरी घर अधिक वासे ॥
८. गज केसरी अनल दल भय न होय।
अतीसे करी एहवी रीत जोय ॥
९. गुण ज्ञान करतां किम पार लहिए।
रसना करी एक लवलेश कहिए ॥
१० महा विमल नाण चारित्र दंशी।
भणे संत गोविंद मुनीज संसी ॥



(३२)

ॐ शांति शांति शांति, सब मिल शांति कहो।

१. विश्वसेन अचिरा के नन्दन, सुमिरन है सब दुःख निकन्दन।
अहोरात्रि वन्दन हो, सब मिल शान्ति कहो – ॐ

२. भीतर शांति बाहिर शान्ति, तुझमें शान्ति मुझमें शान्ति।
सब में शान्ति बसाओ, सब मिल शान्ति कहो – ॐ

३. विषय कषाय को दूर निवारो, काम क्रोध से करो किनारो।
शान्ति साधना यों हो, सब मिल शान्ति कहो – ॐ

४. शान्ति नाम जो जपते भाई, मन विशुद्ध हिय धीरज लाई।
अतुल शान्ति उससे हो, सब मिल शान्ति कहो – ॐ

५. प्रातः समय जो धर्म स्थान में, शान्ति पाठ करते मृदु स्वर में।
उनको दुःख नहीं हो, सब मिल शान्ति कहो – ॐ

६. शान्ति प्रभु सम समदर्शी हो, करें विश्व हित जो शक्ति हो।
'गज मुनि' सदा विजय हो, सब मिल शान्ति कहो – ॐ



(३३)

१. तूं धन तूं धन तूं धन तूं धन, शांति जिनेश्वर स्वामी ।
मिरगी मार निवार कियो प्रभु, सर्व भणी सुखकामी ।।

२. अवतरिया अचला के उदरे, माता साता पामी ।
शांति शांति जगत वरताई, सर्व कहे सिरनामी – तूं०

३. तुम प्रसाद जगत सुख पायो, भूले मूढ़ हरामी ।
कंचन डार काँच चित्त देवे, वांकी वुद्धि में खामी – तूं०

४. अलख निरंजन मुनिमनरंजन, भय-भंजन विसरामी ।
शिव-दायक लायक गुण-गायक, वायक है शिव-गामी – तूं०

५. "रतनचंद" प्रभु कछुअ न मांगे, सुन तूं अंतरजामी ।
तुम रहवन की ठौर वता दो, तो हूँ सहु भर पामी – तूं०



(३४)

१. शांतिनाथ को कीजे जाप, करोड़ भवांरा काटे पाप।
शांतिनाथजी मोटा देव, सुर नर सारे जेहनी सेव ।।

२. दुख दारिद्र सब जावे दूर, सुख संपति होवे भरपूर।
ठग फांसी-गर जावे भाग, बलती होवे शीतल आग ।।

३. राज लोकमां कीर्ति घणी, शांति जिनेश्वर माथे धणी।
जो ध्यावे प्रभुजी नुं ध्यान, राजा देवे अधिको मान ।।

४. गड़ गुंबड़ पीड़ा मिट जाय, दोषी दुश्मन लागे पांव।
सघलो भाग्यो मननो भर्म, पाम्यो समकित काटो कर्म ।।

५. सुणो प्रभु मोरी अरदास, हूं सेवक तुम पूरो आस।
मुझ मन चिंतित कारज करो, चिंता आरति विघ्न हरो ।।

६. मेटो म्हारा आल जंजाल, प्रभु मुझने तूं नयन निहाल।
आपनी कीर्ति ठामोठाम, सुधारो प्रभुजी म्हारा काम ।।

७. जो नित-नित प्रभुजी ने रटे, मोती बंधा फूला कटे।
चेप लावण दोनों झड़ जाय, विण औषध कट जावे छांय ।।

८. प्रभु नाम से आंख निर्मल थाय, धुंध पटल जाला कट जाय।
कमलो पीलो जल जल झरे, शांति जिनेश्वर साता करे ।।

९. गरमी व्याधि मिटावे रोग, सज्जन मित्रनो मिले संयोग।
ऐसा देव न दीखे और, नहीं चाले दुश्मन का जोर ।।

१०. लुटेरा सब जावे नाश, दुर्जन फीटा होवे दास।
शांतिनाथ की कीर्ति घणी, कृपा करो तुम त्रिभुवन धणी ।।

११. अरज करूं छूं जोड़ी हाथ, आप सूं नहीं कोई छानी बात ।
देख रह्या छो पोतें आप, काटो प्रभुजी म्हारा पाप ।।
१२. मुझ मन चिंतित सारिये काज, राखो प्रभु जी म्हारी लाज ।
तुम सम जग मां नाहीं कोय, तुम भजवाथी साता होय ।।
१३. तुम पास चले नहीं मृगी रोग, ताव तेजरो नाको तोड़ ।
मरी मिटाई कीधी प्रभु संत, तुम गुण नो नहीं आवे अन्त ।।
१४. तुमने सुमरे साधु सती, तुमने सुमरे जोगी जती ।
काटो संकट राखो मान, अविचल पदनुं आपो स्थान ।।
१५. संवत् अठारे चोराणु जाण, देश मालवो अधिक वखाण ।
शहर जावरे चातुरमास, हूं प्रभु तुम चरणां रो दास ।।
१६. ऋषि रुगनाथजी कीधो छन्द, काटो प्रभुजी म्हारी वाट ।
मुझ आरति चिंता सभी काट ।।

(३५)

साता कीजोजी, श्री शान्तिनाथ प्रभु
शिव-सुख दीजोजी, साता कीजोजी ।।टेर।।

१. शान्तिनाथ है नाम आपको, सब ने साताकारीजी ।
तीन भुवन में चावा प्रभुजी, मृगी निवारीजी – साता०
२. आप सरीखा देव जगत में, और नजर नहीं आवेजी ।
त्यागी ने वीतरागी मोटा, मुझ मन भावेजी – साता०
३. शान्तिनाथ मन मांही जपतां, चाहे सो फल पावेजी ।
ताव-तेजरो, दुःख-दालिदर, सब मिट जावेजी – साता०
४. विश्वसेन राजाजी के नन्दन, अचलादेवी जायाजी ।
गुरु प्रसादे 'चौथमल' कहे, घणा सुहायाजी – साता०

(३९)

१. जय जय जय प्रभु पार्श्व जिनन्दा,
दुष्ट कर्म सब दूर निकन्दा ! – जय जय०
२. दीनदयाल दया के सागर।
जगतारक प्रकटे प्रभु चन्दा ! –जय जय०
३. नाग नागिन जलत बचाये,
गुन गावत सुर नर मुनि वृन्दा ! –जय जय०
४. निश दिश घड़ी छिन जो नर ध्यावे,
विघ्न हरत सुख करत आनन्दा। –जय जय०
५. शिवदयाल सुमरो प्रभु पारस,
जन्म जन्म के कट जायँ फन्दा ! – जय जय०

(४०)

जै श्री पार्श्व प्रभो, स्वामी जै श्री पार्श्व प्रभो ।
आशा पूरण करिये, हरिये कष्ट विभो ।।
ओऽम् जय श्री पार्श्व प्रभो ।।टेर।।
१. पारस पुरुषादानी, शरण पड़ा तेरी ।
धरणेन्दर पद्मावती, सहाय करो मेरी – ओऽम्०
२. प्रतिदिन तुम्हें मनाऊँ, वांछित फल पाऊं ।
पाकर पारस स्वामी, मैं वलि-वलि जाऊँ – ओऽम्०
३. मम गृह कमला आवे, सुख में दिन जावे ।
दास तुम्हारा निशदिन, जय कीरति पावे – ओऽम्०
४. सब विध अब तो मुझ पर, दया करो स्वामी ।
पाहि त्राहि माम् दीनं हे अन्तरयामी – ओऽम्०
५. कामधेनु सुर तरु से, मुझको फलदाता ।
चिन्तामणी सम तुमसे, सब कुछ मैं पाता – ओऽम्०
६. परम दिव्य शिव सम्पति, 'केवल' को दीजै ।
पुत्र समझ क[illegible]ना, जल्दी सुध लीजे – ओऽम्०

(४१)

१. तुमसे लागी लगन ले लो अपनी शरण,
पारस प्यारा, मेटो मेटोजी संकट हमारा !

२. निश दिन तुमको जपूं पर से नेहा तजूं,
जीवन सारा, तेरे चरणों में वीते हमारा – मेटो०

३. अश्वसेनजी के राजदुलारे, वामादेवी के सुत प्राण प्यारे !
सव से नेहा तोड़ा, जग से मुँह मोड़ा, संयम धारा – मेटो०

४. इन्द्र और धरणेन्द्र भी आये, देवी पद्मावती मंगल गाये।
आशा पूरो सदा, दुख नहीं पावे कदा सेवक थारा – मेटो०

५. जग के दुख की परवाह नहीं है, स्वर्ग सुख की चाह नहीं है।
मेटो जन्म मरण, होवे ऐसा यतन, पारस प्यारा – मेटो०

६. लाखों वार तुम्हें शीष नमाऊँ, जग के नाथ तुम्हें कैसे पाऊँ।
'पंकज' व्याकुल भया, दरशन विन यह जिया लागे खारा – मेटो०

(४२)

१. पारसनाथ सहायी जाके, कमी रहे नहीं कांई।
वन में मंगल रण में रक्षा, अग्नि होत शितलाई – पा०

२. जहाँ-जहाँ जावे तहां-तहां आदर, आनंद रंग वधाई।
कहा करे द्वेषी जन कोऊ, वाल न वांका थाई – पा०

३. भजन करे सो नव-निधि पावे, विष अमृत हो जाई।
'रूपचंद्र' प्रभु के गुण गावे, जन्म-जन्म सुखदाई – पा०

(३६)

१. आपण घर वैठा लील करो, निज पुत्र कलत्र सुं नेह धरो।
तुम देश देशांतर काँई दौड़ो, नित पार्श्व जपो श्री जिन रूड़ो ॥

२. मन वंछित सघला काज सरे, सिर ऊपर चामर छत्र धरे।
कलमल आगल चाले घोड़ो, नित पास जपो श्री जिन रूड़ो ॥

३. भूत प्रेत पिशाच वली, सायण ने डायण जाय टली।
छल छिद्र न कोई लागे जूड़ो, नित पास जपो श्री जिन रूड़ो ॥

४. एकांतर ताव सीयो दाह, औषधि विन जाए क्षण माँह।
नवि दूखे माथुं पग गोड़ो, नित पास जपो श्री जिन रूड़ो ॥

५. कंठमाल गल गुंवड सघला, तस उदर रोग टलें सवला।
पीड़ा न करे फिनगल फोड़ो, नित पास जपो श्री जिन रूड़ो ॥

६. जागतो तीर्थंकर पार्श्व वहु, इम जाणे सघलो जगत सहु।
तत्क्षण अशुभ कर्म तोड़ो, नित पास जपो श्री जिन रूड़ो ॥

७. पास वाराणसी पुरी नगरी, तिहाँ उदयो जिनवर उदय करी।
समयसुन्दर कहे कर जोड़ो, नित पास जपो श्री जिन रूड़ो ॥



(३७)

ओ पारस स्वामी अन्तरयामी, पारसनाथ ॥टेर॥

१. अश्वसेनजी का लाडला, वामादेवी का नन्द !
श्याम वर्ण सुहावणारे, मुखड़ो पूनमचन्द ! – ओ०

२. आगे भक्त अनेक उबारे, अब प्रभु मोहे तार
तारक नाम धरायो स्वामी, अपना विरुद सम्हार – ओ०

३. मैं अपराधी औगुण भरियो, माफ करो महाराज !
दीन दयाल ! दया कर मोपे सारो वंछित काज – ओ०

४. अरजी लीज्यो दरश दीज्यो, मुजरो लीज्यो मान !
करुणा सागर करुणा कीज्यो, अर्ज करे छै 'कान' – ओ०

(३८)

१. कल्पवेल चिन्तामणि, काम-धेनु गुण-खान ।
अलख अगोचर अगम गति, चिदानन्द भगवान ॥

२. परम ज्योति परमात्मा, निराकार अविकार ।
निर्भय रूप ज्योति स्वरूप, पूरण ब्रह्म अपार ॥

३. अविनाशी साहिब धणी, चिन्तामणि श्रीपास ।
अर्ज करूँ कर जोड़ के, पूरो वंछित आस ॥

४. मन-चिन्तित आशा फले, सकल सिद्ध हों काम ।
चिन्तामणि को जाप जप, चिन्ता हरे यह नाम ॥



(४३)

पारस प्रभु आस पूरो, देवो शिवपुर वास
त्रास गर्भावास मेटो, हूँ चरणांरो दास ।।टेर।।

१. ऊठत बैठत सोवत जागत, बस रह्या हृदय मंझार – पारस०

२. मात तात अरु नाथ तूंही, तूं पति अरु तूं ही परिवार ।
सज्जन वल्लभ मित्र तूंही, तूंही तारणहार – पारस०

३. कईक पर्वत पहाड़ जावे पूजत तरुवर, न्हावत गंग ।
म्हांने तो तन मन वचन करने, एक तुम सूं रंग – पारस०

४. हूँ मतिहीन लवलीन जग में, पुद्गल कीच प्रपंच ।
अवगुण भरियो देख साहिब, आप मांडी खंच – पारस०

५. भव सागर में बहुविध भटक्यो, पुद्गल पूर अनेक ।
छेदन भेदन बहुत पामी, अब तो साम्हो देख – पारस०

६. शरण आतां जेज कितनी, जो साहिब शिर हाथ ।
लोह कंचन होत छिन में, फरस्यां पारस नाथ – पारस०

७. काष्ठ फाड़ी नाग काढ्यो, संभलायो नवकार ।
धरणेन्द्र पद्मावती बणगा, ओ प्रभूनो उपकार – पारस०

८. पतित उधारण विरुद तिहारो, तारीजो महाराज !
सेवक तुम शरणे आयो, राखिजो अब लाज – पारस०

९. कमठमान भंजक सुखदाता, भय भंजन भगवंत ।
"रतनचन्द" करजोड़ी विनवे, लुल-लुल शीष नमंत – पारस०

(४४)

१. जय जय जय नायक पार्श्वजिनं, प्रणताखिल मानव देवगणं।
जिन शासन मंडन स्वामी जयो, तुम दर्शन देखि आनन्द भयो ॥

२. अश्वसेन कुलांवर भानु-निभं, नव हस्त शरीर हरित प्रतिभं।
धरणेंद्र सुसेवित पाद युगं, भर भासुर कांति सदा सुभगं ॥

३. निज रूप विनिर्जित रंभ पति, वदन द्युति शारद शोभतति।
नयनांवुज दीप्ति विशालतरा, तिल-कुसुम सन्निभ नासा प्रवरा ॥

४. रसनामृत कंद समान सदा, दशनावलि अनार कली सुखदा।
अधरारुण विद्रुम रंग धनं, जय पुरुसादानी पार्श्वजिनं ॥

५. अतिचारु मुकुट मस्तक दीपे, कानन कुण्डल रवि-शशि जीपे।
तुम महिमा महि-मंडल गाजे, नित पंच शव्द वाजा वाजे ॥

६. सुर-किन्नर विद्याधर आवें, नर नारी तोरा गुण गावें।
तुम सेवे चौंसठ इंद्र सदा, तुम नामे नाशे कष्ट सदा ॥

७. जो सेवे तुम को भाव घणे, नव निधि थाय घर तेह तणे।
अडवडीआ तूं आधार कह्यो, समरथ साहिव मैं आज लह्यो ॥

८. दुखियों को सुखदायक तूं दीखे, अशरण को शरणे तूं राखे।
तुम नाम से संकट विकट टले, वीछड़ीयां व्हाला आन मिले ॥

९. नट विट लंपट दूरे नाशे, तुम नामे चोर चुगल त्रासे।
रण राउल जय तुम नाम थकी, सघले आगल तुम सेव थकी ॥

१०. यक्ष राक्षस किन्नर सभी उरगा, करि केसरि दावानल विहगा।
अघ वंधन भय सगला जावे, जो एक मने तुम को ध्यावे ॥

११. भूत-प्रेत पिशाच छली न सके, जगदीश तवाभिध जाप थके।
महोटा जोटिंग रहे दूरे, दैत्यादिकों का तूं मद चूरे ॥

१२. डायनी सायरिण जाय हटकी, भगवंत थाय तुम भजन थकी ।
कपटी तुम नाम लिया कंपे, दुरजन मुख से जी जी जंपे ।।

१३. मानी मच्छराला मुंह मोड़े, ते पण आगे खड़े कर जोड़े ।
दुरमुख दुष्टादिक तूंहि दमे, तुम नामे मोटा म्लेच्छ नमे ।।

१४. तुम नामे माने नृप प्रवला, तव यश उज्वल जिमि चन्द्रकला ।
तुम नामे पावे रिद्धि घणी, जय जय जगदीश्वर त्रिजग धणी ।।

१५. चिंतामणि काम सभी पावे, हय गय रथ पायक तुम नामे ।
जनपद ठकुराइ तूं आपे, दुर्जन जन का दारिद्र कापे ।।

१६. निर्धन को तूं धनवंत करे, तूठ्यो कोठार भंडार भरे ।
घर पुत्र कलत्र परिवार घणो, ते सब महिमा तुम नाम तणो ।।

१७. मणि माणिक मोती रत्न जड्यां, सुवरण भूषण बहु सुघड घड्यां
वली पहरण नवरंग वेष घणां, तुम नामे नवि रहे कांइ मणा ।।

१८. वैरी विरुआ नवी ताकी सके, वली चोर चुगल मनसे चमके ।
छल छिद्र कदा केहको न लगे, जिनराज सदा तव ज्योति जगे ।।

१९. ठग ठाकुर सभी थर थर कांपे, पाखण्डी पण को नवि फरके ।
लुंटारादिक सहु नासी जाये, मारग तुम जपतां जय थाये ।।

२०. जड़ मूरख जो मति हीन वली, अज्ञान तिमिर तस जाय टली ।
तुम सुमरण से डाह्या थाए, पंडित पद पामी पूजाए ।।

२१. खस खांसी खयन पीडा नासे, दुरबल मुख दीनपणा त्रासे ।
गड गुंवड कुष्ठ जिके सवला, तव जाप रोग टले सगला ।।

२२. गहिला गूंगा वहिराय जिके, तुम ध्याने सव दुःख जाय तिके ।
तनु कांति कला सुविशेष वधे, तुम समरण से नवनिधि सधे ।।

२३. करि केसरी अहिरण वंध सया, जल जलरण जलोदर अष्ट भया ।
रांगरण प्रमुखा सव जाय टली, तुम नामे पामे रंगरली ।।

२४. ॐ ह्रीं ऐं श्री पार्श्वनमो, नमिऊरण जपंता दुष्ट दमो ।
चिंतामणि मंत्र जिके ध्याये, तिन घर दिन दिन दौलत थाये ।।

२५. त्रिकरण शुद्धे जो आराधे, तस जस कीर्ति जग में वाधे ।
वली कामित काम सवे साधे, समीहित चिंतामणी तुज लाधे ।।

२६. मद मत्सर मनसे दूर तजे, भगवंत भली परे जेह भजे ।
तस घर कमला कल्लोल करे, वलि राज्य रमणि वहु लील वरे ।।

२७. भय वारक तारक तूं त्राता, सज्जन मरण गति मतिको दाता ।
मात तात सहोदर तूं स्वामी, शिवदायक नायक हित कामी ।।

२८. करुणा कर ठाकुर तूं म्हारो, निशि-वासर नाम जपूँ थारो ।
सेवक पर परम कृपा कीजो, वालेशर वांछित फल दीजो ।।

२९. जिनराज सदा तूँ जयकारी, तव सूरति अति मोहनगारी ।
मुगत महल मांहि तूँ ही विराजे, त्रिभुवन ठकुराइ तुज छाजे ।।

३०. इम भाव भले जिनवर गायो, वामा सुत देखी वहु सुख पायो ।
रवि शशि मुनि संवच्छर रंगे, जय देव सूरमा सुख संगे ।।

३१. जय पुरुसादानी पार्श्व प्रभो, सकलार्थ समीहित देहि विभो !
बुध हर्ष रुचि विजयाय मुदा, तव लब्धि रुचि सुख थाय सदा ।।

(४५)

१. प्रणमामि सदा प्रभु पार्श्व जिनं, जिननायक दायक सौख्य धनं।
धन चारु मनोहर देह धरं, धरणीपति नित्य सुसेव करं ॥
२. करुणा रस रंजित भव्य फणी, फणि सप्त सुशोभित मौलिमणी।
मणि कंचन रूप त्रिकोट घटं, घटिता सुर किन्नर पार्श्व तटं ॥
३. तटिनी पति घोष गंभीर स्वरं, शरणागत विश्व अशेष नरं।
नर-नारि नमस्कृत नित्य मुदा, पद्मावती गावति गीत सदा ॥
४. सततेंद्रिय गोप यथा कमठं, कमठासुर वारुण मुक्तहठं।
हठ हेलित कर्म कृतांत वलं, वलधाम दरं दल पंकजलं ॥
५. जलज-द्वय पत्र प्रभा नयनं, नयनं दित भव्य तरी शमनं।
मन्मत्थ महीरुह वह्नि समं, शमता गुण रत्नमयं परमं ॥
६. परमार्थ विचार सदा कुशलं, कुशलं कुरु मे जिन नाथ अलं।
अलिनी नलिनी नल नील तनं, तनुता प्रभु पार्श्वजिनं सुधनं ॥

(४६)

वामाजी के नंदा मानो, सोवे पूनम चन्दाजी ॥टेर॥
१. तीन ज्ञान ले गर्भ में आये प्रभु।
मात पिता मन भया है आनन्दाजी ॥
२. पोष कृष्ण दसमी जन्म भयो जब।
नृत्य गीत करै उरवशी इन्दाजी ॥
३. मात भक्ति धर भुजंग कृपा कर।
देव परमेष्ठी ने किया है धरणिन्दाजी ॥
४. जगत ज्ञान भ्रम व्याल समझ तज।
कर्म काट सिद्ध थया है जिनंदाजी ॥
५. गुण अनन्त नाथ पारस के।
गावत पार न पावे विनयचन्दाजी।
बरते परम आनन्दा विनयचन्दाजी।

(४७)

१. सांवलियो साहिव है मेरो, मैं चाकर प्रभु तेरो।
भवसागर में वहु विध भटक्यो, अव तो करो निवेरो – सांवलियो०

२. आठ कर्म मोय विकट दवायो, दियो झटक घन घेरो।
प्रभुजी कृपा दृष्टि कर मोपर, वेगा आय उवारो – सांवलियो०

३. चौरासी की फांसी गालो, टालो भव भव फेरो।
सेवक ने प्रभुजी ! हिवे दीजे मुक्ति महल में डेरो – सांवलियो०

४. भोलो हंसराज नहीं समझे, देत है काल दरेरो।
अविचल सुख री चाह करे तो, ले शरणो जिन केरो – सांवलियो०

५. जग में नाम चिन्तामणि तेरो, सो मैं काढ्यो हेरो।
'रतनचन्द' कहे नित नित जिनको लीजे नाम सवेरो – सांवलियो०

(४८)

१. सुगुरु चिंतामणि देव सदा, मुज सकल मनोरथ पूरमुदा।
कमलागर दूर न होय कदा, जपतां प्रभु पारश नाम यदा ॥

२. जल अनल मतंगज भय जावे, अरि चोर निकट पण नहीं आवे।
सिंह सर्प रोग न सतावे, धन्य धन्य प्रभु पार्श्व जिन ध्यावे ॥

३. मच्छ कच्छ मगर जल मांहि भमै, वडवानल नीर अथाह गमै।
प्रवहण वैठा नर पार पमै, नित्य प्रभु पार्श्व जिनंद नमै ॥

४. विकराल दावानल विश्व दहै, ग्रह वस्ती धन ग्रास आकाश ग्रहैं।
तुम नाम लियां उपशांति लहै, वन नीर सरोवर जेम वहै ॥

५. झरतो मद लोल कलोल करै, भ्रमरा गुंजावर भर रोस भरैं।
करि दुष्ट भयंकर दूरि करैं, श्री पार्श्व नाथ जी के सुमरें ॥

६. छाना छल छिद्र विनाय छलै, यश वास सुणी मन मांहि जलै।
ते पिशुन्य पड़े नित्य पाय तलै, जपतां प्रभु वैरी जाय टलै ॥

७. धन देखि निशाचर कोड़ धसैं, मुझ मंदिर पेश कदेन सुखै ।
अति उच्छव तास आवास अखै, परमेश्वर पार्श्व जास पखै ।।

८. असराल विदारण हाथ हटैं, गललोल जिहां गज कुंभ घटैं ।
मृगराज महा भय भ्रांति मिटै, रसना जिन नायक जेह रटैं ।।

९. फिरतो चहुं फेर फुंकार फणी, धरणेंद्र धसैं धरि रीस धणी ।
भय त्रास न व्यापे तेह तणी, धरतां चित पार्श्वनाथ धणी ।।

१०. कफ कुष्ठ जलोदर रोग कुसैं, गड़ गुंवड़ देह अनेक ग्रसैं ।
विन भेषज व्याधि सव विनसैं, वामा सुत पार्श्व जे स्तवसैं ।।

११. धरणेंद्र धराधिप सुर ध्यायो, प्रभु पार्श्व २ कर पायो ।
छवि रूप अनूपम जग छायो, जननी धन्य वामाँ सुत जायो ।।

१२. करतां जिन जाप संताप कटैं, दुःख दारिद्र दोहग सोक घटैं ।
हठ छोड़ जहां रिपु जोर हठैं, पदमावती पार्श्व जहां प्रगटैं ।।

(ॐ नमो पार्श्वनाथाय, धरणेन्द्र पद्मावती सहिताय, विषहर फुलिंग मंगलाय, ॐ ह्रीं श्रीं चिंतामणि पार्श्वनाथाय, मम मनोरथ पूरय स्वाहा ।)

१३. मंत्राक्षर गाथा गूढ पढ्यो, चिंतामणि जाणे हाथ चढ्यो ।
वली मान महातम तेज वढ्यो, श्री पार्श्व जिनस्तव जेह पढ्यो ।

१४. तीर्थपति पार्श्वनाथ तिलो, भणतां जस वास निवास फलो ।
मणी मंत्र सकोमल होय मिलो, अमची प्रभ पार्श्व आश फलो ।।

१५. लोंका गच्छ नायक लाभ लिए, हित क्षेम करण गुरु नाम हिये ।
दिन २ गछनायक सुख दिये, कीर्ति प्रभु पार्श्व मुख किये ।।

---

(४९)

१. रायरे सिद्धारथ घर पटराणी, नाम त्रिशला सुलक्षणी जी ।
राजभुवन मांहे पलंगे पोढतां, चउदह सुपन राणी लह्यांजी ।।

२. पहले रे सुपने गयवर दीठो, बीजे वृषभ सुहामणो जी ।
त्रीजे सिंह सुलक्षणो दीठो, चौथे लक्षमी देवता जी ।।

३. पांचमे पंच वरणी फूलों की माला, छठे चंद्र अमिय झर्योजी ।
सातमे सूरज आठमे ध्वजा, नवमे कलश अमिय भर्योजी ।।

४. पद्म सरोवर दशमे दीठो, खीरसमुद्र दीठो अगीयारमें जी ।
देव विमान ते बारमुं दीठूँ, रणजण घंटा बाजता जी ।।

५. रतनांरी राशि ते तेरहमे दीठी, अग्निशिखा दीठी चउदमे जी ।
चौदह सुपन लही राणीजी जाग्या, राय समीप पहुंचिया जी ।।

६. सुणो हो स्वामी मैं तो सुपना देख्या, पाछली रात रलीयामणी जी
राय रे सिद्धारथ पंडित तेड्या, कहोजी पंडित फल एहनाँ जी ।।

७. अम कुलमंडण तुम कुल दीवो, धन रे महावीर स्वामी अवतर्या जी
जे नर गावें ते सुख पावे, आनंद रंग वधामणां जी ।।

(५०)

१. जय अचलासन, शान्ति सिंहासन, द्वेष-विनाशन, शासन-स्यन्दन ।
सन्मति-कारण, कुमति निवारण, भवभय-हारण, शीतल चन्दन !

२. जय करुणा-वरुणालय जय जय, जीव सभी करते अभिनन्दन ।
जय सुख-कन्दन, दुरित-निकन्दन, जय जग-वन्दन, त्रिशला-नन्दन ।

(५१)

१. जय महावीर प्रभो ! स्वामी जय महावीर प्रभो !
जगनायक सुखदायक, अति गम्भीर प्रभो

२. कुण्डलपुर में जन्मे, त्रिशला के जाए ! माता त्रिशलाके -
पिता सिद्धार्थ राजा, सुर नर हर्षाए, ॐ जय०

३. दीनानाथ दयानिधि, है मंगलकारी, स्वामी है मंगल -
जगहित संयम धारा, प्रभु पर उपकारी, ॐ जय०

५. पापाचार मिटाया, सत्पथ दिखलाया, स्वामी सत्पथ -
दयाधर्म का झण्डा, जग में लहराया, ॐ जय०

५. अर्जुनमाली गौतम, श्री चन्दन बाला, स्वामी श्री चन्दन -
पार जगत से बेड़ा, इनका कर डाला, ॐ जय०

६. पावन नाम तुम्हारा, जगतारणहारा, स्वामी जगतारण -
निशदिन जो नर ध्यावे, कष्ट मिटे सारा, ॐ जय०

७. करुणा सागर ! तेरी, महिमा है न्यारी, स्वामी महिमा -
ज्ञानमुनी गुण गावे, चरणन बलिहारी, ॐ जय०

(५२)

१. जो भगवती त्रिशला तनय, सिद्धार्थ कुल के भान हैं,
लिया जन्म क्षत्रियकुण्ड में, प्रियनाम श्री वर्द्धमान है।

२. जो स्वर्ण-वर्ण प्रलम्बभुज, सरसिज नयन अभिराम हैं,
करुणा सदन मर्दन मदन, आनन्दमय गुणधाम हैं।

३. जो अनन्त ज्ञानी हैं प्रभो ! और अनन्त शक्ति धाम हैं,
किस मुख से गुण वर्णन करूं, मेरी तो एक जबान है।

४. योगीन्द्र मुनि चिन्तन करत, जिनका कि आठों याम हैं,
उन वर्द्धमान जिनेश को मेरे अनेक प्रणाम हैं।

(५३)

जय वोलो महावीर स्वामी की
घट घट के अन्तरयामी की
जय वोलो महावीर स्वामी की ।।टेर।।

१. जिस जगती का उद्धार किया,
जो आया शरण वह पार किया,
जिस पीड़ सुनी हर प्राणी की – जय०

२. जो पाप मिटाने आया था,
जिन भारत ज्ञान जगाया था,
उस त्रिशला-नन्दन ज्ञानी की – जय०

३. जिस राज पाट को छोड़ दिया,
वारह वर्ष तप घोर किया,
उस शान्त वीर रसगामी की – जय०

४. जिन स्याद्वाद सिद्धान्त दिया,
जिसने सव झगड़ा मेट दिया,
है देन सभी उस नामी की – जय०

५. जिस जीव अजीव को तोल दिया,
फिर तत्व ज्ञान अनमोल दिया,
उस महामोक्ष – पदगामी की – जय०

६. हो लाख वार परणाम तुम्हें,
हे वीर प्रभु ! भगवान् तुम्हें,
मुनि दर्शन मुक्ति-गामी की – जय०
जय वोलो महावीर स्वामी की ।

(५४)

जिनन्द मांय दीठा सुपना सार ।।टेर।।

१. पहले गयवर देखियोजी सूँडा दण्ड प्रचण्ड ।
दूजे वृषभ देखियोजी धोरी धोलो सण्ड – जिनन्द०

२. तीजे सिंह सुलक्षणोजी करतो मुख वगास ।
चौथे लक्ष्मी देवता जी, कर रह्या लील विलास – जि०

३. पंच वरण फूलां तणीजी, मोटा देखी सुवास ।
छट्ठे चन्द्र उजासियोजी अमीय झरे आकाश – जि०

४. दिनकर ऊगो तेजसूँजी किरणा झांक झमाल ।
फरकती देखी धजाजी, ऊँची अति असराल – जि०

५. कुम्भ कलश रतना जड्योजी उदकभर्यो सुविशाल ।
कमल फूलां को ढाकणोज, नवमें स्वप्न रसाल – जि०

६. पद्म सरोवर जल भर्योजी कमला करी सुसोभाय ।
देव देवी रंग में रमेजी, देख्यां आवे दाय – जि०

७. क्षीर समुद्र चारों दिशाजी, जेनो मीठो नीर ।
दूध जैसो पानी भर्यो जी कठिन पावणो तीर – जि०

८. मोत्यां केरा झूँबकाजी देख्या देव विमान ।
देव देवी, कौतुक करेजी आवतां असमान – जि०

९. रत्नां की राशि निरमलीजी देख्यो स्वप्न उदार ।
स्वप्नो देख्यो तेरमोजी हिवड़े हर्ष अपार – जि०

१०. ज्वाला देखी दीपतीजी अगन शिखा बहु तेज ।
इतने जाग्या पदमनीजी धरतां स्वप्ना से हेज – जि०

११. गजगति चाल्या मलकताजी आया राजन् पास ।
भद्रासन आसन दियो जी राय पूछे हुल्लास – जि०

१२. कहो किण कारण आवियाजी कहो थांरा मनकी वात ।
चवदे स्वप्ना देखियाजी अर्थ कहो साक्षात् – जि०

१३. स्वप्ना सुनी राय हर्षियाजी कीनो स्वप्न विचार ।
तीर्थंकर चक्रवरत हुसीजी तीन लोक आधार – जि०

१४. प्रभाते पंडित तेड़ियाजी कीनो स्वप्न विचार ।
तीर्थङ्कर चक्रवरत हुसीजी तीन लोक करतार – जि०

१५. पंडित ने बहु धन दियोजी वस्तरने फूलमाल ।
गर्भवास पूरा थया जद् जनम्या पुन्यवंत बाल – जि०

१६. चोसठ इन्द्र आवियाजी छप्पन दिशा कंवार ।
अशुचि कर्म निवारने जी गावे मंगलाचार – जि०

१७. प्रतिविम्ब घरमें धर्यो जी माताजी ने विश्वास ।
शक्र इन्द्र लीधा हाथ में जी पंच रूप प्रकाश – जि०

१८. मेरु शिखर न्हवावियाजी तेहनो बहु विस्तार ।
इन्द्रादिक सुर नाचियाजी नाची अपसरा नार – जि०

१९. अठाई महोत्सव सुर करेजी दीप नन्दीश्वर जाय ।
गुण गावे प्रभुजी तणाजी हियड़े हरष न माय – जि०

२०. परभाते सुपनो जो भणेजी भणतां आनन्द थाय ।
रोग शोक दूरा टले जी अशुभ कर्म सब जाय – जि०

---

(५५)

जो आनन्द मंगल चाहो रे मनाओ महावीर ।

१. प्रभु त्रिशला जी के जाया है, कन्चन वरणी काया ।
ज्यां के चरणां शीश नमावो रे – मनावो०

२. प्रभु अनन्त ज्ञान गुणधारी, ज्यांरी सूरत मोहन गारी ।
ज्यांका दर्शन कर सुख पाओरे – मनावो०

३. प्रभु जी की मीठी वाणी, है अनन्त सुखों की खानी ।
थें धार धार तिर जाओ रे – मनाओ०

४. ज्यांके शिष्य बड़ा है नामी, सदा सेवो गौतम स्वामी ।
जो रिद्ध सिद्ध थें चावो रे – मनावो०

५. थांरा सर्व विघ्न टल जावे, मन वांछित सुख प्रगटावे ।
फिर आवागमन मिटाओ रे – मनावो०

६. साल गुण्यासी भाई, देवास शहर के मांही ।
कहे चौथमल गुण गावो रे – मनावो०

(५६)

तीरथनाथ सिद्धारथ सुत को नित नित सुमिरण कीजे ।।टेर।।

१. तीरथनाथ सिद्धारथ सुत को नित नित सुमिरण कीजे ।।टेर।।
दिन दिन वधे सवाई प्रभुता, सकल मनोरथ सीझे – तीरथ०

२. जिण घर कल्पवृक्ष चित्रा वेली, काम धेनू दोहीजे ।
काम – कुंभ चिन्तामणि सेवे, वांछित भोग लहीजे – तीरथ०

३. इण थी अधिक नाम प्रभुजी को, जो निश्चय चित्त लीजे ।
तिण घर कमी रहै नहीं कोई, रिद्धि सिद्धि वृद्धि पामीजे – तीरथ०

४. पुद्गल वस्तु सकल इण भव की, क्षण शोभा दे छीजे ।
प्रभु के नाम मिले सुख संपति, भव-भव अक्षय कहीजे – तीरथ०

५. ज्यूं पनिहारिन का चित कुंभ में, त्यूं प्रभु में चित्त दीजे ।
'विनयचंद' पहुंचे शिवपुर में, जो अनुभव रस पीजे – तीरथ०

(५७)

१. श्री सिद्धारथ कुलदीपक चन्द, त्रिशला दे राणी नो नन्द ।
कोमल कंचनवर्ण शरीर, मन वंछित पूरण महावीर ॥
२. कृपानाथ करी करुणा घणी, मुझ सामूँ जूओ शासन-धणी ।
त्रिभुवन नाथ आयो अब तीर, मन वंछित पूरण महावीर ॥
३. अनन्तवली तप दुक्कर किया, सभी कर्म कुँ दावानल दिया ।
खम सम दम ने धारी धीर, मन वंछित पूरण महावीर ॥
४. चुम्मालीसे चेला किया, एकज दिन में महाव्रत दिया ।
गौतम-सरिखा हुआ वजीर, मनवंछित पूरण महावीर ॥
५. समोसरणमां सुण्यो अधिकार, अमृतवाणी रूप दीदार ।
दीठे हरखे हैडूं हीर, मनवंछित पूरण महावीर ॥
६. एक पल धरे प्रभुजी नूं ध्यान, पग-पग प्रगटे पुण्यनिधान ।
वचन मीठा जिम मिसरी खीर, मनवंछित पूरण महावीर ॥
७. चैन पामें चिन्ता चकचूर, देखी दुश्मन नासे दूर ।
दिन-दिन वाढ़े संपत्ति शीर, मनवंछित पूरण महावीर ॥
८. तुम नामे भव-सागर तरे, तुम नामे सब कारज सरे ।
ऋद्धि-वृद्धि पामें वर चीर, मनवंछित पूरण महावीर ॥
९. चिन्तामणि जिम जिनवर जाप, क्रोड़ भवोनां काटे पाप ।
रोग शोक नाशे पर पीड़, मनवंछित पूरण महावीर ॥
१०. वैशाख सुदि दशमी दिन जाण, प्रभुजी पाम्या केवल नाण ।
सायर-जैसा होत गंभीर, मनवंछित पूरण महावीर ॥
११. संवत अठारह तेतीसे ताम, मेड़ता नगर किया गुणग्राम ।
षट कायानां प्रभुजी पीर, मनवंछित पूरण महावीर ॥
१२. प्रभु पावापुरी मां मुक्ति गया, ऋषि रायचन्द कहे करज्यो मया ।
पहुँचाड़ो मुझ भव-जल तीर मनवंछित पूरण महावीर ॥

(५८)

१. पूरब दिशे हुई पावा पुरी।
धन धान्य ऋद्धि समृद्धि भरी ॥
हस्तीपाल नामे तिहां भूपाली।
वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली ॥
२. गौतमे गुरुनी सेवा कीधी मनमानी।
एक रात में हुआ केवलज्ञानी ॥
जि के चौदह राजु रह्या भाली।
वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली ॥
३. अठारे राय हुआ भगता।
दोय दोय पोसा कीधा लगता ॥
जिके वीर सामुं रह्या निहाली।
वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली ॥
४. प्रभुए दोय दिनरो संथारो कीधो।
सोल पहोर लगे उपदेश दीधो ॥
प्रभु मुक्ति गया कर्मनि गाली।
वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली ॥
५. प्रभु जी तीस वर्ष संयम लीधो।
निज आतम कारज सिध कीधो ॥
वर्ष वियालीस दीक्षा पाली।
वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली ॥
६. प्रभु ने सात-सो चेला चौदह सो चेली।
ज्यांने मुक्ति महल मां दिया मेली ॥
जेणे कर्मना बीज दिया वाली।
वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली ॥
७. प्रभु ने एक राणी ने हुई एक बेटी।
जिके मुक्ति गया दुख दिया मेटी ॥

जमाई हुओ ज्यांरो जमाली।
वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली ॥
८. प्रभु ने एक बहन ने एकज भाई।
जी के स्वर्ग गया समकित पाई ॥
श्रावकना व्रत शुद्ध पाली।
वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली ॥
९. ऋषभदत्त ने देवानन्दा माता।
नयणे निरखंता हुई साता ॥
दोनुं मुक्ति गया कर्माने गाली।
वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली ॥
१०. सिद्धारथ राज ने त्रिशला राणी।
जेणे संथारो कीथो समता आणी ॥
अच्युत देव लोके टांको दियो झाली।
वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली ॥
११. जिण रात वीर मुक्ति पामी।
केवल पाम्या गौतम स्वामी ॥
ज्यांरो जाप जपो नव-करवाली।
वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली ॥
१२. सुधर्मा स्वामी हुआ पाट धणी।
ज्यांरी कीर्ति महिमा जोर घणी ॥
दयामारग दीयो उजवाली।
वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली ॥
१३. ज्यांरे पाटे हुआ जंबू वैरागी।
राते परण्या प्रभाते आठे त्यागी ॥
सोल वर्ष में काटी कर्म जाली।
वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली ॥
१४. आठे भामिनी वैराग्ये भीनी।

प्रभाते पियु साथे दीक्षा लीनी ।।
अवीहड़ प्रीति सघली पाली ।
वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली ।।

१५. प्रभवो पण राजानों वेटो ।
जी के जंवू कुंवर से हुओ भेटो ।।
पाँच-सौ से वैराग्य पाम्यो तत्काली ।
वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली ।।

१६. वीस जिन समेत शिखर सीझ्या ।
अष्टापद गिरनार दोय सीझ्या ।।
वासुपूज्य सीझ्या चंपा चाली ।
वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली ।।

१७. महावीर चौमास कीधो पावापुरी ।
कारतिक वदी अमावस मुक्ति वरी ।।
भणतां सुणतां मंगल – माली ।
वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली ।।

१८. दिन दीवालीनो पायो टाणो ।
तो रात्रि भोजन अशनादि नहिं खाणो ।।
ज्यांरो जाप जपो शीयल पाली ।
वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली ।।

१९. गुरु चेला नी जोड़ी सूरज शशी ।
ऋषि रायचन्द कहे म्हारे मनड़े वशी ।।
मैं जुगती शुं जोड़ी जोड़ टकशाली ।
वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली ।।

२०. पूज्य जयमल जी रहिया पासो ।
शहर नागौर में कियो चौमासो ।।
संवत अठारा वर्ष पीस्ताली ।
वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली ।।

(५६)

१. महावीर शूरवीर महाबली महाधीर।
वांणी मीठी खांड खीर सीद्धारथ नंद हैं ।।
नागणी सी नारी जाण घट में वैराग्य आन।
जोग लियो जग भान छोड़्या मोह फन्द है ।।

२. चौदह हजार सन्त तार दिया भगवन्त।
कर्मां को कियो अन्त पाम्या सुख कन्द है ।।
भणे मुनि 'चन्द्रभान' सुनो हो विवेकवान।
महावीर धरियां ध्यान उपजे आनन्द है ।।

३. पाप पन्थ परिहार मोक्ष पन्थ पग धार।
अभिमान दूर टार निन्दा को निवारी है ।।
संसारियों का छोड़ा संग आलस न आवे अंग।
ज्ञान सेती राखे रंग मोटा उपकारी है ।।

४. मन मांहि निरमल जाणे है गंगा का जल।
काटे ते करमदल नव तत्त्व धारी है ।।
संयम की करे खप वारे भेदे करे तप।
ऐसे अणगार वांको 'वन्दना' हमारी है ।।
वर्द्धमान जपे जाप सारा ही आनन्द है ।।

---

(६०)

१. श्री सिद्धारथ कुल सिणगार, त्रिशलादे सुत जग आधार।
शोभे सुन्दर सोवन वान, शरण तमारूँ श्री वर्धमान ।।
२. तुम नामे लहिये संपदा, तुम नामे मनवंछित मुदा।
तुम नामे लहिये सम्मान, शरण तमारूँ श्री वर्धमान ।।
३. दुर्जन दुष्ट वैरी विकराल, तुम नामे नाशे तत्काल।
तुम नामे दिन-दिन कल्यान, शरण तमारूँ श्री वर्धमान ।।
४. तुम नामे नावे आपदा, भूत प्रेत व्यन्तर नहिं कदा।
रोग शोक चिन्ता नवि जान, शरण तमारूँ श्री वर्धमान ।।
५. ग्रह-आदिक पीड़ा नवि करे, नाम तमारुँ जे अनुसरे।
धर्म सिंह मुनि भाव प्रधान, शरण तमारुँ श्री वर्धमान ।।

(६१)

१. सेवो वीर ने चित्तमाँ नित्य धारो।
अरि क्रोधने मनथी दूर वारो ।।
२. संतोष वृत्ति धरो चितमांहि।
रागद्वेष थी दूर थाओ उच्छाहिं ।।
३. पडया मोहना पाशमाँ जेह प्राणी।
शुद्ध तत्त्वनी बात तेणे न जाणी ।।
४. मनुज जन्म पामी वृथा कां भमो हो।
जिन मार्ग छंडी भूला कां भमो हो ।।
५. अलोभी अमानी निरागी तजो हो।
सलोभी समानी सरागी भजो हो ।।
६. हरि हरादि अन्यथी शुं रमो हो।
नदी गंग मूकी गलीमां पडो हो ।।

७. केइ देव हाथे असि चक्रधारा।
केइ देव घाले गले मुंडमाला॥

८. केइ देव उत्संगे राखे है वामा।
केइ देव साथे रमे वृंद रामा॥

९. केइ देव जपे लेई जपमाला।
केइ मांस भक्षी महा विक्कराला॥

१०. केइ योगिणी भोगिणी भोग रागे।
केइ रुद्राणी छाग नी होम मांगे॥

११. इस्या देव देवी तणी आश राखे।
तदा मुक्तिनां सुखने केम चाखे॥

१२. जदा लोभना थोकनो पार नाव्यो।
तदा मधुनो विंदुओं मन्न भाव्यो॥

१३. जेह देवलां आपणी आश राखे।
तेह पीडने मन्न शुं लेइ चाखे॥

१४. दीन हीननी भीड ते केम भांजे।
फुट्यो ढोल होय कहो केम वाजे॥

१५. अरे मूभ्र भ्राता भजो मोक्ष दाता।
अलोभी प्रभु ने भजो विश्वख्याता॥

१६. रत्न चिंतामणि सारिखो एह सांचो।
कलंकी काचना पिंड शूं मत राचो॥

१७. मंदबुद्धि शुं जेह प्राणी कहे है।
सभी धर्म एकत्व भूलो भमे है॥

१८. किहां सर्पवाने किहां मेरुधीरं।
किहां कायराने किहां शूरवीरं॥

१९. किहां स्वर्ण थालं किहां कुंभ खंडं ।
किहां कोद्रवाने किहां खीर मंडं ॥

२०. किहां खीर सिंधु किहां क्षार नीरं ।
किहां कामधेनु किहां छाग खीरं ॥

२१. किहां सत्यवांचा किहां कूटवाणी ।
किहां रंक नारी किहां राय राणी ॥

२२. किहां नारकी ने किहां देव भोगी ।
किहां इंद्र देही किहां कुष्ठ रोगी ॥

२३. किहां कर्मघाती किहां कर्मधारी ।
नमो वीर स्वामी भजो अन्य वारी ॥

२४. जिसी सेजमां स्वप्नथी राज्य पामी ।
राचे मंद बुद्धि धरी जेह स्वामी ॥

२५. अथिर सुख संसार माँ मन्न राचे ।
ते जना मूढमां श्रेष्ठ शुं इष्ट छाजे ॥

२६. तजो मोह माया हरी दंभ रोशी ।
सजो पुण्य पोषी भजो जे अरोशी ॥

२७. गति चार संसार निस्सार पामी ।
आव्यो आशधारी प्रभु पाय स्वामी ॥

२८. तुहीं तुहीं तुहीं प्रभु परम वीत रागी ।
भव फेरनी श्रृंखला मोह भागी ॥

२९. मानिये वीरजी अरज है एक मोरो ।
दीजे दासकं सेवना चरण तोरो ॥

३०. पुण्य उदय हुवो गुरु आज मेरो ।
विवेके लह्यो मैं प्रभु दर्शन तेरो ॥

(६२)

१. श्री महावीर स्वामी की, सदा जय हो सदा जय हो।
पतित पावन जिनेश्वर की, सदा जय हो सदा जय हो – श्रीमहा०

२. तुम्हीं हो देव देवन के, तुम्हीं हो पीर पैगम्बर।
तुम्हीं ब्रह्मा तुम्हीं विष्णु, सदा जय हो सदा जय हो – श्रीमहा०

३. तुम्हारे ज्ञान खजाने की, महिमा बहुत भारी है।
लुटाने से बढ़े हर दम सदा जय हो सदा जय हो – श्रीमहा०

४. तुम्हारी ध्यान मुद्रा से, अलौकिक शान्ति झरती है।
सिंह भी गोद पर सोते, सदा जय हो सदा जय हो – श्रीमहा०

५. तुम्हारा नाम लेने से, जागती वीरता भारी।
हटाते कर्म लश्कर को, सदा जय हो सदा जय हो – श्रीमहा०

६. तुम्हारा संघ सदा जय हो, मुनि मोतीलाल सदा जय हो।
जवाहरलाल पूज्य गुरु राज, सदा जय हो सदा जय हो – श्रीमहा०

(६३)

१. रिषभ अजित जिननाथ, संभव अभिनंदना।
सुमति पदम सुपार्श्व चंदा प्रभु वंदना॥

२. सुविधि शीतल श्रेयाँस, के वासुपूज्य ध्याइए।
विमल अनंत धर्मनाथ, शांति गुण गाइए॥

३. कुंथु अरह मल्लिनाथ, मुनिसुव्रत निर्मला।
नेमि अरिष्ठ नमिनाथ, पार्श्व महावीर भला॥

४. ए चोवीशी ना नाम, के नित्य प्रति भजो।
हिंसा झूठ अदत्त मैथुन, परिग्रह तजो॥

५. ए चोवीशीना नाम, के नित्य प्रातः ध्याइए।
जन्म मरण दुख दूर, मुक्ति पद पाइए॥

६. बीसे वांदु विहरमाण, इग्यारे वांदुं गणधरा।
बे कर जोड़ी नमुं शीष, के सच्चा जिनेश्वरा ॥
७. कवीश्वर कहे कर जोड़, सुणो रे भवी प्राणीयां।
कर्म हारण ए उपाय, के जगमें जाणीया ॥
८. सांचो ते श्री जिन धर्म, व्यसन वस में वस्यो।
चाल्यो कुकर्मनी चाल, चौरासी मां भटकीयो ॥
९. भम्या अनंती काल, के धर्म विना कुगतिमां।
प्रभुजी करजो मुझ ऊपर मेहर, के मेलजो मुक्तिमां ॥

(६४)

१. ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन, निरंजन निराकारो।
सुमति पद्म सुपार्श्व चंदा प्रभु मेटचा विषय विकारो।
श्रीजिन मुझने पार उतारो प्रभु हुं चाकर चरणांरो – श्रीजिन.
२. सुविधि शीतल श्रेयांस वासुपूज्य मुक्ति तणा दातारो।
विमल अनंत धर्मनाथ शांति जिन, साताकारी संसारो – श्रीजिन.
३. कुंथु अरनाथ मल्ली मुनि सुव्रत, पाम्या भवजल पारो।
नमी नेमनाथ पार्श्व महावीर जी शासनना सिरदारो – श्रीजिन.
४. इग्यारे गणधर वीस विहरमान, सर्व साधु अणगारो।
अनंती चौवीशीने नित्य नित्य वंदूं, कर गया खेवा पारो – श्रीजिन.
५. अधम उधारण विरुद सुनी प्रभु, शरण लियो चरणांरो।
अधम उधारण, परम पदारथ अजर अमर अविकारो – श्रीजिन.
६. राग द्वेष कर्म बीज जे बलीया, बाली कीधां सर्वछारो।
केवल ज्ञान अरु केवल दरशन, निज गुण लीनो सारो – श्रीजिन.
७. दान शील तप भावना भावो, दया धर्म तत्त्व सारो।
ऋषि लालचन्द एणीपर विनवे, प्रभु मारो करो निस्तारो–श्रीजिन.

(६५)

१. जिनजी पहला ऋषभदेव वान्दसांजी,
जिनजी दूजा अजितनाथ देव, पक्खी रा खमत खामणा जी ।
जिनजी तीजा संभवनाथ वान्दसांजी,
जिनजी चौथा अभिनन्दन देव, पक्खी रा खमत खामणाजी ।
जिनजी पन्द्रह दिनांरो पाप आलोचियो जी,
श्रावक शुद्ध मन लीजो रे खमाय – पक्खीरा०

२. जिनजी पांचवां, सुमतिनाथ वान्दसांजी,
जिनजी छठ्ठा पदम प्रभु देव ।
जिनजी सातवां सुपार्श्वनाथ वान्दसांजी,
जिनजी आठवां चन्दा प्रभु देव – पक्खी०

३. जिनजी नवमां सुविधिनाथ वांदसांजी,
जिनजी दसवां शीतलनाथ देव ।
जिनजी इग्यारवां श्रेयांस वान्दसांजी,
जिनजी वारवां वासुपुज्य देव – पक्खी०

४. जिनजी तेरवां विमलनाथ वान्दसांजी,
जिनजी चवदवां अनन्त नाथ देव ।
जिनजी पंद्रवां धरमनाथ वान्दसांजी,
जिनजी सोलवां शान्तिनाथ देव – पक्खी०

५. जिनजी सतरवां कुंथुनाथ वान्दसांजी,
जिनजी अठारवां अरनाथ देव ।
जिनजी उगरणीसवां मल्लिनाथ वान्दसांजी,
जिनजी वीसवां मुनिसुव्रत देव – पक्खी०

६. जिनजी इक्कीसवां नमिनाथ वान्दसांजी,
जिनजी वावीसवां अरिष्टनेमी देव ।

जिनजी तेइसवां पारसनाथ वान्दसांजी,
जिनजी चोविसवां महावीर देव – पक्खी०

७. जिनजी इग्यारा ही गणधर वान्दसांजी,
जिनजी वीस विहरमान देव।
जिनजी अनन्त चौवीसी ने वान्दसांजी,
जिनजी तीरण तारण गुरुदेव – पक्खी०

(६६)

१. श्री आदि जिनंदं, समरस कंदं, अजित जिनंदं, भज प्राणी।
संभव जग त्राता, शिव मग दाता, दो सुख साता हित आणी ॥

२. अभिनन्दन देवा, सुमति सु सेवा, करो नित मेवा, रिपुघाता।
चौविस जिनराया मन वच काया, प्रणमुं पाया दो साता ॥

३. श्री पद्म सुपासं, ससिगुण रासं, सुविधि सुवासं, हितकारी,
श्री शीतल स्वामी, अंतरयामी, शिवगति गामी, उपकारी।

४. श्रेयांस दयाला, परम कृपाला, भविजन व्हाला, जगत्राता ॥
वासुपूज्य सुखदं, विमल अनन्तं धर्म श्री शांति सुखकारी,

५. कुन्थु अरनाथ, तज जग साथं, मल्लि सुवास जगधारी।
मुनि सुव्रत सुनमि आत्मा ने दमी, दुर्मति नें वमी दुखहर्ता ॥

६. रिष्ट नेमी वड़ाई, नार न व्याही, तोरण जाइ छिटकाई,
नाग नागिन तांई दिया वचाई, पारस सांई सुखदाई।

७. जय जय वर्द्धमान गुण निधि खानं त्रिजग भानं शुद्ध ज्ञाता।
संसार का फंदा दूर निकंदा, धर्म का छंदा, जिन लीना ॥

८. प्रभु केवल पाया, धर्म सुनाया, भवि समझाया, मुनि कीना।
कहे रिख तिलोकं सदा तस धोकं, दो सुख थोकं चित चाया ॥

(६७)

१. श्री ऋषभ, अजित, संभव, अभिनंदन ।
सुमति, पदम, सुपारस, मन-रंजन ।
चंद्र प्रभूजी ने सेवो ।
सुविधिनाथ, शीतल, गुण गाऊं ।
श्री श्रेयांस, वासपूज्य, जी ने ध्याऊं ।
विमल, सुनिर्मल देवो ॥

२. अनंत, धरम, श्री शान्ति जिनेश्वर ।
कुंथुनाथ अति ही अलवेसर ।
वंदू श्री अर नाथो ।
मल्लीनाथ मुनिसुव्रत, स्वामी ।
नमि, नेमी, पारस, हितकामी ।
मिलियो मुगति नो साथो ॥

३. चौवीसवां श्री वीर जिनेश्वर ।
पर उपगारी प्रभु श्री परमेश्वर ।
पहुँता पद निर वाणी ।
ए चौवीसां रा नित गुण गावे ।
दुख दारिद्र ज्यांरा दूर पलावे ।
वरते क्रोड़ कल्याण ॥

४. पुण्य जोगे मानव भव लाधो ।
चौवीसे जिनवरजी आराधो ।
लावो लेवोजी तुम लेवो ।
ए चौवीस भजो सिर नामी ।
मोटा प्रभु साहिव अंतर्यामी ।
श्री मुक्ति तणां दातारो ॥

(६८)

श्री जिन मुझ ने पार उतारो, प्रभु मैं चाकर चरणांरो ।
श्री जिन मुझ ने पार उतारो ।।टेर।।

१. ऋषभ अजित संभव अभिनंदन, तार्या है जीव अपारो ।
सुमत पद्म सुपार्श्व चंदा प्रभु मेट्या विषय विकारो – श्रीजिन०

२. सुविधि शीतल श्रेयांस वासुपूज्य मुक्ति तणा दातारो ।
विमल अनंत धर्मनाथ शांति जिन, साता करी संसारो – श्रीजिन०

३. कुंथु अरह मल्लि मुनिसुव्रतजी निरंजन निराकारो ।
नमीये नेम पारस महावीरजी शासन का सिरदारो – श्रीजिन०

४. इग्यारे गणधर वीस विहरमान, सब साधु अणगारो ।
अनंत चौवीसी को नित उठ बन्दुं, कर गया खेवा पारो – श्रीजिन०

५. राग द्वेष दोय बीज वाली ने, अशुभ कर्म किया छारो ।
केवल ज्ञान ने केवल दर्शन, निज गुण लिया लारो – श्रीजिन०

६. तरण तारण तुम विरद सुणी ने, सरणो लियो चरणां रो ।
रिख लालचंदजी इण पर विनवे मारो करो निस्तारो – श्रीजिन०

(६९)

गुण गाऊँ गौतम तणां, लब्धितणां भण्डार ।
बड़ा शिष्य भगवन्तना, जाणे सहु संसार ।।

प्रति बूझ्या प्रभुजी कने, गणधर गौतम स्वाम ।
संजम पाली सिद्ध हुआ, लीजे निश दिन नाम ।।

१. तीरथनाथ त्रिभुवन धणी,
प्रभु शासणना सिरदार !
भक्ति कियाँ भगवन्त नी,
जाके वांछित फल दातार जी !

सुमर्‍यां होय सकल सुखकार जी,
नित वरते जय जयकार जी !
प्रभु पहुँच्या मुक्ति मँझार जी,
प्रभु थाप्या तीरथ चार जी !
चारों संघ मांहि सिरदार जी,
गौतम नाम वड़ा गणधार जी !
जाने होज्यो म्हारो नमस्कार जी,
हिवड़ा बिच बार हजार जी !
श्री गौतम स्वामी में गुण घणा ।

२. शीलमां सोना सारखा जी,
अति सुन्दर वर्ण शरीर !
कंचन कसौटी चढ़ावियो,
भगवती में कह्यो महावीर जी !
जांने दीठा हर्षित हीर जी,
स्वामी सायर जिम गंभीर जी !
बली खम दम संजम धीर जी,
जांरी वाणी मीठी खांड खीर जी !
मीठी क्षीर समुद्र ज्यूँ नीर जी,
छह काय जीवांरा पीर जी !
हुआ वीर तणां वजीर जी,
श्री गौतम स्वामी में गुण घणा !

३. गौरा ने घणा फूटरा जी,
कंचन कोमल गात !
देही जांरी दिपुं दिपुं करे,
देवता पिण कितरीक बात जी !
रोगरहित काया सात हाथ जी,
घणा रह्या गुरां जी रे साथ जी !

सेवा कीधी दिन ने रात जी,
पूछा कीधी जोड़ी दोनों हाथ जी !
जांरी कहूँ कठालग वात जी;
जांरे वीर दियो माथे हाथ जी !
हुआ तीन भुवनरा नाथ जी,
श्री गौतम स्वामी में गुण घणा !

४. प्रथम संघयण संठाणसुं जी,
गुण—गहिरा भरपूर !
ब्रह्मचर्य में वस रह्या,
बलि तपस्या घोर करूर जी !
कायर कांपी जावे दूर जी,
दीपे तपस्या में अतिशूर जी !
आठों कर्म किया चकचूर जी,
जांरो चोखो घणो छै नूर जी !
जांरो भजन कियां दुख दूर जी,
म्हारी वन्दना उगंते सूर जी !
श्री गौतम स्वामी में गुण घणा !

५. अभिग्रह कीधो आकरो जी,
सूत्र भगवती रे माँय !
चार ज्ञान चवदे पूर्व धणी,
बलि तेजु लेश्या पिण्ड माँय जी !
दपटी राखी छै मन मांय जी
दीनों ध्यानसुं चित्त लगाय जी !
उकडू बैठा शीस नमाय जी,
जांरी करणी में कमीय न काय जी !

जांरो भजन कियां सुख थाय जी,
श्री गौतम स्वामी में गुण घणा !

६. पूछा जद कीधी घणी जी,
आणी मन आनन्द !
श्रद्धा में संशय नहीं ऊपनों,
ऊपनो केवल उछरंग जी !
वांदे श्री वीर जिनन्द जी,
पूछिया देश प्रदेशनां स्कन्ध जी !
अनन्त ज्ञानी त्रिशला ना नन्द जी,
सूत्र मेल दिया संधो संध जी !
जांने नमे सुरनर वृन्द जी,
तारा बीच विराजे चन्द जी !
श्री गौतम स्वामी में गुण घणा !

७. सूत्र भगवती में पूछिया जी,
प्रश्न छत्तीस हजार !
अंग उपांग में पूछिया जी,
पूछा कीधी पहले पोर जी !
तीरथनाथ किया निस्तार जी,
गौतम लिया हिरदा में धार जी !
जांरी बुद्धि रो नहीं छै पार जी,
स्वामी ज्ञानतणां भण्डार जी !
घणां जीवां पै कियो उपकार जी,
उण पुरुषांरी जाऊँ वलिहार जी !
श्री गौतम स्वामी में गुण घणा !

८. एक दिन गौतम मन चितवे जी,
मने क्यों न उपजे केवलज्ञान !

खेद पाम्या प्रभु देखने,
बुलाया श्री वर्द्धमान जी !
मनवांछित देवे ज्ञान जी,
गौतम सन्मुख ऊभा आन जी !
वीर दियो आदर सन्मान जी,
गौतम गुण रत्नों की खान जी !
चित्त निर्मल राखो ध्यान जी,
तजो मोह मत्सर अभिमान जी !
छह काया ने दो अभय-दान जी,
श्री गौतम स्वामी में गुण घणा !

९. थांरे ने म्हारे गोयमा रे,
घणा काल नी प्रीत !
आगे ही आपाँ भेला रया,
वलि लोहड बड़ाई नी रीत जी !
मोह कर्म ने लीजो थें जीत जी,
केवल आड़ी आई छै भींत जी !
थें तो शिष्य वड़ा सुविनीत जी,
थें तो राख जो रूड़ी रीत जी !
थें तो पाल जो पूरी प्रीत जी,
राखो मोक्ष जावण में चित्त जी !
श्री गौतम स्वामी में गुण घणा !

१०. अव के अणी भव आंतरे,
आपां दोनूं बरावर होय !
अजर अमर सुख सासता,
जठे जन्म मरण नहीं होय जी !
भूख तृषा न लागे कोय जी,
गुरु मोटा मिलिया मोय जी !

म्हारे कमी रही नहीं कोय जी,
वीर ने सामो रह्या छे जोय जी !
दीठा हर्षित हिवड़ो होय जी,
मोहिनी कर्म ने दीधो खोय जी !
श्री गौतम स्वामी में गुण घणा !

११. वीर वचन प्रभु सांभली जी,
कीधो कर्मां सूं जंग !
करणी कीधी निर्मली,
शिष्य वीरतणां सुविनीत जी !
हुआ ब्राह्मण केरा पूत जी,
छोड़ी नातीलां सुं प्रीत जी !
जांरे वीर वचन आया चित्त जी,
तज दीनी खोटी रीत जी !
जांरे आई सांची प्रीत जी,
जोड़ी जुगत मुक्ति सुं प्रीत जी !
तपसी मोटा काकड़ाभूत जी,
प्रभु गया जमारो जीत जी !
धर्मध्यानी जीवांरा मीत जी,
श्री गौतम स्वामी में गुण घणा !

१२. ज्ञान, दर्शन, चारित्र भणी जी,
पाले निर – अतिचार !
वेले बेले पारणा प्रभु,
जीत्यां राग ने रीस जी !
जांरी करणी विसवावीस जी,
जांरो भजन कियां निशदीस जी !

पूरे मननी सकल जगीस जी,
जांने नमाऊँ म्हारो शीस जी !
श्री गौतम स्वामी में गुण घणा !

१३. स्वयं मुख वीर वखाणिया जी,
गौतम ने तिण वार !
चर्चावादी तूं अति घणो,
हेतु युक्ति अनेक प्रकार जी !
पाखण्डियां रो जीतण हार जी,
बीजा साधु सहू थारी लार जी !
सांभली हिवड़े हर्ष अपार जी,
तीरथनाथ निकाल दियो तार जी !
श्री गौतम स्वामी में गुण घणा !

१४. संसार समुद्र जाणने जी,
मोह कर्म कियो छार !
अनित्य भावना भायने,
पांयो केवल दर्शन सार जी !
गौतम स्वामी बड़ा गणधार जी,
आप तिरचा घणा दिया तार जी !
जांने वन्दना वारम्वार जी,
जाँरो नाम लियां निस्तार जी !
जपतां होवे खेवो पार जी,
श्री गौतम स्वामी में गुण घणा !
१५. कातिक वदी अमावस्या जी
मुक्ति गया वर्धमान !

गौतम स्वामी ने ऊपज्यो तव,
निर्मल केवल ज्ञान जी !
धर्म दिपायो नगर पुर ठाम जी,
सिद्ध कीधा आतम-काज जी !
पाया सुख अक्षय अभिराम जी,
स्वामी पहुँचा शिवपुर ठाम जी !
वारम्वार करूँ गुणग्राम जी,
धन-धन श्री गौतम स्वाम जी !
श्री गौतम स्वामी में गुण घणा !

१६. पूज्य जयमलजी परसाद से जी,
कीधो ज्ञान अभ्यास !
संवत अठारे चौंतीस में,
नवमी सुदि भादव मास जी !
गौतमजी नो कीधो रास जी,
सुणज्यो सहु चित्त उल्लास जी !
पावो नित नव लील विलास जी,
शहर बीकानेर चौमास जी !
ऋषि रायचन्द कियो परकास जी,
श्री गौतम स्वामी में गुण घणा !

---

(७०)

श्री महावीर पहोंत्या निर्वाण, गौतम स्वामीए वातज जाणी।

१. गुरांजी तुम मंने गोड़े न राख्यो – ए आंकड़ी०
मुगति जावणारो नाम न दाख्यो – गुरांजी०

२. हुँ सगला पहेला हुवो थारो चेलो,
इण अवसर आगो किम मेल्यो – गुरांजी०

३. प्रभु तुम चरणे म्हारो चित्त लाग्यो,
पर तुम मंने मेल दियो आगो – गुरांजी०

४. मंने दर्शन आपको लागतो प्यारो,
आप पहोंत्या निर्वाण मुझे मेल दियो न्यारो – गुरांजी०

५. आपे तो मुझ से अंतर राख्यो,
पिण मैं म्हारा मनरो दर्द न दाख्यो – गुरांजी०

६. हुँ आडो मांडीने न झालत पल्लो,
पण साहिव काम कियो तुम भल्लो – गुरांजी०

७. हुँ आपने अंतराय न देतो,
मुगति में जग्या व्हेंची न लेतो – गुरांजी०

८. हुँ संकड़ाइ न करतो कांइ,
आप साथे हुँ मोक्ष आई – गुरांजी०

९. अव हूँ पृच्छा करशूं किण आगे,
प्रभु म्हारो मन एक थांशुंज लागे – गुरांजी०

१०. म्हारो शंको कहो कूण टाले,
आप विना पाखंडीना मद कूण गाले – गुरांजी०

११. हुं तो चौदह पूरवने चौनाणी,
पिण मोहनीय कर्मे लपेट्यो आणी – गुरांजी०

१२. इसो गौतम स्वामीये कियो विलपात,
ए मोहनीय कर्मनी अचरज बात – गुरांजी०

१३. हवे मोहनीय कर्म दूर टाली,
गौतम स्वामीए सूरत संभाली ॥

१४. वीतराग राग – द्वेषसुं वीत्या,
म्हारा चित्तमां आई गई चिंता – वीतराग०

१५. तिणि वेला निर्मल ध्यानज ध्यायो,
केवल ज्ञान गौतम स्वामीए पायो – वीतराग०

१६. बारह बरस रह्या केवलज्ञानी,
वात ज्यांशूं कांइ रही न छानी – वीतराग०

१७. गौतमे पण कियो मुगति में वासो,
संसारनो सर्व देखे तमासो – वीतराग०

१८. जेणि राते मुगति गया वर्द्धमान,
इन्द्रभूति ने उपज्युं केवल ज्ञान – वीतराग०

१९. तिन दिन थी ए वाजी दिवाली,
म्होटो दिन ए मंगल माली – वीतराग०

२०. रात दिवालीनी शीयल तुम पालो,
वली, रात्रि भोजन करवो टालो – वीतराग०

२१. ऋषि रायचन्द्र कहे सुणो हो सुज्ञानी,
दयारूप दिवाली थें लीजो मानी – वीतराग०

२२. श्री शासन नायक मुगति दायक, दया मारग उजुवालियो ।
श्री गौतम स्वामी मुगति गामी, कियो चित वल्लभ चौढालियो ।

२३. संवत् अठारे गुणचालीशे, नागौर चौमासो निर्मल मने ।
पूज्य जैमलजी प्रसादे, संपूर्ण कियो दीवाली दिने ॥

---

(७१)

मंगल वरते जी, मंगल वरते जी,
म्हारे गौतम गणधर, मन में वसते जी ।।टेर।।

१. धन्ना शालिभद्र की ऋद्धि, और अष्ट महासिद्धि जी ।
गौतम नामे प्रगटे म्हारे, नव विध निधि जी – मंगल०

२. लब्धि का भण्डार ज्ञान के, गौतम हैं आगारो जी ।
आप नाम म्हारे सब सुख, वरते मंगलाचारो जी – मंगल०

३. आप नाम अति आनंदकारी, चिन्ता दुख सब भाजे जी ।
सुख संपद् का मंगल वाजा, मुझ घर वाजे जी – मंगल०

४. नाम कल्पतरु म्हारे आँगन, दारिद्दर भग जावे जी ।
मनवाँछित म्हारे ऋद्धि संपदा, घर में आवे जी – मंगल०

५. अमृत कुंभ मैं पाया चिंतामणि,दुःख गया सब भागी जी ।
अमृतसम मीठे गौतम तुम, मनशा लागी जी – मंगल०

६. मन कमल तुम नाम हंस है, वैठा अति सुखकारे जी ।
हर्षित प्राण हुए सब मेरे, अपरंपारे जी – मंगल०

७. किसी वात की कमी न मेरे, गौतम गणधर पाया जी ।
तीन लोक की लक्ष्मी मुझ घर, वास वसाया जी – मंगल०

८. संवत् उगणीसे साल सितंतर, शहर सितारे आया जी ।
घासीलाल ने सप्तमी श्रावण, गुरु शुभ पाया जी – मंगल०

(७२)

१. वीर जिनेश्वर-केरो शीस, गौतम नाम जपो निश दीस ।
जो कीजे गौतमनो ध्यान, ते घर विलसे नवे निधान ।।

२. गौतम-नामे गजवर चढ़े, मनवंछित हेला साँपड़े ।
गौतम नामे नावे रोग, गौतम नामे सर्व संयोग ।।

३. जे वैरी विरुग्रा बंकड़ा, तस नामे नावे ढुंकड़ा ।
भूत प्रेत नवि मंडे प्राण, ते गौतमना करूं बखाण ।।

४. गौतम नामे निर्मल काय, गौतम नामे बाढ़े ग्राय ।
गौतम जिन शासन-सिणगार, गौतम नामे जय जयकार ।।

५. शाल दाल गोरस घृत गोल, मन वंछित कापड़ तंबोल ।
घरे सुघरणी निर्मल चित्त, गौतम नामे पुत्र विनीत ।।

६. गौतम ऊग्यो अविचल भाण, गौतम नाम जपो जग-जाण ।
म्होटा मन्दिर मेरु-समान, गौतम नामे सफल विहान ।।

७. घर मयंगल घोड़ानी जोड़, वारू पहुँचे वंछित कोड़ ।
महियल माने म्होटा राय, जो तूठे गौतमना पाय ।।

८. गौतम प्रणम्या पातक टले, उत्तम नरनी संगति मिले ।
गौतम नामे निर्मल ज्ञान, गौतम नामे वाधे मान ।।

९. पुण्यवंत ग्रवधारो सहू, गुरु गौतम ना गुण छै बहू ।
कहे लावण्यसमय कर जोड़, गौतम तूठे संपत्ति कोड़ ।।

(७३)

१. श्री इन्द्रभूतिजी का लीजे नाम, तो मन वांछित सीझै काम।
मोटा लब्धि तणा भण्डार, वन्दूं इग्यारह गणधार॥
२. अग्निभूति गौतमजी का भाई, वीरजी ने दीठा समता आई।
ऋद्धि त्याग लियो संजम भार–वन्दूं इग्यारह गणधार॥
३. वायुभूति मोटा मुनिराय, ये तीनों ही सगा भाय।
पांच पांच सौ निकल्या लार–वन्दूं इग्यारह गणधार॥
४. विगतस्वामीजी चौथा जाण–भजन कियां मिले अमर विमाण।
देवलोके सुख रा झणकार–वन्दूं इग्यारह गणधार॥
५. स्वामी सुधर्मा वीरजी रे पाट–जन्म मरण सेवक ना काट।
मुझ ने आप तणो आधार–वन्दूं इग्यारह गणधार॥
६. मंडिपुत्र ने मोरिपुत्र–मुक्ति जावण रो कर दियो सूत।
त्रिविधे त्याग्या पाप अठार–वन्दूं इग्यारह गणधार॥
७. अकम्पित ने अचलभ्रात–वीरजी रे वचने रह्या ज रात।
चवदह पूरब ना भण्डार–वन्दूं इग्यारह गणधार॥
८. मेतारज ने श्री प्रभास–मोक्षनगर में कर दियो वास।
जपता होवे जय जयकार–वन्दूं इग्यारह गणधार॥
९. ये इग्यारह उत्तम जात–चम्मालीस सौ निकल्या साथ।
ज्यां कर दीनो खेवो पार–वन्दूं इग्यारह गणधार॥
१०. इण नामें सहू आशा फले, दोषी दुश्मन दूरा टले।
ऋद्धि वृद्धि पामे सुखसार–वन्दूं इग्यारह गणधार॥
११. इण नामे सब नाशे पाप, नित रो जपिये भविजन जाप।
चित्त चोखा हृदय में धार वन्दूं इग्यारह गणधार॥
१२. संवत् अठारह(सौ)तियालिस जाण-पूज्य जयमलजी री अमृतवाण
चौमासे स्तवन कियो पीपाड़-वन्दूं इग्यारह गणधार॥
१३. अषाढ़ सुदि सातम रे दिन-गणधरजी ने गाया इकमन।
आशकरणजी भणे अणगार वन्दूं इग्यारह गणधार॥

(७४)

१. श्री गौतमस्वामी पृच्छा करे, विनय करी सीस नमाय प्रभुजी ।
अविचल थानक मैं सुण्यो, कृपाकरी मोय बताव, प्रभुजी ।।
प्रभुजी ! शिवपुर नगर सुहामणो ।।टेर।।

२. आठ करम अलगा करी, सार्या आतमकाज प्रभुजी !
छुटचा संसार ना दुःख थकी, तेहने रहेवानुं किहां ठाम – शिव०

३. वीर कहे ऊर्ध्वलोकमां, सिद्धशिला तणु ठाम हो गौतम !
स्वर्ग छव्वीस नी ऊपरे, तेहना सारूं नाम हो गौतम – शिव०

४. लाख पेंतालीस योजने, लांबी शिला जाण हो गौतम !
आठ योजन जाड़ी बीचे, छेड़े माखी पांख समान हो – शिव०

५. उज्ज्वल हार मोतीतणो, गो-दूध शंख वखाण हो गौतम !
तिणसुं अधिकी उजली, उलट छत्र संठाण हो – शिव०

६. अर्जुन स्वर्ण सम दीपंती, घटारी मठारी जाण हो गौतम !
स्फटिक रतन थकी निर्मली, सुंवाली अत्यंत वखाण हो – शिव०

७. सिद्धशिला उलंघी गया, अधर रया सिद्धराज हो गौतम !
अलोकसुं जाइ अडचा, सार्या आतम काज हो – शिव०

८. जनम नहीं मरण नहीं, नहीं जरा नहीं रोग हो गौतम !
वैरी नहीं मित्र नहीं, नहीं संजोग वियोग हो – शि०

९. भूख नहीं तिरषा नहीं, नहीं हर्ष नहीं शोक हो गौतम !
कर्म नहीं काया नहीं, नहीं विषयारस भोग हो – शिव०

१०. शब्द रूप रस गंध नहीं, नहीं फरस नहीं वेद हो गौतम !
बोले नहीं चाले नहीं, मौन पण नहीं खेद हो – शिव०

११. गाम नहीं नगर नहीं, नहीं बसती न उजाड़ हो गौतम !
काल सुकाल वरते नहीं, न रात दिवस तिथि वार हो – शिव०

१२. राजा नहीं प्रजा नहीं, नहीं ठाकुर नहीं दास हो गौतम !
मुक्ति में गुरु चेला नहीं, नहीं लोड़ बड़ाई तास हो – शिव०

१३. अनन्त सुखां में रमी रह्या, अरूपी ज्योत प्रकाश हो गौतम !
सघलां रा सुख सारिखा, सघलां रा अविचल वास हो – शिव०

१४. अनन्ता सिद्ध मुगती गया, वलि अनन्ता जाय हो गौतम !
अवर जग्या रुंधे नहीं, ज्योत में ज्योत समाय हो – शिव०

१५. केवलज्ञान सहित छे, केवलदर्शन खास हो गौतम !
क्षायिक समकित दीपतुं, कदी न होय उदास हो – शिव०

१६. सिद्ध स्वरूप जे ओलखे, आणी मन वैराग्य हो गौतम !
शिव सुन्दर वेगे, वरे 'नय' कहे सुख अथाग हो – शिव०

(७५)

१. आदिनाथ आदि जिनवर वंदी, सफल मनोरथ कीजिए ।
प्रभाते उठी मंगलिक कामे, सोलह सतियों ना नाम लीजिये ।।

२. बालकुमारी जगहितकारी, ब्राह्मी भरतनी बेनड़ीए ।
घट घट व्यापक अक्षर रूपे, सोलह सतिमां जे वडीए ।।

३. बाहुबल भगिनी सती शिरोमणि, सुंदरी नाम ऋषभ सुताए ।
अंक स्वरूपी त्रिभुवन मांहे, जेह अनुपम गुण जुताए ।।

४. चंदनबाला बालपने सूं शीयलवंती शुद्ध श्राविकाए ।
उडद बाकुला वीर प्रतिलाभ्या, केवल लही व्रत भाविकाए ।।

५. उग्रसेन धूया धारिणी नंदिनी, राजेमती नेम वल्लभाए ।
जोबन वेशे काम नें जीत्या, संजम लइ देव दुल्लभाए ।।

६. पंच-भरतारी पाँडव नारी, द्रुपद तनया वखाणीए ।
एकसौ आठे चीर पुराणा, शीयल महिमा तस जाणिए ।।

७. दशरथ नृप नी नारी निरुपम, कौशल्या कुल चन्द्रिकाए ।
शीयल सलुणी राम जनेता, पुन्य तणी प्रणालीकाए ।।

८. कोसंविक ठामें संतानिक नामें, राज्य करे रंग राजियोए ।
तस घर घरणी मृगावती सती, सुर भुवने जश गावीयोए ।।

९. सुलशा सांची शीयले न कांची, राची नहीं विषया रसेए ।
मुखडुं जोतां पाप पलाए, नाम लेतां मन उल्लसेए ।।

१०. राम रघुवंशी तेहनी कामिनी, जनकसुता सीता सतीए ।
जग सहु जाणे धीजकरंता, अनल शीतल थयो शीयलथीए ।।

११. सुर नर वंदित शीयल अखंडित, शिवा शिव पद गामिणीए ।
जपते नामे निर्मल थइए, वलिहारी तस नामनीए ।।

१२. काचे तांतणे चालणी बांधी, कूप थकी जल काढीयुंए ।
कलंक उतारवा सतीय सुभद्रा, चंपा द्वार उघाडीयुंए ।।

१३. हस्तिनापुरे पांडु राय की, कुंती नामे कामिनीए ।
पांडव माता दसे दशार्हनी व्हेन, पतिव्रता पद्मिनीए ।।

१४. शीलवती नामे शीलव्रतधारिणी, त्रिविधे तेहने वंदीयेए ।
नाम जपंता पातक जाए, दरीसणे दुरित नीकंदीए ।।

१५. निषधा नगरी नल नरींदनी, दमयंती तस गेहिनीए ।
संकट पड़तां शीयलज राख्युं, त्रिभुवन कीरति जेहनीए ।।

१६. अनंग अजीता जग जन पुजीता, पुष्पचुला ने प्रभावतीए ।
विश्वविख्याता कामीत दाता, सोलमी सती पद्मावतीए ।।

१७. वीरे भांखी शास्त्रे साखी, उदय रतन भाखे मुदाए ।
व्हाणुं वातां जे नर भणशे, ते लेशे सुख संपदाए ।।

(७६)

१. शीतल जिनवर करूं प्रणाम, सोलह सतीरा लेसूं नाम ।
ब्राह्मी चन्दना राजमती, द्रौपदी कौशल्या मृगावती ।।

२. सुलसा सीता सुभद्रा जाण, शिवा कुन्ती शीलगुण खाण ।
नल-घरणी दमयंती सती, चेलना प्रभावती पद्मावती ।।

३. शील तणे सुहावे सिरी, ऋषभ देवनी धिया सुन्दरी ।
सोलह सतियां शील गुणभरी, भवियण प्रणमो भावे करी ।।

४. ये सुमरियां सब संकट टलें, मनचिन्तित मनोरथ फलें ।
इण नामे सब सीझे काज, लहिये मुक्ति पुरी नो राज ।।

५. भूत प्रेत इण नामे टले, ऋद्धि सिद्धि घर आई मिले ।
इण नामे सहू होय जगीश, ये सतियां सुमरो निश दीश ।।

(७७)

१. वांछित पूरे विविध परे, श्री जिन शासन सार ।
निश्चय श्री नवकार नित, जपतां जय जय कार ।।

२. अड़सठ अक्षर अधिक फल, नवपद नवे निधान ।
वीतराग स्वयं मुख वदे, पंच परमेष्ठि प्रधान ।।

३. एकज अक्षर एकज चित्ते, सुमर्यां संपत्ति थाय ।
संचित सागर सातना, पातक दूर पलाय ।।

४. सकल मंत्र शिर मुकुट मणि, सद्गुरु भाषित सार ।
भवियां मन शुद्ध से जपिये नवकार ।।

---

(७८)

१. नवकार थकी श्रीपाल नरेश्वर, पाम्यो राज्य प्रसिद्ध ।
समशान विषे शिव नाम कुमरने, सोवन पुरिसो सिद्ध ।।

२. नव लाख जपतां नरक निवारे, पामे भवनो पार ।
सो भवियां भंते, चोखे चित्ते, नित जपिए नवकार ।।

३. वांधी वड़ शाखा शिके बेसी, हेठल कुंड हुताश ।
तस्करने मंत्र समर्प्यो श्रावके ऊड्यो ते आकाश ।।

४. विधि रीते जप्यो विषधर, विष टाले डाले अमृतधार ।
बीजोरा कारण राय महावल, व्यंतर दुष्ट विरोध ।।

५. जेणे नवकारे हत्या टाली, पाम्यो जक्ष प्रतिबोध ।
नवलाख जपतां थाये, जिनवर ऐसा है अधिकार ।।

६. पल्लीपति सीख्यो मुनिवर पासे, महामन्त्र मन शुद्ध ।
परभव ते राजसिंह पृथ्वीपति, पाम्यो परीगल ऋद्ध ।।

७. ए मंत्र थकी अमरापुर पहोंच्यो, चारुदत्त सुविचार ।
संन्यासी काशी तप साधतो, पंचाग्नि परजाल ।।

८. दीठो श्री पास कुमारे पन्नग, अधवलतो ते टाल ।
संभलाव्यो श्री नवकार स्वयं मुख, इन्द्र भुवन अवतार ।।

९. मन शुद्धे, जपतां मयणासुँदरी, पामी प्रिय संयोग ।
इण ध्याने कष्ट टल्युँ उंबरनुं, रक्त पित्तनो रोग ।।

१०. निश्चय शुं जपतां नवनिधि थाये, धर्मतणो आधार ।
घट मांहि कृष्ण भुजंगम घाल्यो, धरणी करवा घात ।।

११. परमेष्ठि प्रभावे हार फूलनो, वसुधा मांहि विख्यात ।
कमलावतीये पिंगल कीधो, पाप तणा परिहार ।।

१२. गयणागण जाती राखी ग्रहीने, पाड़ी वाण प्रहार।
पद पंच सुणतां पांडुपति घर, ते थई कुंता नार॥

१३. ए मंत्र अमोलक महिमा मंदिर, भव दुःख भंजनहार।
कंवल ने संवल कादव काढ्यां, संकट पांचशे मान॥

१४. दीधो नवकार गया देवलोके, विलसे अमर विमान।
ए मंत्र थकी संपति वसुधा तले, विलसे जैन विहार॥

१५. आगे चौवीशी हुई अनन्ती, होशे वार अनन्त।
नवकार तणी कोई आदि न जाणे, इम भाखे अरिहंत॥

१६. पूरव दिशि चारे आदि प्रपंचे, समर्या संपति सार।
परमेष्ठि सुरपद ते पण पामे, जे कृत कर्म कठोर॥

१७. पुँडरगिरि ऊपर प्रत्यक्ष पेख्यो, मणिधर ने इक मोर।
सद्गुरु ने सन्मुख विधि समरंतां, सफल जनम संसार॥

१८. शूलीकारो पण तस्कर कीधो, लोह खरो परसिद्ध।
तिहां सेठे नवकार सुणाव्यो, पाम्यो अमरनी ऋद्ध॥

१९. सेठ ने घर आवी विघ्न निवार्या, सूरे करी मनोहार।
पंच परमेष्ठि ज्ञानज पंचह, पंचदान चरित्र॥

२०. पंच सज्झाय महाव्रत पंच, पंच सुमति समकीत।
पंच प्रमाद विषय तजो पंच, पालो पंचाचार॥

२१. नित जपियो नवकार, सार संपति सुखदायक।
शुद्ध मंत्र ए शाश्वतो, इम जंपे श्री जगनायक॥

२२. श्री अरिहंत सुसिद्ध, शुद्ध आचार्य भणीजे।
श्री उवझाय सुसाधु, पंच परमेष्ठि थुणीजे॥

२३. नवकार सार संसार में, कुशल लाभ वाचक कहे।
एक चित्ते आराधतां, विविध ऋद्धि वांछित लहे॥

(७६)

सुवह और शाम की, प्रभूजी के नाम की, फेरो इक माला ।।टेर।।

१. सकल सार नवकार मंत्र यह परमेष्ठी की माला,
नर्कादिक दुर्गति का सचमुच जड़ देती है ताला।
कर्मों का जाला, मिटे तत्काला – फेरो०

२. सुदर्शन और सीता ने जव फेरी थी यह माला,
शूली भी सिंहासन हो गई, शीतल हो गई ज्वाला।
धर्म का प्याला, पीयो प्यारे लाला – फेरो०

३. सुमिरण कर सोमा ने भी, नाग उठाया काला,
महा भयंकर विषधर था वो वनी फूल की माला।
शील जिसने पाला, सच्चा है रखवाला – फेरो०

४. द्रौपदी का चीर बढ़ाया, दुःशासन मद गाला,
मैनासुन्दरी श्रीपाल का जीवन वना विशाला।
सुभद्राजी महिला, चम्पा द्वार खोला – फेरो०

५. वालकुमारी राजदुलारी, देखो चंदनबाला,
दुख भंयकर पाई फिर भी, शिर मुंडा था मूला।
तपस्या का तेला, सब दुःख झेला – फेरो०

६. विक्रम संवत् दो हजार ये वारह का तुम जानो,
वाला घाट में चौमासा है, वड़ा ठाठ का मानो ।।
गावो गुण भोला हरि ऋषी बोला – फेरो०

(८०)

१. दयामय होवे मंगलाचार, दयामय होवे बेड़ा पार।
करें विनय हिल-मिल कर सब ही, हो जीवन उद्धार – टेर०

२. देव निरंजन ग्रंथहीन गुरु, धर्म दयामय धार।
तीन तत्व आराधन में मन, पावे शान्ति अपार – दयामय०

३. नर भव सफल करण हित हम सब, करें शुद्ध आचार।
पावें पूर्ण सफलता इसमें, ऐसा हो उपकार – दयामय०

४. ज्ञान धर्म में रमे रहें हम, उज्ज्वल हो व्यवहार।
तन धन अर्पण करें हर्ष से, नहीं हो शिथिल विचार – दयामय०

५. दिन दिन बढ़े भावना सब की, घटे अविद्या भार।
यही कामना 'गजमुनि' की हो, तुम्हीं एक आधार – दयामय०

(८१)

हमारी वीर हरो भव पीर।

१. मैं दुख-तपित दयामृत सर सम, लख आयो तुम तीर।
तुम परमेश मोख मग-दर्शक, मोह दावानल-नीर॥

२. तुम विन हेतु जगत-उपकारी, शुद्ध चिदानन्द धीर।
गणपति-ज्ञान समुद्र न लंघै, तुम गुणसिन्धु गंभीर॥

३. याद नहीं मैं विपति सही जो, धर-धर अमित शरीर।
तुम गुण चितत नशत तम भय, ज्यों घन चलत समीर॥

४. कोटि वार की अरज यही है, मैं दुख सहूँ अधीर।
हरहु वेदना-फन्द 'दौल' को, कतर कर्म-जंजीर॥

(८२)

१. श्री जिनेश्वर देव की दृढ़ भक्ति मेरे पास हो।
जिन प्ररूपित तत्व पर, मेरा अटल विश्वास हो ॥

२. त्याग मय जीवन वनाया त्याग कर संसार को।
ऐसे गुरुओं की चरण सेवा का नित अभ्यास हो ॥

३. मद्य मांस शिकार जुवा, चोरी पर नारी विषय।
स्वप्न में भी इनके सेवन की नहीं अभिलाष हो ॥

४. सत्य सेवा तप क्षमा, संतोष उच्च विचार हो।
व्याप्त इस जीवन के उपवन में सदैव सुवास हो ॥

५. धर्ममय आजीविका हो मधुरतम व्यवहार हो।
आचरण की शुद्धता से, पूर्ण आत्म विकास हो ॥

६. वीतरागों का बताया मार्ग ही सन्मार्ग हो।
इसपे चलने में लगा प्रत्येक श्वासोच्छ्वास हो ॥

(८३)

प्रभुजी ! नांव भंवर में अटकी, मैं आया चौरासी में भटकी ।टेर।

१. काम क्रोध मद मत्सर वैरी भव भव में हम पटकी,
अष्ट कर्म की फौज जोरावर, हम पर वहु विध कटकी – प्र०

२. पापों से निर्ग्रन्थ वचावे, दे दे ज्ञान की गुटकी,
देव गुरु शुद्ध धर्म अराधो, मिथ्यात्व मन खटकी – प्र०

३. पाप भरी पहले की मटकी, तुम शक्ति से झटकी,
देश जाति अरु धर्म अवनति, निश दिन हिय में खटकी – प्र०

४. देव धर्म भक्ति में मुझ मन, गावे नाचे दे दे चुटकी,
'जसवन्त' जग आनन्दित होवे, रहे सव पापों से हटकी – प्र०

(८४)

१. प्रभु तेरा गुण अनन्त अपार, जिनजी तेरा गुण अनन्त अपार ।
सहस रसना, रटत सुर गुरु तोहि न पावे पार ।।

२. कौन अम्बर गिनत तारा, मेरु गिरि को भार ।
चरम सागर लहर माला करत कौन विचार ।।

३. भक्त गुण लवलेश भाखे, सुबुद्धि जन सुखकार ।
समय सुन्दर कहत तुम सुं, प्रभु तुमरा ही आधार ।।

(८५)

रे मन ! भज-मन दीनदयाल ।
जाके नाम लेत इक छिन में, कटें कोटि अघजाल ।।टेर।।

१. परम ब्रह्म परमेश्वर स्वामी, देखे होत निहाल ।
सुमरन करत परम सुख पावत, सेवत भाजे काल ।।

२. इन्द फनिंद चक्कधर गावें, जा को नाम रसाल ।
जाको नाम ज्ञान परगासै, नाशै मिथ्या-जाल ।।

३. जा के नाम समान नहीं कछु ऊरध मध्य पाताल ।
सोई नाम जपो नित 'द्यानत', छोड़ विषय विकराल ।।

(८६)

प्रभुजी दीनदयाल, सेवक शरणे आयो ।।टेर।।
भव सागर में वहुविध भटक्यो, अव मैं छेड़ो पायो – प्रभु०

१. क्षेत्र विदेह विराजे प्रभुजी, श्रीमन्धर स्वामी ।
हूँ चरणे आवी नहीं शकतो, शुं छे मुझ में खामी ? – प्रभु०

२. निज चाकर निभाव करणने, सहु जन दीसे वाला ।
सेवक ने सायव नहीं तारे, किम वरते अवहेला ? – प्रभु०

३. शुक्ल पक्षी गंठी भव भेदी, जद तुम दरशन रुचि जागी ।
रात दिवस सुपनान्तर मांही, तुम सेती लिव लागी – प्रभु०

४. कुगुरु कुदेव कुधर्म नी लिवल्या, हिवे सर्वथा मैं तोड़ी ।
तारक देव सुणी तुम सेती, पूरण प्रीत मैं जोड़ी – प्रभु०

५. हूँ जड़ चेतन कारज संगी, पुद्गल सूं वहु प्रीत ।
पिण सोनो कढे पृथ्वी थी, चतुर कारीगर रीत – प्रभु०

६. वारि विंदु पड़े कमल पत्रे, लहके मुक्ताकार ।
ते पराक्रम नहीं ओस विंदु में रंभ-पत्र उपकार –प्रभु०

७. तेहज सूत्र पड़े पदपा नहीं, ते सिर सेहरो सोहे ।
ते पराक्रम नहीं रूत पुत्र नो, माली महिमा मोहे – प्रभु०

८. नीर असुच पड़े गंगा में, ते गंगोदक वाजे ।
हूँ अवगुण दरियो पूरण भरियो, पिण भेट्यो जिनराजे –प्रभु०

९. व्यसन इन्द्री करम ने भेदी, आतम सम्वत (१८७५) सुहावे ।
पूज्य गुमान चन्द्रजी प्रसादे, 'रतन चन्द' गुण गावे –प्रभु०

(८७)

तूं क्यों ढूंढे वन वन में, तेरा नाथ बसे नैनन में ।।टेर।।

१. कई यक जात प्रयाग वाराणसी, कइयक वृन्दावन में ।
प्राणवल्लभ वसे घट अंदर, खोज देख तेरा मन में – तूं०

२. तज घर वास वसे वन भीतर, राख लगावे तन में ।
धर बहु भेष रचे बहु माया, मुगत नहीं छे इन में – तूं०

३. कर बहु सिद्धि, रिद्धि निधि आपे, बगसे राज वचन में ।
ये सहु छोड़ जोड़ मन जिन सुं, मुगति देय इक छिन में – तूं०

४. मूल मिथ्यात मेट मन को भ्रम, प्रकटे ज्योत "रतन" में ।
सद् गुरु ज्ञान अजव दरसायो, ज्यों मुखड़ा दरपण में – तूं०

(८८)

१. हे प्रभो आनन्द दाता ज्ञान हमको दीजिये ।
शीघ्र सारे दुर्गुणोंको दूर हमसे कीजिये ।।

२. लीजिये हमको शरणमें हम सदाचारी वनें ।
ब्रह्मचारी, धर्मरक्षक, वीर व्रतधारी वनें ।।

३. प्रेमसे हम गुरुजनों की नित्यही सेवा करें ।
सत्य वोलें, भूठ त्यागें, मेल आपस में करें ।।

४. निंदा किसीकी हम किसी से भूल कर भी ना करें ।
धैर्य वुद्धि मन लगाकर वीर गुण गाया करें ।।

५. हे सरस्वती मात हमको ज्ञान का भण्डार दो ।
हम अवोधों के हृदय में आप अपना वास दो ।।

६. ऐसा अनुग्रह और कृपा हम पर हो परमात्मा ।
हो प्रजा सव संसार की शासक सभी धर्मात्मा ।।

७. हे प्रभो ! यह प्रार्थना है, आपसे मंजूर करें ।
सव सुखी संसार हो यह भावना रग रग में भरें ।।

(८९)

सच्चा भक्त बन जाऊं, भगवान तुम्हारा अब मैं ।।ध्रुव।।

१. क्रोध निकट नहीं आने देऊं, शस्त्र अचूक क्षमा का लेऊं ।
दूर ही मार भगाऊं, भगवान तुम्हारा अब मैं ।।

२. सन्त गुणीजन सब मिल जावे, मद मत्सर नहीं मन में आवे ।
सादर शीस झुकाऊं, भगवान तुम्हारा अब मैं ।।

३. सत्य शंख का नाद बजाके, उथल पुथल की क्रांति मचा के ।
सोता जगत जगाऊं, भगवान तुम्हारा अब मैं ।।

४. न्याय मार्ग से मुख नहीं मोडूं, स्वीकृत प्रण को मैं नहीं छोडूं ।
कर्त्तव्य पथ पर बलि जाऊं, भगवान तुम्हारा अब मैं ।।

५. प्राणी मात्र को अपना भाई, मानूं सब की चाहुं भलाई ।
सेवा ही मंत्र बनाऊं, भगवान तुम्हारा अब मैं ।।

६. ऊंच नीच का भेद न मानूं, गुण पूजा का महत्व पिछानूं ।
व्यक्ति न व्योम चढ़ाऊं, भगवान तुम्हारा अब मैं ।।

७. करुणा निधि ! वर करुणा कीजे, आत्मिक बल कुछ ऐसा दीजे ।
"अमर" अमर हो जाऊं, भगवान तुम्हारा अब मैं ।।

(९०)

एक ज दे चिनगारी, महानल ! एक ज दे चिनगारी ।।ध्रु०।।

१. चकमक लोढुं घसतां घसतां, खरची जिंदगी सारी ।
जा मगरीमां तणखो न पड्यो, न फळी महेनत मारी ।।

२. चांदो सळग्यो, सूरज सळग्यो, सळगी आभ अटारी ।
ना सळगी एक सगड़ी मारी, वात विपतनी भारी ।।

३. ठंडीमां मुज काया थथरे, खूटी धीरज मारी ।
विश्वानल ! हुं अधिक न मांगुं, मांगु एक चिनगारी ।।

(६१)

१. संयम सुखकारी, जिन आज्ञा अनुसार धन्य पाले जे नर नार।
संयम सुखकारी आनन्दकारी, धन्य जाऊं मैं वलिहार।

२. कर्मरज ने शीघ्र हटावे, आतम ना गुण सब प्रगटावे।
जन्म मरण ना दुःख मिटावे, होवे परम कल्याण – सं०

३. संयम ना गुण प्रभु खुद गावे, हलु कर्मी जीवां मन भावे।
हुलस भाव से उठ अपनावे, मोह ममता को मार – सं०

४. परम औषधि संयम जाणो, तीन लोक नो सार पिछाणो।
शुद्ध समझ हृदय में आणो, अनुपम सुख की खान – सं०

५. तजे रिद्ध संयम अनुरागे, जिन आज्ञा ने राखे आगे।
निश दिन संयम में चित लागे, धन्य धन्य वे अणगार – सं०

६. काम कषाय को तजे हुलसाई, निंदा विकथा दे छिटकाई।
तप संयम में लीन सदा ही, धन्य जेहनो अवतार – सं०

(६२)

श्री कुशल पूज्य का कीजे जाप, मिट जावे सब शोक संताप।

१. भव जल तारक गुरुवर वड़े, शान्त दान्त गंभीर वड़े।
नाम जप्याँ कट जावे पाप – श्री कुशल०

२. ध्यान धरे तो दुरित टले, आधि, व्याधि सब रोग गले।
हरे सभी का मानव ताप – श्री कुशल०

३. छत्ती त्याग हुए अणगार, धन जन सुत छोड़ा परिवार।
निश दिन प्रभु का कीजे जाप – श्री कुशल०

४. चंगरिया कुल में हुऐ भान, जयमल्लजी गुरु भाई जान।
गुरु भक्ति में रम रहे आप – श्री कुशल०

५. वरसों तक नहीं शयन किया, गुरु भाई का साथ दिया।
तव गुण का नहीं पाऊं पार – श्री कुशल०

६. अशुभ अमंगल नाम न रहे, मुद मंगल तव नाम लहे।
दुख दूर सुख पावे धाप – श्री कुलश०

७. "गजेन्द्र" जो भक्ति से रटे, कुशल नाम से संकट कटे।
निर्मल चित्त करो भवि जाप – श्री कुलश०

(६३)

जय वोलो रत्न मुनीश्वर की।
धन्य कुशल वंश के पटधरकी॥

१. पूज्य भूधर महिमाशाली ये,
कुशलेश शिष्य हितकारी ये।
ये मूल भूमि रत्नाकर की – जय०

२. श्री गुमानचन्द्र गुरुवर पाया,
लघु वय में संयम अपनाया।
ओ गंग गुलावा सुत-वर की – जय०

३. वैराग्य से संयम धार लिया,
जिन क्रोध मोह को मार लिया।
शुभलेश्या चमके शशिधर की – जय०

४. सेवा से ज्ञान मिलाया था,
जन-जन का मन हर्षाया था!
आज्ञा पाले जो जिनवर की – जय०

५. कलि दोप न छूने पाया है,
मुनि मण्डल भी सुखदाया है।
सम संयम शील गुणाकर की – जय०

६. ये संघ चतुर्विध सुखकारी,
अनुशासन की खूबी न्यारी।
निन्दा विकथा नहीं पर घरकी – जय०

७. ये 'गजमुनि' चरणों का चेरा,
यह सकल संघ शरणे तेरा।
दो शक्ति विमल मेधाधरकी – जय०

(९४)

ॐ गुरु ॐ गुरु ॐ गुरु देव, जयगुरु जयगुरु जयगुरु देव ॥

१. देव हमारे श्री अरिहंत, गुरु हमारे गुणी जन संत।
सूत्र हमारा सत्य-निधान, धर्म हमारा दया-प्रधान ॥

२. श्रमण भगवन्त श्री महावीर, त्रिशला नंदन हरियो पीर।
अधम उद्धारण श्री अरिहन्त, पतितपावन भज भगवंत ॥

४. गुरु गौतम सुमरो हर वार, घर-घर वरते मंगलाचार।
बोलो सब मिल जय जयकार, होवे अपना भी उद्धार ॥

---

(९५)

ओम् जय जय गुरु देवा, स्वामी जय जय गुरु देवा।
जो ध्यावे तिर जावे, पावे शिव सुख मेवा ।।टेर।।

१. पंच महाव्रत धारे जग वैभव छोड़ा स्वामी।
संयम शुद्ध आराधे प्रभु से नेह जोड़ा – ओम्०

२. सकल जीव प्रति बोधे राग द्वेष टारे स्वामी।
अखंड बाल ब्रह्मचारी सुर सेवा सारे – ओम्०

३. पाखंड दूर हटावे सुपथ दिखलावे स्वामी।
धन्य धन्य जिन मुनिवर तारे तिर जावे – ओम्०

४. आठों याम एक काम जिनों का प्रभु में ध्यान लगे स्वामी।
गुरुवर के गुण गांता, सोते भाग्य जगे – ओम्०

५. "जीत" शरण में आयो महर नजर कीजो स्वामी।
सेवक ने अब स्वामी तुम सम कर लीजो – ओम्०

(९६)

१. वे गुरु मेरे उर वसो, जे भव जलधि जहाज।
आप तिरे पर तारहिं, ऐसे श्री मुनिराज – वे गुरु०

२. मोह महारिपु जीत के, छोड़ें सब घर बार।
होय मुनीश्वर वन बसें, आतम शुद्ध विचार – वे गुरु०

३. रोग-उरग-बिल वपु गिण्यो, भोग भुजंग समान।
कदलि-तरु संसार है, सब छोड़्या इम जान – वे गुरु०

४. पंच महाव्रत आदरें, पांचों समिति समेत।
तीन गुपति पालें सदा, अजर अमर-पद-हेत – वे गुरु०

५. धरम धरें दस लक्षणी, भावें भावना वार।
सहें परीषह वीस-दो, चारित्र रतन भंडार – वे गुरु०

६. रतन-त्रय निज उर धरें, अरु निर्ग्रन्थ त्रिकाल।
जीतें काम-पिशाच को, स्वामी परम दयाल – वे गुरु०

७. जेठ तपै रवि आकरो, सूखें सरवर नीर।
शैल शिखर मुनि तप तपें, ठाड़े अचल शरीर – वे गुरु०

८. पावस रात भयावणी, वरसे जलधर-धार।
तरु तल निवसे साहसी, वाजे झंझावार – वे गुरु०

९. शीत पड़े कपि-मद गले, दाझै सब वनराय।
ताल तरंगिणी तट विषे, ठाड़े ध्यान लगाय – वे गुरु०

१०. इण विध दुर्धर तप तपैं, तीनों काल मझार।
लागें सहज स्वरूप में तन सौं ममत निवार – वे गुरु०

११. रंग-महल में पोढ़ते, जे कोमल सेज बिछाय।
ते कंकराली भूमि में, सोवें संवर-काय – वे गुरु०

१२. गज चढ़ि चलते गर्व सों, जे सेना सज चतुरंग।
निरखि निरखि भू पग वे धरें, पालें करुणाअंग – वे गुरु०

१३. षट्रस भोजन जीमते, जे सुवर्ण थाल मंझार।
अब वे सब छिटकाय ने, प्रासुक् लेत आहार – वे गुरु०

१४. पूर्व-भोग न चिन्तवें, आगम वांछा नाय।
चतुर्गति दुख से डरें, सुरत लगी शिव मांहि – वे गुरु०

१५. वे गुरु चरण जहां धरें, जंगम तीरथ तेह।
सो रज मम मस्तक चढो, 'भूधर' मांगे एह – वे गुरु०

---

(६७)

प्रतिदिन जप लेना, त्यागी गुरुओं को भविजन भाव से ।

१. महावीर के शासन भूषण, धर्मदास मुनिराय ।
परम प्रतापी धर्म प्रचारक, थे आचार्य महान् – प्रति०

२. शिष्य निन्नाणु हुवे आपके, ज्ञान क्रिया में शूर ।
धन्नाजी ने मरुभूमि से, किया कुमत को दूर–हो – प्रति०

३. पट्टधर भूधर पूज्य प्रतापी, शिष्य जिन्हों के चार ।
रघुपत, जयमल्ल, जेतसिंह, अरु कुशलचन्द्र लो धार – प्रति०

४. रघुपत, जयमल्ल, कुशलसिंहजी के, हुआ शिष्य समुदाय ।
कुशल वंश के पूज्यों का, मैं ध्यान धरू चित लाय – प्रति०

५. गुमानचन्द्र और रतनचन्द्रजी, शासन के शृंगार ।
चाचा गुरु थे रतनचन्द्र के, दुर्गादास अनगार–हो – प्रति०

६. चारवीस संवत्सर लग यों, रखने को सम्मान ।
रतनचन्द्र गणिपद नहीं लीना, पूज्य दुर्ग का मान–हो – प्रति०

७. दुर्गादास के वाद रत्नमुनि को दीना गणभार ।
गुरु गुमान की मर्यादा में, गणपति थे सुखकार–हो – प्रति०

८. कुशल वंश के पूज्य तीसरे, हमीर मल्ल मुनिराय ।
परम प्रतापी पूज्य कजोड़ी, महिमा कही न जाय–हो – प्रति०

९. पञ्चम पूज्य बहुश्रुत भारी, विनयचन्द मुनिराय ।
शोभाचन्द्र पूज्य हुए छट्ठे, दमियों के शिरताज–हो – प्रति०

१० वादी मर्दन कनीरामजी, बालचन्द तप धार ।
चन्दन मुनिवर शीतल चन्दन, मुनित्रय थे सुखकार–हो – प्रति०

११. 'गजेन्द्र' सब पूज्यों का अनुचर, करता उनका ध्यान ।
भाव सहित जो पढ़े भविक जन, पावे सुख निधान–हो – प्रति०

(६८)

१. आज नैण भर गुरु मुख निरख्यो,
हर्ष हुवो मन मारो ए मांय।
रोम रोम शीतलता व्यापी,
उपसम रस नो क्यारो ए मांय – आज०

२. गुण भरियो दरियो सुख सागर,
नागर नवल उजारों ए मांय।
पूरण गुण कह सके न सुरगुरु,
जो होवे जीभ हजारों ए मांय – आज०

३. कामधेनु चिन्तामणि सुरगुरु,
पुद्गल सर्व असारो ए मांय।
ऐसी चीज नहीं जग में,
करिये गुरु मनुहारो ए मांय – आज०

४. मूल मिथ्यात्व अनादि तणी भर्म,
घट में घोर अंधारो ए मांय।
परम उद्योत कियो इक छिन में,
प्रकट वचन दिनकारो ए मांय – आज०

५. क्रोध कषाय परम दावानल,
भरीयो विषय विकारो ए मांय।
परम आह्लाद कियो इक छिन में,
वरस सघन घन धारो, ए मांय – आज०

६. परम ज्योति प्रकटी समता की,
हुओ हर्ष अण पारो ए मांय।
निज गुण अक्षय सम्पत आकर्षी,
ओ मन गुरु उपकारो ए मांय – आज०

७. प्रेम प्रसाद कियो मुझ ऊपर,
हूँ होतो निरधारो ए मांय।
चाकर जाण समग्र रिध सौंपी,
छोड्यो, सर्व संसारो ए मांय – आज०

८. पूरण उरण हुवे कुण गुरु सुं,
आगम में अधिकारो ए मांय।
गुरु पद कमल धरो शिर ऊपर,
जो चावो निस्तारो ए मांय – आज०

९. मोती सा मलिन खांड सा खारा,
आतम सम अपियारो ए मांय।
अल्प कर्मी गुण कर कर हर्षे,
निरखे नहीं य गिवारो ए मांय – आज०

१०. एक जीभ सूं गुण कुण गावे,
कर कर बुध विस्तारो ए मांय।
"रतन चन्द" कहे गुरु पद मुझ शिर,
क्रोड़ क्रोड़ हूँ वारो ए मांय – आज०

(६६)

१. आज म्हांने साध मिलावो रे, दरसण करवा की दिल में लग रही
थें सुणो भवि जीवां एहवा तो, मुनिवर निशदिन वंदिए।
सिर काल तके रे, झटके ले जासी थारा जीव ने – आज०

२. देव नमूं अरिहंत ने ज कांई, गुरु गिरवा निर्ग्रन्थ,
धर्म केवली भाषियो ज कांई, एह मुक्ति नो पंथ।
इण सेती तिरिया घणा ज कांई, ते सुणज्यो विरतंत – आज०

३. पंच महाव्रत पालतां ज कांई, पाले पंच आचार।
सुमत गुपत नित सांचवे ज कांई, चरण करण गुण धार।।
कनक कामिनी त्यागने ज हुआ, ज्ञान तणा भंडार – आज०

४. कंपिलपुर नो अधिपति ज कांइ, संजति नामे राय ।
हय, गय, रथ पायक घणा, जीव मारण ने जाय ।।
वन में मुनि वाणी सुणी, दीधो जग छिटकाय – आज०

५. पापी प्रदेशी घणो रे, मिथ्या मत में चूर ।
केशी गुरु समझावियो रे, हुओ सतवादी ने सूर ।।
थोड़ा दिन रे मांय ने रे, कर्म किया चकचूर – आज०

६. अर्जुनमाली मारतो रे, नर षट एकज नार ।
वीर जिनन्द पधारिया रे, देख्या तस दीदार ।।
संयम ले करणी करी रे, पाम्या भव नो पार – आज०

७. कुंवर अयवन्तो कोड़ सूं रे, भेट्या श्री भगवन्त ।
वाणी सुण वैरागियो सरे, व्रत लीधा जयवंत ।।
छोटी वय वनड़ो वण्यो रे, मुक्ति श्री नो कंत – आज०

८. जंवू कुंवर वैराग्य सूं रे, भेट्या सुधर्मा स्वाम ।
सुण वाणी संजम लियो रे, कीधो उत्तम काम ।।
तप जप करणी खप करी रे, पायो अविचल ठाम – आज०

९. चोर चेलायती पापीयो रे, छेद्यो कन्या ईश ।
वन में मुनि उपदेश दियो रे, मेटी मन री रीस ।।
इण क्रोध भरणी जीता थकां रे, छै सुख विस्वावीस – आज०

१० मृगापुत्र महल में सरे, राण्यां रे परिवार ।
शीष दाझे ने रवि तपे सरे, वे दीठा अणगार ।।
जाति सुमरण पामीयो रे पहुँचा मुक्ति मंझार – आज०

११. पूज्य रतन गुरु भेट्या रे, म्हारी फली मनोरथ माल ।
'हिम्मतराय' चरणा रो चाकर, कीधो ढाल रसाल ।।
उगणीसे पन्द्रह तणे रे, पाली सेखे काल – आज०

---

(१००)

१. गुरुदेव तुम्हें नमस्कार वार वार है।
श्री चरण शरण से हुआ जीवन सुधार है – गुरु०

२. अज्ञान-तम हटा के, ज्ञान-ज्योति जगा दी,
दृढ़ आत्म-ध्यान (ज्ञान) में अखण्ड शक्ति लगा दी ।।
उपदेश सदाचार सकल शास्त्र-सार है – गुरु०

३. विधि-युक्त सिर झुकाके कर रहा हूँ वन्दना,
अब हो रही है मंगलमयी, सद्भाव स्पन्दना ।
माधुर्य से मिटा रही, मन का विकार है – गुरु०

४. यह है मनोरथ नित्य रहें संत चरण में,
अन्तिम-समय समाधि-मरण, चार शरण में ।
यह "सूर्य-चन्द्र" मोक्ष-मार्ग में विहार है – गुरु०

(१०१)

गुरु विन कौन वतावे बाट ? वड़ा विकट यमघाट ।।ध्रु०।।

१. भ्रांतिकी पहाड़ी नदियां विचमों, अहंकारकी लाट ।
काम क्रोध दो पर्वत ठाढ़े, लोभ चोर संघात ।।

२. मद मत्सरका मेह वरसत, माया पवन वहे दाट ।
कहत कवीर सुनो भाई साधो, क्यों तरना यह घाट ।।

---

(१०२)

राम कहो, रहमान कहो कोऊ, कान्ह कहो, महादेव री
पारसनाथ कहो, कोऊ ब्रह्मा, सकल ब्रह्म स्वयमेवरी ॥ध्रु०॥

१. भाजन-भेद कहावत नाना, एक मृत्तिका रूप री।
तैसे खंड कल्पनारोपित, आप अखंड सरूप री॥

२. निजपद रमे राम सो कहिये, रहिम करे रहिमान री।
कर्षे करम कान्ह सो कहिये, महादेव निर्वाण री॥

३. परसे रूप पारस सो कहिये, ब्रह्म चिन्हे सो ब्रह्म री।
इह विधि साधो आप आनन्दघन, चेतनमय निकर्म री॥

(१०३)

१. प्रभु ! मोरे अवगुण चित न धरो।
सम-दरशी है नाम तिहारो, चाहो तो पार करो॥

२. इक नदिया इक नार कहावत मैलो ही नीर भरो।
जब मिलकरके इक बरन भये सुरसरि नाम पर्यो॥

३. इक लोहा पूजामें राखत, इक घर बधिक पर्यो।
पारस गुण अवगुण नहिं चितवत, कंचन करत खरो॥

४. यह माया भ्रम-जाल कहावत सूरदास सगरो।
अबकी बेर मोहिं पार उतारो, नहिं प्रण जात टरो॥

---

(१०४)

सुने री मैंने निर्बलके बल राम ।
पिछली साख भरूँ संतनकी अड़े सँवारे काम ।।ध्रु०।।

१. जब लग गज बल अपनो बरत्यो नेक सर्‌यो नहिं काम ।
निर्बल ह्वै बल राम पुकार्यो आये आधे नाम ।।

२. द्रुपद-सुता निर्बल भई ता दिन गहलाये निज धाम ।
दुःशासनकी भुजा थकित भइ वसन रूप भये श्याम ।।

३. अप-बल, तप-बल और बाहु-बल चौथा है बल दाम ।
सूर किशोर कृपासे सब बल हारेको हरिनाम ।।

(१०५)

पायो जी मैंने राम-रतन धन पायो ।।टेर।।

१. वस्तु अमोलक दी मेरे सतगुरु, किरपा कर अपनायो ।
जनम जनमकी पूँजी पाई, जगमें सभी खोवायो ।।

२. खरचै न खुटै, वाको चोर न लूटै, दिन दिन वढ़त सवायो ।
सतकी नाव, खेवटिया सतगुरु, भवसागर तर आयो ।।

३. मीरांके प्रभु गिरिधर नागर, हरख हरख जस गायो ।

---

(१०६)

कब होगा प्रभु ! कब होगा, दिवस हमारा कब होगा ?

१. हम पतितों से अति प्रेम करें, दुश्मन जन पर भी रहम करें।
हम सब जीवों का क्षेम करें, वह दिवस हमारा कब होगा ?

२. कब ऊंच नीच का भेद मिटे, धन जन खोने का खेद मिटे।
मद मत्सर मिथ्या भेद मिटे, वह दिवस हमारा कब होगा ?

३. प्राणी को निज सम पेखेंगे, स्त्री को माता सम देखेंगे।
लक्ष्मी को मिट्टी वत् लेखेंगे, वह दिवस हमारा कब होगा ?

४. जग व्यवहारों को छोड़ेंगे, तृष्णा के बन्धन तोड़ेंगे।
जीवन प्रभु संग ही जोड़ेंगे, वह दिवस हमारा कब होगा ?

५. सुख देकर के सुख मानेंगे, दुःख सहकर के सेवा देंगे।
सेवामय जीवन कर लेंगे, वह दिवस हमारा कब होगा ?

(१०७)

साधुजी ने वन्दना नित नित कीजे,
प्रात उगन्ते सूर रे प्राणी।

१. नीच गति मां ते नहीं जावे,
पामे ऋद्धि भरपूर रे प्राणी – साधुजी०

२. मोटा ते पंच महाव्रत पाले,
छह कायारा प्रति पाल रे प्राणी।
भ्रमर-भिक्षा मुनि सूझती लेवे,
दोष बियालीस टाल रे प्राणी – साधुजी०

३. ऋद्धि सम्पदा मुनि कारमी जाणी,
दीधी संसार ने पूठ रे प्राणी।
एवा पुरुषांनी सेवा करतां,
आठ कर्म जाय टूट रे प्राणी – साधुजी०

४. एक एक मुनिवर रसना त्यागी,
एक एक ज्ञान भण्डार रे प्राणी।
एक एक वैयावच्चिया वैरागी,
जेना गुणांनो न आवे पार रे प्राणी – साधुजी०

५. गुण सत्तावीस करी ने दीपे,
जीत्या परीषह बावीसरे प्राणी।
बावन तो अनाचीरण टालें,
तेने नमावूं मारुं शीश रे प्राणी – साधुजी०

६. जहाज समान ते सन्त मुनीश्वर,
भव्य जीव बेसे आय रे प्राणी।
पर उपकारी मुनि दाम न माँगे,
देवें मुक्ति पहुँचाय रे प्राणी – साधुजी०

७. साधु-चरणे जीव सातारे पावे,
पावे ते लील विलास रे प्राणी।
जन्म जरा अने मरण मिटावे,
नावे फरी गर्भवास रे प्राणी – साधुजी०

८. एक वचन श्री सतगुरु केरो,
जो पैठे दिल मांय रे प्राणी।
नरक गतिमां ते नहिं जावे,
एम कहे जिन राय रे प्राणी – साधुजी०

९. प्रात उठी ने उत्तम प्राणी,
सुणो साधुजी रो व्याख्यान रे प्राणी।
एवा पुरुषां नी सेवा करतां,
पावे अमर विमान रे प्राणी – साधुजी०

१०. संवत् अठारह ने वर्ष अड़तीसे,
बूसी गांव चौमास रे प्राणी।
मुनि आसकरण जी इण पर जंपे,
हुं तो उत्तम साधांरो दास रे प्राणी – साधुजी०

(१०८)

१. नमूं अनन्त चौवीसी, ऋषभादिक महावीर।
आरज-क्षेत्रमां, घाली धर्मनी सीर॥
२. महा अतुल वली नर, शूर वीर ने धीर।
तीरथ प्रवर्तावी, पहुँचा भवजल-तीर॥
२. सीमंधर प्रमुख, जघन्य तीर्थंकर वीश।
है अढ़ी द्वीप मां, जयवन्ता जगदीश॥
४. एक सौ ने सत्तर, उत्कृष्टा पद जगदीश।
धन्य म्होटा प्रभुजी, तेह ने नमाऊँ शीश॥
५. केवली दोय कोड़ी, उत्कृष्टा नव कोड़।
मुनि दोय सहस्र कोड़ी उत्कृष्टा नव सहस्रकोड़॥
६. विचरे छै विदेहे, म्होटा तपसी घोर।
भावे करि वन्दूं, टाले भवनी खोड़॥
७. चौवीसे जिननां, सगला ही गणधार।
चौदहसौ ने बावन, ते प्रणमूं सुखकार॥

८. जिन शासन नायक, धन्य श्री वीर जिनन्द ।
गौतमादिक गणधर, वर्तायो आनन्द ।।

९. श्री ऋषभदेव ना भरतादिक सौ पूत ।
वैराग्य मन आणी, संयम लियो अद्भूत ।।

१०. केवल उपजाव्यूं, करि करणी करतूत ।
जिनमत दीपावी, सगला मोक्ष पहूँत ।।

११. श्री भरतेश्वर ना हुआ पटोधर आठ ।
आदित्य जशादिक, पहुँत्या शिव पुर वाट ।।

१२. श्री जिन-अन्तर ना, हुआ पाट असंख ।
मुनि गुक्ति पहुँत्या, टालि कर्मनो वंक ।।

१३. धन्य कपिल मुनिवर-नमी नमुं अणगार ।
जेणे तत्क्षण त्यागियो, सहस्र-रमणी परिवार ।।

१४. मुनि वल हरिकेशी, चित्त मुनीश्वर सार ।
शुद्ध संयम पाली, पाम्या भवनो पार ।।

१५. वलि इक्षुकार राजा, घर कमलावती नार ।
भग्गू ने जशा, तेहना दोय कुमार ।।

१६. छये छती ऋद्धि छांड़ी, लीधो संयम भार ।
इण अल्प कालमां, पाम्या मोक्ष द्वार ।।

१७. वलि संयति राजा, हिरण आहिड़े जाय ।
मुनिवर गर्दभाली, आण्यो मारग ठाय ।।

१८. चारित्र लेईने, भेट्या गुरुना पाय ।
क्षत्री राज ऋषीश्वर, चर्चा करी चित लाय ।।

१९. वलि दशे चक्रवर्ती, राज्य रमणी ऋद्धि छोड़ ।
दशे मुक्ति पहुँत्या, कुल ने शोभा छोड़ ।।

२०. इण अवसर्पिणी काल मां आठ राम गया मोक्ष ।
वलभद्र मुनीश्वर, गया पंचमे देवलोक ॥
२१. दशार्ण भद्र राजा, वीर वांद्या धरि मान ।
पछि इन्द्र हटायो, दियो छकाय अभयदान ॥
२२. करकण्डू प्रमुख, चारे प्रत्येक बुद्ध ।
मुनि मुक्ति पहुँत्या, जीत्या कर्म महाजुद्ध ॥
२३. धन्य म्होटा मुनिवर, मृगापुत्र जगीश ।
मुनिवर अनाथी, जीत्या राग ने रीश ॥
२४. वलि समुद्रपाल मुनि, राजीमति रहनेम ।
केशी ने गौतम, पाम्या शिवपुर खेम ॥
२५. धन विजय घोष मुनि, जय घोष वलि जाण ।
श्री गर्गाचार्य, पहुँत्या छै निर्वाण ॥
२६. श्री उत्तराध्ययनमां, जिनवर कर्‌या बखाण ।
शुद्ध मन से ध्यावो, मन में धीरज आण ॥
२७. वलि खंदक सन्यासी, राख्यो गौतम-स्नेह ।
महावीर समीपे, पंच महाव्रत लेह ॥
२८. तप कठिन करीने, झौंसी आपणी देह ।
गया अच्युत देवलोके, चवि लेसे भव छेह ॥
२९. वलि ऋषभदत्त मुनि, सेठ सुदर्शन सार ।
शिवराज ऋषीश्वर, धन्य गांगेय अणगार ॥
३०. शुद्ध संयम पाली, पाम्या केवल सार ।
ये चारे मुनिवर, पहुँच्या मोक्ष मँझार ॥
३१. भगवंतनी माता, धन धन सती देवानन्दा ।
वलि सती जयन्ती, छोड़ दिया घर फन्दा ॥

३२. सति मुक्ति पहुँत्या, वली ते वीरनी नन्द ।
महासती सुदर्शना, घणी सतियों ना वृन्द ।।

३३. वलि कार्तिक शेठे, पड़िमा वही शूर वीर ।
जम्यो मोरां ऊपर, तापस वलती खीर ।।

३४. पछी चारित्र लीधूं, मित्र एक सहस्र आठ धीर ।
मरी हुओ शक्रेन्द्र, चवि लेसे भवतीर ।।

३५. वलि राय उदायन, दियो भाणेज ने राज ।
पछी चारित्र लेईने, सार्या आतम काज ।।

३६. गंगदत्त मुनि आनन्द, तारण तरण जहाज ।
मुनि कौशल रोहो, दियो घणां ने साज ।।

३७. धन्य सुनक्षत्र मुनिवर, सर्वानुभूति अणगार ।
आराधक हुई ने, गया देव लोक मंझार ।।

३८. चवि मुक्ति जासे वली सिंह मुनीश्वर सार ।
बीजा पण मुनिवर, भगवती माँ अधिकार ।।

३९. श्रेणिकनो बेटो, म्होटो मुनिवर मेघ ।
तजी आठ अंतेउर, आण्यो मन संवेग ।।

४०. वीर पै व्रत लेईने, बांधी तपनी तेग ।
गया विजय विमाने, चवि लेसे शिव वेग ।।

४१. धन्य थावच्चापुत्र, तजी बत्तीसों नार ।
तेनी साथे निकल्या, पुरुष एक हजार ।।

४२. शुकदेव सन्यासी एक सहस्र शिष्य लार ।
पांचसौ से शेलक, लीधो संयम भार ।।

४३. सव सहस्र अढ़ाई, घणा जीवों ने तार ।
पुण्डरिक गिरि ऊपर, कियो पादोपगमन संथार ।।

४४. आराधक हुई ने, कीधो खेवो पार ।
हुआ म्होटा मुनिवर, नाम लियाँ निस्तार ।।

४५. धन्य जिन पाल मुनिवर, दोय धन्ना हुआ साध ।
गया प्रथम देवलोके, मोक्ष जासे आराध ।।

४६. श्री मल्लिनाथना छह मित्र, महावल प्रमुख मुनिराय ।
सर्वे मुक्ति सिधाव्या, म्होटी पदवी पाय ।।

४७. वलि जितशत्रु राजा, सुबुद्धि नामे प्रधान ।
पोते चारित्र लई ने पाम्या मोक्ष निधान ।।

४८. धन्य तेतली मुनिवर, दियो छकाय अभयदान ।
पोटिला प्रतिबोध्या, पाम्या केवल ज्ञान ।।

४९. धन्य पाँचे पांडव, तजी द्रौपदी नार ।
थेवर नी पासे, लीधो संयम भार ।।

५०. श्री नेमी वन्दन नो, एहवो अभिग्रह कीध ।
मास मास खमरण तप, शत्रुंजय जई सिद्ध ।।

५१. धर्म घोष तरणा शिष्य, धर्म रुचि अरणगार ।
कीड़ियों नी करुरणा, आरणी दया अपार ।।

५२. कड़वा तुंबानों, कीधो सगलो आहार ।
सर्वार्थ सिद्ध पहुँच्या, चवि लेसे भव पार ।।

५३. वलि पुण्डरीक राजा, कुण्डरीक डिगियो जारण ।
पोते चारित्र लेईने, न घाली धर्म मां हारण ।।

५४. सर्वार्थ सिद्ध पहुँत्या, चवि लेसे निर्वारण ।
श्री ज्ञाता सूत्र मां, जिनवर कर्या वखारण ।।

५५. गौतमादिक कुंवर, सगा अठारे भ्रात ।
सव अन्धक विष्णु सुत, धारिरणी ज्यांरी मात ।।

५६. तजी आठ अंतेउर, काढ़ी दीक्षा नी वात।
चारित्र लई ने, कीधो मुक्ति नो साथ॥

५७. श्री अनिक सेनादिक, छये सहोदर भाय।
वसुदेवना नन्दन, देवकी ज्याँरी मांय॥

५८. भद्दिलपुर नगरी, नाग गाहावई जाण।
सुलसा घर वधिया, साँभली नेमिनी वाण॥

५९. तजी वत्तीस-वत्तीस अंतेउर, नीकलिया छिटकाय।
नल कूवर समाना, भेट्या श्री नेमिना पाय॥

६०. करी छठ छठ पारणा, मन में वैराग्य लाय।
एक मास संथारे, मुक्ति विराज्या जाय॥

६१. वलि दारुक सारण, सुमुख दुमुख मुनिराय।
वलि कुंवर अनादृष्ट, गया मुक्ति गढ़ माँय॥

६२. वसुदेवना नन्दन, धन-धन गज सुकुमाल।
रूपे अति सुन्दर, कलावन्त वय वाल॥

६३. श्री नेमि समीपे, छोड्यो मोह जंजाल॥
भिक्षुनी पड़िमा, गया मसाण महाकाल॥

६४. देखी सोमिल कोप्यो, मस्तक वांधी पाल।
खेरनां खीरा, शिर ठविया असराल॥

६५. मुनि नजर न खण्डी, मेटी मननी झाल।
परीसह सही ने, मुक्ति गया तत्काल॥

६६. धन्य जाली मयाली, उवयालादिक साध।
सांव ने प्रद्युम्न, अनिरुद्ध साधु अगाध॥

६७. वलि सतनेमि दृढ़ नेमि, करणी कीधी निर्वाध।
दशे मुक्ति पहुँत्या, जिनवर वचन आराध॥

६८. धन अर्जुन माली, कियो कदाग्रह दूर।
वीर पै व्रत लईने, सत्यवादी हुआ सूर ॥
६९. करी छठ-छठ पारणा, क्षमा करी भरपूर।
छह मास मांही, कर्म किया चकचूर ॥
७०. कुँवर अइमुत्ते, दीठा गौतम स्वाम।
सुणि वीर नी वाणी, कीधो उत्तम काम ॥
७१. चारित्र लेईने पहुँत्या शिव पुर ठाम।
धुर आदि मकाई, अन्त अलक्ष मुनि नाम ॥
७२. वलि कृष्ण राय नी, अग्रमहिषी आठ।
पुत्र-बहू दोय, संच्या पुण्यना ठाठ ॥
७३. जादव कुल सतियाँ, टाल्यो दुःख उचाट।
पहुँती शिवपुर माँ, ओ छे सूत्र नो पाठ ॥
७४. श्रेणिक नी राणी, काली आदिक दश जाण।
दशे पुत्रवियोगे साँभली वीरनी वाण ॥
७५. चन्दन बाला पै, संयम लेई हुई जाण।
तप करि देह झौंसी, पहुँती छे निर्वाण ॥
७६. नन्दादिक तेरह श्रेणिक नृपनी नार।
सगली चन्दनबाला पै, लीधो संयम भार ॥
७७. एक मास संथारे, पहुँती मुक्ति मंझार।
यों नेवुं जणां नो, अन्तगड मां अधिकार ॥
७८. श्रेणिक ना बेटा, जालीयादिक तेवीश।
वीर पै व्रत लेईने, पाल्यो विस्वावीस ॥
७९. तप कठिन करीने, पूरी मन जगीश।
देवलोके पहुँच्या, मोक्ष जासे तजी रीश ॥

८०. काकन्दी नो धन्नो, तजी वतीसों नार।
महावीर समीपे, लीधो संयम भार।।

८१. करी छठ-छठ पारणा, आयंविल उच्छित्त आहार।
श्री वीर वखाण्यो, धन्य धन्नो अणगार।।

८२. एक मास संथारे, सर्वार्थ सिद्ध पहुँत।
महा विदेह क्षैत्र मां, करसे भवनो अन्त।।

८३. धन्नानी रीते, हुआ नवे संत।
श्री अनुत्तरोववाई मां, भाखि गया भगवंत।।

८४. सुवाहु प्रमुख पांच पांच सौ नार।
तजी वीर पैं लीधा, पांच महाव्रत धार।।

८५. चारित्र लेईने, पाल्या निर अतिचार।
देवलोके पहुँत्या, सुख-विपाके अधिकार।।

८६. श्रेणिक ना पोता, पौमादिक हुआ दस।
वीर पैं व्रत लेईने, काढ़यो देहनो कस।।

८७. संयम आराधी, देवलोक मां जई वस।
महाविदेह क्षेत्र मां, मोक्ष जासे लेई जस।।

८८. वलभद्रना नन्दन, निषधादिक हुआ वार।
तजी पचास अन्तेउरी, त्याग दियो संसार।।

७९. सहु नेमि समीपे, चार महाव्रत लीध।
सर्वार्थ सिद्ध पहुँत्या, होसे विदेहे सिद्ध।।

९०. धन्नो ने शालिभद्र, मुनीश्वरों नी जोड़।
नारी ना वन्धन, तत्क्षण नांख्या तोड़।।

९१. घर कुटुम्ब कवीलो, धन कंचन नी कोड़।
मास मास खमण तप, टाल से भवनी खोड़।।

९२. श्री सुधर्मा स्वामी ना शिष्य, धन धन जम्बू स्वाम ।
तजी आठ अन्तेउरी, मात-पिता धन धाम ।।

९३. प्रभवादिक तारी, पहुँत्या शिवपुर ठाम ।
सूत्र प्रवर्तावी, जग मां राख्यूं नाम ।।

९४. धन्य ढंढण मुनिवर, कृष्णराय ना नन्द ।
शुद्ध अभिग्रह पाली, टाल दियो भवफन्द ।।

९५. वलि खन्दक ऋषिनी, देह उतारी खाल ।
परीषह सहीने, भव फेरा दिया टाल ।।

९६ वलि खन्दक ऋषिना, हुआ पांच सौ शीश ।
घाणी मां पील्या, मुक्ति गया तज रीश ।।

९७. संभूति विजयतणां शिष्य, भद्रबाहु मुनि राय ।
चौदह पूर्वधारी. चन्द्रगुप्त आण्यो ठाय ।।

९८. वलि आर्द्रकुमार मुनि, स्थूलभद्र नन्दिषेण ।
अरणक अइमुत्तो, मुनीश्वरो नी श्रेण ।।

९९. चौवीसे जिनना मुनिवर, संख्या अठावीश लाख ।
ऊपर सहस्र अड़तालीस, सूत्र परम्परा भाख ।।

१००. कोई उत्तम वांचो, मोंढ़े जयणा राख ।
उघाड़े मुख बोल्यां, पाप लगे इम भाख ।।

१०१. धन्य मरुदेवी माता, ध्यायो निर्मल ध्यान ।
गज-होदे पायो, निर्मल केवलज्ञान ।।

१०२. धन्य आदीश्वरनी पुत्री, ब्राह्मी सुन्दरी दोय ।
चारित्र लेईने, मुक्ति गई सिद्ध होय ।।

१०३. चौवीसे जिननी, वड़ी शिष्यणी चौवीस ।
सती मुकते पहुँत्या, पूरी मन जगीश ।।

१०४. चौवीसे जिननां, सर्व साधवी सार।
अड़तालीस लाख ने, आठ से सत्तर हजार ॥

१०५. चेड़ानी पुत्री, राखी धर्म सुं प्रीत।
राजीमती विजया, मृगावती सुविनीत ॥

१०६. पद्मावती, मयणरेहा, द्रौपदी दमयंती सीत।
इत्यादिक सतियाँ, गई जमारो जीत ॥

१०७. चौवीसे जिननां, साधु साधवी सार।
गया मोक्ष देवलोके, हृदये राखो धार ॥

१०८. इण ढ़ाई द्वीप माँ करड़ा तपसी वाल।
शुद्ध पंच महाव्रतधारी, नमो नमो तिहुँकाल ॥

१०९. इण यतियों सतियों नां लीजे नितप्रति नाम।
शुद्ध मन थी ध्यावो, यह तिरण नो ठाम ॥

११०. इण यतियों सतियों सूं, राखो उज्वल भाव।
इम कहे ऋषि जयमल, एह तिरण नो दाव ॥

१११. संवत् अठारा ने वर्ष साते शिरदार।
गढ़ जालोर मांही, एह कह्यो अधिकार ॥

---

(१०६)

१. जिस ने राग-द्वेष कामादिक, जीते सब जग जान लिया।
सब जीवों को मोक्ष मार्ग का, निस्पृह हो उपदेश दिया॥

२. बुद्ध वीर, जिन हरिहर ब्रह्मा, या उसको स्वाधीन कहो।
भक्ति-भाव से प्रेरित हो, यह चित्त उसी में लीन रहो॥

३. विषयों की आशा नहीं जिनको, साम्य-भाव धन रखते हैं।
निज-पर के हित साधन में जो, निशि दिन तत्पर रहते हैं॥

४. स्वार्थ त्याग की कठिन तपस्या, बिना खेद जो करते हैं।
ऐसे ज्ञानी साधु जगत के, दुःख समूह को हरते हैं॥

५. रहे सदा सत्संग उन्हीं का, ध्यान उन्हीं का नित्य रहे।
उन्हीं जैसी चर्या में यह, चित्त सदा अनुरक्त रहे॥

६. नहीं सताऊँ किसी जीव को, झूठ कभी नहीं कहा करूँ।
पर धन वनिता पर न लुभाऊँ, संतोषामृत पिया करूँ॥

७. अहंकार का भाव न रक्खूं, नहीं किसी पर क्रोध करूँ।
देख दूसरों की बढ़ती को, कभी न ईर्ष्या भाव धरूँ॥

८. रहे भावना ऐसी मेरी, सरल सत्य व्यवहार करूँ।
बने जहाँ तक इस जीवन में, औरों का उपकार करूँ॥

९. मैत्री-भाव जगत में मेरा, सब जीवों से नित्य रहे।
दीन-दुखी जीवों पर मेरे, उर से करुणा-स्रोत बहे॥

१०. दुर्जन-क्रूर कुमार्ग-रतों पर, क्षोभ नहीं मुझको आवे।
साम्य-भाव रक्खूं मैं उन पर, ऐसी परिणति हो जावे॥

११. गुणी जनों को देख हृदय में, मेरे प्रेम उमड़ आवे।
बने जहाँ तक उनकी सेवा, कर के यह मन सुख पावे॥

१२. होऊँ नहीं कृतघ्न कभी मैं, द्रोह न मेरे उर आवे ।
गुण-ग्रहण का भाव रहे नित, दृष्टि न दोषों पर जावे ।।

१३. कोई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे ।
लाखों वर्षों तक जीऊँ या, मृत्यु आज ही आ जावे ।।

१४. अथवा कोई कैसा ही भय, या लालच देने आवे ।
तो भी न्याय मार्ग से मेरा, कभी न पद डिगने पावे ।।

१५. हो कर सुख में मग्न न फूलें, दुख में कभी न घबरावें ।
पर्वत नदी श्मशान भयानक, अटवी से नहीं भय खावें ।।

१६. रहें अडोल अकंप निरंतर, यह मन दृढ़तर बन जावे ।
इष्ट-वियोग अनिष्ट-योग में, सहन-शीलता दिखलावे ।।

१७. सुखी रहें सब जीव जगत के, कोई कभी न घबरावे ।
वैर, पाप अभिमान छोड़ जग, नित्य नये मंगल गावे ।।

१८. घर घर चर्चा रहे धर्म की, दुष्कृत दुष्कर हो जावें ।
ज्ञान चरित उन्नत कर अपना, मनुज-जन्म फल सब पावें ।।

१९. ईति भीति व्यापे नहीं जग में, वृष्टि समय पर हुआ करे ।
धर्म-निष्ठ होकर राजा भी, न्याय प्रजा का किया करे ।।

२०. रोग मरी दुर्भिक्ष न फैले, प्रजा शान्ति से जिया करे ।
परम अहिंसा धर्म जगत में, फैल सर्व-हित किया करे ।।

२१. फैले प्रेम परस्पर जग में, मोह दूर पर रहा करे ।
अप्रिय कटुक कठोर शब्द नहीं, कोई मुख से कहा करे ।।

२२. बन कर सब 'युगवीर' हृदय से, देशोन्नतिरत रहा करें ।
वस्तु-स्वरूप विचार खुशी से, सब दुख संकट सहा करें ।
वस्तु-स्वरूप विचार खुशी से, निजानन्द में रमा करें ।।

---

(११०)

१. प्रेम सहित वन्दों प्रथम, जिन-पद कमल अनूप ।
ताके सुमिरत अधम नर, होवत शांति स्वरूप ।।

२. तुम शरणे आयो प्रभु, राखि लेओ निज टेक ।
निर्विकल्प मम सिद्ध-प्रभु, देवो विमल विवेक ।

३. करूं वन्दना भावयुत, त्रिविध योग थिर धार ।।
रतन ! रतन सम देय मुझ, ज्ञान जवाहर सार ।।

४. उपाध्याय अध्ययन श्रुति, निशिदिन करत अभ्यास ।
दीनवन्धु मुझ दीजिये, सम दम ज्ञान विलास ।।

५. सो साधु वाधा हरो, कर्म-शत्रु रणजीत ।
निपुण जौहरी ज्यों लख्यो, आतम रतन पुनीत ।।

६. अधिक प्रिय नव रसन में, है रस शांति विशेष ।
स्थायी भाव निर्वेद से, मेटहु सकल कलेश ।।

७. विकलमति अभिलाप अति, कपट क्रिया गुण-चोर ।
मै चाहत कछु शांत रस, तुम से करूं निहोर ।।

८. कापे जाचूँ जाय कर, तुम सम नहीं दातार ।
करुणानिधि करुणा करी, दीजे शांति विचार ।।

९. मैं गुलाम हूं रावरो, मेरो विगरत काज ।
ताहि सुधारे वनि रहे, प्रभु मेरी तेरी लाज ।।

१०. शांति छवि निरखत रहूँ, जाचुं नही कछु और ।
अर्जी हुकम चढ़ायदो, पड्यो रहूँ तुम पौर ।।

११. जिहि गुणतें खुश होहु तुम, सो गुण नहीं लवलेश ।
तुम चरणन आश्रित रहूँ, सो वुद्धि देहु जिनेश ।।

१२. तड़पत दुखिया मैं अति, पलक परत नहीं चैन।
अब सुदृष्टि करि निरखिए, ढीले रहे बने न ॥

१३. यह संबंध भलो बन्यो, हम तुमसों सर्वज्ञ।
त्यागे ताहि न संग रखे, पिता पुत्र लखि अज्ञ ॥

१४. मेटहु कठिन कलेश तुम, परमातम परमेश।
दीन जानिके बकसिए, दिन-दिन ज्ञान विशेष ॥

१५. कृपा करो निर्बुद्धि पै, लखुँ ज्युँ अनुभव रीति।
अशुभ और शुभ को देखि कै, करूं न कबहूँ प्रीति ॥

१६. सब प्रकार धनवन्त हो, सुनिहो गरीब निवाज।
आर्त्त रौद्र कुध्यान तें, बकसि-बकसि महाराज ॥

१७. धर्म-शुक्ल ध्यावत रहूँ, दोय ध्यान सुखकार।
या जग ममता उदधि तें, दीजै पार उतार ॥

१८. करुणा करि के मेटिए, विषय-वासना रोग।
मैं कुपथी वेदन प्रबल, लख मत जोग अजोग ॥

१९. मै गरजी अरजी करूं, सुनिहौं जग-प्रतिपाल।
चाह सतावै दास को, यह दुःख दीजे टाल ॥

२०. प्रभु तव सम्मुख हो रहूँ, जग कुँ देऊँ पूठ।
कृपा दृष्टि अस करहु तुम, ज्युँ भव जावे छूट ॥

२१. मैंने जे कुकरम किये, दीखत है सब तोय।
मेहेर करो ज्यूं दीनपै, फेर न दुःख दें मोय ॥

२२. विपत्ति रही मोय घेर के, सुनी न अजहुँ पुकार।
मेरी बिरियाँ नाथ जी, कहां लगाई बार ?

२३. ऐसी बिरियाँ में कहां, टरि गए दीन दयाल ?
बिना कह्यां कैसे रहुँ, अब तो कर प्रतिपाल ॥

२४. जो कहलाऊँ और पै, मिटे न मम उर-झार।
मेरी तेरे सामने, मिटसी मन की रार॥

२५. दुष्ट अनेक उद्धारि के, थकि रहे क्या दयाल ?
धीरे-धीरे तारिए, मेरो भी लखि हाल॥

२६. अरे जीव ! भव वन विषे, तेरा कौन सहाय।
जाके कारण पचि रह्यो, ते तो तेरे नाय॥

२७. संसारी को देखिले, सुखी न एक लिगार।
अब तो पीछा-छोड़ि दे, मति धर सिर पर भार॥

२८. झूठे जग के कारणे, तूं मत कर्म बंधाय।
तूं तो रीता ही रहे, धन दूजा ही खाय॥

२९. तन धन सम्पति पाय के, मगन न हो मन माँय।
कैसे सुखिया होयगा, सोवे लाय लगाय॥

३०. ठाठ देख भूले मति, ए पुद्गल पर्याय।
देखत देखत थांहरे, जासी थिर न रहाय॥

३१. लूटेंगे ज्ञानादि धन, ठग सम यह संसार॥
मीठे वचन उच्चारि के, मोह फांसी गल डार॥

३२. किसो भूत तौं को लग्यो, करे न तनिक विचार।
ना माने तो परखि ले, मतलव को संसार॥

३३. काया ऊपर थांहरे, सव सौं अधिकी प्रीत।
या तो पहले सवन में, देगी दगो निचीत॥

३४. विषय दुःखन को सुख गिने, कहूँ कहां लगि भूल।
आंख छतां अंधा हुआ, जाणपणा में धूल॥

३५. नित-प्रति दीखत ही रहे, उदय अस्त गति भान।
अजहूँ न ज्ञान भयो कछू, तूं तो वड़ो अज्ञान॥

३६. किसके कहे निश्चित तूं, सिर पर फिरे जु काल।
वांधे है तो वांधि ले, पानी पहलां पाल ।।

३७. आया सो सब ही गया, अवतारादि विशेष।
तूं भी यूं ही जायगा, इणमें मीन न मेष ।।

३८. यो अवसर फिर ना मिले, अपनो मतलब सार।
चुकते दाम चुकाय दे, अब मति राखि उधार ।।

३९. कैसे गाफिल होरहा, नेड़ो आत करार।
निपजी खेती देय क्यों, वाटी सटे गँवार ?

४०. धर्म विहार कियो नहीं, कियो विषय विहार।
गाँठ खाय रीते चले, आकर जग हटवार ।।

४१. काज करत पर घरन के, अपनो काज विगार।
शीत निवारे जगत को, अपनी झोंपड़ी वार ।।

४२. नहीं विचार तूंने किया, करना था क्या काज।
उदय होयगा करम फल, तब उपजेगी लाज ।।

४३. झूँठे संसारीन की, छूटेगी जब लाज।
तब सुखिया तूं होयगा, इनसूं अलगा भाज ।।

४४. अपनी पूंजी सों करो, निश्चल कार-विहार।
वांध्या सो ही भोगले, मति कर और उधार ।।

४५. नया कर्म-ऋण काढ़ के, करसी कार-विहार।
देणा पड़सी पारका, किम होसी छुटकार ।।

४६. विषय-भोग किंपाक सम, लखि दुःखफल परिणाम।
जब विरक्त तूं होयगा, तब सुधरेगा काम ।।

४७. ऐरे मन मेरे पथिक ! तूं न जाव वह ठोर।
बटमारा पाँचों जहां, करे साहकूं चोर ।।

४८. आरम्भ विषय कषाय कुं, कीनी वहुत ही वार।
कछु कारज सरिया नहीं, उलटा हुआ खुवार॥
४९. चारों संज्ञा में सदा, स्वतः निपुण चित्त लाग।
गुरु समझावे कठिनसौं, उपजे तऊ न विराग॥
५०. ख़ैर हुआ जो कुछ हुआ, अव करनो नहीं जोग।
विना विचारयां जे किया, ताका ही फल भोग॥
५१. वुरा कहे कोऊ तो भणी, तो तूं भलो जु मान।
वूरा मीठा होत है, सव वनि हैं पकवान॥
५२. कटु तीक्ष्ण अति विष भरी, गाली शस्त्र समान।
अशुभ कर्म गुम्मड़ भिद्यो, यों जिय सुलटी मान॥
५३. कटुक वचन कोऊ कह दिया, लगे जुं दिल में तीर।
समदृष्टि यूं समझ ले, मोय जान्यो अति वीर॥
५४. वैरी होता तो कवहुं, नहीं कहता कटु वात।
सज्जन दीसे माहरा, रुज[1] लखि कटुक खवात॥
५५. औगुन सुनिके आपणां, रे जिय सुलटी धार।
मो गरीव को जानिके, लीना वोझ उतार॥
५६. मैं भूल्यो शुभ राह कुँ, इणने दई वताय।
दुर्जन जानि पर नहीं, सज्जन सो दरसाय॥
५७. अस्त ज्ञान सूरज हुयां, मैं भूल्यो निज लाह[2]।
निन्दा रूप मशाल ले, इणे दिखाई राह॥
५८. सुनि निन्दक के वचन को, चित्त मति करे उचाट।
यह दुर्गन्धित पवन अति, वहती कूं मति डाट॥
५९. कुवचन शर क्या कर सके, तूं होजा पाषाण।
तेरा कछु विगरे नहीं, वांका ही अपमान॥

[1] वीमारी [2] लाभ

६०. कुवचन गोली के लगे, जो ले मन को मार ।
आपहि ठंडी होयगी, होजा शीतल गार ।।

६१. तैंने ऊपर सौं कही, मैं तो समझी ठेठ ।
सब ही खटका मिट गया, एक रह गया पेट[1] ।।

६२. रे चेतन ! सुलटी समझ, तेरा सुधरचा काज ।
कुवचन धरोहर थांहरी, इणने सौंपी आज ।।

६३. होगी सो ही नीसरे, वस्तु भरी जिहिं मांहिं ।
याका ग्राहक मति बने, तेरे लायक नाहिं ।।

६४. अपणा अवगुण सुण करी, मति माने जिय रीस ।
मन में तूं यूँ समझ ले, मुझ को दे आसीस ।।

६५. क्रोध अग्नि दिल मति लगा, सुनि अजथारथ बोल ।
क्षमा रूप जल छिड़किए, नेक न लागे मोल ।।

६६. दुर्जन चुप होवे नहीं, तूं तो छिन चुप साधि ।
तृण विन परिहे अगनि कहुँ, आपहि होय समाधि ।।

६७. तूं तृण सम कटु वचन सुनि, क्रोध अग्नि मति दाझ ।
उपल[2] नीर सम करहु मन, तव मिलिहैं शिवराज ।।

६८. आई गई करि गालि कूं, क्रोध चण्डाल समान ।
नेत्र पिछानि चण्डालिनी, पल्लो पकड़े आन ।।

६९. प्रभु सहाय नहीं होंहिगे, रे जिय ! साँची जान ।
क्रोध करी ज्युं हो गयो, साधु रजक समान ।।

७०. आतम वस्त्र मैला लखी, इणने दीना धोई ।
कटुक वचन साबुन करी, निवल जानि के मोहि ।।

७१. जौहरी होकर मति करे, कुँजड़ी के संग रार ।
रतन बिखरसी थांहरा, भाजी सटे गँवार ।।

---

[1] परिणाम [2] पत्थर

७२. साला की गाली दई, ए विचार चित्त ठार।
भगिनी सम इणकी त्रिया, यों समझो व्रतधार ॥

७३. कृतघ्नी वननो नहीं, दई गालि इण मोहि।
अस आतम शीतल करो, मम उद्धार तव होहि ॥

७४. गालि एकहि होत है, पलटत होत अनेक।
रे जिय ! जो पलटे नहीं, तो वही एक की एक ॥

७५. अनन्त काल पहले प्रभु, देख रखे यह भाव।
परिहै कटु वच श्रवण में, ते किम टाले जाय ॥

(१११)

१. अय दिल चाहे परम पद, नर धीरज गुण धार।
निन्दा स्तुति अरु रिपु प्रिय, एकहि दृष्टि निहार ॥

२. धीरज धरि भ्रम को तजो, ए पुद्गल के ख्याल।
पर परछाँही पर रही, तूं तो चेतन लाल ॥

३. चंचलता को छोड़ि दे, धीरज की भरि हाट।
कर विहार गुण माल को, ज्यों होवे वहु ठाट ॥

४. निज गुण में जिय ठहर तूं, पर गुण पद मत धार।
पर रमणी सों राचि कर, मत कहलावे जार ॥

५. तम रजनी नाशे नहीं, दीपक की कहि वात।
पूरण ज्ञान उद्योत विन, हृदय भरम नहीं जात ॥

६. यथा लाभ सन्तोष कर, चहे न कछु मन वीच।
या विधि सुख अति अनुभवे, जो न फंसे दुख कीच ॥

७. मोह जनित दुःख विकलपन, अथवा सुख स्वरूप।
गिने दुहु सम धीर धर, तो न परे भव-कूप ॥

८. अपने अपने गुरान में, थिर हैं सब ही वस्तु।
तूं पिरा थिर कर अपन कुं, तो सुख लहे समस्त॥

९. सुख दुःख दोनों फिरत हैं, धूप-छाँह ज्यों मीत।
हर्ष शोक क्यों करत है, धीरज धार नचीत॥

१०. अनहोनी होवे नहीं, होनी नाहिं टलात।
दीखी परसी आगले, जो होनी ज्यां स्यात[१]॥

११. चाह किये कछु ना मिले, करके जहाँ तहाँ देख।
चाह छोड़ि धीरज धरहु, पग पग मिले विशेष॥

१२. सुनि उलझे मति रे जिया! कर विचार चुप साध।
यही अमोलक औषधि, मेटे भव-दुःख व्याध॥

१३. रे चेतन! संसार लखि, दृढ़ करि नेक विचार।
जैसी दे वैसी मिले, कूएँ की गुँजार॥

१४. चंचलता को छोड़ि के, काटि मोह गल-फाँस।
सम दम यम दृढ़ता किए, निज गुरा होय प्रकाश॥

१५. अभिलाषा कुं त्यागि के, मन कुं रख मजबूत।
जब कछु सूझे अगम की, यह सांची करतूत॥

१६. वो तो यहां की वस्तु है, जाकी तेरे चाय।
क्षरा इक धीरज धारिले, सहजे ही मिल जाय॥

१७. मत कर पर गुरा में रमरा, ज्यों न लगे गल-तोष[२]।
निश्चल रह निज गुरान में, आपही होगी मोक्ष॥

१८. निश्चलतासुं होयगा, यह जीव ब्रह्म समान।
तृरा ही का घृत होत है, गाय चरे पय पान॥

१९. जो तूं चाहे अमर पद, करि दृढ़ता अखत्यार।
वाल न वांका होयगा, जीवत ही मन मार॥

---

[१] होनी को ज्ञानी ने पहले ही देख रक्खा है, [२] गले में रस्सी का फंदा।

२०. धीरज गुण धारण किए, सब ही दुःख कट जाय ।
जैसे ठंडे लोह से, तत्ता लोह कटाय ।।

२१. जल जिमि निर्मल मधुर मृदु, करत तृषा का अन्त ।
इम धीरज गुण चार लखि, करो ग्रहण बुधवंत ।।

२२. कला घटत अरु वढ़त है, नहिं शशि-मंडल जानि ।
जन्म मरण गति देह की, यूं लखि धीरज ठानि ।।

२३. सुख दुःख दोनों एकसे, है समझन को फेर ।
एक शब्द दो अर्थ ज्यों, लाख टका को सेर ।।

२४. सुख दुःख दोऊ वेदे मती, वेदे तो सम भाय ।
जैसे मकरी जाल कुं, पूरे अरु खा जाय ।।

२५. समता कुं धारण किए, क्यों न डटे मन लहर ।
भरणी[1] सुनसुन के मिटै, स्यांपां[2] हंदा[3] जहर ।।

(११२)

१. कूकस[4] विषय-विकार सम, मति भखि मूढ़ गँवार ।
अनुभव रस तूं चाखि ले, गुरुमुख करि निर्धार ।।

२. किए पाठ अनुभव विना, मिटे न भीतर पाप ।
बाहर सीसी धोइ के, करी चहे तूं साफ ।।

३. अल्प भार पाषाण को, जिमि लागे जल मांहि ।
तिमि अनुभव बिच कर्म को, बहु बंधन व्है नाहिं ।।

४. मन वच तन थिरते हुए, जो सुख अनुभव मांहि ।
इन्द नरिंद-फनिंद के, ता समान सुख नाहिं ।।

५. अनुभव सों प्रभु मिलत है, अनुभव सुख को मूल ।
अनुभव चिंतामणि तजि, मति भटके कहूँ भूल ।।

---

[1] गारुड़ी मंत्री [2] सर्प [3] का [4] असार

६. अति अगाध संसार नद[1] विषय नीर गंभीर।
अनुभव विन पार न लहत, कोटि करहु तदबीर ।।

७. जिहिं विचार ते पाय है, मन को थिर सुख ठौर।
अनुभव ताको जानिए, अनुभव नहिं कछु और ।।

८. विना विचारे ज्ञान के, तूं जंगल को रोझ।
मिथ्या यों ही पचत है, क्यों न करे अव खोज ।।

९. मन-मतंग[2] वश करण हित ज्ञानांकुश चित्त धार।
क्षमा थंभसुं वांध कर, लज्जा शृंखल डार ।।

१०. भ्रमतो मन रवि डाटिले, ज्ञान मुकुर के म्यान।
विंदु शुभ उपयोग से, कर्म तूल[3] की हान ।।

११. सीसा सम संसार है, गुरु कृपा आदित्त[4]।
ज्ञान नेत्र विन किम लखे, आपनपो सुपवित्र ।।

१२. विषय-वासना करत जो, आवे ज्ञान जगीस[5]।
त्रेसठ काउन समय में, छिन में होत छत्तीस ।।

१३. जो तूं चाहे ज्ञान सुख, तो विषयन मन फेर।
और जगह भटके मती, अपने ही में हेर ।।

१४. ज्ञान रूप दीपक कने, वचे न कर्म पतंग।
जो रहे तो दोनून में, भूंठो एक प्रसंग ।।

१५. ज्ञान संचरे जिहिं समे, रहे न कर्म समाज।
और न पंछी वहां टिके, जहाँ बसेरा वाज ।।

१६. घर नहिं छूटयो एक सों, छूटयो कर्म कुढंग[6]
ज्ञान तणे सत्संग थी, देखो ठाणायंग ।।

---

[1] समुद्र [2] हाथी [3] रूई [4] सूर्य [5] संसार में [6] ऐसा प्राणी जिससे घर नहीं छूट सका पर कुकर्म या कुविचार छोड़ दिये हैं।

१७. क्षण इक ज्ञान विचार ले, विषम दृष्टि को फेर।
तेरी मेरी त्याग दे यों होवे सुलभ्केर॥

१८. आठ पहर ढिग राखिले, ज्ञान सरूपी ढाल।
मोह अरि के विषय सर, लगे न ताकी भाल॥

१९. माया मोह निवारि के, विषयन सों मन खींच।
जो सुख चाहो आपणो, रहो ज्ञान के बीच॥

२०. भेद लहे विन ज्ञान के, मति भूंसे ज्युँ श्वान।
लोग गडरिया चाल तजि, आपनपो पहिचान॥

२१. कामधेनु अरु कल्पतरु, इण भव सुख दातार।
इण-भव पर-भव दुहुन में, ज्ञान करे निस्तार॥

२२. जगत् मोह फाँसी प्रबल कटे न और उपाय।
सत्संगति कर ज्ञान की, सहज मुक्ति हो जाय॥

२३. बिच पारस अरु ज्ञान के, अन्तर जान महंत।
वह लोहा कंचन करे, यह गुण देय अनन्त॥

२४. प्रथम ज्ञान पीछे दया, यह जिन-मत को सार।
ज्ञान सहित क्रिया करो, तव उतरो भवपार॥

२५. अति आलस परमादियो, भज्जुलाल मुझ नाम।
ज्ञानोद्यम कछु ना हुए किम सुधरे मुझ काम॥

२६. दर्शन पिण निश्चल नहीं, नहीं निश्चल चारित्र।
मन भ्रमतो निशिदिन रहे, नहीं ठहरे एकत्र॥

२७. ऐसी करी विचारणा, रे जिय अव तो चेत।
चार वर्ण गुरु रतन जी, ऐसा करि संकेत॥

२८. चार वर्ण गुरु रतन जी तास भेद चौवीस।
तामें भेद जु तेरवें, करी ज्ञान वकसीस॥

२६. ज्ञान पाय हुलसी मती, शुक्ल छठ मधु मास।
सम्वत् रस अग्निक भू, (१६३६) रच्यो शान्ति परकाश ।।

३०. अरिहंत सिद्ध गणईश जी, उपाध्याय सब साध।
पंच परम गुरु दीजिये, निर्मल ज्ञान समाध ।।

प्रार्थी किसी भी प्रार्थ्य की किसी भी रूप में प्रार्थना करने हेतु भाव विभोर होकर उसमें तल्लीन एवं तन्मय होने की स्थिति में जब पहुंच जाता है, उस क्षण उसके लिये दिन-वार अथवा समय के सारे बन्धन सर्वथा निरर्थक हैं। फिर भी प्रारम्भिक श्रेणी के अभ्यासियों के लिये नीचे लिखे वारों के अनुसार उनके सामने लिखी संख्या वाले तीर्थंकर प्रभु की स्तुति करने का विनम्र सुझाव है :—

वार	चौबीसी की संख्या
१. रविवार	— ६
२. सोमवार	— ८
३. मंगलवार	— १२
४. बुधवार	— १३,१४,१५,१६,१७,१८,२१,२४,
५. वृहस्पतिवार	— १,२,३,४,५,७,१०,११,
६. शुक्रवार	— ६
७. शनिवार	— १६,२०,२२,२३।

(११३)

श्री विनयचन्द चौबीसी

१. श्री ऋषभनाथ

१. श्री आदीश्वर स्वामी हो, प्रणमूं सिरनामी तुम भणी।
प्रभु अंतरजामी आप, म्हो पर म्हेर करीजे हो,
मेटीजे चिन्ता मनतणी, म्हारा काटो पुराकृत पाप —
श्री आदीश्वर स्वामी ।।टेर।।

२. आदि धरम की कीधी हो, भरत क्षेत्र अवसर्पिणी काल में।
प्रभु जुगल्या धर्म निवार, पहिला नरवर मुनिवर हो।
तीर्थंकर जिन हुआ केवली, प्रभु तीरथ थाप्या चार–श्री०

३. मा 'मरु देवी' थांरी हो, गज हौदे मुक्ति पधारिया।
तुम जनम्यां ही प्रमाण, पिता 'नाभि' महाराजा हो।
भव देव तणो करी नर थया, प्रभु पाम्यां पद निर्वाण–श्री०

४. भरतादिक सौ नंदन हो, वे पुत्री 'ब्राह्मी-सुंदरी'।
प्रभु ए थांरा अंगजात, सघला केवल पाया हो।
समाया अविचल जोत में, कांई त्रिभुवन में विख्यात–श्री०

५. इत्यादिक वहु तार्या हो, जिन कुल में प्रभु तुम ऊपन्या।
कांई आगम में अधिकार, और असंख्या तार्या हो।
उद्धार्या सेवक आपरा, प्रभु शरणा ही आधार–श्री०

६. अशरण शरण कहीजे हो, प्रभु विरुद विचारो साहिव।
कांई कहो गरीव निवाज, शरण तुम्हारी आयो हो।
हूँ चाकर जिन चरणां तणो, म्हारी सुणिये अरज अवाज–श्री०

७. तूं करुणाकर ठाकुर हो, प्रभु धर्म दिवाकर जग गुरु।
कांई भव दुःख दुष्कृत टाल, 'विनयचंद' ने आपो हो।
प्रभु निजगुण संपत शाश्वती, प्रभु दीनानाथ दयाल–श्री०

२. श्री अजितनाथ

१. श्री जिन 'अजित' नमुं जयकारी तूं देवन को देवजी।
'जितशत्रु' राजा ने 'विजिया' राणी को, आतम जात तुमेव जी ॥
श्री जिन अजित नमुं जयकारी ॥टेर॥

२. दूजा देव घनेरा जग में, ते मुझ दाय न आवेजी।
तह मन तह चित्ते हमने, तूंहीज अधिक सुहावेजी–श्री०

३. सेव्या देव घणां भव-भव में, तो पिण गरज न सारी जी।
अब के श्री जिनराज मिल्यो तूं, पूरण पर उपकारीजी – श्री०

४. त्रिभुवन में जस उज्ज्वल तेरो, फैल रह्यो जग जाने जी।
वंदनीक पूजनीक सकल को, आगम एम वखाणे जी – श्री०

५. तूं जग जीवन अंतरजामी, प्राण आधार पियारो जी।
सब विधि लायक संत सहायक, भक्त-वत्सल पद धारोजी – श्री०

६. अष्ट सिद्धि नव निधि के दाता, तो सम और न कोई जी।
वधे तेज सेवक को दिन-दिन, जेथ-तेथ जय होई जी – श्री०

७. अनंत ज्ञान दर्शन संपत्ति ले, ईश भयो अविकारी जी।
अविचल भक्ति 'विनयचंद' को दो, तो जाणु रीझ तुम्हारी जी श्री

३. श्री सम्भवनाथ

१. आज म्हारा संभव जिन का, हित-चितसूं गुण गास्यां।
मधुर-मधुर स्वर राग अलापी, गहरे शब्द गुंजास्यां राज–आज०

२. नृप 'जीतार्थ' 'सेना' राणी, ता सुत सेवक थास्यां।
नवधा भक्ति भाव सुं करने प्रेम मगन हुई जास्यां राज–आज०

३. मन वच काय लाय प्रभू सेती, निसदिन सांस उसास्यां।
संभव जिनजी की मोहिनी मूरति हिये निरन्तर ध्यास्यां राज –

४. दीनदयाल दीन बंधु के, खानाजाद कहास्यां।
तन-धन प्राण समर्पी प्रभू को, इण विध वेग रिझास्यां राज–आज०

५. अष्ट कर्म-दल अति जोरावर, ते जीत्यां सुख पास्यां।
जालिम मोह मार को जामें, साहस करी भगास्यां राज–आज०

६. ऊवड़ पंथ तजी दुर्गति को, शुभ गति पंथ समास्यां।
आगम अरथ तणे अनुसारे, अनुभव दशा जगास्यां राज–आज०

७. काम क्रोध मद लोभ कपट तजि, निज गुण सुंलिव लास्यां।
'विनयचंद' संभव जिन तूठ्याँ, आवागमन मिटास्यां राज–आज०

४. श्री अभिनन्दन

१. श्री अभिनंदन दुःख निकन्दन, वन्दन पूजन योगजी।
आशा पूरो चिन्ता चूरो, आपो सुख आरोगजी – श्री०

२. 'संवर' राय 'सिधारथ' राणी, तेहनो आतमजात जी।
प्राण पियारो साहिब साँचो, तूंही मात ने तातजी – श्री०

३. कइयक सेव करे शंकर की, कइयक भजे मुरार जी।
गणपति सूर्य उमा कई सुमरे, हूँ सुमरूं अविकारजी – श्री०

४. देव कृपा सुं पामें लक्ष्मी, सो इण भव को सुखजी।
तूं तूठाँ इण भव पर भव में, कदी न व्यापै दुःखजी – श्री०

५. यद्यपि इन्द्र नरेन्द्र निवाजे, तदपि करत निहालजी।
तूं पूजनीक नरेंद्र इन्द्र को, दीनदयाल कृपालजी – श्री०

६. जब लग आवागमन न छूटे, तब लग है अरदासजी।
सम्पति सहित ज्ञान समकित गुण, पाऊं दृढ़ विश्वासजी – श्री०

७. अधम उधारन विरुद तिहारो, जोवो इण संसार जी।
लाज 'विनयचन्द' की अब तो तें, भवनिधि पार उतारजी – श्री०

५. श्री सुमतिनाथ

१. सुमति जिणेसर साहिबजी 'मेघरथ' नृप नो नंद।
'सुमंगला' माता तणो जी, तनय सदा सुखकंद –
प्रभू त्रिभुवन तिलोजी ॥

२. सुमति सुमति दातार, महा महिमा निलोजी।
प्रणमूं वार हजार, प्रभू त्रिभुवन तिलोजी – प्रभु०

३. मधुकर नो मन मोहियोजी, मालती कुसुम सुवास।
त्यूं मुझ मन मोह्यो सही, जिन महिमा सुविमास – प्रभु०

४. ज्यूं पङ्कज सूरजमुखीजी, विकसे सूर्य प्रकाश।
त्यूं मुझ मनड़ो गहगह्योजी, सुनि जिन चरित हुल्लास – प्रभु०

५. पपइयो पीउ-पीउ करेजी, जान वर्षाऋतु मेह।
त्यूं मो मन निसदिन रहे, जिन सुमिरण सूं नेह – प्रभु०

६. काम-भोग नी लालसाजी, थिरता न धरे मन।
पिण तुम भजन प्रताप थी, दाझै दुर्मति वन – प्रभु०

७. भवनिधि पार उतारियेजी, भक्त-वच्छल भगवान्।
'विनयचन्द' नी वीनती थें मानो कृपानिधान – प्रभु०

६. श्री पद्मप्रभु

१. पद्म प्रभु पावन नाम तिहारो, पतित उद्धारन हारो ।।टेर।।

जदपि धीवर, भील, कसाई, अति पापिष्ठ जमारो।
तदपि जीव-हिंसा तज प्रभु भज, पावै भवनिधि पारो – पद्म०

२. गौ ब्राह्मण प्रमदा वालक की, मोटी हत्या चारों।
तेहनो करणहार प्रभू भजने, होत हत्यासुं न्यारो – पद्म०

३. वैश्या चुगल छिनाल जुवारी, चोर महा वटमारो।
जो इत्यादि भजे प्रभु तोने, तो निवृत्ते संसारो – पद्म०

४. पाप पराल को पुंज वन्यो अति, मानो मेरु अकारो।
ते तुम नाम हुताशन सेती, सहजे प्रज्वलत सारो – पद्म०

५. परम धरम को मरम महा रस, सो तुम नाम उच्चारो।
या सम मंत्र नहीं कोई दूजो, त्रिभुवन मोहनगारो – पद्म०

६. तो सुमरण विन इण कलियुग में, अवर न को आधारो।
मैं वारी जाऊँ तो सुमिरन पर, दिन-दिन प्रीत बधारो – पद्म०

७. 'सुषमा' राणी को अंगजात तूं, 'श्रीधर' राय कुमारो।
'विनयचन्द' कहे नाथ निरंजन, जीवन प्राण हमारो – पद्म०

७. श्री सुपार्श्वनाथ

१. 'प्रतिष्ठसेन' नरेश्वर को सुत, 'पृथ्वी' तुम महतारी ।
सुगुण सनेही साहिब साँचो, सेवक ने सुखकारी –
श्री जिनराज सुपास, पूरो आस हमारी ।।टेर।।

२. धर्म काम धन मोक्ष इत्यादिक, मन वांछित सुख पूरो ।
वार-वार मुझ यही विनती, भवभव चिंता चूरो – श्रीजिन०

३. जगत् शिरोमणि भक्ति तिहारी, कल्पवृक्षसम जाणूं ।
पूरण ब्रह्म प्रभू परमेश्वर, भव-भव तुम्हें पिछाणूं – श्रीजिन०

४. हूँ सेवक तूं साहिब मेरो, पावन पुरुष विज्ञानी ।
जनम-जनम जित-तिथ जाऊँ तो, पालज्यो प्रीत पुरानी – श्रीजिन०

५. तारण-तरण शरण-अशरण को, विरुद इसो तुम सोहे ।
तो सम दीनदयाल जगत में, इन्द्र नरिन्द्र न को है – श्रीजिन०

६. स्वयंभूरमण वड़ो समुद्रों में, शैल सुमेर विराजै ।
तूं ठाकुर त्रिभुवन में मोटो, भक्ति कियां दु:ख भाजै – श्रीजिन०

७. अगम अगोचर तूं अविनाशी, अलख अखंड अरूपी ।
चाहत दरस 'विनयचंद' तेरो, सच्चिदानन्द स्वरूपी – श्रीजिन०

८. श्री चन्द्रप्रभ

जय जय जगत शिरोमणी, हूँ सेवक ने तूं धणी ।
अब तोसूं गाढ़ी वणी, प्रभु आशा पूरो हम तणी ।।टेर।।

१. मुझ महर करो, चन्दाप्रभु जग जीवन अन्तरजामी ।
भव दु:ख हरो सुणिये अरज हमारी त्रिभुवन स्वामी – मुझ०

२. 'चन्द्रपुरी' नगरी हती, 'महासेन' नामा नरपति ।
राणी 'श्रीलखमा' सती, तसु नन्दन तूं चढ़ती रति – मुझ०

३. तूं सर्वज्ञ महाज्ञाता, आतम अनुभव को दाता।
तूं तूठां लहिये साता, प्रभु धन्य जगत् में तुम ध्याता – मुझ०

४. शिव सुख प्रार्थना करसूं, उज्ज्वल ध्यान हिये धरसूं।
रसना तुझ महिमा करसूं, प्रभु इण विध भवसागर तिरसूं – मुझ०

५. चंद्र चकोरन के मन में, गाज अवाज हुवे घन में।
पिय अभिलाषा ज्यों त्रिय तनमें त्यों वसियो तूं मोचितवन में – मुझ०

६. जो सुनजर साहिब तेरी, तो मानो विनती मेरी।
काटो करम भरम वैरी, प्रभु पुनरपि नहीं परूँ भव फेरी – मुझ०

७. आतम-ज्ञान दशा जागी, प्रभु तुम सेती लिव लागी।
अन्य देव भ्रमणा भागी, प्रभु 'विनयचंद' तिहारो अनुरागी – मुझ०

९. श्री पुष्पदन्त (सुविधिनाथ)

१. 'काकंदी' नगरी भली हो, 'श्री सुग्रीव' नृपाल।
'रामा' तसु पट रायनी हो, तस सुत परम कृपाल –
श्री सुविधि जिनेश्वर वंदिये हो ।।टेर।।

२. त्यागी प्रभुता राजनी हो, लीनो संजमभार।
निज आतम अनुभव थकी हो, पाम्या पद अविकार – श्री०

३. अष्ट कर्म नो राजवी हो, मोह प्रथम क्षय कीन।
शुद्ध समकित चारित्र नो हो, परम क्षायिक गुण लीन – श्री०

४. ज्ञानावरणी दर्शनावरणी हो, अन्तराय कियो अन्त।
ज्ञान दर्शन बल ये तिहुँ हो, प्रगटचा अनन्तानन्त – श्री०

५. अव्यावाध सुख पामिया हो, वेदनीय करम खपाय।
अवगाहना अटल लही हो, आयु क्षय कर जिनराय – श्री०

६. नाम करम नो क्षय करी हो, अमूर्तिक कहाय।
अगुरु-लघु पणो अनुभव्यो हो, गोत्र करम मूकाय – श्री०

७. अष्ट गुणाकर ओलख्यो हो, ज्योति रूप भगवंत।
'विनयचंद' के उर बसो हो, अहोनिशि प्रभु पुष्पदंत – श्री०

१०. श्री शीतलनाथ

१. 'श्रीदृढ़रथ' नृप तों पिता, 'नंदा' थारी मांय।
रोम-रोम प्रभू मो भणी, शीतल नाम सुहाय ।।टेर।।

२. जय जय जिन त्रिभुवन धणी, करुणानिधि करतार।
सेव्यां सुरतरु जेहवा वांछित सुख दातार – जय०

३. प्राण पियारो तूं प्रभू, पतिव्रता पति जेम।
लगन निरंतर लग रही, दिन-दिन अधिको प्रेम – जय०

४. शीतल चंदन नी परे, जपतां निशदिन जाप।
विषय कषाय थी ऊपन्यो, मेटो भव-दुख ताप – जय०

५. आर्त्त रौद्र परिणाम थी, उपजे चिन्ता अनेक।
ते दुख कापो मानसिक, आपो अचल विवेक – जय०

६. रोगादिक क्षुधा - तृषा, शस्त्र - अशस्त्र प्रहार।
सकल शरीरी दुःख हरो, दिलसुं विरुद विचार – जय०

७. सुप्रसन्न होय शीतल प्रभू, तूं आशा विसराम।
'विनयचंद' कहे मो भणी, दीजे मुक्ति मुकाम – जय०

११. श्री श्रेयाँसनाथ

१. चेतन जाण कल्याण करण को, आन मिल्यो अवसर रे।
शास्त्र प्रमाण पिछाण प्रभु गुण, मन चंचल थिर कर रे –
श्रेयांस जिनन्द सुमर रे ।।टेर।।

२. सांस उसांस विलास भजन को, दृढ़ विश्वास पकर रे।
अजपाभ्यास प्रकाश हिये विच, सो सुमिरन जिनवर रे – श्रे०

३. कंदर्प क्रोध लोभ मद माया, ये सबही परिहर रे।
सम्यक्दृष्टि सहज सुख प्रगटे, ज्ञान दशा अनुसर रे – श्रे०

४. झूठ प्रपंच जोवन तन धन अरु, सजन सनेही घर रे।
छिन में छोड़ चले परभव को, बंध शुभाशुभ धर रे – श्रे०

५. मानस जनम पदारथ जा की, आशा करत अमर रे।
ते पूरव सुकृत कर पायो, धरम-मरम दिल धर रे – श्रे०

६. 'विश्वसेन' 'विस्ना' राणी को, नंदन तूं न बिसर रे।
सहज मिटे अज्ञान अविद्या, मुक्ति पंथ पग धर रे – श्रे०

७. तूं अविकार विचार आतम गुण, भ्रम जंजाल न पर रे।
पुद्गल चाह मिटाय विनयचन्द, तूं जिन ते न अवर रे – श्रे०

१२. श्री वासुपूज्य

१. प्रणमूं वासुपूज्य-जिन नायक, सदा सहायक तूं मेरो।
विषम वाट घाट भय थानक, परमाश्रय शरणो तेरो – प्र०

२. खल-दल प्रवल दुष्ट अति दारुण, जो चौ तरफ दियो घेरो।
तो पिण कृपा तुम्हारी प्रभुजी, अरियन होय प्रगटे चेरो – प्र०

३. विकट पहाड़ उजाड़ वीच कोई, चोर कुपात्र करे हेरो।
तिण विरियां करिये तो सुमिरन कोई न छीन सके डेरो – प्र०

४. राजा वादशाह जो कोई कोपे, अति तकरार करे छेरो।
तदपि तूं अनुकूल होय तो, छिन में छूट जाय सब केरो – प्र०

५. राक्षस भूत पिशाच डाकिनी, साकिनी भय नावे नेरो।
दुष्ट मुष्ट छल छिद्र न लागे, प्रभु तुम नाम भज्यां गहरो – प्र०

६. विस्फोटक कुष्टादिक संकट, रोग असाध्य मिटे सगरो ।
विष प्यालो अमृत होय प्रगमे, जो विश्वास जिनन्द तेरो – प्र०

७. मात 'जया' 'वसु' नृप के नन्दन, तत्व जथारथ वुध प्रेरो ।
वे कर जोड़ि 'विनयचन्द' विनवे, वेग मिटे मुझ भव फेरो – प्र०

१३. श्री विमलनाथ

विमल जिनेश्वर सेविये, थारी बुद्धि निर्मल हो जाय रे ।।

१. जीवा ! विषय-विकार विसार ने, तूं मोहनीय कर्म खपाय रे ।
जीवा विमल जिनेश्वर सेविये ।।टेर।।

२. सूक्ष्म साधारण पणे, प्रत्येक वनस्पति मांय रे ।
जीवा ! छेदन-भेदन तें सह्या, मर-मर उपज्यो तिण काय रे – जी०

३. काल अनन्त तिहां भम्यो, तेहना दुःख आगमथी संभाल रे ।
पृथ्वी अप तेउ वायु में, रह्यो असंख्यासंख्य काल रे – जी०

४. एकेन्द्री सूं वेइन्द्री थयो, पुण्याई अनन्ती वृद्धि रे ।
जीवा ! सन्नी पचेन्द्री लगे पुण्य वध्यां, अनन्तानन्त प्रसिद्ध रे – जी०

५. देव नरक तिरयंच में, अथवा मानव भव वीच रे ।
जीवा ! दीनपणे दुःख भोगव्या, इण चारों ही गति वीच रे – जी०

६. अव के उत्तम कुल मिल्यो, भेट्या उत्तम गुरु साध रे ।
जीवा! सुण जिन वचन सनेह से, समकित व्रत शुद्ध आराध रे – जी०

७. पृथ्वीपति 'कृतभानु' को, 'सामा' राणी को कुमार रे ।
जीवा ! 'विनयचन्द' कहे ते प्रभु, सिर सेहरो हिवड़ा रो हार रे – जी०

१४. श्री अनन्तनाथ

१. अनन्त जिनेश्वर नित नमूं, अद्भुत जोत अलेख ।
ना कहिये ना देखिये, जाके रूप न रेख – अ०

२. सूक्ष्म थी सूक्ष्म प्रभु, चिदानन्द चिद्रूप।
पवन शब्द आकाशथी, सूक्ष्म ज्ञान स्वरूप – अ०

३. सकल पदारथ चिन्तवूं, जे-जे सूक्ष्म होय।
तिणथी तूं सूक्ष्म महा, तो सम अवरन कोय – अ०

४. कवि पण्डित कही-कही थके, आगम अर्थ विचार।
तो पण तुम अनुभव तिको, न सके रसना उचार – अ०

५. आप भणे मुख सरस्वती, देवी आपों आप।
कही न सके प्रभु तुम सत्ता, अखल अजप्पा जाप – अ०

६. मन वुध वाणी तो विषे, पहुंचे नहीं लिगार।
साक्षी लोकालोकनी, निर्विकल्प निर्विकार – अ०

७. मा 'सुजसा' 'सिंहरथ' पिता, तस सुत 'अनन्त' जिनन्द।
'विनयचन्द' अब ओलख्यो, साहिब सहजानन्द – अ०

१५. श्री धर्मनाथ

१. धरम जिनेश्वर मुझ हिवड़े वसो, प्यारो प्राण समान।
कबहूँ न विसरूं हो चितारूं नहीं, सदा अखंडित ध्यान – ध०

२. ज्यूं पनिहारी कुम्भ न विसरे, नटवो नृत्य निदान।
पलक न विसरे हो पदमनी पियुभणी, चकवी न विसरे भान – ध०

३. ज्यूं लोभी मन धन की लालसा, भोगी के मन भोग।
रोगी के मन माने औषधि, जोगी के मन जोग – ध०

४. इण पर लागी पूरण प्रीतड़ी, जाव जीव परियन्त।
भव-भव चाहूँ हो न पड़े आंतरो, भव भंजन भगवन्त – ध०

५. काम-क्रोध मद मत्सर लोभथी, कपटी कुटिल कठोर।
इत्यादिक अवगुण कर हूँ भर्‌यो, उदय कर्म के जोर – ध०

६. तेज प्रताप तुम्हारो प्रगटे, मुझ हिवड़ा में आय।
तो हूँ आतम निज गुण संभालने, अनन्त वली कहिवाय – ध०

७. 'भानु' नृप 'सुव्रता' जननी तणो, अंगजात अभिराम।
'विनयचन्द' ने वल्लभ तूं प्रभू, शुद्ध चेतन गुणधाम – ध०

१६. श्री शांतिनाथ

१. 'विश्वसेन' नृप 'अचला' पटरानी,
तस सुत कुल सिणगार हो सौभागी।
जन्मत शान्ति करी निज देश में,
मरी मार निवार हो सौभागी – शां०

२. शान्ति जिनेश्वर साहिव सोलमां,
शान्तिदायक तुम नाम हो सौभागी।
तन मन वचन सुध करि ध्यावतां,
पूरे सघली आस हो सौभागी – शां०

३. विघन न व्यापे तुम सुमिरन कियां,
नासे दारिद्र दुःख हो सौभागी।
अष्ट सिद्धि नव निधि पग-पग मिले,
प्रगटे सघला सुख हो सौभागी – शां०

४. जेहने सहायक शान्ति जिनन्द तूं,
तेहने कमीय न काय हो सौभागी।
जे जे कारज मन में तेवड़े,
ते-ते सफला थाय हो सौभागी – शां०

५. दूर दिसावर देश प्रदेश में,
भटके भोला लोग हो सौभागी।
सानिधकारी सुमरन आपरो,
सहज मिटे सहू शोक हो सौभागी – शां०

६. आगम-साख सुणी छे एहवी,
जे जिण सेवक होय हो सौभागी।
तेहनी आशा पूरे देवता,
चौंसठ इन्द्रादिक सोय हो सौभागी–शां०

७. भव-भव अन्तरजामी तुम प्रभु,
हमने छे आधार हो सौभागी।
वेकर जोड़ 'विनयचन्द' विनवे,
आपो सुख श्रीकार हो सौभागी–शां०

१७. श्री कुन्थुनाथ

१. कुन्थु जिनराज तूं ऐसो, नहीं कोई देव तों जैसो।
त्रिलोकी नाथ तूं कहिये, हमारी वांह दृढ़ गहिये–कुन्थु०

२. भवोदधि डूवतो तारो, कृपानिधि आसरो थारो।
भरोसो आपको भारी, विचारो विरुद उपकारी–कुन्थु०

३. उमाहो मिलन को तोसे, न राखो आंतरो मोसे।
जैसी सिद्ध अवस्था तेरी, वैसी चैतन्यता मेरी–कुन्थु०

४. करम-भ्रम जाल को दपट्यो, विषय सुख ममत में लपट्यो।
भ्रम्यो हूँ चहुं गती मांहीं, उदयकर्म भरम की छांही–कुन्थु०

५. उदय को जोर है जौलों, न छूटे विषय सुख तौलों।
कृपा गुरुदेव की पाई, निजातम भावना भाई–कुन्थु०

६. अजव अनुभूति उर जागी, सुरत निज रूप में लागी।
तुम्हीं हम एकता जाणूं–द्वैत भ्रम कल्पना मानूं–कुन्थु०

७. 'श्रीदेवी' 'सूर' नृप नन्दा, अहो सर्वज्ञ सुखकन्दा।
'विनयचन्द' लीन तुम गुण में; न व्यापे अविद्या मन में–कुन्थु०

१८. श्री अरहनाथ

१. अरहनाथ अविनाशी शिव सुख लीधो,
विमल विज्ञान विलासी, साहव सीधो–

२. चेतन भज तूं अरहनाथ ने, ते प्रभु त्रिभुवन राय।
तात 'सुदर्शन' 'देवी' माता, तेहनो पुत्र कहाय – सा०

३. क्रोड़ जतन करतां नहीं पामें, एहवी मोटी माम।
ते जिन भक्ति करी ने लहिये, मुक्ति अमोलक ठाम – सा०

४. समकित सहित कियां जिन भगती, ज्ञान दर्शन चारित्र।
तप वीरज उपयोग तिहारा, प्रगटे परम पवित्र – सा०

५. स्व उपयोग सरूप चिदानन्द, जिनवर ने तूं एक।
द्वैत अविद्या विभ्रम मेटो, वाधे शुद्ध विवेक – सा०

६. अलख अरूप अखंडित अविचल, अगम अगोचर आप।
निर्विकल्प निकलंक निरंजन, अद्भुत जोति अमाप – सा०

७. ओलख अनुभव अमृत याको, प्रेम सहित रस पीजे।
हूँ तूं छोड़ 'विनयचन्द' अन्तर, आतमराम रमीजे – सा०

१९. श्री मल्लिनाथ

मल्लि जिन वाल ब्रह्मचारी,
'कुम्भ' पिता 'परभावती' मइया तिनकी कुंवारी ॥टेर॥

१. मां नी कूंख कन्दरा मांही, उपना अवतारी।
मालती कुसुम-मालनी वांछा, जननी उर धारी – मल्लि०

२. तिणथी नाम मल्लि जिन थाप्यो, त्रिभुवन प्रियकारी।
अद्भुत चरित तुम्हारो प्रभुजी, वेद धर्‍यो नारी – मल्लि०

३. परणन काज जान सज आए, भूपति छः भारी।
मिथिला पुर घेरी चौतरफा, सेना विस्तारी – मल्लि०

४. राजा 'कुम्भ' प्रकाशी तुम पे, बीती विधि सारी।
छहुँ नृप जान सजी तो परणन, आया अहंकारी – मल्लि०

५. श्रीमुख धीरप दीधी पिता ने, राखो हुशियारी।
पुतली एक रची निज आकृति, थोथी ढकवारी – मल्लि०

६. भोजन सरस भरी सा पुतली, श्री जिन सिणगारी।
भूपति छः बुलवाया मन्दिर, बिच बहु दिन टारी – मल्लि०

७. पुतली देख छहुं नृप मोह्या, अवसर विचारी।
ढांक उघाड़ दियो पुतली को, भभक्यो अन्न भारी – मल्लि०

८. दुसह दुर्गन्ध सही ना जावे, ऊठ्या नृप हारी।
तब उपदेश दियो श्रीमुख से, मोह दशा टारी – मल्लि०

९ महा असार उदारिक देही, पुतली इव प्यारी।
संग कियां भटके भव-दुख में, नारि नरक – द्वारी – मल्लि०

१०. भूपति छः प्रतिबोध मुनि हो, सिद्धगति सम्भारी।
'विनयचन्द' चाहत भव-भव में, भक्ति प्रभु थारी – मल्लि०

२०. श्री मुनिसुव्रतस्वामी

१. श्री मुनिसुव्रत साहिबा, दीन दयाल देवां तणां देव के।
तारण तरण प्रभु मो भणी, उज्ज्वल चित्त सुमरूं नितमेव के – श्री०

२. हूं अपराधी अनादि को, जनम-जनम गुनाह किया भरपूर के।
लूटिया प्राण छः कायना, सेविया पाप अठारह क्रूर के – श्री०

३. पूर्व अशुभ कर्त्तव्यता, तेहने प्रभु तुम न विचार के।
अधम उधारण विरुद छे, सरण आयो अब कीजिये सार के – श्री०

४. किंचित पुण्य परभावथी, इण भव ओलख्यो श्रीजिन धर्म के।
निवर्तूं नरक निगोदथी, एहवो अनुग्रह करो परिब्रह्म के – श्री०

५. साधुपणो नहीं संग्रह्यो, श्रावक व्रत न किया अंगीकार के।
आदरचा तो न आराधिया, तेहथी रुलियो हूँ अनन्त संसार के–श्री०

६. अब समकित व्रत आदर्यो, तेहने आराधि हूँ उतरूं भव पार के।
जनम जीतव्य सफलो हुवे, इण पर विनवूं बार हजार के–श्री०

७. 'सुमति' नराधिप तुम पिता, धन-धन श्री 'पदमावती' मायके।
तस सुत त्रिभुवन तिलक तूं, वंदत 'विनयचन्द' सीस नवाय के–श्री०

२१. श्री नमिनाथ

१. 'विजयसेन' नृप 'विप्राराणी', नमीनाथ जिन जायो।
चौंसठ इन्द्र कियो मिल उत्सव, सुर नर आनन्द पायो रे –
सुज्ञानी जीवा भजले जिन इकवीसवां ।।टेर।।

२. भजन कियां भव-भवना दुष्कृत, दुःख दुर्भाग्य मिट जावे।
काम, क्रोध, मद, मत्सर, तृष्णा, दुर्मति निकट न आवे रे–सु०

३. जीवादिक नव तत्व हिये धर, हेय ज्ञेय समझीजे।
तीजो उपादेय ओलख ने, समकित निरमल कीजे रे–सु०

४. जीव अजीव बंध ये तीनों, ज्ञेय जथारथ जानो।
पुण्य पाप आस्रव परिहरिये, हेय पदारथ मानो रे–सु०

५. संवर मोक्ष निर्जरा निज गुण, उपादेय आदरिये।
कारण कारज जाण भलि विध, भिन-भिन निरणो करिये रे–सु०

६. कारण ज्ञान स्वरूप जीव को, कारज किया पसारो।
दोनूं को साखी शुद्ध अनुभव, आपो खोज तिहारो रे–सु०

७. तूं सो प्रभु प्रभु सो तूं है, द्वैत कल्पना मेटो।
सच्चिद् आनन्दरूप 'विनयचन्द', परमातम पद भेंटो रे–सु०

२२. श्री नेमिनाथ

'समुद्रविजय' सुत श्री नेमीश्वर, जादव कुल को टीको ।

१. रत्न कुक्ष धारिणी 'शिवादे', तेहनो नन्दन नीको ।।
श्रीजिन मोहनगारो छे, जीवन प्राण हमारो छे – टेर

२. सुन पुकार पशु की करुणा कर, जानि जगत् सुख फीको ।
नव भव नेह तज्यो जोवन में, उग्रसेन नृप धी को – श्रीजि०

३. सहस्र पुरुष संग संजम लीधो, प्रभुजी पर उपकारी ।
धन-धन नेम राजुल की जोड़ी, महा बाल-ब्रह्मचारी – श्रीजि०

४. बोधानन्द स्वरूपानन्द में, चित्त एकाग्र लगायो ।
आतम-अनुभव दशा अभ्यासी, शुक्लध्यान जिन ध्यायो – श्रीजि०

५. पूर्णानन्द केवली प्रगटे, परमानन्द पद पायो ।
अष्टकर्म छेदी अलवेसर, सहजानन्द समायो – श्रीजि०

६. नित्यानन्द निराश्रय निश्चल, निर्विकार निर्वाणी ।
निरातंक निरलेप निरामय, निराकार वरनाणी – श्रीजि०

७. एहवो ज्ञान समाधि संयुत, श्री नेमीश्वर स्वामी ।
पूरण कृपा 'विनयचन्द' प्रभु की, अब तो ओलख पामी – श्रीजि०

२३. श्री पार्श्वनाथ

१. 'अश्वसेन' नृप कुल तिलोरे, 'वामा दे' नो नन्द ।
चिन्तामणी चित में वसेरे, दूर टले दुःख द्वन्द ।।
जीवरे तूं पार्श्व जिनेश्वर वन्द ।।टेर।।

२. जड़ चेतन मिश्रित पणेरे, करम शुभाशुभ थाय ।
ते विभ्रम जग कल्पना रे, आतम अनुभव न्याय – जीवरे०

३. वेहमी भय माने जथारे, सूने घर वैताल ।
त्यूं मूरख आतम विषेरे, मान्यो जग भ्रम जाल – जीवरे०

४. सर्प अन्धारे रासड़ी रे, रूपो सीप मझार।
मृगतृष्णा अंबू मृषा रे, त्यूं आतम में संसार – जीवरे०

५. अग्नि विषे ज्यूं मणि नहीं रे, मणि में अग्नि न होय।
सपने की सम्पति नहीं ज्यूं, आतम में जग जोय – जीवरे०

६. बांझ पुत्र जनमे नहीं रे, सींग शशै सिर नांय।
कुसुम न लागे व्योम में रे, त्यूं जग आतम मांय – जीवरे०

७. अमर अजोनी आतमा रे, है निश्चय तिहुं काल।
'विनयचन्द' अनुभव थकी रे, तूं निज रूप सम्हाल – जीवरे०

२४. श्री महावीर

१. श्री महावीर नमो वरनाणी, शासन जेहनो जाण रे प्राणी।
धन-धन जनक 'सिद्धारथ' राजा, धन 'त्रिशलादे' मात रे प्राणी।।

२. ज्यां सुत जायो गोद खिलायो, 'वर्धमान' विख्यात रे प्राणी।
प्रवचन सार विचार हिया में, कीजे अरथ प्रमाण रे प्राणी।।

३. सूत्र विनय आचार तपस्या, चार प्रकार समाध रे प्राणी।
ते करिये भवसागर तरिये, आतम भाव अराध रे प्राणी।।

४. ज्यों कंचन तिहु काल कहीजे, भूषण नाम अनेक रे प्राणी।
त्यों जगजीव चराचर जोनि, है चेतन गुण एक रे प्राणी।।

५. अपणो आप विषै थिर आतम, सोहं हंस कहाय रे प्राणी।
केवल ब्रह्म पदारथ परिचय, पुद्गल भरम मिटाय रे प्राणी।।

६. शब्द रूप रस गंध न जामें, न सपरस तप छांह रे प्राणी।
तिमिर उद्योत प्रभा कुछ नाहीं, आतम अनुभव मांहि रे प्राणी।।

७. सुख दुःख जीवन मरण अवस्था, ए दस प्राण संगात रे प्राणी।
इनथी भिन्न 'विनयचन्द' रहिये, ज्यों जल में जलजात रे प्राणी।।

कलश

चौवीस तीरथनाथ कीरति, गावतां मन गह-गहै ।
कुंभट गोकुलचन्द-नन्दन, विनयचन्द इण पर कहै ।।
उपदेश पूज्य हमीर मुनि को, तत्त्व निज उर में धरी ।
उगणीश-सौ-छः के छमच्छर, महास्तुति यह पूरण करी ।।

---

(११४)

चौवीस जिन चिन्ह

१. वृषभ चिन्ह ऋषभ को, अजित को गजराज ।
संभव को अश्व, अभिनन्दन को कपि है ।।
सुमति प्रभु को क्रौंच, कमल पद्म प्रभुजी को ।
स्वस्तिक सुपार्श्व अरू, चन्द्र चन्द्रप्रभ को ।।

२. मकर सुविधि को चिन्ह, शीतल को है श्रीवत्स ।
श्रेयांस को गेंडा, वासुपूज्य को महिष है ।।
विमल वराह, श्येन अनन्त, वज्र धर्मनाथ ।
शान्ति को हरिण, कुंथुनाथजी को छाग है ।।

३. नन्द्यावर्त अरजी को, मल्ली को कलश पुनि ।
कूर्म मुनिसुव्रत, नीलोत्पल नमि जिन को ।।
शंख नेमिनाथजी को, पारस को सर्पराज ।
गजसिंह कहे चिन्ह, सिंह महावीर को ।।

(११५)

आनन्द घन चौबीसी के कुछ स्तवन

१. श्री ऋषभ जिन-स्तवन

(राग – मारु)

१. ऋषभ जिनेश्वर प्रीतम माहरो रे, और न चाहुं रे कंत।
रीझ्यो साहिब संग न परिहरे रे, भांगे सादि अनंत – ऋषभ०

२. प्रीतसगाई रे जगमां सहु करे रे, प्रीतसगाई न कोय।
प्रीत सगाई रे निरुपाधिक कही रे, सोपाधिक धन खोय – ऋषभ०

३. कोई कंत कारण काष्ठ भक्षण करे रे, मलशुं कंतने धाय।
ए मेलो नहीं कहिये संभवे रे, मेलो ठाम न ठाय – ऋषभ०

४. कोई पतिरंजन अति घणो तप करे रे, पतिरंजन तन ताप।
ए पतिरंजन में नहीं चित्त धर्युं रे, रंजन धातु मिलाप – ऋषभ०

५. कोई कहे लीला रे अलख अलखतणो रे, लख पूरे मन आश।
दोषरहितने लीला नहीं घटे रे, लीला दोष विलास – ऋषभ०

६. चित्त प्रसन्ने रे पूजन फल कह्युं रे, पूजा अखंडित एह।
कपट रहित थइ आतम अरपणा रे, 'आनंदघन' पदएह – ऋषभ०

२. श्री अजित जिन-स्तवन

(राग – आशावरी)

१. पंथड़ो निहालुं रे वीजा जिनतणो रे, अजित अजित गुणधाम।
जे तें जीत्या रे ते मुझ जीतियो रे, पुरुष किश्यं मुझ नाम ? – पं०

२. चरमनयण करी मारग जोवतां रे, भूल्यो सकल संसार।
जेणे नयणे करी मारग जोइए रे, नयण ते दिव्य विचार – पं०

३. पुरुष परंपर अनुभव जोवतां रे, अंधोअंध पुलाय।
वस्तु विचारे रे जो आगमें करीरे, चरण धरण नहीं ठाय – पं०

४. तर्क विचारे रे वाद परंपरा रे, पार न पहोंचे कोय।
अभिमत वस्तु रे वस्तुगते कहे रे, ते विरला जग जोय – पं०
५. वस्तु विचारे रे दिव्य नयणतणो रे, विरह पड्यो निरधार।
तरतम जोगे रे तरतम वासना रे, वासित बोध आधार – पं०
६. काललब्धि लही पंथ निहालशुं रे, ए आशा अवलंब।
ए जन जीवे रे जिनजी जाणजो रे, 'आनंदघन' मत अंब – पं०

३. श्री संभव जिन स्तवन
(राग – रामश्री)

१. संभवदेव ते धुर सेवो सवेरे, लही प्रभु सेवन भेद।
सेवन कारण पहली भूमिका रे, अभय, अद्वेष, अखेद – संभव०
२. भय चंचलता हो जे परिणामनी रे, द्वेष अरोचक भाव।
खेद प्रवृत्ति हो करतां थाकीए रे, दोष सबोध लखाव – संभव०
३. चरमावर्त्त हो चरम करण तथा रे, भव परिणति परिपाक।
दोष टले वली दृष्टि खुले भली रे, प्राप्ति प्रवचन वाक् – संभव०
४. परिचित पातिक घातक साधुशुं रे, अकुशल अपचय चेत।
ग्रन्थ अध्यातम श्रवण मनन करी रे, परिशीलन नय हेत – संभव०
५. कारण जोगे हो कारज नीपजे रे, एमां कोई न वाद।
पण कारण विन कारज साधिये रे, ए निज मत उन्माद – संभव०
६. मुग्ध सुगम करी सेवन आदरे रे, सेवन अगम अनूप।
दीजो कदाचित् सेवक याचना रे, 'आनंदघन' रसरूप – संभव०

४. श्री अभिनन्दन जिन-स्तवन
(राग – धनाश्री सिंधुड़ा)

१. अभिनंदन जिन दर्शन तरसिये, दर्शन दुर्लभ देव।
मत मत भेदे रे जो जइ पूछिये, सहु थापे अहमेव – अभि०

ामान्ये करी दरिशण दोहिलुं, निर्णय सकल विशेष ।
मदमें घिरचो रे अंधो केम करे, रवि-शशि रूप विलेख – अभि०

हेतु विवादे हो चित धरी जोईए, अति दुर्गम नयवाद ।
आगमवादे हो गुरुगम को नहीं, ए सबलो विखवाद – अभि०

घाती डूँगर आड़ा अति घणा, तुझ दरिशण जगनाथ ।
ढ़िठाई करी मारग संचरूं, सगा कोई न साथ – अभि०

. दर्शन दर्शन रटतो जो फिरुं, तो रण रोझ समान ।
जेहने पिपासा हो अमृत पान की, किम भांजे विषपान ? – अभि०

. तरस न आवे हो मरण जीवन तणो, सीजे जो दर्शन काज ।
दरिशण दुर्लभ सुलभ कृपा थकी, आनंदघन महाराज – अभि०

५. श्री सुमति जिन-स्तवन

(राग – वसंत – केदारा)

१. सुमति चरणकमल आतम अर्पणा, दर्पण जेम अविकार; सुज्ञानी ।
मति तर्पण वहु सम्मत जाणिये, परिसर्पण सुविचार; सुज्ञानी ।।

२. त्रिविध सकल तनुधर गत आतमा, वहिरातम धुरि भेद; सुज्ञानी ।
बीजो अंतर आतम तीसरो, परमातम अविच्छेद; सुज्ञानी ।।

३. आतम वुद्धे कायादिक ग्रह्यो, वहिरातम अघरूप; सुज्ञानी ।
कायादिक नो हो साखी धर रह्यो, अंतर आतम रूप; सुज्ञानी ।।

४. ज्ञानानंदे हो पूरण पावनो, वर्जित सकल उपाधि; सुज्ञानी ।
अतींद्रिय गुणगणमणि आगरु, एम परमातम साध; सुज्ञानी ।।

५. बहिरातम तजी अंतर आतमा, रूप थइ स्थिर भाव; सुज्ञानी ।
परमातमनुं हो आतम भाववुं, आतम अर्पण दाव; सुज्ञानी ।।

६. आतम अर्पण वस्तु विचारतां, भरम टले मति दोष; सुज्ञानी ।
परम पदारथ संपत्ति संपजे, 'आनंदघन' रस पोष; सुज्ञानी ।।

६. श्री पद्मप्रभ जिन-स्तवन

(राग – मारु – सिंधुड़ा)

१. पद्मप्रभु जिन तुझ मुझ आंतरु रे, किम भांजे भगवंत ?
कर्म विपाके कारण जोईने रे, कोई कहे मतिमंत – पद्म०

२. पयइ ठिइ अणुभाग प्रदेशथी रे, मूल उत्तर बहु भेद ।
घाती अघाती हो वंधोदय उदीरणा रे, सत्ता कर्म विच्छेद – पद्म०

३. कनकोपलवत् पयडि पुरुषतणी रे, जोड़ी अनादि स्वभाव ।
अन्य संजोगी जिहां लगे आतमा रे, संसारी कहेवाय – पद्म०

४. कारण जोगे हो वांधे वंधने रे, कारण मुगति मूकाय ।
आश्रव संवर नाम अनुक्रमें रे, हेय ऊपादेय सुणाय – पद्म०

५. युंजन कारणे हो अंतर तुझ पड्यो रे, गुण कारणे करी भंग ।
ग्रन्थ उक्ते करी पंडित जने कह्यो रे, अंतर भंग सुअंग – पद्म०

६. तुझ मुझ अंतर अंतर भांजशे रे, वाजशे मंगल तूर ।
जीव सरोवर अतिशय वाधशे रे, 'आनंदघन' रसपूर – पद्म०

७. श्री सुपार्श्व जिन-स्तवन

(राग – सारंग – मल्हार)

१. श्री सुपार्श्वजिन वंदीए, सुख संपत्तिनो हेतु; ललना ।
शांत सुधारस जलनिधि, भवसागर मां सेतु; ललना – श्रीसु०

२. सात महाभय टालतो, सप्तम जिनवर देव; ललना ।
सावधान मनसा करी, धारो जिनपद सेव; ललना – श्रीसु०

३. शिवशंकर जगदीश्वर, चिदानंद भगवान्; ललना ।
जिन अरिहा तीर्थंकरू, ज्योतिस्वरूप असमान; ललना – श्रीसु०

४. अलख निरंजन वच्छलु, सकल जंतु विसराम; ललना।
अभयदान दाता सदा, पूरण आतमराम; ललना – श्रीसु०

५. वीतराग मत कल्पना, रति अरति भय सोग; ललना।
निद्रा तंद्रा दुरंदशा, रहित अबाधित योग; ललना – श्रीसु०

६. परम पुरुप परमातमा, परमेश्वर परधान; ललना।
परम पदारथ परमेष्ठी, परमदेव परमान; ललना – श्रीसु०

७. विधि विरंचि विश्वंभरू, हृषीकेष जगनाथ; ललना।
अघहर अघमोचन धणी, मुक्ति परमपद साथ; ललना – श्रीसु०

८. एम अनेक अभिधा धरे, अनुभवगम्य विचार; ललना।
जे जाणे तेहने करे, 'आनंदघन' अवतार; ललना – श्रीसु०

८. श्री चंद्रप्रभ जिन-स्तवन

(राग – केदारा – गौड़)

१. देखण दे-रि सखी मुझने देखण दे, चंद्रप्रभु मुख चंद – सखी०
उपशम रसनो कंद सखी, गत कलिमल दुखद्वंद – सखी०

२. सूक्षम निगोदे न देखीओ सखी, बादर अतिही विशेष – सखी०
पुढवी आउ न लेखियो सखी, तेउ वाउ न लेश – सखी०

३. वनस्पति अति घण दिहा, सखी दीठो नहीं दीदार – सखी०
बे तिय चउरिंदिय जललीहा, सखी गतसन्नी पण धार – सखी०

४. सुर तिरि निरय निवासमां, सखी मनुज अनारज साथ – सखी०
अपज्जत्ता प्रतिभासमां सखी, चतुर न चढ़ीओ हाथ – सखी०

५. एम अनेक थल जाणीए, सखी दर्शन विणु जिनदेव – सखी०
आगम थी मत जाणीए, सखी कीजे निर्मल वसे – सखी०

६. निर्मल साधु भक्ति लही, सखी, योग अवंचक होय – सखी०
क्रिया अवंचक तिम सही, सखी फल अवंचक जोय – सखी०

७. प्रेरक अवसर जिनवरु सखी, मोहनीय क्षय जाय – सखी०
कामित पूरण सुरतरु सखी, 'आनंदघन' प्रभु पाय – सखी०

१०. श्री शीतल जिन-स्तवन

(राग – धनाश्री – गौड़)

१. शीतल जिनपति ललित त्रिभंगी, विविध भंगी मन मोहे रे।
करुणा कोमलता तीक्षणता, उदासीनता सोहे रे – शीतल०

२. सर्व जंतु हितकरणी करुणा, कर्म विदारण तीक्षण रे।
हानादान रहित परिणामी, उदासीनता वीक्षण रे – शीतल०

३. पर दुःख छेदन इच्छा करुणा, तीक्षण पर दुःख रीझे रे।
उदासीनता उभय विलक्षण, एक ठामे केम साजे रे – शीतल०

४. अभयदान ते मलक्षय करुणा, तीक्षणता गुण भावे रे।
प्रेरक विण कृति उदासीनता, एम विरोध मति नावे रे – शीतल०

५. शक्ति व्यक्ति त्रिभुवन प्रभुता, निर्ग्रंथता संयोगे रे।
योगी भोगी वक्ता मौनी, अनुपयोगी उपयोगे रे – शीतल०

६. इत्यादिक वहुभंग त्रिभंगा, चमत्कार चित्त देती रे।
अचरजकारी चित्र विचित्रा, 'आनंदघन' पद लेती रे – शीतल०

११. श्री श्रेयांस जिन-स्तवन

(राग – गौड़)

१. श्री श्रेयाँस जिन अंतरजामी, आतमरामी नामी रे।
अध्यातम मत पूरण पामी, सहज मुक्तिगति गामी रे – श्रीश्रे०

२. सकल संसारी इंद्रियरामी, मुनि गुण आतमरामी रे।
मुख्यपणे जे आतमरामी, ते केवल निष्कामी रे – श्रीश्रे०

३. निज स्वरूप जे किरिया साधे, तेह अध्यातम लहिये रे।
जे किरिया करी चउगति साधे, ते न अध्यातम कहिये रे – श्रीश्रे०

४. नाम अध्यातम ठवरण अध्यातम, द्रव्य अध्यातम छंडो रे।
भाव अध्यातम निजगुण साधे, ते तेहशुं रड़ मंडो रे – श्रीश्रे०

५. शब्द अध्यातम अर्थ सुणीने, निर्विकल्प आदरजो रे।
शब्द अध्यातम भजना जाणी, हान ग्रहण मति धरजो रे – श्रीश्रे०

६. अध्यातमी जे वस्तु विचारी, बीजा वधा लवासी रे।
वस्तुगते जे वस्तु प्रकाशे, 'आनंदघन' मतवासी रे – श्रीश्रे०

१२. श्री वासुपूज्य जिन-स्तवन

(राग – गोडी तथा परज)

१. वासुपूज्य जिन त्रिभुवन स्वामी, घननामी परनामी रे।
निराकार साकार सचेतन, करम करम फल कामी रे – वासु०

२. निराकार अभेद संग्राहक, भेद ग्राहक साकारो रे।
दर्शन ज्ञान दुभेद चेतना, वस्तु ग्रहण व्यापारो रे – वासु०

३. कर्त्ता परिणामी परिणामो, कर्म के जीव करिये रे।
एक अनेक रूप नयवादे, नियते नर अनुसरिये रे – वासु०

४. दुःख-सुख रूप कर्मफल जाणो, निश्चय एक आनंदो रे।
चेतनता परिणाम न चूके, चेतन कहे जिन चंदो रे – वासु०

५. परिणामी चेतन परिणामो, ज्ञान कर्म फल भावी रे।
ज्ञान कर्म फल चेतन कहिये, ले जो तेह मनावी रे – वासु०

६. आतमज्ञानी श्रवण कहावे, बीजा तो द्रव्यलिंगी रे।
वस्तुगते जे वस्तु प्रकाशे, 'आनंदघन' मत संगी रे – वासु०

१३. श्री विमल जिन-स्तवन

(राग – मल्हार)

१. दु:ख दोहग्ग दूरे टल्या रे, सुख संपदशुं भट,
धींग धणी माथे कियो रे, कोण गंजे नर खेट ?
विमल जिन दीठा लोयण आज, मारा सिध्या वांछित काज – वि०

२. चरण कमल कमला वसे रे, निर्मल स्थिर पद देख।
समल अस्थिर पद परिहरे रे, पंकज पामर पेख – वि०

३. मुझ मन तुझ पदपंकजे रें, लीनो गुण मकरंद।
रंक गणे मंदर-धरा रे, इन्द्र चन्द्र नागेन्द्र – वि०

४. साहेव ! समरथ तूं धणी रे, पाम्यो परम उदार।
मन विसरामी वालहो रे, आतम को आधार – वि०

५. दरिशण दीठे जिण तणो रे, संशय न रहे वेध।
दिनकर करभर पसरता रे, अंधकार प्रतिषेध – वि०

६. अमीय भरी मूरति रची रे, उपमा न घटे कोय।
शांत सुधारस झीलती रे, निरखत तृप्ति न होय – वि०

७. एक अरज सेवक तणी रे, अवधारो जिनदेव।
कृपा करी मुझ दीजिए रे, 'आनंदघन' पद सेव – वि०

१४. श्री अनंत जिन-स्तवन

(राग – रामग्री – कडखा)

१. धार तलवारनी सोहिली दोहिली,
चौदहवां जिनतणी चरण सेवा।
धारपर नाचता देख वाजीगरा,
सेवना धार पर रहे न देवा – धा०

२. एक कहे सेविये विविध किरिया करी,
फल अनेकांत लोचन न देखे।
फल अनेकांत किरिया करी वापड़ा,
रड़वड़े चार गति मांहे लेखे–धा०

३. गच्छना भेद बहु नयण निहालतां,
तत्वनी वात करतां न लाजे।
उदर भरणादि निज काज करता थकां,
मोह नड़िया कलिकाल राजे–धा०

३. वचन निरपेक्ष व्यवहार झूठो कह्यो,
वचन सापेक्ष व्यवहार सांचो।
वचन निरपेक्ष व्यवहार संसार फल,
सांभली आदरी कांई राचो–धा०

५. देव गुरु धर्मनी शुद्धि कहो केम रहे ?
केम रहे शुद्ध श्रद्धान आणो।
शुद्ध श्रद्धान विण सर्व किरिया करी,
छार पर लीपणु तेह जाणो–धा०

६. पाप नहीं कोई उत्सूत्र भाषण जिस्यो,
धर्म नहीं कोई जग सूत्र सरीखो।
सूत्र अनुसार जे भविजन क्रिया करे,
तेहनुं शुद्ध चारित्र परिखो–धा०

७. एह उपदेशनो सार संक्षेपथी,
जे नरा चितमां नित्य ध्यावे।
ते नरा दिव्य बहु काल सुख अनुभवी,
नियत 'आनंदघन' राज गावे–धा०

१५. श्री धर्मनाथ जिन-स्तवन

(राग – गोड़ी)

१. धर्म जिनेश्वर गाऊं रंग शुं, भंग मत पड़शो हो प्रीत–जिनेश्वर।
बीजो मन मंदिर आणु नहीं, ए अम कुलवट रीत – धर्म०

२. धरम धरम करतो जग सहु फिरे, धरम न जाणे हो मर्म – जिने०
धरम जिनेश्वर चरण ग्रह्या पछी, कोई न वांधे हो कर्म – धर्म०

३. प्रवचन अंजन जो सद्गुरु करे, देखे परम निधान – जिने०
हृदय नयण निहाले जगधणी, महिमा मेरु समान – धर्म०

४. दौड़त दौड़त दौड़त दौड़ियो, जेती मननी रे दौड़ – जिने०
प्रेम प्रतीत विचारो ढूंकड़ी, गुरुगम लीजो रे जोड़ – धर्म०

५. एक पखी केम प्रीति परपड़े ? उभय मिल्या होय संधि – जिने०
हूँ रागी हूँ मोहे फंदियो, तू निरागी निरबंध – धर्म०

६. परम निधान प्रगट मुख आगले, जगत उल्लंघी हो जाए – जिने०
ज्योति विना जुओ जगदीशनी, अंधोअंध पुलाय – धर्म०

७. निर्मल गुणमणि रोहण भूधरा, मुनिजन मानस हंस – जिने०
धन्य ते नगरी धन्य वेला घड़ी, माता पिता कुल वंश – धर्म०

८. मन मधुकर वर कर जोड़ी कहे, पद पंकज निकट निवास – जिने०
घननामी 'आनंदघन' सांभलो, ए सेवक अरदास – धर्म०

१६. श्री शांतिनाथ जिन-स्तवन

(मल्हार)

१. शांति जिन एक मुझ विनती, सुणो त्रिभुवन राय रे।
शांतिस्वरूप केम जाणिये ?, कहो मन केम परखाय रे ? – शांति०

२. धन्य तूं आतम जेहने, एहवो प्रश्न अवकाश रे।
धीरज मन धरी सांमलो, कहुं शांति प्रतिभाश रे – शांति०

३. भाव अविशुद्ध सुविशुद्ध जे, कह्या जिनवर देव रे।
ते तेम अवितत्थ सद्दहे, प्रथम ए शांतिपद सेवे रे – शांति

४. आगमधर गुरु समकिती, किरिया संवर सार रे।
संप्रदायी अवंचक सदा, शुचि अनुभव आधार रे – शांति

५. शुद्ध आलंबन आदरे, तजी अवर जंजाल रे।
तामसी वृत्ति सर्व परिहारी, भजे सात्त्विक साल रे – शांति

६. फल विसंवाद जेहमां नहीं, शब्द ते अर्थ संबंधि रे।
सकल नयवाद व्यापी रह्यो, ते शिव साधन संधि रे – शांति

७. विधि प्रतिषेध करी आतमा, पदारथ अविरोध रे।
ग्रहण विधि महाजने परिग्रह्यो, इस्यो आगमे बोध रे – शांति

८. दुष्ट जन संगति परिहरि, भजे सुगुरु संतान रे।
जोग सामर्थ्य चित्त भाव जे, धरे मुगति निदानरे – शांति

९. मान अपमान चित्त सम गणे, सम गणे कनक पाषाण रे।
वंदक निंदक सम गणे, इस्यो होय तूं जाण रे – शांति०

१०. सर्व जग जन्तुने सम गणे, गणे तृण मणि भाव रे।
मुक्ति संसार बेहु सम गणे, मुणे भव-जलनिधि नाव रे – शांति०

११. आपणो आतम भाव जे, एक चेतनाधार रे।
अवर साथ संयोग थी, एह निज परिकर सार रे – शांति०

१२. प्रभु मुखथी एम सांभली, कहे आतमराम रे।
ताहरे दरिशणे निस्तर्यो, मुझ सिध्यां सवि काम रे – शांति०

१३. अहो! अहो! हुं मुझने कहुं, नमो मुझ नमो मुझ रे।
अमित फल दान दातारनी, जेहनी भेट थइ तुझ रे – शांति०

१४. शांति स्वरूप संक्षेपथी, कह्यो निज पर रूप रे।
आगम मांहे विस्तार घणो, कह्यो शाँति जिनभूप रे – शांति०
१५. शांति स्वरूप एम भावशे, धरी शुद्ध प्रणिधान रे।
'आनंदघन' पद पामशे, ते लहेशे बहुमान रे – शांति०

१७. श्री कुँथुनाथ जिन-स्तवन
(गुर्जरी – रामकली)

१. कुँथुजिन ! मनडुं किमही न बाझे हो कुंथुजिन,
मनडुं किमही न बाझे,
जिम जिम जतन करीने राखुं, तिम तिम अलगुं भागे हो – कुंथु०
२. रजनी वासर वसति ऊजड़, गयण पायाले जाय।
साप खाये ने मुखडुं थोथूं, एह उखाणो न्याय हो – कुंथु०
३. मुगति तणा अभिलाषी तपिया, ज्ञान अने ध्यान अभ्यासे।
वयरीडुं कांइ एह वुं चिंते, नांखे अवले पासे हो – कुंथु०
४. आगम आगमधरने हाथे, नावे किणविधि आंकुं।
किहां कणे जो हठ करी हटकुं, तो व्यालतणी परे वांकुं हो – कुँथु०
५. जो ठग कहुँ तो ठगतो न देखुं, साहूकार पण नांहि।
सर्व मांहे ने सहुथी अलगुं, ए अचरज मनमांही हो – कुंथु०
६. जे जे कहुँ ते कान न धारे, आप मते रहे कालो।
सुर नर पंडित जन समझावे, समझे न मारो सालो हो – कुंथु०
७. मैं जाण्युं ए लिंग नपुंसक, सकल मरदने ठेले।
बीजी वाते समरथ छे नर, एहने कोई जेले हो – कुंथु०
८. मन साध्युं तेणे सघलुं साध्युं, एह वात नहीं खोटी।
एम कहे साध्युँ ते नवि मानुं, ए कही वात छे मोटी हो – कुंथु०
९. मनडुं दुराराध्य ते वश आण्युं, ते आगमथी मति आणुं।
'आनंदघन' प्रभु माहरु आणो, तो साचुं करी जाणूं हो – कुंथु०

१८. श्री अरनाथ जिन-स्तवन

(राग – मारु)

१. धरम परम अरनाथनो, केम जाणु भगवंत रे ?
स्व पर समय समजावीए, महिमावंत महंत रे – ध०

२. शुद्धातम अनुभव सदा, स्व समय एह विलास रे।
परबडी छांहड़ी जे पड़े, ते पर समय निवास रे – ध०

३. तारा नक्षत्र ग्रह चंदनी, ज्योति दिनेश मझार रे।
दर्शन ज्ञान चरण थकी, शक्ति निजातम धार रे – ध०

४. भारी पीलो चीकणो, कनक अनेक तरंग रे।
पर्याय दृष्टि न दीजिए, एक ज कनक अभंग रे – ध०

५. दर्शन ज्ञान चरण थकी, अलख स्वरूप अनेक रे।
निर्विकल्प रस पीजिए, शुद्ध निरंजन एक रे – ध०

६. परमारथ पंथ जे कहे, ते रंजे एक तंत रे।
व्यवहारे लख जे रहे, तेहना भेद अनंत रे – ध०

७. व्यवहारे लख दोहिलो, कांई न आवे हाथ रे।
शुद्ध नय स्थापना सेवतां, नवि रहे दुविधा साथ रे – ध०

८. एक पखी लख प्रीतनी, तुम साथे जगन्नाथ रे।
कृपा करीने राख जो चरण तले ग्रही हाथ रे – ध०

९. चक्री धरम तीरथ तणो, तीरथ फल तत्त सार रे।
तीरथ सेवे ते लहे, 'आनंदघन' निरधार रे – ध०

१९. श्री मल्लि जिन-स्तवन

(राग – काफी)

१. सेवक केम अवगणिये हो मल्लि जिन, ए अब शोभा सारी।
अवर जेहने आदर अति दिये, तेहने मूल निवारी हो – म०

२. ज्ञान स्वरूप अनादि तमारुं, ते लीधुं तमें ताणी।
जुओ अज्ञानदशा रीसावी, जातां काण न आणी हो–म०
३. निद्रा सुपन जागर उजागरता, तुरिय अवस्था आवी।
निद्रा सुपन दशा रीसाणी, जाणी न नाथ मनावी हो–म०
४. समकित साथे सगाई कीधी, सपरिवार सुं गाढी।
मिथ्यामति अपराधण जाणी, घरथी वाहिर काढ़ी हो–म०
५. हास्य अरति रति शोक दुगंछा, भय पामर करसावी।
नो कषाय श्रेणिगज चढ़तां, श्वानतणी गति झाली हो–म०
६. राग द्वेष अविरतिनी परिणति, ए चरण मोहना योधा।
वीतराग परिणति परिणमतां ऊठी नाठा बोधा हो–म०
७. वेदोदय कामा परिणामा, काम्य कर्म सहु त्यागी।
निःकामा करुणा रस सागर, अनंत चतुष्क पद पागी हो–म०
८. दान विघन वारी सहु जनने, अभयदान पद दाता।
लाभ विघन जग विघन निवारक, परम लाभ रस माता हो–म०
६. वीर्य विघन पंडित वीर्ये हणी, पूरण पदवी योगी।
भोगोपभोग दोय विघन निवारी, पूरण भोग सुभोगी हो–म०
१०. ए अढार दूषण वरजित तनु, मुनिजन–वृंदे गाया।
अविरति रूपक दोष निरूपण, निर्दूषण मन भाया हो–म०
११. इण विध परखी मन विसरामी, जिनवर गुण जे गावे।
दीन बंधुनी महेर नजरथी, 'आनंदघन' पद पावे हो–म०

२०. श्री मुनिसुव्रत जिन-स्तवन

(राग – काफी)

मुनिसुव्रत जिनराज! एक मुझ विनति निसुणो–मु०
१. आतमतत्व कयुं जाण्युं ? जगतगुरु! एह विचार मुझ कहियो।
आतमतत्व जाण्या विण निर्मल, चित्त समाधि नवि लहियो–मु०

२. कोई अबंध आतमतत्त माने, किरिया करतो दीसे।
क्रिया तणुं फल कहो कुण भोगवे ? इम पूछ्यूं चित्त रीसे – मु०

३. जड़ चेतन ए आतम एकज, स्थावर जंगम सरिखो।
सुख दुःख संकट दूषण आवे, चित्त विचारजो परिखो – मु०

४. एक कहे नित्यज आतमतत्त, आतम दरशण लीनो।
कृतविनाश अकृतागम दूषण, नवि देखे मति हीणो – मु०

५. सौगत मति रागी कहे वादी, क्षणिक ए आतम जाणो।
बंध मोक्ष सुख दुःख नवि घटे, एह विचार मन आणो – मु०

६. भूत चतुष्क वर्जित आतमतत्त,सत्ता अलगी न घटे।
अंध शकट जो नजरे न देखे, तो शुं कीजे शकटे ? – मु०

७. एम अनेक वादी मत – विभ्रम, संकट पडियो न लहे।
चित समाधि ते माटे पूछुं, तुम विण तत्व कोई न कहे – मु०

८. वलतुं जगगुरु इणिपरे भाखे, पक्षपात सब छंडी।
राग द्वेष मोह पख वर्जित, आतमसुं रड़ मंड़ी – मु०

९. आतम ध्यान करे जो कोउ, सो फिर इण में नावे।
वाग्जाल बीजुं सहु जाणे, एह तत्व चित्त चावे – मु०

१०. जेणे विवेक धरी ए पख ग्रहियो, ते तत्वज्ञानी ! कहिये।
श्री मुनिसुव्रत ! कृपा करो तो, 'आनंदघन' पद लहिये – मु०

२१. श्री नमिनाथ जिन-स्तवन

(राग – आशावरी)

१. षड् दर्शन जिन – अंग भणीजे, न्यास षटअंग जो साधे रे।
नमि जिनवरना चरण उपासक, षड्दरशन आराधे रे – षड्०

२. जिन सुर पादप पाय वखाणूं, सांख्य योग दोय भेदे रे।
आतम-सत्ता विवरण करता, लहो दुग अंग अखेदे रे – षड्०

३. भेद अभेद सुगत मीमांसक, जिनवर दोय कर भारी रे।
लोकालोक अवलंबन भजिये, गुरुगमथी अवधारी रे – षड्०

४. लोकायत्ति कूख जिनवरनी, अंश विचार जो कीजे रे।
तत्व-विचार जो कीजे रे, गुरुगम विण किम पीजे रे ? – षड्०

५. जैन जिनेश्वर वर उत्तम अंग, अंतरंग वहिरंगे रे।
अक्षर न्यास धरा आराधक, आरावे धरी संगे रे – षड्०

६. जिनवरमां सघला दर्शन छे, दर्शने जिनवर भजना रे।
सागरमां सघली तटिनी सही, तटिनीमां सागर भजना रे – षड्०

७. जिनस्वरूप थई जिन आराधे, ते सही जिनवर होवे रे।
भृंगी इलिका ने चटावे, ते भृंगी जग जोवे रे – षड्०

८. चूर्णि भाष्य सूत्र निर्युक्ति, वृत्ति परंपर अनुभव रे।
समय-पुरुषना अंग कह्या ए, जे छेदे ते दुर्भव रे – षड्०

९. मुद्रा वीज धारणा अक्षर, न्यास अर्थ विनियोगे रे।
जे ध्यावे ते नवि वंचीजे, क्रिया अवंचक भोगे रे – षड्०

१०. श्रुत अनुसार विचारी वोलुं, सुगुरु तथाविध न मिले रे।
क्रिया करी नवि साधि शकिये, ए विषवाद चित्त सघले रे – षड्०

११. ते माटे ऊभो कर जोड़ी, जिनवर आगल कहिये रे।
समय चरण सेवा शुद्ध देजो, जिम 'आनंदघन' लहिये रे – षड्०

२२. श्री नेमिनाथ जिन-स्तवन

(राग – मारुणि)

१. अष्ट भवांतर व्हालही रे, तूं मुझ आतमराम; मनरा व्हाला
मुगति स्त्रीशुं आपणे रे, सगपण कोई न काम – मन०

२. घर आवो हो वालिम घर आवो, मारी आशाना विश्राम – म०
रथ फेरो हो साजन रथ फेरो, साजन ! मारा मनोरथ साध – म०

३. नारी पखो श्यो नेहलो रे ?, सांच कहे जगनाथ – म०
ईश्वर अर्द्धांगे धरी रे, तूं मुझ झाले न हाथ – म०
४. पशु जननी करुणा करी रे, आणी हृदय विचार – म०
माणसनी करुणा नहीं रे, ए कुण घर आचार ? – म०
५. प्रेम कल्पतरु छेदियो रे, धरियो योग धतूर – म०
चतुराइरो कुण कहो रे, गुरु मिलियो जग सूर – म०
६. मारुं तो एमां कंइ नहीं रे, आप विचारो राज – म०
राजसभा में बेसतां रे, किसड़ी बधसी लाज ? – म०
७. प्रेम करे जगजन सहु रे, निरवाहे ते और – म०
प्रीत करीने छोड़ी दे रे, तेसुं न चाले जोर – म०
८. जो मनमां एहवुं हतुं रे, निसपति करत न जाण – म०
निसपति करीने छांड़ता रे, माणस हुये नुकसाण – म०
९. देतां दान संवत्सरी रे, सहु लहे वंछित पोष – म०
सेवक वंछित नवि लहे रे, ते सेवकनो दोष – म०
१०. सखी कहे ए सामलो रे, हुं कहुं लक्षण सेत – म०
इण लक्षण सांची सखी रे, आप विचारो हेत – म०
११. रागीसुं रागी सहु रे, वैरागी श्यो राग ? म०
राग विना किम दाखवो रे ?, मुगति सुंदरी माग – म०
१२. एक गुह्य घटतुं नथी रे, सघलो जाणे लोक – म०
अनेकांतिक भोगवो रे, ब्रह्मचारी गतरोग – म०
१३. जिण जोणी तुमने जोउं रे, तिण जोणी जुवो राज – म०
एक वार मुझने जुवो रे, तो सीझे मुझ काज – म०
१४. मोहदशा धरी भावना रे, चित्त लहे तत्व विचार – म०
वीतरागता आदरी रे, प्राणनाथ ! निरधार – म०

१५. सेवक पण ते आदरे रे, तो रहे सेवक माम – म०
आशय साथे चालिये रे, एहीज रूडूं काम – म०

१६. त्रिविध योग धरी आदर्यो रे, नेमनाथ भरतार – म०
धारण पोषण तारणो रे, नव-रस मुगताहार – म०

१७. कारणरूपी प्रभु भज्यो रे, गण्यो न काज अकाज – म०
कृपा करी मुझ दीजिए रे, 'आनंदघन' पद-राज – म०

२३. श्री पार्श्वनाथ जिन-स्तवन

(राग-सारंग)

१. ध्रुव पद रामी हो स्वामी ! माहरा,
निःकामी गुणराय; सुज्ञानी ।
निज गुण कामी हो पामी तूं धणी,
ध्रुव आरामी हो थाय – सुज्ञानी०

२. सर्वव्यापी कहे सर्व जाणपणे,
परपरिणमन स्वरूप, सुज्ञानी ।
पर रूपे करी तत्वपणुं नहीं,
स्व सत्ता चिद्रूप – सुज्ञानी०

३. ज्ञेय अनेक हो ज्ञान अनेकता,
जल-भाजन रवि जेम; सुज्ञानी ।
द्रव्य एकत्वपणे गुण एकता,
निज पद रमता हो खेम – सुज्ञानी०

४. पर क्षेत्रे गत ज्ञेयने जाणवे,
पर क्षेत्रे थयुं ज्ञान; सुज्ञानी ।
अस्तिपणुं निज क्षेत्रे तुमे कह्यो,
निर्मलता गुमान – सुज्ञानी०

५. ज्ञेय विनाशे हो ज्ञान विनश्वरु,
काल प्रमाणे रे थाय; सुज्ञानी।
स्वकाले करी स्वसत्ता सदा,
ते पर रीते न जाय – सुज्ञानी०

६. परभावे करी परता पामता,
स्वसत्ता थिरठाण; सुज्ञानी।
आत्म चतुष्कमयी परमां नहीं,
तो यिम सहुनो रे जाण ? – सुज्ञानी०

७. अगुरुलघु निज गुण ने देखतां,
द्रव्य सकल देखंत; सुज्ञानी।
साधारण गुणनी साधर्म्यता,
दर्पण जल दृष्टांत – सुज्ञानी०

८. श्री पारस जिन पारस रस समो,
पण इहां पारस नहीं; सुज्ञानी।
पूरण रसियो हो निज गुणपरसनो,
'आनंदघन' मुझ मांहि – सुज्ञानी०

२४. श्री महावीर जिन-स्तवन

(राग – धना श्री)

१. वीरजीने चरणे लागुं, वीरपणुं ते मागुं रे।
मिथ्या मोह तिमिर भय भागुं, जीत नगारुं वाग्युं रे – वीर०

२. छउमत्थ वीर्य लेस्या संगे, अभिसंधिज मति अंगे रे।
सूक्ष्म मूल क्रियाने रंगे, योगी थयो उमंगे रे – वीर०

३. असंख्य प्रदेशे वीर्य असंखे, योग असंखित कंखेरे।
पुद्गल गण तेणे लेशुं विशेषे, यथाशक्ति मति लेखे रे – वीर०

४. उत्कृष्टे वीर्यने वेसे, योग क्रिया नवि पेसे रे।
योगीत ध्रुवताने लेसे, आतमशक्ति न खेसे रे–वीर०

५. काम वीर्य वशे जिम भोगी, तेम आतम थयो भोगी रे।
सूरपणे आतम उपयोगी, थाय तेह अयोगी रे–वीर०

६. वीर पणु ते आतम ठाणे, जाण्युं तुमरी वाणे रे।
ध्यान विन्नाणे शक्ति प्रमाणे, निज ध्रुव पद पहिचाणे रे–वीर०

७. आलंवन साधन जे त्यागे, पर परिणतिने भागे रे।
अक्षय दर्शन ज्ञान वैरागे, 'आनंदघन' प्रभु जागे रे–वीर०

---

(११६)

१. अरणक मुनिवर चाल्या गोचरी, धरती दाझै ज्यूं शीशो जी।
पांय उभराणा रे सिर-पद जले, तन सुकुमाल मुनीश्वरो जी–अर०

२. मुख कमल ज्यांरा मालती फूल ज्यूं, ऊभो गोखे हेठो जी।
भरी दुपहरी में दीख्यो एकलो, मोहिनी स्वामिनी दीठो जी–अर०

३. वयण रंगीली रे नयणा विंधिया रिख ढव्यो तिण ठामोजी।
दासी ने कहे जाय उतर वलि, रिख तेड़ी ने लाओ जी–अरणक०

४. पावन कीजे हो मुझ घर-आंगणो, बेहरो मोदक सारोजी।
नवजोवन मेरी काया कांई दहो, सफल करो जमारोजी–अरणक०

५. अरणक अरणक मां करती फिरे, गलियां गलियां भमारोजी।
कहो किण दीठो रे मारो वालूड़ो, लारे वहु नर नारो जी–अरणक०

६. तिहां थी उतरी ने जननी पाय नमीयो, हुलसायो मन माता जी।
धिग् वत्स तोने रे चारित्र चूकियो, जेथी शिवपुर जाता जी–अर०

७. अगन ज्यूं तपत सिल्ला ऊपरे, अरणक अणसण कीधो जी।
समयसुन्दर कहे धन्य ते मुनिवर, मनवांछित पद लीधोजी–अरणक०

(११७)

अयवंता मुनिवर, नाव तिराई वहता नीर में ।।टेर।।

१. पोलासपुरी नगरी को राजा, विजय सेन भूपाल ।
श्री देवी के अंग ऊपना, अयवंता कुमार – अय०

२. वेले वेले करे पारणो, गणधर पदवी पाया ।
महावीरजी की आज्ञा लेकर, गौतम गौचरी आयाजी – अय०

३. खेल रहे थे खेल कंवरजी, देखा गौतम आतां ।
घर २ मांहि फिरो हिड़ता पूछे दूजी वातांजी – अय०

४. असनादिक लेने के काजे, निर्दोषज हम वहरां ।
अंगुली पकड़ी कुंवर ऐवंता, लायो गौतम लारजी – अय०

५. माता देखी कहे पुण्यवंता, भली जहाज घर आणी ।
हर्ष भाव धर निज हाथन से, वहराया अन्न पाणीजी – अय०

६. लारे लारे चल्या कंवरजी, भेट्या मोटा भाग ।
भगवंता की वाणी सुणने, उपना मन वैराग्यजी – अय०

७. घर आवी माता सुं कीनी, अनुमति की अरदास ।
वात सुनी माता पुत्र की, मन में आई हांसजी – अय०

८. तूं क्या जाणे साधुपणा में, वाल अवस्था थारी ।
ऐसो उत्तर दियो कंवरजी, मात कहे वलिहारी – अय०

९. महोत्सव करीने संजम लीनो, हुआ वाल अणगार ।
भगवंता का चरण भेंटिया, धन ज्यांरा अवतारजी – अय०

१०. वर्षा काल वरसियां पीछे, मुनिवर थंडिल जावे ।
पाल वांध पानी में पातरा, नावा जाण तिरावेजी – अय०

११. नाव तिरे म्हारी नाव तिरे यों, मुख से शब्द उच्चारे ।
साधां के मन शंका उपनी, किरिया लागे थांरेजी – अय०

१२. भगवंत भाखे सब साधां ने, भक्ति करो तहे दिल से ।
हीला निंदा मती करो कोई, चरम शरीरी जीवजी – अय०

१३. शासन पति का वचन सुणी ने, सबही शीश चढ़ाया ।
ऐवंता की हुण्डी सिकरी, आगम मांहि गायाजी – अय०

१४. संवत उन्नीसे साल छेयालिस, भीलाड़ा सेखे काल ।
रतनचन्द्रजी गुरु प्रसादे, गाई हीरालालजी – अय०

(११८)

१. नाम ऐला पुत्र जाणियो, 'धनदत्त' सेठ नो पूत ।
नटवी देखी ने मोहियो, नहीं लखियो घर नो सूत – करम०

२. करम न छूटे रे प्राणियां, पूरव नेह विकार ।
निज कुल छांड़ी रे नट थयो, न आणी शरम लिगार – करम०

३. एक पुर आव्यो रे नाचवा, ऊंचो बांस विशेष ।
तिहां राय आव्यो रे जोयवा, मिलिया लोक अनेक – करम०

४. दोय पग पेहरी रे पांवड़ी, वांस चढ़्यो गज गेल ।
निरधारा ऊपर नाचतो, खेले नवा रे खेल – करम०

५. ढोल वजावेरे नटवी, गावे किन्नर साद ।
पांय घुंघरू घमघमे, गाजे अम्बर नाद – करम०

६. तब राजेन्द्र मन चिंतवे, लुभाव्यो नटवी रे साथ ।
जो नट पड़े रे नाचतो, तो नटवी आवे मुझ हाथ – करम०

७. दान न आपेरे भूपति, नट जाणी नृप बात ।
"हूं धन वंछु रे रायनो, राय वंछे मुझ घात" – करम०

८. तब तिहां मुनिवर पेखिया, धन धन साधु निराग ।
धिग् धिग् भिख्यारी जीव ने, इम पाम्यो वैराग – करम०

९. संवर भावे रे केवली, थयो करम खपाय ।
केवल महिमा रे सुर करे, 'लब्ध विजय' गुण गाय – करम०

(११६)

१. राजगृहीना वासियाजी, 'जंबू' नाम कुमार,
'ऋषभदत्तरा' डीकराजी, 'भद्रा' ज्यांरी मांय।
जम्बू कह्यो मान ले जाया, मत ले संजम भार – टेर०

२. सुधर्मा स्वामी पधारियाजी, राजगही रे मांय।
'कोणिक' वांदण चालियोजी, जंबू वांदण जाय – जंबू०

३. भगवंत वाणी वागरीजी, वरसै अमृतधार।
वाणी सुणी वैरागियाजी, जाण्यो अथिर संसार – जंबू०

४. घर आया माता कनेजी, विनवे वारं वार।
अनुमत दीजो मोरी मातजी, माता लेसुं संजम भार।
माता मोरी सांभलो, जननी लेसूं संजम भार – टेर०

५. ये आठूंही कामणी जंबू, अपछर रे उणिहार।
परणी ने किम परिहरो, ज्यांरो किम निकले जमार – जंबू०

६. ये आठूंही कामणी जंबू, तुझ विना विलखी थाय।
रमियां ठमियां सुं नीसरे, ज्यांरा वदन कमल विलखाय–जंबू०

७. मत हीणो कोई मानवी, माता मिथ्या मत भरपूर।
रूप रमणी सूं राचियां, ज्यांरा नहीं हुवे दुरगत दूर – माता०

८. पाल पोस मोटो कियो, जंबू इम किम दो छिटकाय,
मात पिता मेले झूरता थांने दया नहीं आवे दिल मांय – जंबू०

९. एक लोटो पानी पीयो, माता मायर वाप अनेक।
सगलांरी दया पालसूं, माता आणी ने चित्त विवेक – माता०

१०. ज्यूं आंधारे लाकड़ी जंबू, तूं म्हांरे प्राण आधार,
तुझ विना म्हारे जग सूनो, जाया जननी जीतव राख – जंबू०

११. रतन जड़त रो पींजरो माता, सुओ जाणे फंद।
काम भोग संसारना माता, ज्ञानी जाणे झूठो वंद – माता०

१२. पंच महाव्रत पालणो जम्बू, पांचूं ही मेरु समान।
दोष वयालीस टालणा जम्बू, लेणो सूझतो आहार – जंवू०

१३. पंच महाव्रत पालसूं माता, पांचूं ही सुख समान।
दोष वयालीस टालसूं माता, लेसूं सूझतो आहार – माता०

१४. संजम मारग दोहिलो जंवू, चलणो खांडेरी धार।
नदी किनारे रूंखड़ो जंवू, जद तद होय विनास – जंवू०

१५. चांद विना किसी चांदणी जंवू, तारा विन किसी रात।
वीरा विना किसी बेनड़ी जंवू, भुरसी वार तिवार – जंवू०

१६. दीपक विना मंदिर सूनो जंवू, पुत्र विना परिवार।
कंत विना किसी कामिनी जंवू, झुरसी वारूं मास – जंवू०

१७. मात पिता मेलो मिल्यो, माता मिली अनंती वार।
तारण समरथ कोई नहीं माता, पुत्र पिता परिवार – माता०

१८. मोह मतकर मोरी मात जी, मोह कियां वंधे कर्म।
हालर हूलर कांई करो माता, करजो जिनजीरो धर्म – माता०

१६. ये आठूं ही कामणी जंवू, सुख विलसो संसार।
दिन पीछा पड़ियां पछे, थेंतो लीजो संजम भार – जंवू०

२०. ए आठूं ही कामणी माता, समझाई एकण रात।
जिनजीरो धर्म पिछाणियो माता, संजम लेसी म्हारे साथ–माता०

२१. मात पिता ने तारिया जंवू, तारी छे आठूं ही नार।
सासू सुसरा ने तारिया जंवू, पांचसे प्रभव परिवार।
जंवू भलो चेतियो जाया, लीनो संजम भार – टेर०

२२. पांचसे ने सत्ताईस जणा साथे, जंवू लीनो संजम भार।
इग्यारे जीव मुगते गया साधु, वाकी स्वर्ग मंझार – जंवूभलो०

(१२०)

१. ढंढण रिखने वंदना हमारी,
उत्कृष्टो अणगार रे हूं वारी लाल ।
अभिग्रह कीधो एहवो हुं वारी,
लब्धे लेसूं आहार रे हूं वारी लाल ।।

२. दिन प्रति जावे गोचरी हूं वारी,
न मिले सूजतो भात रे हूं वारी लाल ।
भूल न लीजे असूजतो हूं वारी,
पिंजर हुई गया गात रे हूं वारी लाल ।।

३. हरि पूछे श्री नेम ने हूं वारी,
मुनिवर सहस्र अठार रे हूं वारी लाल ।
उत्कृष्टो कुण एह में हूं वारी,
मुझ ने कहोरे किरतार रे हूं वारी लाल ।।

४. ढंढण अधिको दाखियो हूं वारी,
श्री मुख नेम जिणंद रे हूं वारी लाल ।
कृष्ण उमायो वांदवा हूं वारी,
धन जादव कुल चंद रे हूं वारी लाल ।।

५. गलियारे मुनिवर मिल्या हूं वारी,
वांद्या कृष्ण नरेश रे हूं वारी लाल ।
कोईक गाथापति देखने हूं वारी,
उपनो भाव विशेष रे हूं वारी लाल ।।

६. मुझ घर आओ साधु जी हूं वारी,
वेहरो मोदक अभिलाष रे हूं वारी लाल ।

वेहरी ने पाछा फिरिया हूँ वारी,
आया प्रभु जी रे पास हूँ वारी लाल ।।

७. मुझ लब्धे मोदक किम मिल्या हूँ वारी,
मुझ ने कहो कृपाल हूँ वारी लाल ।
लब्ध नहीं ओ वत्स थांहरो हूँ वारी,
श्रीपति लब्ध निहारे हूँ वारी लाल ।।

८. तो मुझ ने कलपे नहीं हूँ वारी,
चाल्या परठण ठोर रे हूँ वारी लाल ।
इन्द्र निहाले जाय ने हूँ वारी,
चूर्या कर्म कठोर रे हूँ वारी लाल ।।

९. आई शुद्ध भावना हूँ वारी,
उपनो केवल ज्ञान र हूँ वारी लाल ।
ढंढण रिख मुक्ते गया हूँ वारी,
कहे जिन हर्ष सुजाण रे हूँ वारी लाल ।।

(१२१)

१. चंपा नगर निरुपम सुन्दर, जठे धर्म रुचि रिख आया,
मास पारणे आज्ञा ले गोचरियां सिधाया हो ।
मुनिवर धर्म रुचि रिख वंदू – टेर

२. भव भव पाप निकाचित संचित दुष्कृत निकंदु हो,
नीची दृष्टि धरण सिरे सोहे, मुनीश्वर गुण भंडारो ।
भिक्षाटन करता आया, नाग-श्री घर द्वारे हो – मुनि०

३. खारो तुंवो जहर हलाहल, मुनीश्वर ने वहेराव्यो,
सहेज उखरड़ी आई मुझघर, कहीं बाहर कुण जावे हो – मुनि०

४. पूरण जाणी पाछा वलिया, गुरु आगे आवी धरियो।
कुण दातार मिल्यो रिखतोंने, पूरण पातर भरियो हो – मुनि०

५. ना ना करतां मुझ ने बहेराव्यो, भाव उलट मन आणी।
चाखी ने गुरु निरणय कीधो, जहर हलाहल जाणी हो – मुनि०

६. अखर अभोज कुटक सम खारो, जो मुनिवर तूं खासी।
निरबल कोठे जहर हलाहल, अकाले मरजासी हो – मुनि०

७. आज्ञा ले परठावण चाल्या, निरवद्य ठोर मुनि आया।
बिंदु एक परठाव्यां ऊपर कीड़ियां बहु मर जाया हो – मुनि०

८. अल्प आहार थी एहवी हिंसा, सर्व थकी अनरथ जाणी।
परम अभय-रस भाव उलटधर कीड़ियांरी करुणा आणी हो–मु०

९. देह पड़तां दया निपजे, तो मोटा उपकार।
खीर-खांड सम जाणी भक्षण कर गया आहार हो – मुनि०

१०. प्रबल पीड़ा शरीर में व्यापी, आवण शक्ति जो थाकी।
पादोपगमन कियो संथारो, समता दृढ़ता राखी हो – मुनि०

११. सर्वार्थ सिद्ध पहुँता शुभ जोगे, महा रमणीक विमाणे।
चउसठ मणारो मोती लटके, करणी रे परमाणे हो – मुनि०

१२. खबर लेवण ने गुरुवर आया, रिखजी काल ज कीधो।
धिक् धिक् इण नाग-श्री ने, मुनिवर ने विष वहेरायो – मुनि०

१३. हुई फजीती कर्म बहु बांध्या, पहुंची नरक दुवारा।
धन धन इण धर्म रुचि ने, कर गया खेवा पारा हो – मुनि०

१४. पैंसठ साल जोधाणा मांहे, सुखे कियो चौमासो।
'रत्नचन्द्र' कहे एह मुनिवरना नाम थकी शिव वासो हो – मुनि०

---

(१२२)

रेवन्तीवाई प्रभुजी ने पाक वहरायो, प्रभु सीया अनगार पठायो

१. सुरनर मुनिवर करत सहायता, वहुत वृद्धि कराई सोवन ।
थोड़ा पाकपर हुई महरवानी तो तीर्थंकर गौत्र वंधायो ।।

२. चन्दनवाला अष्टम के पारण वीर अभिग्रहो धारी ।
उड़दांरा बाकला सुपडारे खुने तो प्रतिलाभ महिमा वढ़ाई ।।

३. साडे वारा वर्ष लग तपस्या कीनी, कर्म कठोर हटाई ।
सालीवृक्ष नीचे केवल पाया, तो इन्द्र महोत्सव में आया ।।

४. वहतर वर्ष नो सर्व आयुखो, भव्य जीवों को हितकारी ।
आनन्द घन के श्री वर्धमानो, तो भाग भलो जसगाई ।।

(१२३)

१. आदिनाथ आदीश्वरो, सकल विदारण कर्म ।
उपकारी भवि तारवा, कह्यो चार प्रकारे धर्म ।।

२. दान शील तप भावना, इण बिन मुक्ति न होय ।
तो पिण सब व्रत देखतां, शील समो नहीं कोय ।।

३. शील भागा भागा सवै, इम कहै श्री जगचन्द ।
शीलवन्त जे पुरुष ने, सेवे सुर नर वृन्द ।।

४. जस कीर्ति फैले इला, जे ब्रह्म व्रत में लीन ।
जो सुख चावो जीवने, तो पालो शुद्ध मन शील ।।

५. विजय कुंवर विजयकूंवरी, शील पाल्यो खड्गधार ।
तेहतणा गुण वर्णवुं, लिखित कथा अनुसार ।।

६. निसुणी करो मारी सभा, परनारी पचखांण ।
पंचपर्वि दिन आंखडी, करो यथा शक्ति प्रमांण ।।

७. यौवन वय छति योग में नारि रहै जिण पास ।
ब्रह्मचारी त्रिहुं योग सूं दुक्कर दुक्कर परकाश ।।

(१२४)

वीर जिन वंदनकुं आया, दशारण भद्र बड़े राया ।। टेर ।।

१. पधार्या वीर जिणंद भारी, दशारण नगरी के वारी ।
मुनिवर चउदे सहस्र लारी, आरज्या छतिस सहस्र सारि ।।
समोसरण देवां रच्यो, वैठा त्रिभुवन नाथ ।
इन्द्र इन्द्राणी सेवा करै, पाम्या हरख उल्लास – वीरजिन०

२. खवर राजेन्द्र भणी लागी, वीरजिन आय उतरिया वागे ।
जावण दरसण के काजे, करूं सजाई वहु छाजे ।।
हाथी घोड़ा रथ पालखी, पैदल अरु परिवार ।
भाई वेटा उमराव अंतेउर, सवकूं लीधा लार – वीरजिन०

३. अठारह सहस्र गज छाजे, घुड़ला लख चोविसे गाजे ।
एकविस सहस्र रथ जोते, पालखि एक सहस्र सोहंति ।।
हाथी घूमे घुड़ला हिंसे, रथ करे भणकार ।
पैदल मुखरे आगले, वोले जय जय कार – वीरजिन०

४. पांचसे अंतेउर लारे, करत है नवा नवा सिणगारे ।
पहरिया रत्न जड़ित गहणा, वाजता वाजितर वयणा ।।
चंवर छत्र ढोलावतां, चाल्या मध्य वजार ।
राय आपणो आडम्वर देखी, गर्व कियो तिणवार – वीरजिन०

५. स्वर्ग से इन्दर भी आया, भेटीया श्री जिनवर पाया ।
ज्ञान से सर्व वात जाणी, दशारण भद्र बड़ो मानी ।।
मांन उतारण कारणे, इंद्र दियो आदेश ।
एक ऐरावत ऐसो लावो, ज्युं गर्व गले विशेष – वीरजिन०

६. चौसठ सहस्र गज छाजे, गगन विच ऊभा ही गाजे ।
एक एकको ऐसो रूप, सुणतां अचरज पायो ।।
एक एकके मुख पांच से, मुख मुख के आठ दंत ।
दंत दंत आठ बावड़ी, ज्यां मांहे कमल महकंत – वीरजिन०

७. पांखडी लाख लाख ज्यां के, नाटक पड़े बतीस से तां पे ।
इंद्र कूं इंद्रासन शोभे, करण का ऊपर मन मोहे ।।
जहां पर इंद्र विराजिया, लारे बहु परिवार ।
दशारण भद्र जी देखने, गर्व गल्यूं तिणवार ।। वीरजिन०

८. चिंतवत दिल अपने मांही, वड़ाई किस विध रहे भाई ।
इंद्र से जीतुं हूं नाई, करूं उपाय कठा तांइ ।।
अवसर देखी संजम लीनो, दशारण भद्र नरेन्द्र ।
तुरंत आइ उतावलो, पगे लाग्यो शक्रेन्द्र – वीरजिन०

९. इन्द्र तव मुनिवर से वोले, नहीं कोइ आप तणे तोले ।
और तो शक्ति घणी म्हारे, वैक्रिय कूं दीक्षा नहीं धारे ।।
धन धन हे मुनिराय जी, तुमे राख्यो मान अखंड ।
वार वार गुनेहगार हूं, इंद्र गयो गगन के मंड – वीरजिन०

१०. मुनिवर संजम शुद्ध पाले, दोष सव आतमना टाले ।
मिटाया जन्म मरण फेरा, आतमा अटल हुवा तेरा ।।
गुरुदेव प्रसाद से, सुणियो भविजन लोक ।
जो करणी सांची करे, तो मिलसी सगला थोक – वीरजिन०

११. संवत उगणीसे का सोहे, साल तेतिसा मन मोहे ।
आसोज सुद पंचमि जाणो, हर्ष से हीरालाल गाणो ।।
देश हाडोती विषै, कोटो मोटो सहेर ।
चोमासो कियो रामपुरामां, चार संत के लेर – वीरजिन०

(१२५)

यह पर्व पर्यूषण आया, सब जग में आनन्द छाया रे – टेर०

१. यह विषय कषाय घटाने, यह आत्म गुण विकसाने ।
जिनवाणी का बल लाया रे – यह०

२. यह जीव रुले चहुं गति में, ये पाप करण की रति में ।
निज गुण सम्पद को खोया रे – यह०

३. तुम छोड़ प्रमाद मनाओ, नित धर्म ध्यान रम जाओ ।
लो भव भव दुःख मिटाया रे – यह०

४. तप जप से कर्म खपाओ, दे दान द्रव्य फल पाओ ।
ममता त्यागी सुख पाओ रे – यह०

५. मूरख नर जन्म गमावे, निंदा विकथा मन भावे ।
इनसे ही गोता खाया रे – यह०

६. जो दान शील अराधें, तप द्वादश भेदे साधें ।
शुद्ध मन जीवन सरसाया रे – यह०

७. वेला तेला और अठाइयां, संवर पौषध करे भाया ।
शुद्ध पालो शील सवाया रे – यह०

८. तुम विषय कषाय घटाओ, मन मलिन भाव मत लाओ ।
निंदा विकथा तज माया रे – यह०

९. कोई आलस में दिन खोवे, सतरंज तास रमे या सोवे ।
पिक्चर में समय गमाया रे – यह०

१०. संयम की शिक्षा लेना, जीवों की जयणां करना ।
जो जैन धर्म तुम पाया रे – यह०

११. जन जन का मन हरषाया, वालक गण भी हुलसाया ।
आत्म शुद्धि हित आया रे – यह०

१२. समता से मन को जोड़ो, ममता का वन्धन तोड़ो ।
है सार ज्ञान का पाया रे – यह०

१३. सुरपति भी स्वर्ग से आवें, हर्षित हो जिन गुण गावें ।
जग जन को अभय दिलाया रे – यह०

१४. 'गज मुनि' निज मन समझावे, यह सोई शक्ति जगावे ।
अनुभव रस पान कराया रे – यह०

(१२६)

सांभल हो सुरता, सूरां ने लागे वचन ज्यूं ताजणा ।
कायर ने लागे नहीं कोय, सांभल हो सूरता – टेर०

१. नगरी तो राजगृही ना वासिया, सेठ धन्नाजी जग में सार ।
पूर्व पुण्य से वहु रिधी पामिया, आठ नारियों रा भरतार ।।

२. एक दिन धन्नाजी वैठा पाटिये, स्नान करे तिणवार ।
आठों नारियां मिली प्रेमसुं, कूड रही जल धार ।।

३. सुभद्रा नारी चौथी तेहनी, मन में हुई रे दिलगीर ।
आसूं तो निकले तेहना नैना सूं, संजम लेवे मुझ वीर ।।

४. प्रेम धरी ने धन्नाजी पूछिया, कामण क्यूं हुई हो उदास ।
शंका मत राखो थें मुझ आगले, कारण तो कहोनी विमास ।।

५. कामण कहे यूं कंतां म्हारा, वीरा ने चढ़ियो वैराग ।
एक एक नारी नित की परिहरे, संयम लेवा की रही है लाग ।।

६. धन्नाजी कहे तूं भोली वावली, कायर दीसे है थारो वीर ।
संजम लेणो जद मन में धारियो तो, फिर किम करणी ढील ॥

७. सुभद्रा नारी कहे यूं कंत ने, मुख से वणावो फोगट वात ।
इण सुख ने छांडी वाजो सूरमा, जद जाणूं ला थांरी वात ॥

८. तत्खिण धन्नाजी उठ कर बोलिया, कामण रहिजो अव दूर ।
संजम लेवांगा इण अवसरे, जद में वाजांगा जग में सूर ॥

९. वेकर जोड़ी ने सुन्दर वीनवे, हांसी रे वश कड़वा वोल ।
काची री सांची न कीजे साहिव, हिवड़े विमासी वायर खोल ॥

१०. संजमलेणो तो साहिवा सोहिलो, ममता मारी ने समता धार ।
वावीस परीसा सहणां दोहिला, संजम खांडेरी धार ॥

११. पांव उवराणां पिउजी चालणो, दोरो छे पाद विहार ।
घर घर फिरणो सायव गोचरी, नीरस मिलसी आहार ॥

१२. सियाले में हो पिऊजी सी पड़े, उनाले वाजे लूआं वाय ।
चौमासे में मैला कापड़ा, ओ दुःख सह्यो न जाय ॥

१३. उत्तर पडुत्तर हुवा अतिघणा आया साला के घर उच्छाव ।
दोनों मिल साथे संजम आदरां कायर उतरो नी नीचे आव ॥

१४. साला वहनोई संजम आदर्यो वीर जिनंदजी रे पास ।
शालिभद्र सर्वार्थसिद्ध गया धन्नाजी शिवपुर वास ॥

१५. सम्वत उगणीसे इगसठ साल में कीनो गढ़ चित्तौड़ चौमास ।
मुनि नंदलाल तणा शिष्य गाविया, वंछित फलेगी सव आस ॥

---

(१२७)

"अमृत बेल"

१. चेतन ज्ञान अजुआल जे, टाल जे मोह संतापरे।
चित डम डोलतुं वालिये, पालिये-सहज गुण आपरे।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ॥

२. खल तणी संगति परिहरे, मत करे कोई सूं क्रोधरे।
शुद्ध सिद्धान्त संभारजे, धारजे मति-प्रतिवोधरे।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ॥

३. हरख मत आणजे तूसव्यो, दूहव्यो मत धरे खेदरे।
रागद्वेषादि सन्धि रहे मत, वहे चारु निर्वेद रे।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ॥

४. प्रथम उपकार मत अवगणे, तूं गिणे गुरु गुण शुद्धरे।
जिहाँ तिहाँ मत फिरे फूलतो, भूलतो मम रहे मुद्ध रे।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ॥

५. समकित-राग चित्त रंजजे, अंजजे नेत्र विवेक रे।
चित्त ममकार मत लावजे, भावजे आतम एक रे।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ॥

६. गारव-पंक मां मत लुले, मत भले मच्छर भावरे।
प्रीति मत तज गुणवंत नी, संतनी पांति मां आव रे।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ॥

७. वाह्य क्रिया कपट तुं मत करे, परिहर आरत-ध्यान रे।
मिठड़ो वदन मन मेलड़ो, इम किम तुं शुभ ज्ञान रे।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ॥

८. चाल तो आप छन्दे रखे, मत भखे पीठ नो मंस रे।
कथन गुरू नु सदा भावजे, आप शोभावजे वंश रे।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ॥

९. हठ पड्यो बोल मत ताणजे, आणजे चित्त मां सान रे।
विनय थी दुःख नवि बांधस्ये, बाधसे जगत मां मान रे।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ॥

१०. धारजे ध्याननी धारणा, अमृत रस पारणा पाय रे।
आलस अंगनुं परिहरे, तय करी भूषजे काय रे।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ॥

११. कलिचरित देखि मत भड़कजे अड़कजे मत शुभयोग रे।
सूखड़ी नवम रस पावना, भावना आणजे भोग रे।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ॥

१२. लोकभय थी मन गोपवे, रोपवे तुं महादोष रे।
अवर सुकृत कीधा विना, तुझ दिन जंत शुभ शोष रे।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ॥

१३. मन रमाड़े शुभ ग्रन्थ मां, भमाड़े भ्रम पाश रे।
अनुभव रसवती चाखजे, राखजे सुगुरु नी आश रे।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ॥

१४. आप सम सकल जग लेखवे, शीखवे लोक ने तत्त्व रे।
मार्ग कहतो मत हार जे, धार जे तुं दृढ़ सत्व रे।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ॥

१५. उपशम अमृत रस पीजिये, कीजिये साधु गुणगान रे।
अधम वयणे नवि खीजिये, दीजिये सज्जन ने मान रे।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ॥

१६. क्रोध अनुबन्ध नवि राखिये, भाखिये वयरण मुख साच रे ।
समकित रत्न रुचि जोड़िये, छोड़िये कुमति मति काच रे ।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ।।

१७. जे हिंसा करि आकरी, जे वोल्या मृपावाद रे ।
जे परधन हरी हरखिया, कीधो काम उन्माद रे ।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ।।

१८. जे धन धान्य मूर्च्छा धरी, सेविया चार कषाय रे ।
रागद्वेष ने वश हुआ, जे कीधा कलह उपाय रे ।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ।।

१९. झूठ जे आल परने दिया, जे कर्या पिशुनता-पाप रे ।
रति-अरति निन्दा माया मृषा, वली मिथ्यात्व-संताप रे ।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ।।

२०. पाप जे एहवा सेविया, ते निन्दिये तिहुं काल रे ।
सुकृत अनुमोदना कीजिये, जिम होय कर्म विसराल रे ।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ।।

२१. विश्व उपकार जे जिन करे, सार जिन नाम संयोग रे ।
तेह गुण तास अनुमोदिये, पुण्य अनुवंध योग रे ।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ।।

२२. सिद्धनी सिद्धता कर्म ना, क्षय थकी उपजी जेह रे ।
जेह आचार आचार्य नो, चरण वन सींचवा मेह रे ।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ।।

२३. जे उवझाय नो गुण भलो, सूत्र सज्झाय परिणाम रे ।
साधुनी जेह वली साधुता, मूल उत्तर गुण धामरे ।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ।।

२४. जेह विरति देश श्रावक तणी, जे समकित सदाचार रे।
समकित दृष्टि सुर नर तणी, तेह अनुमोदिये सार रे।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ॥

२५. अन्य मां पण दयादिक गुणो, जेह जिन वचन अनुसार रे।
सर्व ते चित्त अनुमोदिये, समकित बीज निरधार रे।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ॥

२६. पाप नवि तीव्र भावे करे, जेहने नवि भवराग रे।
उचित स्थिति जेह सेवे सदा, तेह अनुमोदवा लागरे।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ॥

२७. थोड़लो पण गुण पर तणो, सांभली हर्ष मन आणरे।
दोष लव पण निज देखतां, निज गुण निजातम जाणरे।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ॥

२८. देह मन वचन पुद्गल थकी, कर्म थी भिन्न तुझ रूप रे।
अक्षय अकलंक छै जीवनुं, ज्ञान आनंद स्वरूप रे।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ॥

२९. कर्म थी कल्पना ऊपजे, पवन थी जेम जलधि वेल रे।
रूप प्रगटे सहज आपणुं देखतां दृष्टि स्थिर मेल रे।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ॥

३०. राग विष-दोष उतारतां, जारतां द्वेष रस शेष रे।
पूर्व मुनि वचन संभारता, वारतां कर्म निःशेष रे।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ॥

३१. देखिये मार्ग शिवनगरनो, जे उदासीन परिणाम रे।
तेह अण छोड़तां चालिये, पामिये निज परम धामरे।
चेतन ज्ञान अजुआल जे ॥

३२. श्री जय विजय गुरु सीसनी, शीखड़ी अमृत वेलरे।
सांभली जेह यह अनुसरे, ते लहे जश रंग रेलरे।
चेतन ज्ञान अजुआल रे॥

(१२८)

१. अब हम अमर भये ना मरेंगे,
या कारण मिथ्यात दियो तज, क्यों कर देह धरेंगे – अब०
२. राग द्वेष जग वन्ध करत हैं इनका नाश करेंगे,
भ्रम्यो अनन्त काल ते प्राणी सो हम काल हरेंगे – अब०
३. देह विनाशी हूँ अविनाशी अपनी गति पकरेंगे,
नासी जासी हम थिरवासी चोखे व्है निखरेंगे – अब०
४. मर्यो अनन्त बार बिनु समज्यो अब सुख दुख विसरेंगे,
'आनन्दघन' निपट निकट अक्षर दो नहीं सुमरे सो सुमरेंगे–अब०

(१२९)

१. आगे जाणो चेतनिया ! साथे खरची ले लीज्यो !
खरची लियां पहलां ही मनड़ो वश में कर लीज्यो – आगे०
२. साथ चाले धर्म याँ से प्रीती कर लीज्यो !
शुभ कर्म कमाई चेतन थैली भर लीज्यो – आगे०
३. आतम शुद्धि रे खातिर थें तो तपस्या कर लीज्यो !
थें तो क्षमा करी ने भायां मद ने हर लीज्यो – आगे०
४. पायो मनुष्य जन्म रुड़ी म्हारी सुन लीज्यो !
थें तो करणी करवा में चेतन ! देरी मत कीज्यो – आगे०
५. संतवाणी इम कहे थे तो हृदय धर लीज्यो।
प्रभु भक्ति करीने मुक्ति वेगी ले लीज्यो – आगे०

(१३०)

आवश्यक कर कर कह्यो श्री जिनवर,
अजर अमर पद पावो रे भवि ! भाव आवश्यक अति सुखदायी ।

१. इण में आतम जोड़ी, संचिया है कर्म कोड़ी,
अनन्ती रो मूल मिटावो रे—भवि भाव०

२. जनम मरण जरा, खरा खोटा रूप धर्या,
अब तो संसार घटाओ रे—भवि भाव०

३. पुण्य खजानो लायो, श्रावकजी रो कुल पायो,
कोड़ी सटे केम गमावो रे—भवि भाव०

४. हीरा री कीमत मांहीं कूंजड़ो तो जाणे नाहीं,
जौहरीजी सूं जाँच कराओ रे—भवि भाव०

५. अनन्तानुबन्धी चौकड़ी, मोटी आ लागी खोटी,
पापिणी सूं पिण्ड छुड़ाओ रे—भवि भाव०

६. कितना उधार लिया, भला भूंड़ा काम किया,
करमां रो करज चुकाओ रे—भवि भाव०

७. द्रव्य आवश्यक किया बहु, गया वृथा सहु,
अनुयोग द्वार देखी जाओ रे—भवि भाव०

८. शुद्ध भाव आवश्यक, राई समो हुओ अब मेरु जितरो,
भव भ्रमण घटाओ रे—भवि भाव०

९. संशय में अलूझ रह्या अन्तर में वैराग्य दया,
सो ही भवि आगम पुराओ रे—भवि भाव०

१०. स्वर्गां रो सुख चाहो, स्थानक मांही वेगा आओ,
दोनों ही काल आवश्यक ठाओ रे—भवि भाव०

११. करत करत रसायन आवे, प्रभुजी भाव वखाणेरे,
प्रभु तीर्थंकर पदवी पाओ रे – भवि भाव०

१२. सोलह अने वाईस वोल देखतां नजर,
खोल लोकोत्तर रतन कमाओ रे – भवि भाव०

१३. अतिक्रम व्यतिक्रम अतिचार अनाचार ए वर्जनहार,
आत्मा से ए सव दूर भगाओ रे – भवि भाव०

१४. सूत्र अनुयोगद्वार जिनमें चाल्यो है विस्तार,
अहो निशि अन्तर मांही ठाओ रे – भवि भाव०

१५. सामायिक चौवीसथा वन्दना पडिक्कमण काउसग्ग,
पच्चक्खाण थुई थुई मंगल मनाओ रे – भवि भाव०

१६. कहत मेवाड़ी मुनि ज्ञानी गुरु पासे सुणि कर विनय,
आवश्यक में रम जाओ रे – भवि भाव०

१७. श्रमण हजारीमल्ल, ज्ञानी वचनों के वल तू संभल,
आवश्यक में चित्त लगाओ रे – भवि भाव०

(१३१)

१. इण कालरो भरोसो भाईरे को नहीं,
ओ किण विरीयां मांहे आवे ए।
वाल जवान गिणे नहीं,
ओ सर्व भखी गटकावे ए – इण०

२. वाप दादो वैठो रहे, पोतो उठ चल जावे ए।
तो पिण धेठा जीवने, धरमरी वात न सुहावे ए – इ०

३. महल मंदिर अने मालिया, नदीए निवाणनें नालो ए।
स्वर्गअने मृत्यु पातालमें, कठे न छोड़े कालो ए – इ०

४. घर नायक जाणी करी, रक्ष्या करी मन गमती ए
काल अचानक ले चाल्यो, चोक्यां रेह गई झिलती ए – इ०

५. रोगी उपचारण कारणे, वेद विचक्षण आवे ए।
रोगी नें ताजो करे, आपरी खबर न पावे ए – इ०

६. सुंदर जोड़ी सारखी, मनोहर महल रसालो ए।
पोढचा ढोलिये प्रेमसुं, जठे आय पहुँतो कालो ए – इ०

७. राजकरे रलियामणो, इंद्र अनोपम दीसे ए।
वैरी पकड़ पछाड़ीयो, टांग पकड़ने घींसे ए – इ०

८. वल्लभ वालक देखने, मांडी मोटी आसो ए।
छिनक मांहे चलतो रह्यो, होय गई निरासो ए – इ०

९. नार निरखने परणीयो, अपछर रे उणिहार ए।
शूल उठ चलतो रह्यो, आ ऊभी हेला मारे ए – इ०

१०. चेजारे चित्त चूपसुं, करी इमारत मोटी ए।
पावड़ीए चढ़तो पड़चो, खायन सकीयो रोटी ए – इ०

११. सुरनर इन्द्र किन्नरा, कोइ न रहे नीसंको ए।
मुनिवर कालने जीतिया, जिण दीया मुगति माहे डंको ए – इ०

१२. किशनगढ़ मांहे सड़सठे, आया सेखे कालो ए।
रतन कहे भव जीव ने, कीजो धर्म रसालो ए – इ०

(१३२)

१. जग उठरे ३ मारा चतुर पांवणा अव थारी गाड़ी हकवा में।
पल पल में थारी ऊमर जावे-मौत फागती आवे जीवड़ा – अव०

२. मोह नींद रे वश में सोग्यो भूल आपणो पथ जीवड़ा – अव०
वचपन खेलण मांहीं गंवायो जोवन में मद छायो जीवड़ा – अव०

३. पर की निन्दा कर २ आपणा घर में कचरो लायो जीवड़ा–अ०
मुनियांरो उपदेश न मान्यो धरम स्थान नहीं आयो जीवड़ा–अ०

४. मुनियां रो उपदेश न मान्यो धरम ध्यान नहीं ध्यायो जीवड़ा–अ०
बीती सो तो बीत गई रे अब तूं चेत चेत जीवड़ा–अ०

५. पाप करम सब भरम छोड़ कर धरम सुं नेह लगा जीवड़ा–अ०
प्रभु सुमिरण है सब दुःख नासी "कुमद" सदा सुखदाइ जीवड़ा–अ०

(१३३)

१. उठ जाग मुसाफिर भोर भई।
अब रैन कहां जो सोवत है॥ध्रु०॥
जो सोवत है सो खोवत है।
जो जागत है वो पावत है॥

२. टुक नींद से अंखियां खोल जरा।
ओ गाफिल रब* से ध्यान लगा॥
यह प्रीत करन की रीत नहीं।
*रब जागत है तूं सोवत है॥

३. अनजान ! भुगत करणी अपनी।
ओ पापी ! पाप में चैन कहां ?
जब पाप की गठड़ी शीश धरी।
फिर शीश पकड़ क्यों रोवत है ?

४. जो काल करे सो आज ही कर।
जो आज करे सो अब करले॥
जब चिड़ियन खेती चुगि डारी।
फिर पछताये क्या होवत है ?

---

* रब=प्रभु, ईश्वर।

(१३४)

१. उठ भोर भई टुक जाग सही, भज वीर प्रभु भज वीर प्रभु ।
अब नींद अविद्या त्याग सही, भज वीर प्रभु भज वीर प्रभु ॥

२. जग जाग उठा तूं सोता है, अनमोल समय यह खोता है ।
तूं काहे प्रमादी होता है, भज वीर प्रभु भज वीर प्रभु ॥

३. यह समय नहीं है सोने का, है वक्त पाप मल धोने का ।
अरु सावधान चित होने का, भज वीर प्रभु भज वीर प्रभु ॥

४. तूं कौन कहां से आया है, अब गमन कहां मन लाया है ।
टुक सोच यह अवसर पाया है, भज वीर प्रभु भज वीर प्रभु ॥

५. रे चेतन चतुर हिसाब लगा, क्या खाया खरचा लाभ हुआ ।
निज ज्ञान जमा तूं संभाल सही, भज वीर प्रभु भज वीर प्रभु ॥

६. गति चार चौरासी लाख रुला, यह कठिन २ शिवराह मिला ।
अब भूल कुमार्ग विषे मत जा, भज वीर प्रभु भज वीर प्रभु ॥

(१३५)

१. रे चेतन पोते तूं पापी, पर ना छिद्र चितारे क्यूं ।
निरमल होय कर्म कर्दम सूं, निज गुण अंबु नितारे तूं ॥

२. सम्यक्‌दृष्टि नाम धरावे, सेवे पाप अठारे तूं ।
नरक निगोद थकी किम छूटे, जो पर हियो न ठारे तूं ॥

३. जिम-तिम करने शोभा अपणी, या जग मांहि दिखावे तूं ।
प्रकट कहाय धर्म को धोरी, अन्तर भर्यो विकारे तूं ॥

४. परमेश्वर साखी घट-घट को, जांकी शरम न धारे तूं ।
कुंभीपाक नरक में पड़सी, अन्तर सल न निवारे तूं ॥

५. पर निंदा अघ पिंड भरीजे, आगम साख संभारे तूं ।
'विनयचंद' कर आतम निंदा, भव-भव दुष्कृत टारे तूं ॥

(१३६)

१. एक सांस खाली मत खोय रे खलक वीच,
कीचक कलंक अंग धोयले तो धोयले ।।टेर।।

२. उर अन्धियार पाप पूर को भरियो है जामें ।
ज्ञान की चिराग चित्त जोय ले तो जोय ले – एक सांस०

३. मानुष जनम ऐसो फेर न मिलेगो मूढ़ ।
परम प्रभु से प्यारे होय ले तो होय ले – एक सांस०

४. क्षरण भंगुर देह या में जनम सुधारवो है ।
विजली के झलके मोती पोय ले तो पाय ले – एक सांस०

(१३७)

१. ए जी ! थांने आई अनादि की नींद जरा टुक जोवो तो सही ।
ए जी ! थांने सुमति कहे कर जोड़, सन्मुख होओ तो सही–अजी०

२. मोह मद छक रही नींद निवाणी, टोओ तो सही ।
अजी जरा ! ज्ञान शुद्धोदक छांट, अंखियन पट खोलो तो सही–अजी०

३. काल अनन्त दुख देख पिया ! क्यों फिर मोहो छो सही ।
अजी ! इन कुमति सखियन संग वैठ वैठ, पेठ क्यों खोओ छो सही–

४. क्रोध कपट मद लोभ, विषयवश होओ छो सही ।
अजी ! यो चतुर्गति को वीज, चतुरां ! किम वोओ छो सही–अजी०

५. सत्य-मत-मुक्ता-माल प्रेम धर पोओ तो सही ।
अजी ! या निज-सुख-सेज "सुजाण" सुगुण मन सोओ तो सही –अ०

(१३८)

करलो श्रुतवाणी का पाठ, भविक जन मन मल हरने को ।।टेर।।

१. विन स्वाध्याय ज्ञान नहीं होगा ज्योति जगाने को ।
राग द्वेष की गांठ लगे नहीं वोधि मिलाने को ।।

२. जीवादिक स्वाध्याय से जानो करणी करने को ।
वंध मोक्ष का ज्ञान करो भव भ्रमण मिटाने को ।।

३. तुंगियापुर में स्थविर पधारे ज्ञान सुनाने को ।
सुज्ञ उपासक मिलकर पूंछे सुर पद पाने को ।।

४. स्थविरों के उत्तर थे सव जन मन हर्षाने को ।
गौतम पूछे स्थविर समर्थ है उत्तर देने को ।।

५. जिनवाणी का सदा सहारा श्रद्धा रखने को ।
विन स्वाध्याय न संगत होगी भव दुख हरने को ।।

६. सुवुद्धि ने भूप सुधारा भव जल तिरने को ।
पुद्गल परणति को समझा कर धर्म दिपाने को ।।

७. नित स्वाध्याय करो मन लगाकर शक्ति वढ़ाने को ।
"गज मुनि" चमत्कार कर देखो निज वल पाने को ।।

(१३९)

१. जीवन उन्नत करना चाहो तो सामायिक साधन कर लो ।
आकुलता से वचना चाहो तो – सा०

२. तन धन परिजन सव सुपने हैं, नश्वर जग में नहीं अपने हैं ।
अविनाशी सद्गुण पाना हो तो – सा०

३. चेतन निज घर को भूल रहा, पर घर माया में झूल रहा ।
सद् चित् आनन्द को पाना हो तो – सा०

४. विषयों में निज गुण भूलो मत, अब काम क्रोध में मत भूलो ।
समता के सर में नहाना हो तो – सा०

५. तन पुष्टि हित व्यायाम चला, मन पोषण को शुभ ध्यान भला ।
आध्यात्मिक बल पाना चाहो तो – सा०

६. सब जग जीवों में बन्धु भाव, अपना लो तज के वैर भाव ।
सब जन के हित में सुख मानो तो – सा०

७. निर्व्यसनी-हों प्रामाणिक-हों, धोखा न किसी जन के संग हो ।
संसार में पूजा पाना हो तो – सा०

८. स्वाध्याय सामायिक संघ बने, सब जन सुनीति के भक्त बनें ।
नर लोक में स्वर्ग बसाना हो तो – सा०

(१४०)

१. जगत में, बड़ो समझ को आंटो, बड़ो समझ को आंटो ।।टेर।।
सुण सुण धर्म शर्म नहीं उपजत, विषम कर्म को कांटो ।

२. संवर त्याग बटोरत आश्रव कष्ट करे उफराटो ।
मन वच काय कमावत सावज्ज पड़ रही भूल निराटो – जगत०

३. जग दुख टाल हिये सुख माने रुक्यो ज्ञान गुण घाटो ।
आपो भूल पड्यो इन्द्रिय वश मिटे न मोह को फांटो – जगत०

४. श्री जिन वचन दिवाकर प्रकट्या, उड्यो भर्म को टाटो ।
"रतनचन्द" आनंद भयो अब, लख्यो सार रस लाटो – जगत०

---

(१४१)

१. जिनदेव ! तेरे चरणों में मुझे ऐसा दृढ़ विश्वास हो ।
जीवन-समर में हे प्रभो ! मुझे एक तेरी आस हो ॥
२. कर्तव्य-पथ से जो डिगाने विघ्न-गण आवें मुझे ।
सन्तोष, भक्ति और दया का मन्त्र मेरे पास हो ॥
३. संसार-सागर में वहा दूँ प्रेम की मन्दाकिनी ।
दिल में तड़प हो प्रेम की और प्रेम जल की प्यास हो ॥
४. निज भाव भाषा देश का गौरव मुझे दिन रात हो ।
निज धर्म हित यह प्राण हों और मन कभी न निराश हो ॥
५. संसार-सागर में न भटके नाव मेरी हे प्रभो !
मैं खुद खिवैया वन सकूं वह शक्ति मेरे पास हो ॥
६. मैं वालपन में ब्रह्मचारी, रह सभी विद्या पढ़ूँ ।
यौवन दशा में वन के श्रावक अन्त में सन्यास हो ॥
७. यह आत्मा हीं वन सके ऐ राम ! खुद परमात्मा ।
हे नाथ ! मेरी आत्मा का अन्त मोक्ष-निवास हो ॥

(१४२)

१. जीवन चरित्र महापुरुषों के हमें नसीहत देते हैं,
हम भी अपना अपना जीवन स्वच्छ रम्य कर सकते हैं ।
२. हमें चाहिए हम भी अपने वना जायं पद चिन्ह ललाम,
इस धरती की रेती पर जो, वक्त पड़े आवें कुछ काम ।
३. देख देख जिनको उत्साहित, हों पुनि वे मानव मतिधर,
जिनकी नष्ट हुई हो नौका, चट्टानों से टकराकर ।
४. लाख लाख संकट सहकर भी, फिर भी हिम्मत वांधें वे,
जाकर मार्ग मार्ग पर अपना "गिरिधर" कारज साधें वे ।

(१४३)

१. जोवनियां की मौजां फौजां जाय नगाड़ा देती रे,
चेत ! चेत रे ! चेत ! चतुर नर ! चिड़ियां चुग गई खेती रे–जोव०

२. छिनक छिनक में आयुष छीजै क्यों कड़िया वण एती रे,
ओछा जीतव कारण चेतन ! पड़े मुगत सूं छेती रे – जोव०

३. मात पिता त्रिया सुत वन्धव मिली सम्पदा एती रे,
पलक पलक में सघली पलटे ज्यों जल भरियो रेती रे – जोव०

४. काल की फौज चढ़ी सिर ऊपर फिरे लपेटा लेती रे,
अविचल सुख की चाह हुए तो प्रीति करो प्रभु सेती रे – जोव०

५. जोवन लहर रंग पतंग सम कहूँ खीजावण केती रे,
इण में 'रतन' दया सुखकारी आराध्यां सुख देती रे – जोव०

(१४४)

करलो सामायिकरो साधन जीवन उज्वल होवेला ।।टेर।।

१. तन का मैल हटाने खातिर नित प्रति नहावेला ।
मन पर मैल चहूँ ओर जमा है कैसे धोवेला – करलो०

२. वाल्यकाल में जीवन देखो दोष न पावेला ।
मोहमाया का संग कियां से दाग लगावेला – करलो०

३. ज्ञान गंग ने क्रिया धुलाई जो कोई धोवेला ।
काम क्रोध मद लोभ दाग को दूर हटावेला – करलो०

४. सत्संगत और शान्त स्थान दोष वचावेला ।
फिर सामायिक साधन करने शुद्धि मिलावेला – करलो०

५. दोय खड़ी निज रूप रमणकर जग विसरावेला ।
धर्मध्यान में लीन होय चेतन सुख पावेला – करलो०

६. सामायिक से जीवन सुधरे जो अपनावेला।
निज सुधार से देश जाति सुधरी हो जावेला – करलो०
७. गिरत गिरत प्रतिदिन रस्सी भी शिला घिसावेला।
करत करत अभ्यास मोह का जोर मिटावेला – करलो०

(१४५)

१. जो दस वीस पचास भये, शत होय हजार तो लाख मंगेगी।
कोटि अरब्ब खरब्ब असंख, धरापति होने की चाह जगेगी ॥
२. स्वर्ग पताल को राज मिले, तृष्णा तबहूं अति आग लगेगी।
'सुन्दर' इक संतोष विना, शठ तेरी तो भूख कभी न भगेगी ॥

(१४६)

१. दया सुखों नी वेलड़ी, दया सुखों नी खान।
अनंता जीव मुक्ति गया, दया तणा फल जान ॥
२. हिंसा दुःखों नी वेलड़ी, हिंसा दुःखों नी खान।
अनंता जीव नरके गया, हिंसा तणा फल जान ॥
३. चेतो रे भवी प्राणियां, ओ संसार असार।
स्थिरता कोई दीसे नहीं, धन जोवन परिवार ॥
४. धर्म करो तमे प्राणियां, धर्म थकी सुख होय।
धर्म करंता जीव ने, दुखिया न दीठा कोय ॥
५. जीव दया पाली सही, पाली सही छ काय।
वस्ता घरनो पाहुणो, मीठा भोजन खाय ॥
६. जीव दया पाली नहीं, पाली नहीं छ काय।
सूना घरनो पाहुणो, जिम आयो तिम जाय ॥
७. रत्न पड़्युं छे बाजारमां, रह्यो गरद लपटाय।
मूरख जाणे कांकरो, चतुरां लियो उठाय ॥

८. चौहटा केरा वजारमां, लांवा पान खजूर।
चढ़े सो चाखे प्रेम रस, पड़े सो चकना चूर॥

९. ए शीखामण सांची कही, सर्व ने हितकार।
कांइक दया करुणा राखजो, थांने सांभल्या नु परिमाण॥

१०. खरो मारग वीतरागनो, सूक्ष्म जेहना भेद।
शाणा थईने श्रद्धजो, मनमां राखि उमेद॥

११. डिगाव्या डिगजो मती, निश्चल राखजो मन।
हिंसाथी रहेजो वेगला, कहेवाशो धन धन॥

१२. ढील न कीजे धर्मनी, तप जप लीजे लूट।
जैसी सीसी काचकी, जाय पलकमों फूट॥

१३. दुषम आरो पंचमो, निश्चल राखजो मन।
थोड़ामां नफो घणो, जेम कूंडा मांही रतन॥

१४. साधु चंदन बावना, शीतल जांको अंग।
लहर उतारें भुजंग की, देवे ज्ञानको रंग॥

१५. साधु वड़े परमारथी, मोटो जिनको मन।
भर भर मुष्टी देत है, धर्म रुपीयो धन॥

१६. हलु करमी जीवने, रुचे ए उपदेश।
खरो मारग वीतरागनो, जेमां कूड़ नहीं लवलेश॥

(१४७)

दुनियां दुखःकारी तू छोड़ सके तो छोड़॥ टेर॥

१. पाप अठारह करना पड़ता पाप कर्म भी वढ़ता जाता।
करम वन्ध की ठौड़-दुनियां दु:खकारी – तूं०

२. पेट पापीयो खूब सतावे देश देशावर में भटकावे।
करनी दौड़ा दौड़-दुनियां दु:खकारी – तूं०

३. कोई के घर में पुत्र कंस सा-कोई के घर नार कर्कशा।
होती माथा फोड़-दुनियां दुःखकारी–तूं०

४. कोई के घर सासु लड़ती, नणन्द भौजाई झगड़ा करती।
बोले कड़वा बोल-दुनियां दुःखकारी–तूं०

५. घर में बेटा पोता पोती, दादी रसोई न्यारी करती।
दुःख सूं कांपे हाड़-दुनियां दुखःकारी–तूं०

६. कोई के घर में नौ दस बेटा, परण्या न्यारा हो गया मोटा।
बूढ़ो कमावे दौड़, दुनियां दुखःकारी–तूं०

७. लड़की मोटी वर नहीं मिलियो कोई कहवे वर खोटो मिलियो।
गयो दिशावर छोड़-दुनियां दुखःकारी–तूं०

८. घणी बेटियां दुःखड़ो मोटो इज्जत राखनी धन को टोटो।
पुत्र मर्यो दिल तोड़, दुनियां दुःखकारी–तूं०

९. मन को चायो कुछ नहीं होवे, जो नहीं चावे वो झट होवे।
या जग में मोटी खोड़-दुनियां दुःखकारी–तूं०

१०. तन में मन में लगी बिमारी रोगशोक से दुखि यों भारी।
जीव झुरे चहुं ओर, दुनियां दुःखकारी–तूं०

११. जन्म मरण रा दुःख अनन्ता, दुखड़ा जैसा सुई चुभता।
साड़ा तीन करोड़-दुनियां दुःखकारी–तूं०

१२. गर्भावास में उन्धो लटक्यो, नौ महिना मल मूत्र में लिपट्यो।
पड़ियो थो अंग सिकोड़, दुनियां दुखःकारी–तूं०

१३. नरक गति का दुःख अनन्ता, छेदन भेदन खूब करन्ता।
सिला पर देत पछाड़-दुनियां दुखःकारी–तूं०

१४. तिर्यन्च गति का दुःख अपारा मरता, डुलाता भागे विचारा।
दुःख सुं पाड़े राड़-दुनियां दुःखकारी – तूं०

१५. जो सुख चाहो दुनियां छोड़ो संयम से तुम नाता जोड़ो।
पाप कर्म सव छोड़-दुनियां दुखःकारी – तूं०

(१४८)

१. धरे ही रहेंगे धरा, धूर मांज गाड़े धन।
भरे ही रहेंगे भंडार, वहु वानी की॥

२. जुड़े ही रहेंगे गजराज के जंजीरन सों।
खड़े ही रहेंगे अश्वभान पंथ पानी के॥

३. आन काल कहेगो तव करेगो सहाय कौन।
जुड़े ही रहेंगे गज जोधा मर दानी के॥

४. थकी मुख वानी माया होयगी विरानी।
जव छोड़ राजधानी वासी होओगे मसानी के॥

(१४६)

१. नन्दन की नव रही, वीसल की वीस रही,
रावण की सव रही, फिर पछताओगे।

२. उतने न लाए हाथ, इतने न चले साथ,
इतहूं की जोरी तोरी, इतही गमावोगे।

३. हेम चीर घोड़ा हाथी, काहुकन चले साथी,
वाट के वटाऊ जैसे, कल ही उठ जाओगे।

४. कहत है छज्जु कुमार, सुनहू माया के यार,
वन्दी मुट्ठी आये थे, हाथ पसारे जाओगे।

(१५०)

१. भावना दिन रात मेरी सब सुखी संसार हो।
सत्य संयम शील का, प्रचार घर-घर द्वार हो॥
२. शांति अरु आनन्द का, हर एक घर में वास हो।
वीरवाणी पर सभी, संसार का विश्वास हो॥
३. रोग अरु भय शोक होवे, दूर सब परमात्मा।
कर सके कल्याण 'ज्योति', सब जगत की आत्मा॥
४. गुरुजनों के चरण में, दृढ़ प्रीति अरु उल्लास हो।
काम अरु क्रोधादि दुष्टों, का सर्व संहार हो॥
५. ज्ञान अरु विज्ञान का, सब विश्व में प्रचार हो।
सब जगत् के प्राणियों का, धर्म में संचार हो॥
६. आचार्य देवों के विचारों, का जगत् में मान हो।
'दास देवी' को गुरु की शान पर अभिमान हो॥

(१५१)

भेष धर यूं ही जनम गमायो।
लच्छन स्याल, स्वांग धर सिंह को, खेत लोकां को खायो – टेर०
१. कर कर कपट निपट चतुराई, आसण दृढ़ जमायो,
अंतर भोग, योग की वतियां, वग-ध्यानी छल छायो – भेष०
२. कर नर नार निपट निज रागी, दया धर्म मुख गायो,
सावज्ज-धर्म सपाप सरूपी, जग सघलो वहकायो – भेष०
३. वस्त्र-पात्र-आहार-थानक में, सबलो दोष लगायो,
संत दशा विन संत कहायो, ओ कांई कर्म कमायो – भेष०
४. हाथ सुमरणी, हिये कतरणी, लट पट होठ हिलायो,
जप तप संयम आतम गुण विन, गाडर सीस मुंडायो – भेष०
५. आगम वयण अनुपम सुणने, दयाधर्म दिल भायो,
'रतन चंद' आनन्द भयो अब, आतम राम रमायो – भेष०

(१५२)

मनवा माटी की या काया – आखिर माटी में मिल जासी ।

१. हिंसा वढ़ा कर, पाप कमाकर – जोड़े धन की राशि,
कानां की कुड़क्यां तक वेटो – गांठ वांध ले आसी – मन०

२. फूलों की शैया भी चुभती – वा देह मित्र उठासी,
नीचे लकड़ी ऊपर लकड़ी – चुन चुन चिता वणासी – मन०

३. जिण रे मोह में हुवो दिवाणो – वे या प्रीत निभासी,
प्राण प्यारो वेटो ही पहले – थांरे आग लगासी – मन०

४. फुंक गया, कई फुंक रया है – फेर कई फुंक जासी,
पण या भी राखजे याद एक दिन – तू भी अठे ही आसी – मन०

५. माटी वण माटी में मिलग्यो – फेर वण्यो वणतो जासी,
जव तक है माटी सुं ममता – मिटे न यम की फांसी – मन०

६. काला का तो धोला होग्या – फेर क्यूं करावे हांसी,
जनम मरण का वन्ध वढ्या तो – जनम जनम पछतासी – मन०

७. काल अनन्ता चक्कर खायो – फिर्यो लाख चोरासी,
पण अव के तो वणजा 'जीतमल' – अजर-अमर-अविनाशी – म०

(१५३)

सुणजो भवि जीवां, जतन करोजी बारे मास में – आंकड़ी.

१. चैत्र कहे तूं चेत चतुर नर, तीन तत्व पिछाण ।
अरि हन्त देव निर्ग्रंथ गुरुजी, धर्म दया में जाण हो – सु०

२. वैशाख कहे विश्वास न कीजे, छिन छिन आयु छीजे ।
छव काया की हिंसा करतां, किण विध प्रभुजी रीझेजी – सु०

३. जेठ कहे तूं है अति मोटो, किसे भरोसे बैठो।
दिन दिन चलणो नेड़ो आवे, ले ले धर्मको ओटोजी – सु०

४. अषाढ कहे आतम वश करिये, सबही काज सुधरिये।
थोड़ा भवां के मांय निश्चय, मुगत तणां सुख वरीयेजी – सु०

५. श्रावण कहे कर साधुकी संगत, ले ले खरची लार।
वार वार सतगुरु समझावे, वृथा जन्म मत हार जी – सु०

६. भादव कहे भगवंत की वाणी, सुणियां पातक जावे।
शुद्ध भावसे जो कोई श्रद्धो, गर्भवास नहिं आवे जी – सु०

७. आसोज कहे तूं आछी करले, नर भव दुर्लभ पायो।
धर्म ध्यानमें सैंठो रहिजे, मत पड़जे भ्रम मांहींजी – सु०

८. कार्त्तिक कहे तूं कहां तक है, हृदय मांहीं विचारो।
मात पिता सुत वहेन भाणजा, अन्त समय नहीं थारोजी – सु०

९. मृगसर कहे मृग समो जीवड़ो, काल सिंह विकराल।
खूटचो आउखो उठ चलेगो, काया नाखेगा जालजी – सु०

१०. पौष कहे तूं पोषे कुटम्बको, परभव से नहीं डरता।
पाप कर्म पर काज कारणे, तूं क्यों दुर्गत में पड़ता जी – सु०

११. माह कहे मोह मांहि उलझ्यो, कर रह्यो म्हारो म्हारो।
धन कुटम्ब सब छोड़ जायगा, कालको होयगो चारोजी – सु०

१२. फागण फाग सुमति संग खेलो, ज्ञान तणो रंग घोली।
कर्म वर्गणा गुलाल उड़ावो, जलावो भव भ्रमण होलीजी – सु०

१३. उगणीसे पचास फागणे, नाथ दुवारे आया।
गुरु खूबरिखजी प्रसादे, केवल रिख वणाया जी – सु०

---

(१५४)

"गुण-स्थानक"

१. अपूर्व अवसर एवो क्यारे आवशे,
क्यारे थइशुं वाह्यान्तर निर्ग्रन्थ जो।
सर्व सम्बन्ध नुं वन्धन तीक्षण छेदीने,
विचरशुं कव महत्पुरुष ने पंथ जो–अपूर्व०

२. सर्व भावथी औदासीन्य वृत्ति करी,
मात्र देह ते संयम-हेतु होय जो।
अन्य कारणे अन्य कशुं कल्पे नहीं,
देहे पण किंचित मूर्च्छा नवि जोय जो–अपूर्व०

३. दर्शन मोह व्यतीत थइ उपज्यो वोध जे,
देह भिन्न केवल चैतन्यनुं ज्ञान जो।
तेथी प्रक्षीण चारित्र मोह विलोकिये,
वर्ते एवुं शुद्ध स्वरूप नुं ध्यान जो–अपूर्व०

४. आत्म-स्थिरता त्रण संक्षिप्त योगनी,
मुख्य पणे तो वर्ते देह-पर्यन्त जो।
घोर परीषह के उपसर्ग-भये करी,
आवी शके नहीं ते स्थिरता नो अन्त जो–अपूर्व०

५. संयम ना हेतु थी योग-प्रवर्तना,
स्वरूप-लक्षे जिन आज्ञा-आधीन जो।
ते पण क्षण क्षण घटती जाती स्थितिमां,
अन्ते थाये निज स्वरूप मां लीन जो–अपूर्व०

६. पंच विषय मां रागद्वेष-विरहितता,
पंच प्रमादे न मिले मन नो क्षोभ जो।
द्रव्य क्षेत्र ने कालभाव-प्रतिवन्ध विरण,
विचरवुं उदयाधीन परण वीत-लोभ जो–अपूर्व०

७. क्रोध प्रत्ये तो वर्ते क्रोध-स्वभावता,
मान प्रत्ये तो दीन परणानुं मान जो।
माया प्रत्ये माया-साक्षी भाव नी,
लोभ प्रत्ये नहीं लोभ समान जो–अपूर्व०

८. बहु उपसर्ग-कर्त्ता प्रत्ये परण क्रोध नहीं,
वन्दे चक्री तथापि न थाये मान जो।
देह जाय परण माया थाय न रोम मां,
लोभ नहीं छो प्रवल सिद्धिनिदान जो–अपूर्व०

९. नग्नभाव मुंडभाव सह अस्नानता-
अदन्त धोवन आदि परम प्रसिद्ध जो।
केश, रोम, नख के अंगे शृंगार नहीं,
द्रव्य भाव संयम मय निर्ग्रन्थ सिद्ध जो–अपूर्व०

१०. शत्रु मित्र प्रत्ये वर्ते समदर्शिता,
मान अमाने वर्ते स्वभाव जो।
जीवित के मरणे नहीं न्यूनाधिकता,
भव-मोक्षे परण वर्ते समभाव जो–अपूर्व०

११. एकाकी विचरतो वली श्मसान मां,
वली पर्वतमां वाघ सिंह संयोग जो।
अडोल आसन ने मन मां नहिं क्षोभता,
परम मित्र नो जाणे पाम्या योग जो–अपूर्व०

१२. घोर तपश्चर्या मां पण मन ने ताप नहीं,
सरस अन्ने नहीं मन ने प्रसन्न भाव जो।
रज-कण के ऋद्धि वैमानिक देवनी,
सर्वेमान्या पुद्गल एक स्वभाव जो—अपूर्व०

१३. एम पराजय करी ने चारित्र मोहनो,
आवुं त्यां ज्यां करण अपूर्व भाव जो।
श्रेणी क्षपक तणी करी ने आरूढ़ता,
अनन्य चिन्तन अतिशय शुद्ध स्वभाव जो—अपूर्व०

१४. मोह स्वयंभूरमण समुद्र तरी करी,
स्थिति त्यां ज्यां क्षीण मोह गुणस्थान जो।
अंत समय त्यां पूर्ण स्वरूप वीतराग थई,
प्रगटावुं निज केवल ज्ञान निधान जो—अपूर्व०

१५. चार कर्म घनघाती ते व्यवच्छेद ज्यां,
भव ना वीज तणो आत्यन्तिक नाश जो।
सर्वभाव ज्ञाता द्रष्टा सह शुद्धता,
कृतकृत्य प्रभु वीर्य अनन्त प्रकाश जो—अपूर्व०

१६. वेदनीयादि चार कर्म वर्ते जहाँ,
वली सींदरिवत् आकृतिमात्र जो।
ते देहायुष आधीन जेनी स्थिति छे,
आयुष पूर्णे मिटिये दैहिक पात्र जो—अपूर्व०

१७. मन वचन काया ने कर्मनी वर्गणा,
छूटे जहाँ सकल पुद्गल सम्वन्ध जो।
एवुं अयोगी गुणस्थान त्यां वर्ततुं,
महाभाग्य सुखदायक पूर्ण अवन्ध जो—अपूर्व०

१८. एक परमाणुमात्रनी मले न स्पर्शता,
पूर्ण कलंक-रहित अडोल स्वरूप जो।
शुद्ध निरंजन चैतन्य मूर्ति अनन्तमय,
अगुरुलघु अमूर्त सहज पद रूप जो–अपूर्व०

१९. पूर्व प्रयोगादि कारण ना योग थी,
उर्ध्व गमन सिद्धालय प्राप्त सुस्थित जो।
सादि अनन्त अनन्त समाधि सुख मां,
अनन्त दर्शन, ज्ञान अनन्त सहित जो–अपूर्व०

२०. जे पद श्री सर्वज्ञ दीठूं ज्ञान मां,
कही शक्या नहीं पण ते श्री भगवान जो।
तेह स्वरूप ने अन्य वाणी शुं कहे,
अनुभव गोचर मात्र रहयूं ते ज्ञान जो–अपूर्व०

२१. एह परम पद प्राप्ति नुं कयूं ध्यान मैं,
गजा वगर नो हाल मनोरथ रूप जो।
तो पण निश्चय 'राजचन्द्र' मन में रह्यो,
प्रभु आज्ञाये थाशुं तेज स्वरूप जो–अपूर्व०

(१५५)

नहिं ऐसो जन्म बारम्बार।
क्या जानूं कछु पुण्य प्रकटे मानुसा अवतार–ध्रु०

१. बढ़त पल पल, घटत छिन छिन, चलत न लागे वार।
विरछके ज्यों पात टूटे, लागे नहीं पुनि डार–नहिं०

२. भवसागर अति जोर कहिये विषम ओखी धार।
सुरतका नर बांधे वेड़ा वेगि उतरे पार–नहिं०

३. साधु संता ते महंता चलत करत पुकार।
दासि 'मीरां' लाल गिरिधर जीवना दिन चार–नहिं०

(१५६)

नाम जपन क्यों छोड़ दिया ?
क्रोध न छोड़ा, झूठ न छोड़ा, सत्यवचन क्यों छोड़ दिया ? –ध्रु.

१. झूठे जग में दिल ललचा कर, असल वतन क्यों छोड़ दिया ?
कौड़ीको तो खूब सम्हाला, लाल रतन क्यों छोड़ दिया ?

२. जिहिं सुमिरन ते अति सुख पावे, सो सुमिरन क्यों छोड़ दिया ?
'खालस' इक भगवान भरोसे, तन, मन, धन क्यों न छोड़ दिया ?

(१५७)

१. परलोके सुख पामवा, कर सारो संकेत ।
हवे वाजी छे हाथ मां, चेत चेत नर चेत ।।

२. जोर करीने जोतवु, खरे खरू रण खेत ।
दुश्मन छै तुझ देहमां, चेत चेत नर चेत ।।

३. गाफिल रहीश गंवार तूं, फोगट थईश फजेत ।
हवे जरूर हुशियार थई, चेत चेत नर चेत ।।

४. तन धन तें थारी नथी, नथी प्रिया परणेत ।
पाछल सौ रहरो पड्यो, चेत चेत नर चेत ।।

५. प्राण जशे ज्यां पिंडथी, पिंड गणाशे प्रेत ।
माटीमां मांटी थशे, चेत चेत नर चेत ।।

६. रह्या न राणा राजीया, सुर नर मुनि समेत ।
तूं तो तिनका तुल्य छै, चेत चेत नर चेत ।।

७. रज कण थारो रखड़शे, जेम रखड़ती रेत ।
पाछी नर तन पामीश क्यां चेत चेत नर चेत ।।

८. काला केश मटी गया, सर्व बणीया श्वेत।
जोवन तो जातु रह्यूं चेत चेत नर चेत ॥

९. माटे मनमां समजीने, विचारी ने कर वेत।
क्यांथी आव्यो क्यां जावुं चेत चेत नर चेत ॥

१०. शुभ शिखामण समझ तूं प्रभु साथे कर हेत।
अंते अविचल अेज छै चेत चेत नर चेत ॥

(१५८)

१. वार वार नहीं आवे अवसर – वार वार नहीं आवे रे।
जहाँ जाणे तिहाँ करना भलाई – जनम जनम सुख पावे रे।टेर।

२. तन-धन-यौवन सब ही झूठा – प्राण पलक में जावे रे।
तन छूटे धन कौन काम को – काहे को कृपण कहावे रे–वार०

३. जांके हिरदे सांच वसत है – वांको झूठ न भावे रे।
'आनन्दघन' प्रभु ! चलतपंथ – ते सुमर सुमर सुख पावे रे–वार०

(१५९)

वीत गये दिन भजन विना रे ॥ध्रु०॥
वाल-अवस्था खेल गँवाई, जव जोवन तव मान घना रे।
लाहे कारन मूल गँवायो, अजहुँ न गई मनकी तृस्ना रे ॥
कहत 'कवीर' सुनो भाई साधो, पार उतर गये सन्त जना रे।

(१६०)

१. मानव को भव पाय ने मत जाय रे निराशा ।
आतम ज्ञान अनूपम सागर, सतगुरु देवे दिलासा – मानव०

२. तन, धन यौवन पल में पलटे, ज्यों पाणी बीच पतासा ।
मात, पिता, तिरिया, सुत बन्धव, ज्यूं पक्षी तरु वासा – मानव०

३. हाथी हरम घोड़ा चकड़ोला, तजिया है महल निवासा ।
क्षमा समुद्र में पेस ने प्यासा, रहता है वो हासा – मानव०

४. सुख सागर की लहर तजीने, किम करे जमघर वासा ।
'रतन चन्द' कहे धर्म अराधो ज्यूं सफल फले मन आशा – मानव०

(१६१)

१. मानव तन को पायो हो हो करणी कर लो रे ।
लक्ष चौरासी में भटकत आयो,
चिन्तामणि सम नरतन पायो, इसको सार्थक कर लो – हो हो०

२. दुर्व्यसनों में व्यर्थ ही फंसकर,
प्राप्त समय को यों ही गंवाकर पुण्य कलश मत ढोलो – हो हो०

३. कौन हूं मैं अरु कहां से आया,
ऐसा विचार जरा कर लो धर्म ध्यान दिल धर लो – हो हो०

४. सब स्वारथ की ही है माया,
इसमें दिल को क्यों उलझाया जिन चरणन मन कर लो – हो हो०

५. 'श्रेयस्कर' की यही कामना,
अपना कर्त्तव्य पालन करना, पाप कर्म सब टालो – हो हो०

(१६२)

सुनो लाल संजम पाल वेगा मोक्ष में जाज्यो ।।टेर।।

१. विनय करी ने खूब गुरुदेव रिझाज्यो ।
होय सो अपराध वारम्बार खमाज्यो – सुनो०

२. सीखज्यो वहु ज्ञान परमाद घटाज्यो ।
मेघ ज्यूं तपस्या की झड़ियां खूब लगाज्यो – सुनो०

३. आज ज्यूँ दिन रात थें वैराग्य वढ़ाज्यो ।
सार दया धर्म में थें चित्त रंमाज्यो – सुनो०

४. फेर दूजी मात की मत कुक्षी में आज्यो ।
जन्म जरा मरण को दुःख रोग मिटाज्यो – सुनो०

५. इतनी मुझ सीख ऊपर ध्यान लगाज्यो ।
कहे 'मुनि नन्द लाल' यों सुख सम्पदा पाज्यो – सुनो०

(१६३)

मानवता की भव्य भूमि से वोल गये भगवान ।
मानव मानव एक समान ।।टेर।।
यही शांति का राज मार्ग है महावीर फरमान – मानव०

१. विषम वर्ग की आग वुझाना, अव न ज्यादा लोभ वढाना,
गिरा पड़ोसी दौड़ उठाना, पढ़ना समता पाठ पढाना ।
तभी विश्व प्रेमके होंगे सफल सभी अरमान – मानव०

२. भूखा पेट और फटी लंगोटी मांगे तुम से कपड़ा रोटी,
वोलो कितनी मांग है छोटी आज तुम्हारी खरी कसौटी ।
दुखियाओं का करुणा क्रन्दन गाता क्रांति गान – मा०

३. अब नहीं उल्टी हवा बहेगी, दुःखी आत्मा साफ कहेगी,
भूखी जनता अब ना सहेगी धन और धरती बंटके रहेगी ।
खूनी क्रांतियां रोकन होतो देदो झटपट दान – मा०

४. धरती किसकी बनी रही है, किसी एक के बंधी नहीं है,
माया बादल छाया कहीं है, बोलो किसके साथ गई है ।
धन धरती का गर्व न करना यह तो है महमान – मा०

५. प्राणी मात्र से प्रेम बढाओ मानवता के फूल खिलाओ,
अपनी अच्छी याद बसाओ सुख चाहो तो सुख पहुँचाओ ।
'अशोक मुनि' मानव जीवनसे करलो परम उत्थान – मा०

(१६४)

मेरे अन्तर भया प्रकाश, नहीं अब मुझे किसी की आश ।।टेर।।

१. काल अनन्त रुला भववन में बंधा मोह के पाश,
काम क्रोध मद लोभ भाव से बना जगत का दास – मेरे०

२. तन धन परिजन सब ही पर हैं, परकी निवारो आश
पुद्गल को अपना कर मैंने किया स्वत्व का नाश – मेरे०

३. रोग शोक नहीं मुझ को तो जरा मात्र भी त्रास,
सदा शान्तिमय मैं हूँ मेरा, अचल रूप है खास – मेरे०

४. इस जग की ममता ने मुझको डाला गर्भावास,
अस्थि मांस मय अशुचि देह में मेरा हुआ निवास – मेरे०

५. ममता से संताप उठाया, आज हुआ विश्वास,
भेद ज्ञान की पैनी धार से काट दिया वह पाश – मेरे०

६. मोह मिथ्यात्व की गांठ गले तब हो विज्ञान प्रकाश,
'गजेन्द्र' देखे अलख रूप को फिर न किसी की आश – मेरे०

(१६५)

घणो सुख पावेला, जो गुरु वचनों पर प्रीति वढ़ावेला ।।टेर।।

१. विनयशील की कैसी महिमा, मूल सूत्र वतलावेला ।
वचन प्रमाण करे सो जन सुख सम्पत्ति पावेला ।।

२. गुरु सेवा और आज्ञाधारी, शिक्षा खूब मिलावेला ।
जलपाये तरुवर सम वे, जग में सरसावेला ।

३. वचन प्रमाणे जो नर चाले, चिंता दूर भगावेला ।।
आपमती आरति नित भोगे, धोखा खावेला ।।

४. एकलव्य लखि चकित पांडुसुत, मन में सोच करावेला ।
कहा गुरु से हाल भील की भक्ति बतावेला ।।

५. देख भक्ति उस भील युवा की, वन देवी खुश होवेला ।
विना अंगूठे वाण चले यो वर दे जावेला ।।

६. गुरु कारीगर के सम जग में वचन टंक जो खावेला ।
पत्थर से प्रतिमा जिम वो नर महिमा पावेला ।।

७. कृपा दृष्टि गुरुदेव की मुझ पर ज्ञान शांति वरसावेला ।
'गजेन्द्र' गुरु महिमा का नहीं कोई पार मिलावेला ।।

(१६६)

मैं हूँ उस नगरी का भूप, जहाँ नहीं होती छाया धूप ।

१. तारा-मण्डल की न गति है, जहाँ न पहुँचे सूर ।
जग मग ज्योति सदा जगती है, दीसे यह जग कूप – मैं०

२. मैं नहीं श्याम-गौर वर्णी हूँ, मैं न सुरूप कुरूप ।
नांहि लम्बा-वौना भी मैं हूँ, मेरा अविचल रूप – मैं०

३. अस्थि मांस मज्जा नहिं मेरे, मैं नहिं धातु रूप ।
हाथ पैर शिर आदि अंग में, मेरा नहीं स्वरूप – मैं०

४ दृश्य जगत पुद्गल की माया, मेरा चेतन रूप।
पूरण गलन स्वभाव धरे तन, मेरा अव्ययरूप – मैं०

५. श्रद्धा नगरी वास हमारा, चिन्मय कोष अनूप।
निरावाध सुखमें झूलूं मैं, सद् चिद् आनन्द रूप – मैं०

६. शक्ति का भण्डार भरा है, अमल अचल मम रूप।
मेरी शक्ति के सम्मुख नहिं, देख सके अरि भूप – मैं०

७. मैं न किसी से दवने वाला, रोग न मेरा रूप।
'गजेन्द्र' निजपद को पहचानो, सो भूपों का भूप – मैं०

(१६७)

यदि भला किसी का कर न सको तो बुरा किसी का मत करना।
अमृत न पिलाने को घर में तो जहर पिलाते भी डरना॥

यदि सत्य मधुर न वोल सको तो झूठ कठिन भी मत बोलो।
यदि मौन रखो सवसे अच्छा, कम से कम विष तो मत घोलो॥

वोलो तो ! पहले तुम तोलो फिर मुख ताल खोला करना।
यदि घर न किसी का वान्ध सको तो झौंपड़ियाँ न जला देना॥

यदि मरहम पट्टी कर न सको तो खार नमक न लगा देना।
यदि दीपक ! वनकर जल न सको तो अन्धकार भी मत करना॥

यदि फूल नहीं वन सकते तो काँटे वन कर न विखर जाना।
मानव वनकर सहला न सको तो दिल भी किसी का दुखाना ना॥

यदि देव नहीं ! वन सकते तो दानव वन कर भी मत मरना।
'मुनि पुष्प' अगर भगवान नहीं तो कम से कम इन्सान वनो॥

किन्तु न कभी शैतान वनो और कभी न तुम हैवान वनो।
यदि सदाचार ! अपना न सको तो पापों में पग मत धरना॥

(१६८)

रहना नहिं देस विराना है ।।ध्रु०।।

१. यह संसार कागदकी पुड़िया, बूँद पड़े घुल जाना है ।
यह संसार काँटे की बाड़ी, उलझ उलझ मरि जाना है ।।

२. यह संसार झाड़ औ झाँखर, आग लगे बरि जाना है ।
कहत 'कबीर' सुनो भाई साधो, सतगुरु नाम ठिकाना है ।।

(१६६)

१. रोज शाम को जीवन खाता खोलो करो विचार ।
श्रावक यह तेरा आचार ।
मोक्ष मार्ग में चरण बढ़ाये, कितने दो या चार ?
करले वारम्वार विचार ।।टेर।।

१. जो शुभ निश्चय किये सवेरे, कितने पूर्ण हुए वे तेरे ?
विघ्न देखकर घबराया या, डटकर रहा तैयार – करले०

२. कितने कार्य किये पुण्यों के ? कितने कार्य किये पापों के ?
देख तोलकर पुण्य-पाप को किधर है कितना भार – करले०

३. कितने अवगुण त्यागे तूंने ? कितने सद्गुण धारे तूंने ?
तूँ तूँ मैं मैं व्यर्थ लगाकर, अथवा की तकरार – करले०

४. कितना संगकिया गुणियोंका, कितना लाभलिया मुनियोंका ?
या खेल तमाशे ठट्टे हंसी में, मस्त रहा वेकार – करले०

५. मानव जीवन सफल वनाले, इस नर तन से लाभ उठाले ।
लक्ष चौरासी योनि में यह, मिले न वारम्वार – करले०

६. संवर करले तप आदर ले, पुण्य कमा ले पाप खपाले ।
केवल कहते 'पारस' सुन रे, यह जीवन दिन चार – करले०

(१७०)

१. वीरा म्हारा गज थकी हेठो उतर रे,
गज चढ्यां केवल नहीं होसी बंधव मांहरा गज थकी हेठो उतर रे

२. राज तणां लोभियो भरत-बाहुबली रे,
जूझै मूठ कटारी मारवा, बाहुबलि प्रतिबूझ रे – वीरा०

३. ब्राह्मी सुन्दरी इम भाखे रे,
"ऋषभ जिनेश्वर मोकली, मोकली बाहुबलि तुम पासे रे – वीरा०

४. लोच करी संजम लीनो आयो वलि अभिमान रे,
'लघु वन्धव वंदूं नहीं' काउसग्ग रह्या शुभ ध्यान रे – वीरा०

५. वर्ष दिवस काउसग्ग रह्या वेलड़ियां लिपटाणी रे,
पंखेरु माला मांडिया-शीत ताप वहु सहणो रे" – वीरा०

६. साध्वी वचन सुणि करि, चमक्या चित्त मझारो रे,
"हय गय पैदल रथ तज्या पण चढ्यो अहंकारो रे – वीरा०

७. वैराग्य मन में धारियो हूँ तो तजूं अभिमानो रे",
चरण उठायो वांदवां-पाम्यो केवलज्ञानो रे – वीरा०

८. पहुँच्या है केवली परिषदा, बाहुबलि मुनिराजो रे,
अजर अमर पदवी लही 'समयसुन्दर' वंदे पायो रे – वीरा०

(१७१)

१. वृक्षनसे मत ले, मन तूं वृक्षनसे मत ले ।
काटे वाको क्रोध न करहीं,
सिंचत न करहिं सनेह – मन तूं०

२. धूप सहत अपने सिर ऊपर, औरको छाँह करेत ।
जो वाहीको पथर चलावे, ताहीको फल देत – मन तूं०

३. धन्य धन्य ये पर-उपकारी, वृथा मनुजकी देह ।
'सूरदास' प्रभु कहँ लगि वरनौं, हरिजन की मत ले – मन तू०

(१७२)

वैष्णव (श्रावक) जन तो तेने कहीए, जे पीड़ पराई जाणे रे;
पर दुखे उपकार करे तो ये, मन अभिमान न आणे रे – ध्रु०

१. सकल लोकमां सहुने वंदे, निंदा न करे केनी रे;
वाच काछ मन निश्चळ राखे, धन धन जननी तेनी रे – वैष्णव०

२. समदृष्टि ने तृष्णा त्यागी, परस्त्री जेने मात रे;
जिह्वा थकी असत्य न वोले, परधन नव झाले हाथ रे – वैष्णव०

३. मोह माया व्यापे नहिं जेने, दृढ वैराग्य जेना मनमां रे;
रामनामशुं ताली लागी, सकळ तीरथ तेना तनमां रे – वैष्णव०

४. अणलोभी ने कपटरहित छे, काम क्रोध निवार्या रे;
भणे 'नरसैंयो' तेनुं दरसन करतां, कुळ एकोतेर तार्यां रे – वैष्णव०

(१७३)

१. शूर संग्रामको देख भागै नहीं, देख भागै सोई शूर नाहीं ।
काम औ' क्रोध, मद, लोभसे जूझना, मंडा घमसान तहँ खेत मांहीं ।

२. शील औ' शौच, संतोष साही भये, नाम समसेर तहँ खूव वाजे ।
कहै 'कवीर' कोइ जूझि है शूरमा, क़ायराँ भीड़ तहँ तुरत भाजे ।।

(१७४)

समकित नहीं लियो रे, हूं तो रुल्यो चतुर्गति मांही ।।टेर।।

१. त्रस स्थावर नी करुणा कीनी, जीव नहीं एक विराध्यो,
तीन काल सामायिक करतां, शुद्ध उपयोग न साध्यो – सम०

२. झूठ बोलवा को व्रत लीनो, चोरी को भी त्यागी,
व्यवहारादिक में निपुण भयो, पण अन्तर्दृष्टि न जागी – सम०

३. निज पर नारी त्यागन करके, ब्रह्मचर्य व्रत लीधो,
स्वर्गादिक या को फल पामें, निज कारज नहिं साध्यो – सम०

४. ऊर्ध्व भुजा करी ऊंधो लटके, भस्मी लगा धूम गटके,
जटा जूट सिर मूंडे झंडो, विन श्रद्धा भव भटके – सम०

५. वाह्य क्रिया सव त्याग परिग्रह, द्रव्य लिंग धर लीनो,
'देव चंद्र' कहे या विधि तो हम, वहुत वार कर लीनो – सम०

(१७५)

१. वीर जिनेश्वर गौतम ने कहे, संवर करतां रे सहु जन सुख लहे ।

सुख लहे संवर कहे जिनवर, जीव हिंसा टालिये ।
सुक्ष्म वादर त्रस अरु स्थावर, सर्व प्राणी पालिये ।
मन वचन काया धरी समता, ममता कछू नहीं आणिये ।
सुण वच्छ गोयम वीर जंपे प्रथम संवर जाणिये ।।

२. वीजे संवर जिनवर इम कहे, सांचा वोल्यां रे सभी को सुख लहे ।
सुख लहे सांचे सहस्र सगले, सतवचन संभालिये ।
जाणी हिंसा हो जीवकेरी, तेह भाषा टालिये ।
असत्य टाली सत्य आगम, मंत्र नवकार भाखिये ।
सुण वच्छ गोयम ! वीर जंपे जीभ जतन करि राखिये ।।

३. तीजे संवर घर बाहर सही अदत्त परायोरे लेता गुण नहीं।
गुण नहीं अदत्त लेतां दूर परायो परिहरो।
जिण राज डंडे लोक भंडे, इसो भंडण कई करो।
इसो जाणी मन विवेक आणि लिखियो लाभे आपणो।
सुण वच्छ गोयम वीर जंपे नहीं लीजे पर थापणो।

४. चौथे संवर चौथो व्रत आदरो शियल सगलो अंग अलंकरो।
अलंकरो अंगे शियल सगले रंगराचे यह सही।
जग मांहि जोतां यह जालम अवर ओपमा को नहीं।
इसो जाणी मन विवेक आणि रखे नार पराई निरखो नेणसूं।
सुण वच्छ गोयम वीर जंपे कछु न कहिये वेणसूं।

५. पाँचवें संवर परिग्रह परिहरो, भवियण जीवड़ारी ममता मत करो
मत करो ममता दिन रात रुलता, जोय तमासो यह वड़ो।
मणि माणक कंचन कोड़ हुए तो तृप्त न हुए जीवड़ो।
जिमजिम लाभ पामे लोभ वधे सुणो भवियण अति घणो।
सुण वच्छ गोयम वीर जंपे तृष्णा हेठी परिहरो।

६. छठे संवर छठो व्रत धरो रात्रि भोजन भवियण परिहरो।
परिहरो भोजन रेण केरो प्रत्यक्ष पातक यह वड़ो।
संसार रुलसी दुःख सहसी सुख टलसी देहनो।
इसो जाणी समणीक श्रावक सघला मूल गुण व्रत आदरो।
सुण वच्छ गोयम वीर जंपे शिव रमणी वेगी वरो।

---

(१७६)

१. रे मन ! मूरख जनम गँवायो ।
करि अभिमान विषय-रस राच्यो श्याम-सरन नहिं आयो ।

२. यह संसार फूल सेमर को सुन्दर देखि भुलायो ।
चाखन लाग्यो रुई गई उड़ि, हाथ कछू नहिं आयो ॥

३. कहा भयो अबके मन सोचे, पहिले नाहिं कमायो ।
कहत 'सूर' भगवंत भजन बिनु सिर धुनि धुनि पछितायो ॥

(१७७)

समझो चेतन जी अपना रूप, यो अवसर मत हारो ॥टेर॥

१. ज्ञान दरस मय रूप तिहारो, अस्थि मांस मय देह न थारो ।
दूर करो अज्ञान, होवे घट उजियारो – समझो०

२. पोपट ज्यूं पिंजर बंधायो मोह कर्म वश स्वांग बनायो ।
रूप धरे है अनपार, अब तो करो किनारो – समझो०

३. तन धन के नहिं तुम हो स्वामी, ये सब पुद्गल पिंड हैं नामी ।
सद् चिद् गुण भंडार, तूँ जग देखन हारो – समझो०

४. भटकत भटकत नर तन पायो, पुण्य उदय सब योग सवायो ।
ज्ञान की जोति जगाय, भर्मतम दूर निवारो – समझो०

५. पुण्य पाप का तूं है कर्त्ता, सुख दुःख फल का भी तूं भोक्ता ।
तूँ ही छेदन हार, ज्ञान से तत्व विचारो – समझो०

६. कर्म काट कर मुक्ति मिलावे, चेतन निज पद को तब पावे ।
मुक्ति के मार्ग चार, जानकर दिल में धारो – समझो०

७. सागर में जलधार समावे, त्यूं शिव पद में ज्योति मिलावे ।
होवे 'गज' उद्धार अचल है निज अधिकारो – समझो०

(१७८)

साधो मनका मान त्यागो ।
काम क्रोध संगत दुर्जनकी, ताते अहनिस भागो ।।ध्रु०।।

१. सुख दुख दोनों सम करि जानै, और मान अपमाना ।
हर्ष शोक ते रहे अतीता, तिन जग तत्त्व पिछाना – साधो०

२. अस्तुति निन्दा दोऊ त्यागे, खोजै पद निरवाना ।
जन 'नानक' यह खेल कठिन है, कोऊ गुरु-मुख जाना – साधो०

(१७९)

१. संग से पुष्प को चन्द्र मिले, अरु संग से लोहा स्वर्ण कहावे ।
संग से पंडित मूर्ख वने, अरु संग से शूद्र अमर-पद पावे ।।

२. संग से काष्ठ के लोह तरे, तन को सत्संग हि पार लगावे ।
संग से सन्त को स्वर्ग मिले, अरु संग कुसंग से नरक में जावे ।।

(१८०)

१. बालो पाँखा वाहिर आयो, माता वेण सुणावे यूं ।
म्हारी कोख सराहिजे वाला, मैं थने सखरी घूंटी दूं – माता०

२. तेज कटारी नाड़ो मोड्यो नाड़ो मोड़त वोली यूं ।
बैर्यांरी फौजां में जाईने, सत्य विजय कर आइजे तूं – माता०

३. मेड़ी चढ़कर थाल वजायो, थाल वजावत बोली यूं ।
चार खूंट चौखण्ड रे वाला नौपतड़ी धमकाइजे तूं – माता०

४. कुए पूजकर फलसे आई, फलसे वढतां वोली यूं ।
फलसा में ढोला रे ढमके आरतड़ी करवाई जे तूं – माता०

५. गोदयां सूतो वालो चूंखे माता बोल सुणावे यूं ।
धोला दूध में कायरता रो कालो दाग न लगाइजे तूं – माता०

६. वालो मां छाती से चेप्यो छाती चेपत वोली यूँ ।
दीन दुखी असहाय जणां ने, छाती से चिपकाइजे तूँ – माता०

७. वालो मांय भुजा पर लीन्हो, भार वहन्ती वोली यूँ ।
धरती मां को भार हटाइजे, मत ना भार बढाइजे तूँ – माता०

८. सोहन पालने वालो झूले, झोटत झोटत वोली यूँ ।
इतनी वार हिलाइजे धरती, मैं थंने जितरा झोटा दूं – माता०

९. उड़न खटोले वालो सूतो, माता वोल सुनावे यूँ ।
वैर्यांरी चतुरंगणी सेना गाढ़ी नींद सुलाइजे तूँ – माता०

(१८१)

१. इम समकित मन थिर करो, पालो निर अतिचार ।
मनुष्य जन्म छै दोहिलो, भमतां जगत मंझार ।।

२. नर भव आरज कुल तिहां, सुणवी जिनवर वाण ।
होय यथारथ श्रद्धना, चउ अंग दुर्लभ जान ।।

३. आरम्भ परिग्रह दोयए, तेइस विषय कषाय ।
जव तक पतला ना पड़े, तव लग समकित नाय ।।

४. आतम, लोक, कर्म, क्रिया, शुद्ध वाद है चार ।
चिंतवतां समकित लहे, जीव जगत मंझार ।।

५. जीव अमर है शाश्वतो, तीनूं रत्न स्वभाव ।
पर संयोगे ऊपजे, हो वश विषय कषाय ।।

६. आतम सम छहकाय है, दुःख की निर अभिलाष ।
परलोके परवश भमे, जिन आगम है साख ।।

७. संपति विपति सुखी-दुःखी, मूढ़ 'रु चतुर सुजान ।
नाटक कर्मना जानजो, नाना जगत विधान ।।

८. विन कीधां लागे नहीं, कीधां कर्मज होय ॥
कर्म कमाया आपणा, ते थी सुख दुःख होय ॥

९. जीव अजीव बेहू मिल्या, खीर नीर ने न्याय ।
आश्रव गुण के कारणे, ते थी वन्धन थाय ॥

१०. आश्रव हेतु है वन्धनो, शुभ अशुभ दोय भेद ।
कर्म थी पुण्य ने पाप है, मोक्ष तेहनो छेद ॥

११. संवर रोके आवतां, क्षीण तप थी होय ।
तेहनो नाम छे निर्जरा, मुगती कारण दोय ॥

१२. पहली त्रिक मन धारिये, ज्ञेय अरु वीजी हेय ।
तीजी उपादेय जानिये, इम मन समकित सेय ॥

१३. उपशम जेह कषाय नो, तेहनो शम अभिधान ।
मोक्ष मार्ग नी चाहना, सो सम्वेग प्रधान ॥

१४. होय उदासी विषय में, जाणीजो निरवेद ।
पर दुःख देख दुखी दया, ओ छे चौथो भेद ॥

१५. इह परलोक छतां पणो, होवे आस्तिक भाव ।
कृत कर्मों ना फल सहे, होवे पुण्य ने पाप ॥

१६. तर्क अगोचर श्रद्धवो, द्रव्य धर्म अधर्म ।
कोई प्रतीते युक्ति सुं, पुण्य पाप से कर्म ॥

१७. तप चरित्र ने रोकवो, कीजे तज अभिलाख ।
श्रद्धा प्रतीति रुचि तिहुँ, है जिन आगम साख ॥

१८. पंथ १ धर्म २ जिय ३ साधु ४ है, सिद्ध क्षेत्र मन जान ।
एह यथारथ जाणिये, संज्ञा दस विधि मान ॥

१९. जाति स्मृति अवधि आदिसों, उपजे वोध निसर्ग १ ।
छद्मस्थ जिन उपदेश सों, पावे भविजन वर्ग २ ॥

२०. आदेश गुरु मुख सुन लहे, आणा रुचि ३ या होय।
पढ़तां सूत्र थी ऊपजे, सूत्र रुचि जन ४ सोय ॥

२१. तेल सलिल के न्याय से, वोधि वीज को लाह।
ते तुम जांणो वीज रुचि ५, भाखे जिनवर नाह ॥

२२. अर्थ विचारे सूत्र के, अभिगम रुचि ६ सो जान।
सव गुण पर्यव भाव नय, इम विस्तार ७ प्रमान ॥

२३. क्रिया रुचि ८ क्रिया विषे, उद्यम करतां होई।
चारित्र में उद्यम कियां, धर्म रुचि ६ है सोई ॥

२४. जाने कुदरसण ना ग्रहो, हंस समान प्रवीण।
संक्षेप रुचि १० सो जानिये, भाखे बुद्धि अहीन ॥

२५. चार अनंतानुवंधिया, मिथ्या मोहनी मीस।
ए सव समकित को हणे, भाख्यो श्री जगदीश ॥

२६. देसे हणे जे मोहने, उपसम समकित जान।
क्षय उपसम इनको कह्यो, मिस्सर उदय प्रमाण ॥

२७. उपसम क्षय छे सात नो, क्षय अरु उपसम भेद।
चार अनंतानुवंधिया, निश्चय छे इह छेद ॥

२८. दर्शन एक दुहून को, क्षय उपसम शेष।
समकित मोहनी उपशमे, नियमा ए तिहुं लेख ॥

२९. वेदक में नियमा उदय, होई समकित मोह।
शेष छह प्रकृति उपशमे, अथवा पावे शोह ॥

३०. चार कषाय क्षय हुवे, दस दो हो उपशाम।
अथवा मीसा उपसमे पांच पावे विराम ॥

३१. ए नव विधि समकित कह्यो, जेह थी शिव सुख थाय।
क्षय एक उपसम २ दो भेद छे, ये ही चार थाय ॥

३२. शंका १ कंखा२ कर रहित, वितिगिच्छा ३ तिहां नांय।
दिट्ठी अमूढ ४ थिरीकरण ५, जिनमत के मांय॥

३३. धर्म विषे उच्छाहना, तस उववूह ६ नाम।
वात्सल्य ७ प्रभावना, ८ ये आचार ना ठाम॥

३४. शंका संशय ऊपजे, ओ सव देशी होई।
सर्वथी अनाचार देश थी, अतिचार है सोइ॥

३५. धर्म करंतां मन धरे, देवादिक नी भीति।
अथवा लज्जा लोकनी, ये छे शंका रीति॥

३६. कंखा परमत वांछना, सव देशे जो होइ।
सर्व थी अनाचार देश थी, अतिचार छे सोइ॥

३७. सहाय वांछे धर्म में, नर अरु सुर थी कोय।
लब्ध्यादिक वांछा करे, ए पण कंखा जोय॥

३८. तप चारित्र ना फल विषे वितिगिच्छा संदेह।
साधु उपधि मलिन लखि, दुग्गंछा छे एह॥

३९. संसार कारज साधवा, जो परजुंजे धर्म।
सभी अतिचार उपजे, सम मोहनी कर्म॥

४०. पासत्थादि कुदर्शनी, जेह शिथिलाचार।
निन्हव जेय असाधु छै एहनो कर परिहार॥

४१. इह प्रशंसे संथवे, अतिचार छे पंच।
समदृष्टि तुम जानजो, मत सेवजो रंच॥

४२. क्षण क्षण जो क्रोध करे, धरे अति दीरघ रोष।
इह पर जगत सम्बन्धना, ए कारण तप पोष॥

४३. नैमित्तिक करी अजीविका, एह थी असुरज थाय।
चार पदे संमोह छे, ते थी समकित जाय॥

४४. उन्मारग नी देशना, पंथ विघ्न सुजान ।
गृधी भाव विषय तणां, काम भोग निदान ।।

४५. अरिहन्त धर्म तथा गुरु, संघ अवरणवाद ।
एह थी किल्विषता लहे, मिथ्या मद उत्पाद ।।

४६. अपना गुण पर अवगुण, भूति कौतुकाकार ।
अभियोगी सुर जे हुवे, ते छे चार प्रकार ।।

४७. कंदर्प की विकथा करे, भण्ड चेष्टा जान ।
चपलाई परिहास छै, ते थी कंदर्पी थान ।।

४८. आरम्भ परिग्रह मोट को, पंचेन्द्रिय नी घात ।
निंद्य आहार नरक तणां, हेतू चारे वात ।।

४९. माया करे तस गोपवे, कूड़ा देवे आल ।
कूड़ा मापा तोलतां, तिर्यंच वंधे काल ।।

५०. चारित्र दर्शन ज्ञान का, कीजिये अभ्यास ।
संगत कीजे साधुनी, जे रहे जगथी उदास ।।

५१. भ्रष्ट कुदर्शन की तजो, संगत यह व्यवहार ।
समकित ना तुम जाणजो, इम ए चार प्रकार ।।

५२. अन्य मती तस देवता, चैत्य वंदे नांहि ।
राजा गण सुरु गुरु वृती, सुवल छड़ी मांहि ।।

५३. न्याय करे न्याय भाषा ही, न्याय की पक्षपात ।
न्याय विचारे मन धरे, लज्जा नीति की वात ।।

५४. जाको वल्लभ न्याय है, न्याय ही को आचार ।
न्याय ही सो सवही करे, वृति अथवा व्यवहार ।।

५५. नो तत्व जान १ न वंछे सहाय, डिगे नहीं देव अदेव डिगाये २ ।
३ दोष विना जो धरे जिन दर्शन ४ सर्वहि अर्थ करी समझाये ।।

५६. धर्म के राग रंग्यो हिरदे ६ अति धर्म कहे आपस में मिलाये
निर्मल चित ८ अभंग दुवार ६ अंते उर नाहिं पर गृह जाये

५७. पोषध छहु तिथि को करे ११ प्रतिलाभे शुद्ध साव १२ ।
ऐसे समदृष्टि तथा, श्रावक है आराध ।।

(१८२)

१. आरम्भ-विषय-कषाय वश, भमियो काल अनन्त ।
लख चौरासी योनि में, अब तारो भगवन्त ।।

२. करुणानिधि कृपा करी, कठिन कर्म मम छेद ।
मोह अज्ञान मिथ्यात्व को, करिये ग्रन्थी भेद ।।

३. पतित उद्धारण नाथ जी, अपनो विरुद विचार ।
भूल चूक सब माहरी, खमिये वारं-वार ।।

४. क्षमा करो सब माहरा, आज तलक रा दोष ।
दीनदयाल देवो मुझे, श्रद्धा शील संतोष ।

५. देव गुरु धर्म सूत्र ये, नव तत्त्वादिक जोय ।
अधिका ओछा जो कह्या, मिच्छा दुक्कडं मोय ।।

६. जो मैं जीव विराधिया, सेव्या पाप अठार ।
प्रभु तुम्हारी साख से, वारं वार धिक्कार ।।

७. कहने में आवे कहाँ, अवगुण भरे अनन्त ।
घट-घट अन्तरयामी तुम, जानो सब भगवन्त ।।

८. बुरा बुरा सब को कहे, बुरा न दीसे कोय ।
जो घट शोधूँ आपना, मुझसा बुरा न कोय ।।

९. आतम निंदा शुद्ध भणी, गुणवन्त वन्दन भाव ।
राग द्वेष पतला करी, सबसे खिमत खिमाव ।।

१०. छूटूँ पिछले पाप से, नवा न बाँधू कोय।
श्री गुरु देव प्रसाद से, सफल मनोरथ होय॥

११. घड़ी-घड़ी पल-पल सदा, प्रभु सुमरण को चाव।
नर भव सफलो जो करे, दान शील तप भाव॥

१२. अरिहंत देव निर्ग्रन्थ गुरु, संवर निर्जरा धर्म।
केवलिभाषित शास्त्र यह, जैन धर्म का मर्म॥

(१८३)

१. हिवे राणी पद्मावती, जीवराशि खिमावे।
जाणपणु जग में भलुं इण वेला जो आवे॥

२. ते मुझ मिच्छामि दुक्कडं, अरिहंतों नी साख।
जे मैं जीव विराधिया, चौरासी लाख–ते०

३. सात लाख पृथ्वी तणा, साते अपकाय।
सात लाख तेऊ तणा, साते वली वाय–ते०

४. दश लाख प्रत्येक वनस्पति, चउदे साधारण।
बे-ती चौरिंद्रिय जीव नी, बे बे लाख विचार–ते०

५. देवता तिर्यंच नारकी, चार चार प्रकाशी।
चौदह लाख मनुष्य ना, ये लाख चौरासी–ते०

६. इण भव परभव सेविया, जे पाप अठार।
त्रिविध त्रिविध करि परिहरूं दुर्गति ना दातार–ते०

७. हिंसा कीधी जीव नी, बोल्या मृषावाद।
दोष अदत्तादान ना, मैथुन उन्माद–ते०

८. परिग्रह मेल्यो कारमो, कीधो क्रोध विशेष।
मान माया लोभ मैं किया, वली राग ने द्वेष–ते०

९. कलह करी जीव दूहव्या, दीधा कूड़ा कलंक।
निन्दा कीधी पार की, रति अरति निःशंक – ते०

१०. चाडी कीधी पार की, कीधो थापण मोसो।
कुगुरु कुदेव कुधर्म नो, भलो आण्यो भरोसो – ते०

११. खटीक ने भवे मैं क्रिया, जीव ना वध घात।
चिड़ीमार भवे चिड़कला, मार्या दिन ने रात – ते०

१२. काजी मुल्ला ने भवे, पढ़ी मन्त्र कठोर।
जीव अनेक जिवह किया, कीधा पाप अघोर – ते०

१३. माछी ने भवे माछला, झाल्या जल वास।
धीवर भील कोली भवे, मृग पाड्या पास – ते०

१४. कोटवाल ने भवे मैं किया, आकरा कर दण्ड।
बन्दीवान मरावियां, कोरड़ा छड़ी दण्ड – ते०

१५. परमाधामी ने भवे, दीधा नारकी दुःख।
छेदन भेदन वेदना, ताड़न अतितिक्ख – ते०

१६. कुंभार ने भवे मैं घणा, नीमाह पचाव्या।
तेली भवे तिल पीलिया, पापे पिण्ड भराव्या – ते०

१७. हाली-भवे हल खेड़िया, फोड्या पृथ्वी ना पेट।
सूड़ निनाण किया घणा, दीधी बलदां चपेट – ते०

१८. माली भवे रूंख रोपिया, नाना विध वृक्ष।
मूल पत्र फल लता, फूललाग्या पाप अलक्ष – ते०

१९. अधोवाइया ने भवे, भरिया अधिका भार।
पोठी पूठे कीड़ा पड्या दया नाणी लिगार – ते०

२०. छीपा ने भवे छेतर्या कीधा रांगण पास।
अग्नि आरंभ किया घणा, धातुवाद अभ्यास – ते०

२१. शूर पणे रण जूझतां, मार्या माणस वृन्द ।
मदिरा मांस माखण भख्या खाधा मूल ने कन्द – ते०

२२. खाण खणावी धातुनी, सर पाणी उलीच्या ।
आरम्भ कीधा अति घणा, पोते पापज संच्या – ते०

२३. अङ्गार कर्म किया वली, वन में दव दीधा ।
कसम खाधी वीतराग नी, कूड़ा दोषज दीधा – ते०

२४. बिल्ली भवे उन्दर गिल्या, गिलोरी हत्यारी ।
मूढ़ गँवार तणे भवे, मैं जूं लीखां मारी – ते०

२५. भड़भूंजा तणे भवे, एकेन्द्रिय जीव ।
जुवार चणा गेहूं सेकिया, पाड़ंता रीव – ते०

२६. खांडन पीसण गारना, आरम्भ अनेक ।
रांधण इंधण अग्नि ना, कीधा पाप उद्वेग – ते०

२७. विकथा चार कीधी वली, सेव्या पंच प्रमाद ।
इष्ट वियोग पड़ाविया, रोवन विष वाद – ते०

२८. साधू अने श्रावक तणा, व्रत लेई ने भांग्या ।
मूल अने उत्तर तणा, मुझ दूषण लाग्या – ते०

२९. साँप विच्छू सिंह चीतरा, सिकरा ने समली (चील) ।
हिंसक जीव तणे भवे, हिंसा कीधी सबली – ते०

३०. सुवावड़ी दूषण घणा, वली गर्भ गलाव्या ।
जीवाणी ढोली घणी, शील व्रत भंजाव्या – ते०

३१. भव अनन्त भमतां थकां, कीधो देह सम्बन्ध ।
त्रिविध त्रिविध करि वोसिरूं, तिणशुं प्रतिबन्ध – ते०

३२. भव अनन्त भमतां थकां, कीधो परिग्रह सम्बन्ध ।
त्रिविध त्रिविध करि वोसिरूं, तिणशुं प्रतिबंध – ते०

३३. भव अनन्त भमतां थकां, कीधा कुटुम्ब सम्बन्ध ।
त्रिविध त्रिविध करि वोसिरूं, तिणशुं प्रतिबंध – ते०

३४. इण विध इह भव पर भवे, कीधा पाप अखत्र ।
त्रिविध त्रिविध करि वोसिरूं, करूं जन्म पवित्र – ते०

३५. इण विध यह आराधना, भावे करसे जेह ।
'समय सुन्दर' कहे पाप थी, वली छूट से तेह – ते०

(१८४)

१. खामेमि सव्वे जीवा, सव्वे जीवा खमन्तु मे ।
मित्ती मे सव्व भूएसु, वैरं मज्झं न केणइ ।।

(१८५)

१. प्रथम कषाय वश पड़्यो है जगत जीव ।
अनन्तानुवन्धी चौकड़ी में उमर गमाई है ।।

२. क्रोध है पत्थर लीक,मान है वज्र थंभ ।
मुड़्यो न मुड़त जाकी ऐसी करड़ाई है ।।

३. माया है बांस की जड़, लोभ है किरमची रंग ।
धोयो न धोवत जाकी, ऐसी छवि छाई है ।।

४. मरि जावे नर्क घोर ताकूं नहीं और ठौर ।
ऐसे दुष्ट जीव जेहने समकित न पाई है ।।

५. जासुं आगे चौकड़ी को नाम है अप्रत्याख्यान ।
जामे जीव वर्ष एक, केरी स्थिति पाई है ।।

६. क्रोध, मान, माया, लोभ जामे जीव रह्यो खोभ ।
आदि केरी चौकड़ी सुं अति हलकाई है ।।

७. क्रोध है तालाव की लीक, मान दांत केरो थंभ ।
माया मींढ़ा सींग सम, एवी दुःख दाई है ।।

८. लोभ है मोरी केरो रंग ताको नहीं होत भंग ।
मरीने तिर्यंच होय, वृत्ति न आई है ।।

९. प्रत्याख्यानी चौकड़ी में, बस्यो है चेतन राय ।
जीव जीहां चार मास, केरी स्थिति पाई है ।।

१०. क्रोध है वालू की लीक, मान वेंत केरो थंभ ।
पिछली से कछु कम ज्ञानी वतलाई है ।।

११. माया वैल केरो मूत, समय की नहीं कूत ।
धर्म सेती राखे हेत, श्रावक वृत्ति पाई है ।।

१२. लोभ है खंजन (गाड़ा) को रंग, तासु जीव राखे संग ।
मिनखां देह छांड़ि जीव मनुष्य देह पाई है ।।

१३. संज्वलन को क्रोध जैसो, पाणी केरी लीक जान ।
आगे होय काढ़त है, पाछे ही मिटाई है ।।

१४. मेण थंभ मान कह्यो, धूप लागी गली गयो ।
ताकी मास केरी थिती पाई है ।।

१५. माया तागा केरो वल, ऐसो जीव करे छल ।
केवल की हाण करे, साधु विरती आई है ।।

१६. लोभ है हलद रंग, धोया सेती होय भंग ।
मोक्ष नहीं जासी जीव, देवगति पाई है ।।

(१८६)

समाधि-मरण के ७३ बोल

जीव-अजीव की पहचान

जीव-ज्ञानादि चेतना सहित, निश्चल नय से सिद्ध समान, व्यवहार नय से पुण्य पाप का भोक्ता है।

धर्मास्ति, अधर्मास्ति आदि पांच द्रव्य अजीव, चेतन-रहित, जड़ स्वभाव हैं।

जीव का विशेष रूप

१. एगोऽहं – मैं अकेला हूँ।
२. सासओ अप्पा – मेरी आत्मा शाश्वत है।
३. नाण दंसण संयुतो – मैं ज्ञान दर्शन से युक्त हूँ।
   सेसामे बाहिरा भावा-बाकी सब पदार्थ बाहरी हैं।
४. संयोग में वियोग रहा हुआ है।
५. संयोगमूलो जीवाणं – संयोग में मूर्च्छित होना दुःख की परम्परा का कारण है, पुद्गलों का संयोग सम्बन्ध मेरे स्वरूप से भिन्न है।
६. सव्वं तिविहेण वोसिरे – सब बाहरी संयोगों का तीन करण, तीन योग से त्याग करता हूँ।
७. मैं चेतन हूँ, पुद्गल का स्वभाव अचेतन है।
८. मैं अरूपी हूँ, पुद्गल रूपी है।
९. मैं अमूर्त्त हूँ, पुद्गल मूर्त्त है।
१०. मैं स्वाभाविक हूँ, पुद्गल विभाविक है।
११. मैं शुचि-पवित्र हूँ, पुद्गल अशुचि-अपवित्र है।
१२. मैं शाश्वत हूँ, पुद्गल अशाश्वत है।

३७. मैं अवन्धक हूं – मेरे किसी प्रकार का वन्धन नहीं है।
३८. मैं अनुदय – उदय भाव रहित हूं।
३९. मैं अयोगी – योगों से रहित हूं।
४०. मैं अभोगी – भोगों से रहित हूं।
४१. मैं अरोगी हूं।
४२. मैं अभेदी हूं – किसी के द्वारा मैं भेदा नहीं जा सकता।
४३. मैं अवेदी हूँ – वेद रहित हूँ।
४४. मैं अछेदी हूँ – मैं किसी के द्वारा छेदा नहीं जा सकता।
४५. मैं अदाह्य हूँ – मुझे अग्नि जला नहीं सकती।
४६. मैं अक्लेद्य हूँ – मुझे पानी गला नहीं सकता।
मैं अशोष्य हूँ – मुझे कोई सुखा नहीं सकता।
४७. मैं अखेदी हूँ – खेद रहित हूँ।
४८. मैं असखा हूँ – मेरा वाहरी कोई मित्र नहीं है। मेरी आत्मा ही मेरा मित्र है।
४९. मैं सवल हूँ – मुझे कोई बाँध या छोड़ नहीं सकता।
५०. मैं अलेशी हूँ – लेश्या रहित हूँ। लेश्या पुद्गल है, मैं ज्ञानानन्द हूँ।
५१. मैं अशरीरी – शरीर रहित हूँ, यह शरीर मेरा नहीं है, मैं शरीर से भिन्न हूँ।
५२. मैं अभाषी हूं।
५३. मैं अनाहारी हूं – आहार करना मेरा स्वभाव नहीं है।
५४. मैं अव्यावाध – अनन्त सुख वाला हूं।
५५. मैं अनवगाही स्वरूप हूं – द्रव्य मेरे में अवगाहन नहीं कर सकता है।
५६. मैं अगुरु लघु गुण वाला हूं – मैं न हल्का हूं और न भारी हूं।
५७. मैं अपरिणामी हूं – मेरे में कोई परिवर्तन नहीं होता।
५८. मैं अतीन्द्रिय हूं – मेरे में इन्द्रियों का विकार नहीं है।

५६. मैं अप्राणी हूं – द्रव्य प्राण रहित हूं।

६०. मैं अयोनि हूं।

६१. मैं असंसारी हूं – पूर्ण आत्माराम हूं – आत्मा के गुणों में रमण करने वाला हूं।

६२. मैं अमर हूं – जन्म मरण से रहित हूं।

६३. मैं अपार हूं – सब परम्परा से रहित हूं।

६४. मैं अव्यापी – अपने स्वरूप में व्याप्त हूँ – वैभाविक परिणामों में एवं जड़ पुद्गल में व्याप्त नहीं हूँ।

६५. मैं अनास्ति हूँ – मेरे स्वद्रव्यादि सदा विद्यमान हैं।

६६. मैं अकम्प्य हूँ – संसार में ऐसी कोई शक्ति नहीं जो मुझे कम्पा सके, मैं अनन्त शक्ति वाला हूँ।

६७. मैं अविरोध हूँ – कर्म शत्रु मुझे रूंध नहीं सकते। मेरे पारिणामिक भाव हैं।

६८. मैं अनाश्रवी – निर्लेप हूँ।

६९. मैं अलख हूं – मेरे स्वरूप को छद्मस्थ नहीं लख (देख) सकता।

७०. मैं अशोक हूँ – शोक रहित हूँ। नीरोगी और अमर हूँ।

७१. मैं अलौकिक हूँ – लौकिक मार्ग से रहित हूँ।

७२. मैं लोकालोक के स्वरूप का ज्ञाता हूँ, एक समय में लोकालोक के स्वरूप को जानने में समर्थ हूँ।

७३. मैं चिदानन्द हूँ – ज्ञान गुण में आनंद मानने वाला हूँ – ज्ञान में वर्तता हूँ।

आप अकेला जन्म ले, मरण अकेला होय।
जग में अपने जीव का, साथी सगा न कोय ॥

मैं अकेला हूँ, मेरा कोई नहीं है। मैं भी किसी का नहीं हूँ। आत्मा शाश्वत है, ज्ञानदर्शन स्वरूप है। संसार के शेष समस्त पदार्थ मुझ से भिन्न हैं, वे संयोग से उत्पन्न होते और वियोग से बिखर जाते हैं। फिर पुद्गल से संयोग वियोग होने पर सुखी-दुखी होने की क्या आवश्यकता है ? जहां अपनापन या ममता है, वहाँ आपदा भी है, जहाँ चिन्ता है, वहां शोक भी है, परन्तु यह महान् दुष्ट रोग सम्यग्ज्ञान के बिना नहीं मिट सकता।

अतः हे प्रभो ! मुझ में ऐसी भावना पैदा हो कि मैं संसार को असार समझ कर हमेशा अपने हृदय को वैराग्य भावना से भरता रहूँ।

समाधि मरण भावना

जो सम्यग्दृष्टि आत्मतत्त्व वेत्ता पुरुष हैं, वे यों विचारते हैं कि यह प्रत्यक्ष दुर्गन्धमय सप्त धातुओं से बना हुआ पिण्ड जिसके अन्दर अज्ञानी जीव अनेक प्रकार के दुःख और क्लेश पाते हुए भी इस पर अधिकाधिक ममत्व करके अकाम मरण मर कर नरक तिर्यञ्चादिक गति को प्राप्त हो जाते हैं, जहां असंख्यात और अनन्त जन्म मरण करते हुए महान् दुःख भोगते हैं, फिर भी दुःख का अन्त सहज में नहीं आता। इस लिए मुझे उचित है कि मैं अब अज्ञानता का त्याग करके जो स्वर्ण अवसर प्राप्त हुआ है, उसका लाभ लेकर समाधि मरण मरूं तो मुझे यह क्लेश-कष्ट न भोगना पड़ेगा, अपितु समाधि सहित शुद्ध परिणामों के द्वारा या तो इसी भव से मुक्ति प्राप्त कर सकूँगा, ताकि वारंवार ऐसा दुःख न उठाना पड़े, या यदि सर्वकर्मों का क्षय नहीं हुआ तो दिव्य वैक्रिय शरीर धारण कर दिव्य सुखों का उपभोग करूंगा। अतः मृत्यु को दुःख-दाता नहीं किन्तु सुखदाता मित्रही क्यों न मानूं।

सम्यग्दृष्टि अपनी आत्मा को बोध देता है कि हे आत्मन् ! मरना तो मुझे अवश्यम्भावी है, जिसने जन्म लिया है, वह अवश्य ही

मरेगा। परन्तु यह मरण राग-द्वेष रहित, समाधि सहित, धर्मध्यान पूर्वक अनशन धारण करके होगा तो मुझे नरक तिर्यञ्चादि गतियों में जाकर दुःख न देखना पड़ेगा, अपितु मैं समाधिमरण से स्वर्ग में देवों का स्वामी इन्द्र तथा अहमिन्द्र होकर महान सुखों का भोक्ता बनूंगा और शीघ्र ही निकट भविष्य में सब दुःखों का अन्त करने वाली सिद्धगति को प्राप्त करूंगा।

हे प्रभो ! इतने दिन मैं जानता था कि यह शरीर मेरा है, इसलिए इसको खिला कर पिला कर, शीत ताप से बचा कर, सार संभाल कर मैं हर प्रकार से इसकी हिफाजत करता था, किन्तु अब मुझे सत्य भान हुवा कि यह शरीर न तो किसी का हुआ और न किसी का होगा, जो मेरा होता तो मेरे हुक्म में क्यों नहीं चलता, प्रत्यक्ष में रोग, जरा और मृत्यु को प्राप्त क्यों होता ?

रे आत्मन् ! इस रोग को देख कर जो तूं घबराता हो, सचमुच ही रोग तुझे खराब लगता हो, इस दुःख से कंटाल गया हो तो अब इन बाह्य औषधियों का सेवन करना छोड़ ! क्योंकि जो रोग है, वह कर्माधीन है और औषधियों में कर्म को दूर करने की शक्ति नहीं। कदाचित् तेरा उपादान सुधरा हो, असाता वेदनीय का जोर कम पड़ा हो तो औषधि के निमित्त से एकाध रोग दूर हो सकता है। इस से क्या हुवा ? मिटा हुआ रोग तो संख्याता असंख्याता काल में फिर हो जाता है। परन्तु जिनेन्द्र भगवान रूप सर्व रोग और सर्व चिकित्सा के ज्ञाता महावैद्यराज की फरमाई हुई समाधिमरण रूप महा औषधि का सेवन करने से नष्ट हुआ जन्म मरण रूपी रोग फिर नहीं हो सकता अतः उस औषधि का तू सेवन कर, जिससे सब आधि, व्याधि, उपाधि नष्ट हो कर अजर अमर, अनन्त, अक्षय और अव्याबाध सुख की तुझे प्राप्ति हो। अगर वेदना का उठाव ज्यादा होता हो, पीड़ा ज्यादा होती हो तो संकल्प विकल्प और हाय, विलाप न करते हुए

अपनी आत्मा को इस तरह समझा कि जैसे तीव्र ताप लगने से सोना शीघ्र निर्मल हो जाता है, वैसे ही इस तीव्र वेदना के कारण यदि इसे शान्त भाव से हाय विलाप रहित होकर सहन करूंगा तो मेरी आत्मा पर लगा हुआ अशुभ कर्म रूप मैल शीघ्र ही दूर हो जायगा। हाय-हाय करने से उदय में आये हुए कर्मों का जोर तो कम होता ही नहीं, उल्टा अधिक नवीन कर्मों का वन्ध होता है। अतः हाय-हाय न करते हुए समभाव से ही क्यों न सहन करूं ?

हे चैतन्य ! तूंने नरक में परवशपणे अनन्त वेदना सहन की। परन्तु सम्यक्त्व विना कुछ गरज नहीं सरी। जितनी निर्जरा सागरों तक वेदना सहन करने से हुई, उतनी ही नहीं, उस से अनन्त गुणी अधिक निर्जरा जो तूं इस समय समभाव रखकर सहन करेगा तो तुझे होगी। यह जैन सिद्धांत का अभिप्राय है।

स्वर्ग एवं मोक्षादि सुख के देने में समाधि-मरण के सिवाय संसार में कोई भी समर्थ नहीं है। इसलिए यह अवसर मुझे चूकना नहीं चाहिए। मरण तो इस आत्मा ने अनन्ती वार किये हैं। परन्तु विषय कषाय के वश होकर, आशा-तृष्णा सहित, असमाधि मरण किये। इससे मेरी कोई गरज नहीं सरी, उल्टी भवभ्रमण की सन्तति बढ़ी, चतुर्गति में गोते खाये। अव सद्गुरु की कृपा से मुझे वास्तविक ज्ञान हुआ है, सो अव सावधान होकर वाँछा, तृष्णा रहित वनकर समाधिमरण की आराधना करूं।

यदि कोई परचक्री राजा किसी राजा को पकड़ कर पिंजरे में डाल देता है, जहां उसे खान-पानादि के अनेक कष्ट उठाने पड़ते हैं, वह पराधीन वन जाता है उसका कुछ भी जोर नहीं चलता है। उस समय उसकी खवर उसके किसी जवरदस्त मित्र राजा को मिलने पर जैसे वह अपने मित्र को परचक्री राजा की परतन्त्रता से छुड़ाकर सुखी कर देता है, उसी प्रकार कर्म रूपी शत्रु ने मुझे इस देह रूपी पिंजरे में

डाल कर, श्वासोच्छ्वास, क्षुधा, तृषा, ताड़न, तर्जन, रोग, शोक, शीत, ताप, दुःख और पराधीनता से बांध दिया है। इस बन्धन से छुड़ाने वाला यह मृत्यु नामक मित्र ही है। जिसकी कृपा से मैं स्वतन्त्र और सुखी बन सकूंगा।

चिन्तवन भावना

यह शरीर मेरा नहीं है, मैं किसी काल में इस शरीर का नहीं हूँ। यह शरीर स्थूल तथा क्षण भंगुर है और मैं स्थिर तथा चैतन्य स्वरूप हूँ। जन्म जरा मरण से उत्पन्न हुआ तथा रोग आधि-व्याधि से प्रकट हुआ दुःख इस देह को होता है, मुझे नहीं। संसार में सम्पत्ति या विपत्ति संयोग या वियोग से जो कुछ सुख दुख उत्पन्न होते हैं, वे सब पूर्व जन्म में उपार्जन किये गये पुण्य-पाप के फल हैं।

यह मेरा किया हुआ ऋण ही है जो मैंने पहले असाता वेदनीय कर्म बांधा था। इस समय यह असाता वेध कर मैं उसी ऋण से हल्का हो रहा हूं। इस प्रकार मन में दृढ़ता धारण करूं।

मैं (चैतन्य) एक ज्ञायिक स्वभाव वाला हूं, उसी का कर्ता-भोक्ता, और अनुभविता हूं, सो ज्ञायिक का स्वभाव तो अविनाशी है। उसका किसी भी तरह विनाश नहीं होता। त्रिकाल में अबाधित है फिर यह शरीर रहा तो क्या और गया तो क्या? रहते और जाते मेरा स्वभाव एक सा है और एक सा रहेगा, तब शरीर का विनाश होता देख चिन्ता किस बात की करूं?



(१८७)

अनगारी संलेखना

उपसर्गे दुर्भिक्षे जरसि रुजायाञ्च निःप्रतीकारे ।
धर्माय तनुविमोचनमाहुः संलेखनामार्याः ।।

– (रत्नकरण्डकश्रावकाचार)

अर्थात् – प्राणान्तकारी उपसर्ग के आने पर, अन्न-पानी की प्राप्ति न हो सके ऐसे दुर्भिक्ष के पड़ने पर, वृद्धावस्था के कारण, शरीर के अत्यन्त ही जीर्ण हो जाने पर, असाध्य रोग उत्पन्न हो जाने पर, इस प्रकार का संकट आ जाने पर कि जब प्राण बचने का कोई उपाय न हो – तब, अथवा निमित्त ज्ञान आदि के द्वारा अपनी आयु का निश्चित रूप से अन्त समीप आया जान कर, प्राणान्त संकट के उपस्थित होने पर अथवा अपने धर्म की रक्षा के लिए उद्यत होने के फल-स्वरूप प्राणान्त निकट जानकर शरीर के त्याग करने का नाम संलेखना तप है । इस विषय में गणधरों ने कहा है –

संलेहणा हि दुविहा, अब्भन्तरिया य बाहिरा चेव ।
अब्भन्तरा कसाएसु, बाहिरा होइ हु सरीरे ।।२११।।

– (भगवती आराधना)

अर्थात् – क्रोध आदि कषायों का त्याग करना अभ्यन्तर संलेखना है और शरीर का त्याग करना बाह्य संलेखना है । इस प्रकार संलेखना दो तरह की हैं ।

संलेखना की विधि – संलेखना को 'अपच्छिम मरणांतिय संलेहणा झूसणा आराहणा' भी कहते हैं । जब मृत्यु निकट आ जाय तो उसे सुधारने के लिए धर्म सेवन पूर्वक शरीर का त्याग करने के लिए सावधान हो जाना चाहिए । जिनकी मनोकामना संसार के कामों से निवृत्त हो गई है, अर्थात् जिन्हें अब संसार का कोई भी कार्य नहीं

करना है, वही आत्मार्थ का साधन करने के लिए अर्थात् संथारा करने के लिए तैयार हो सकते हैं। जो संलेखना करने को उद्यत हुआ है उसका कर्त्तव्य है कि—पहले इस भव में सम्यक्त्व और व्रतों को ग्रहण करने के पश्चात् सम्यक्त्व में और व्रतों में जो जो अतिचार लगे हों, उनकी उपयोगपूर्वक गवेषणा करे। अतिचारों की गवेषणा करने पर स्ववश, परवश या मोहवश जो जो अतिचार लगे हों, उन सब छोटे-बड़े अतिचारों की आलोचना करने के लिए आचार्य, उपाध्याय अथवा साधु, जो उस अवसर पर निकट में विराजमान हों, उनके समक्ष निवेदन कर दे। कदाचित आलोचना सुनने योग्य साधु मौजूद न हों तो गंभीरता आदि गुणों से युक्त साध्वीजी के सामने अपने दोषों को प्रकट करे। अगर साध्वीजी का योग भी न मिले तो उक्त गुण-युक्त श्रावक के समक्ष और श्रावक भी मौजूद न हो तो श्राविका के सामने अपने दोषों को प्रकट कर दे। कदाचित् श्राविका भी न हो तो जंगल में जाकर पूर्व तथा उत्तर दिशा की ओर मुख करके, सीमन्धर स्वामी को नमस्कार करके, हाथ जोड़ कर खड़ा हो और पुकार कर कहे—"प्रभो! मैंने अमुक-अमुक अनाचीर्ण का आचरण किया है, मैं अपनी समझ के अनुसार उसका प्रायश्चित आपकी साक्षी से स्वीकार करता हूँ। अगर वह न्यून या अधिक हो तो 'तस्स मिच्छामि दुक्कडं।'

इस प्रकार निशल्य होकर फिर संथारा करे। जैसे काले रंग का कोयला आग में पड़ कर श्वेत वर्ण की राख के रूप में परिणत हो जाता है, उसी प्रकार संथारा रूपी अग्नि में झौंकने से आत्मा भी पाप की कालिमा को त्याग कर उज्ज्वल हो जाती है। अतएव संथारा करने के इच्छुक साधक को ऐसे स्थान पर जाना चाहिए जहाँ खान-पान, भोग-विलास के पदार्थ विद्यमान न हों, संसार-व्यवहार सम्बन्धी शब्द और दृश्य सुनने तथा देखने में न आवें। जहाँ त्रस एवं स्थावर

धम्मसारहीणं – धर्म रूपी रथ के सारथी

धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टीणं – धर्म की चारों दिशाओं का शासन करने वाले चक्रवर्ती के समान

दीवो ताणं सरण गइ-पइट्ठाणं – द्वीप के समान, शरणभूत, गतिरूप और प्रतिष्ठा रूप

अप्पडिहयवरणाणंदंसणधराणं – अप्रतिहत ज्ञान-दर्शन के धारक

विअट्टछउमाणं – छद्म (कषाय) से सर्वथा निवृत्त

जिणाणं – राग द्वेष आदि शत्रुओं को स्वयं जीतने वाले

जावयाणं – दूसरों को जिताने वाले

तिण्णाणं – स्वयं संसार सागर से तिरे हुए

तारयाणं – दूसरों को तारने वाले

बुद्धाणं – स्वयं तत्त्व के ज्ञाता

वोहियाणं – दूसरों को तत्त्वज्ञान देने वाले

मुत्ताणं – स्वयं कर्मों से छूटे हुए

मोयगाणं – दूसरों को कर्मों से छुड़ाने वाले

सव्वन्नूणं – सर्वज्ञ

सव्वदरिसीणं – सर्वदर्शी, तथा

सिवमयलमरुअं – उपद्रवरहित, अचल और रोगहीन

अणंतमक्खयं – अनन्त और अक्षय

अव्वावाहमपुणरावित्ति – वाधा रहित तथा पुनर्जन्म से रहित

सिद्धिगइनामधेयं ठाणं – सिद्धिगति नामक स्थान को

संपत्ताणं – प्राप्त हुए

नमो जिणाणं – जिन भगवान् को नमस्कार हो।

जीय भयाणं – जीवों को अभय देनेवाले।

यह 'नमुत्थुणं' सिद्ध भगवान् के लिए कहा। इसी प्रकार दूसरी वार अरिहन्त भगवान् के लिए कहना चाहिए। अन्तर यह है कि

'ठाणं संपत्ताणं' की जगह 'ठाणं संपाविउकामाणं' ऐसा बोलना चाहिए। इसका अर्थ है – 'सिद्धि स्थान को प्राप्त होने वालों को।' फिर 'नमुत्थुणं मम धम्मगुरु-धम्मायरिय धम्मोवदेसगस्स जाव संपाविउकामस्स' अर्थात् मेरे धर्मगुरु, धर्माचार्य और धर्मोपदेशक यावत् मोक्ष प्राप्त करने के अभिलाषी आचार्य महाराज को नमस्कार हो।

इस प्रकार वन्दना-नमस्कार करके, पूर्व में आचरण किये हुए सम्यक्त्व और व्रतों में आज इस समय तक, जानते-अजानते, स्ववश, परवश भी कोई अतिचार लगा हो, उसकी आलोचना-विचारणा करके उससे निवृत्त होता हूँ। आत्मा की साक्षी से उसकी निन्दा करता हूँ, गुरु की साक्षी से उसकी गर्हा करता हूँ।

इस तरह कह कर भविष्य के लिए प्रत्याख्यान करता हूँ। माया, मिथ्यात्व और निदान, इन तीनों शल्यों का सर्वथा परित्याग करता हूँ इस प्रकार अपने अन्तःकरण को पूरी तरह निर्मल बनाकर 'सव्वं पाणाइवायं पच्चक्खामि' अर्थात् हिंसा का सर्वथा त्याग करता हूँ, 'सव्वं मुसावायं पच्चक्खामि' मृषावाद का सर्वथा त्याग करता हूँ, 'सव्वं अदिण्णादाणं पच्चक्खामि' अदत्तादान का सर्वथा त्याग करता हूँ; 'सव्वं मेहुणं पच्चक्खामि' मैथुन का सर्वथा त्याग करता हूँ, 'सव्वं परिग्गहं पच्चक्खामि' परिग्रह का सर्वथा त्याग करता हूँ, 'सव्वं कोहं माणं मायं लोहं पच्चक्खामि' अर्थात् क्रोध, मान, माया, लोभ का सर्वथा त्याग करता हूँ, 'रागद्दोसं, कलहं, अब्भक्खाणं, पेसुन्नं' परपरिवायं, रइमरइं, मायामोसं, मिच्छादंसणसल्लं, अकरणिज्जं, जोगं पच्चक्खामि' सब राग, द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य, परपरिवाद, रति, अरति, मायामृषा, मिथ्यादर्शनशल्य और अकरणीय योग का प्रत्याख्यान करता हूँ। 'जावज्जीवं तिविहं तिविहेणं' जीवन पर्यन्त तीन करण तीन योग से, 'न करेमि न कारवेमि, करंतं पि अन्नं न समणुजाणामि मणसा, वयसा कायसा' अर्थात उक्त अठारह ही पापों का

जीवों की हिंसा होने की सम्भावना न हो। ऐसे उपाश्रय, पौषधशाला आदि स्थानों में अथवा जंगल, पहाड़, गुफा आदि स्थानों में जाय। वहाँ जाकर जहाँ चित्त की समाधि का योग हो ऐसे शिला आदि स्थानों को रजोहरण से आहिस्ते-आहिस्ते प्रमार्जन करे। कचरे को किसी पाटी आदि पर ले ले और निर्जीव जगह देख कर विधिपूर्वक परठ दे। फिर लघुनीति और बड़ी नीति, श्लेष्म और पित्त आदि को परठने की भूमिका का प्रतिलेखन करे। वह भूमि हरितकाय, अंकुर, चींटी आदि के बिल वगैरह से रहित होनी चाहिए। उसे सूक्ष्म दृष्टि से देख कर फिर संथारा करने की जगह आ जाय।

इतना सब कर चुकने के पश्चात् प्रतिलेखन और प्रमार्जन करने में तथा गमन-आगमन करने में जो पाप लगा हो, उसकी निवृत्ति के लिए पूर्वोक्त विधि के अनुसार 'इच्छाकारेणं' का तथा 'तस्सउत्तरी' का पाठ कह कर 'इच्छाकारेणं' का कायोत्सर्ग करे, तत्पश्चात् 'लोगस्स' का पाठ बोले। फिर निम्नलिखित शब्द कहे – प्रतिलेखना में पृथ्वी-काय आदि किसी भी काय की विराधना की हो या कोई भी दोष लगा हो तो 'तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।'

इसके पश्चात् अगर शरीर कष्ट सहन करने में समर्थ हो तो जमीन पर या शिला पर बिछौना करके उस पर संथारा करे। अगर शरीर असमर्थ प्रतीत हो तो गेहूँ, चावल, कोद्रव, राल आदि, पराल या घास, जो साफ और सूखा हो और जिसमें धान्य के दाने बिलकुल न हों, मिल जाय तो उसे लाकर उसका ३॥ हाथ लम्बा और सवा हाथ चौड़ा बिछौना करे। उसे श्वेत वस्त्र से ढँक कर उसके ऊपर पूर्व या उत्तर की ओर मुख करके, पर्यङ्क आसन (पालथी मार कर) आदि किसी सुखमय आसन से बैठे। अगर बिना सहारे बैठने की शक्ति न हो तो भींत (दीवार) आदि किसी वस्तु का सहारा लेकर बैठे। अथवा लेटे-लेटे ही इच्छानुसार आसन करे। फिर दोनों हाथ जोड़

कर दसों अंगुलियाँ एकत्र करे। जिस प्रकार अन्य मतावलम्बी आरती घुमाते हैं, उसी प्रकार जोड़े हुए हाथों को दाहिनी ओर से वाईं ओर उतारते हुए तीन वार घुमावे। फिर मस्तक पर स्थापित करे। तत्पश्चात् निम्नलिखित 'नमुत्थु णं' के पाठ का उच्चारण करे :–

नमुत्थु णं – नमस्कार हो
अरिहंताणं भगवंताणं – अरिहन्त भगवान् को
आइगराणं – धर्म की आदि करने वाले
तित्थयराणं – तीर्थ की स्थापना करने वाले
सयं संवुद्धाणं – स्वयं ही वोध को प्राप्त
पुरिसुत्तमाणं – पुरुषों में उत्तम
पुरिससीहाणं – पुरुषों में सिंह के समान
पुरिसवरपुँडरीयाणं – पुरुषों में प्रधान पुण्डरीक कमल के समान
पुरिसवरगंधहत्थीणं – पुरुषों में गंधहस्ती के समान
लोगुत्तमाणं – लोक में उत्तम
लोगनाहाणं – लोक के नाथ
लोगहियाणं – लोक के हितकर्त्ता
लोगपईवाणं – लोक में दीपक के समान प्रकाश करने वाले
लोगपज्जोयगराणं – लोक में उद्योत करने वाले
अभयदयाणं – अभयदान के दाता
चक्खुदयाणं – ज्ञान रूप चक्षु के देने वाले
मग्गदयाणं –मोक्ष-मार्ग के दाता
सरणदयाणं – शरणदाता
जीवदयाणं – जीवन दान देने वाले
वोहिदयाणं – वोधि वीज-सम्यक्त्व के दाता
धम्मदयाणं – धर्म के दाता
धम्मदेसयाणं – धर्म का उपदेश करने वाले
धम्मनायगाणं – धर्म के नायक

सेवन न करूँगा, न कराऊँगा और न करने वाले की अनुमोदना करूँगा; मन से, वचन से काय से। इस तरह अठारह ही पापों का त्याग करता हूँ।

तत्पश्चात् – 'सव्वं असणं, पाणं, खाइमं, साइमं चउव्विहं पि आहारं पच्चक्खामि' अर्थात् सर्वथा प्रकार से – विना किसी आगार के अन्न, पानी पक्वान्न, मुखवास का तथा (पि-अपि शब्द से) सूंघने की वस्तु का, आँख में डालने के अंजन आदि का भी प्रत्याख्यान करता हूँ। इस तरह चारों ही प्रकार के आहार का सर्वथा परित्याग कर देता हूँ।

आहार का त्याग करने के पश्चात् निम्नलिखित पाठ का उच्चारण करके शरीर का भी प्रत्याख्यान कर देता हूँ:–

जं पि इमं सरीरं – यह जो मेरा शरीर
इट्ठं – इष्ट रहा
कंतं – सती को पति के समान वल्लभ रहा है
पियं – प्यारा
मणुण्णं – मनोज्ञ
मणामं – मनोरम
धिज्जं – धैर्यदाता
विसासियं – विश्वसनीय
सम्मयं – माननीय
बहुमयं – लोभी को धन के समान बहुत माननीय
अणुमयं – अनुमत-दुर्गुणी समझ कर भी भला माना
भंडकरंडगसमाणं – जिसे आभूषणों की पेटी की तरह हिफाजत से रक्खा
रयणकरंडगभूयं – रत्नों के पिटारे के समान माना, (और जिसके विषय में यह सावधानी रक्खी कि –)

मा णं सीया – इसे सर्दी न लग जाय
मा णं उण्हा – गर्मी न लग जाय
मा णं खुहा – भूख का कष्ट न हो
मा णं पिवासा – प्यास का कष्ट न हो
मा णं वाला – साँप (आदि विषैला कीड़ा) न काट खाय
मा णं चोरा – चोर (आदि) कष्ट न पहुँचावें
मा णं दंसमसगा – डाँस-मच्छर न काटें
मा णं वाहियं पित्तियं – वात, पित्त

कप्फियं संभीयं सन्नि वाइयं – कफ, श्लेष्म, सन्निपात आदि
विविहा रोगा यंका परिसहा उवसग्गा – विविध प्रकार के रोगों और आतंकों, परीषहों और उपसर्गों तथा अप्रिय

फासा फुसंतु – स्पर्शों का संयोग न हो (उसी शरीर को अब)
चरमेहिं उस्सासनीसासेहिं वोसिरामि – अन्तिम श्वासोच्छ्वास पर्यन्त त्याग करता हूँ अर्थात् शारीरिक ममत्व का त्याग करता हूँ
कालं अणवकंखमाणे – जल्दी मृत्यु हो जाय, ऐसी इच्छा न करता हुआ
विहरामि – विचरता हूँ।

(१) **इहलोगासंसप्पओगे** – इस संथारे के फलस्वरूप, मेरी कीर्ति, ख्याति, प्रतिष्ठा हो, लोग मुझे बड़ा त्यागी, वैरागी समझें, धन्य धन्य कहें, इस प्रकार इस लोक संबंधी अकांक्षा करने से अतिचार लगता है।*

(२) **परलोगासंसप्पओगे** – मृत्यु के पश्चात् मुझे इन्द्र का पद मिले, उत्कृष्ट ऋद्धि का धारक देव बनूं, चक्रवर्ती या राजा होऊँ, सुन्दर शरीर की प्राप्ति हो, संसार के भोगोपभोग प्राप्त हों, इत्यादि परलोक संबंधी आकांक्षा करने से यह अतिचार लगता है।*

(३) **जीवियासंसप्पओगे** – संथारे में अपनी महिमा पूजा होती देख कर बहुत समय तक जीवित रहने की इच्छा करने से भी अतिचार लगता है।*

(४) **मरणासंसप्पओगे** – क्षुधा, तृषा, आदि की पीड़ा से व्याकुल होकर जल्दी मर जाने की इच्छा करने से भी अतिचार लगता है।*

(५) **कामभोगासंसप्पओगे** – काम-भोगों की इच्छा करने से भी अतिचार लगता है।*

संलेखनाव्रत जीवन का अंतिम और महान् व्रत है। वह मृत्यु को सुधारने की उत्कृष्ट कला है। इस कला की साधना अतीव सावधानी के साथ करनी चाहिए। उक्त पाँच अतिचारों में से किसी भी अतिचार का सेवन नहीं करना चाहिए। संथारे का प्रधान फल आत्मशुद्धि और आत्मकल्याण है। उससे आनुषंगिक फल के रूप में जो सांसारिक सुख प्राप्त होने वाले हैं, वे तो इच्छा न करने पर भी स्वतः प्राप्त हो जाते हैं। उन फलों की इच्छा करने से व्रत मलिन हो जाता है और व्रत का प्रधान फल मारा जाता है। अतएव किसी भी प्रकार की सांसारिक कामना नहीं रखते हुए, जिनेन्द्र भगवान् के गुणों में ही अपने चित्त को रमाकर, संसार के अनित्य स्वरूप का विचार करते हुए, धर्म ध्यान में ही संथारे का समय व्यतीत करना चाहिए। कहा भी है –

किं वहुना लिखितेन, संक्षेपादिदमुच्यते।
त्यागो विषयमात्रस्य, कर्त्तव्योऽखिलमुमुक्षुभिः॥

अर्थात् – अधिक लिखने से क्या लाभ! संक्षेप में यही कहना पर्याप्त है कि मोक्ष की अभिलाषा रखने वालों को विषय मात्र का त्याग कर देना चाहिए।

---

* अधिक जीना या जल्दी मरना किसी की इच्छा के अधीन नहीं है। इच्छा करने से आयु कम ज्यादा नहीं हो सकती, सिर्फ कर्म का वन्ध होता है। अतएव व्यर्थ कर्म वन्ध नहीं करना चाहिये।

(१८८)

वाट घणो दिन थोड़ो, वटाऊ वीरा वाट घणो दिन थोड़ो।
१. घर रयो दूर सूरज घर हाल्यो, दौड़ सके तो दौड़ो।
२. निरभे होय नगर जा पहुंच, अध विच पड़सी थने फोड़ो।।
३. होय हुसियार हिम्मत मत हारो, हाक घणे रो घोड़ो।
४. 'औघड़' कहे रह गुरां के सरणे, मारग लख्यो मोड़ो।।

(१८९)

नर नारायण बन जावेगा, जो आत्म ज्योति जगायेगा–टेर।
१. पापों के बन्धन टूटेंगे, विषयों के नाते छूटेंगे।
जो सोया सिंह जगावेगा, नर नारायण०
२. घट में बैठा इक ईश्वर है, जाने माने ज्ञानेश्वर है।
सब जन्म मरण मिट जावेगा, नर नारायण०
३. बादल के पीछे दिनकर है, कर्मों के पीछे ईश्वर है।
जो सर्वही ज्योति जगायेगा, नर नारायण०
४. गुरु के चरणों में जाकर के, श्रद्धा के कुसुम चढा करके।
'मुनि कुमुद' जो आनन्द पावेगा, नर नारायण बन जावेगा०

(१९०)

१. जो केश काले भँवर थे, गाले रुई के बन गये।
थे दांत हाथीदांत सम, मजबूत गिरने लग गये।।
२. आंखें चुरा आंखें गई हैं, दृष्टि मन्दी पड़ गई।
मुख हो गया है खोखला, तृष्णा अधिक है बढ़ गई।।
३. नहिं कान देते काम अब, ऊंचा बहुत सुनने लगे।
पग डगमगाते चल रहे हैं, हाथ भी हिलने लगे।।

४. काया गली, झुर्री पड़ी, हड्डी हुई है खोखली।
ज्यों जौंक चिन्ता-सर्पिणीने, रक्त चर्वी शोष ली ।।

५. इन्द्रियां बलहीन हैं, धनु सम कमर है झुक गई।
काया हुई बूढ़ी मगर, आशा नहीं बुड्ढी हुई ।।

६. यमदूत तुमको दे रहे हैं, कूच की यह सूचना।
आश्चर्य है आश्चर्य अति, होती नहीं क्यों चेतना ।।
आश्चर्य है अब भी तुम्हें, होती नहीं क्यों चेतना ।।

(१६१)

चेतन तूं ध्यान आरत क्यूं ध्यावे, हां रे नाहक कर्म संचावे–चे०

१. जो जो भगवन्त भाव देखिया सौ सौ वरतावै।
घटै बढै नहीं रंचहु तामे, तो काहे तूं मन डोलावे–चे०

२. आरत ध्यान ज्यों चिन्ता अग्नि, उपजत सहू विणसावै।
शोकातुर वीते दिन रेणी, तो धर्म ध्यान घट जावे–चे०

३. सुख सूं निद्रा आत न रातन, अन्न उदक नहिं भावै।
पहिरन ओढन चित्त न चाले, तो राग न रंग सुहावे–चे०

४. भुगत्यां विन छूटै नहिं कवहूं, असुभ उदय जब आवै।
साहूकार शिरोमणि सो ही, जो हर्ष सुं कर्ज चुकावै–चे०

५. सुख न रहे तो दुख किम रहसी, यह भी श्यात् गुजर जावै।
कर्म वन्ध भुगतण सही पड़सी, तो आतम ने डंडावै–चे०

६. प्रभु सुमरण अरु तपस्या करतां, दुष्कृत रज झड़ जावें।
'ज्येष्ठ' कहे समता रस पीतां, तुरत ही आनन्द पावै–चे०

(१९२)

१. संत समागम कीजे रे भवियां, संत समागम कीजै ।
दुष्कृत हरन चरन धर मस्तक, परम विनय सांचीजे–संत०

२. चंद चकोर ज्यूं आनन निरखी, नयनामृत भरलीजे ।
सुख साधन की गिरा सुधा सम, उमग उमग रस पीजे–संत

३. सूत्र अर्थ कुं स्वाति बूंद ज्युं, चातक जेम ग्रहीजे ।
पुद्गल रो परपंच समझ के, आतम रूप लखीजे–संत

४. किंचित् वित्त री प्रापत हुयां, बदन कमल विकसीजे ।
अखय खजाना ज्ञान देत तसु, गुण निधि केम तरीजे–संत

५. लोह अचेतन चुंवक संगे, कहो केहवो विलमीजे ।
तूं चेतन सेवे नहिं तारक, किसो उलंभो दीजे–संत

६. परदेसी राजा गुरु भेटी, छोड़ मिथ्या धर्म भीजे ।
क्रोध कियो नहिं निज तिय पे ज्यों, समकित रंग रंगीजे–संत

७. 'ज्येष्ठ' कहे निस्तार चहे तो, विषय कषाय तजीजे ।
संकट सकल टलें भव संचित, सिद्ध स्वरूप थईजे–संत

(१९३)

वृहदालोयणा

१. सिद्ध श्री परमातमा, अरिगंजन अरिहंत ।
इष्टदेव वंदूँ सदा, भयभंजन भगवंत ॥

२. अरिहंत सिद्ध समरूँ सदा, आचारज उवज्झाय ।
साधु सकल के चरण कूं, वंदूं शीश नमाय ॥

३. शासन नायक सुमरिये, भगवंत वीर जिनन्द ।
अलिय विघन दूरे हरे, आपे परमानन्द ॥

४. अंगूठे अमृत वसे, लब्धि तणा भंडार ।
श्री गुरु गौतम सुमरिये, वांछित फल दातार ॥

५. श्री गुरुदेव प्रसाद से, होत मनोरथ सिद्ध ।
ज्यों जल वरसत वेलि तरु, फूल फलन की वृद्ध ॥

६. पंच परमेष्ठी देवको, भजनपूर पहिचान ।
कर्म अरि भाजे सभी, होवे परम कल्याण ॥

७. श्री जिनयुगपद कमल में, मुझ मन भमर वसाय ।
कब ऊगे वो दिन करूँ, श्रीमुख दर्शन पाय ॥

८. प्रणमी पदपंकज भणी, अरिगंजन अरिहंत ।
कथन करूँ अब जीव को, किंचित मुझ विरतंत ॥

९. आरंभ विषय कषाय वश, भमियो काल अनंत ।
लख चौरासी योनि से, अब तारो भगवंत ॥

१०. देव गुरु धर्म सूत्र में, नव तत्वादिक जोय ।
अधिका ओछा जे कह्या, मिच्छा दुक्कडं मोय ॥

११. मोह अज्ञान मिथ्यात्व को, भरियो रोग अथाग ।
वैद्यराज गुरु शरण से, औषध ज्ञान वैराग ॥

१२. जे मैं जीव विराधिया, सेव्या पाप अठार ।
प्रभो ! तुमारी साख से, बारंबार धिक्कार ॥

१३. बुरा बुरा सब को कहूं, बुरा न दीसे कोय ।
जो घट शोधूँ आपणो, तो मोसूं[1] बुरा न कोय ॥

१४. कहवा में आवे नहीं, अवगुण भरचा अनंत ।
लिखवा में क्यों कर लिखूँ, जानो श्री भगवंत ॥

१५. करुणानिधि करुणा करी, कठिन कर्म मोय छेद ।
मोह अज्ञान मिथ्यात्व को, करजो ग्रंथि भेद[2] ॥

१६. पतित उधारण नाथजी, अपनो विरुद विचार ।
भूल चूक सब माहरी, खमिये बारंबार ॥

१६. माफ करो सब माहरां, आज तलक ना दोष ।
दीन दयाल देवो मुझे, श्रद्धा शील संतोष ॥

१८. आतम निंदा शुद्ध भणी, गुणवंत वंदन भाव ।
रागद्वेष पतला करी, सब से खिमत खिमाव ॥

१६. छूटूँ पिछला पाप से, नवा न बांधूं कोय ।
श्री गुरुदेव प्रसाद से, सफल मनोरथ होय ॥

२०. परिग्रह ममता तजि करी, पंच महाव्रत धार ।
अंत समय आलोयणा, करूँ संथारो सार ॥

---

[1] मेरे से, [2] कर्मों की गांठ को तोड़ना ।

२१. तीन मनोरथ[1] ए कह्या, जो ध्यावे[2] नित्य मन्न ।
शक्ति सार वरते सही, पावे शिवसुख धन्न ।।

२२. अरिहंत देव निर्ग्रन्थ गुरु, संवर निर्जरा का धर्म ।
केवलिभाषित शासतर, यही जैनमत का मर्म ।।

२३. आरंभ विषय कषाय तज, शुद्ध समकित व्रत धार ।
जिन आज्ञा परमाण कर, निश्चय खेवो पार ।।

२४. खिण[3] निकमो रहणो नहीं करणो आतम काम ।
भणणो गुणणो सीखणो, रमणो ज्ञान आराम[4] ।।

२५. अरिहंत सिद्ध सब साधुजी, जिन आज्ञा धर्मसार ।
मंगलिक उत्तम सदा, निश्चय शरणा चार ।।

२६. घड़ी घड़ी पल पल सदा, प्रभु सुमिरण को चाव ।
नरभव सफलो जो करे, दान शील तप भाव ।।

(१९४)

१. सिद्धां जैसो जीव है, जीव सोही सिद्ध होय ।
कर्म मैल को आंतरो, बूझे[5] विरला कोय ।।

२. कर्म पुद्गल रूप है, जीव रूप है ज्ञान ।
दो मिलकर बहुरूप है, विछड़्यां[6] पद निरवाण ।।

३. जीव करम भिन्न भिन्न करो, मनुष्य जनम को पाय ।
ज्ञानातम वैराग्य से, धीरज ध्यान लगाय ।।

---

[1] मन की अभिलाषा, [2] चिन्तन करना, [3] थोड़ी देर भी, [4] बगीचा,
[5] समझे, [6] अलग होना ।

४. द्रव्य थकी जीव एक है, क्षेत्र असंख्य प्रमाण।
काल थकी सर्वदा रहे, भावे दर्शन ज्ञान ।।

५. गर्भित[1] पुद्गल पिंड में, अलख[2] अमूरति[3] देव।
फिरे सहज भव चक्र में, यह अनादि की टेव[4] ।।

६. फूल अतर घी दूध में, तिल में तेल छिपाय।
यूँ चेतन जड़ करम संग, बंध्यो ममत दुःख पाय ।।

७. जो जो पुद्गल की दशा, ते निज माने हंस[5]।
या ही भरम विभाव ते, वढे करम को वंश ।।

८. रतन बंध्यो गठड़ी विषे, सूर्य छिप्यो घन मांय।
सिंह पिंजरा में दियो, जोर चले कछु नांय ।।

९. ज्यों बंदर मदिरा पीयाँ, विच्छू डंकित गात।
भूत लग्यो कौतुक करे, त्यों कर्मों का उत्पात ।।

१०. कर्म संग जीव मूढ है, पावे नाना रूप।
कर्मरूप मल के टले, चेतन सिद्ध सरूप ।।

११. शुद्ध चेतन उज्ज्वल दरव रह्यो कर्म मल छाय।
तप संयम से धोवतां, ज्ञान ज्योति वढ़ जाय ।।

१२. ज्ञान थकी जाने सकल, दर्शन श्रद्धा रूप।
चारित्र से आवत रुके, तपस्या क्षपण सरूप ।।

---

[1] मिला हुआ, [2] दिखाई न देने वाला, [3] आकार रहित, [4] आदत, [5] आत्मा।

१३. कर्म रूप मल[1] के शुवे, चेतन चाँदी रूप।
निर्मल ज्योति प्रगट भयाँ, केवल ज्ञान अनूप[2] ।।

१४. मूसी पावक सोहगी, फूकां तणो उपाय।
राम चरण चारुं मिल्यां, मैल कनक[3] को जाय ।।

१५. कर्मरूप वादल मिटे, प्रगटे चेतन चंद।
ज्ञानरूप गुण चांदनी, निर्मल ज्योति अमंद[4] ।।

१६. राग द्वेष दो वीज से, कर्म बंध की व्याध[5] ।
ज्ञानातम वैराग्य से, पावे मुक्ति समाध ।।

१७. अवसर वीत्यो जात है, अपने वश कछू होत।
पुण्य छतां पुण्य होत है, दीपक दीपक ज्योत ।।

१८. कल्प वृक्ष चिंतामणि, इस भव में सुखकार।
ज्ञान वृद्धि इन से अधिक, भव दुःख भंजनहार ।।

१९. राई मात्र घट वध नहीं, देख्या केवल ज्ञान।
यह निश्चय कर जान के, तजिये परथम[6] ध्यान ।।

२०. दूजा[7] कूं कभी न चिंतिये, कर्मबंध वहु दोष।
तीजा[8] चौथा[9] ध्याय के, करिये मन संतोष ।।

२१. गई वस्तु सोचे नहीं, आगम वंछा नांय।
वर्तमान वर्ते सदा, सो ज्ञानी जग मांय ।।

२२. अहो समदृष्टि जीवड़ा, करे कुटुम्ब प्रतिपाल।
अंतर्गत न्यारो रहे, ज्यों धाय खिलावे वाल ।।

---

[1] मैल, [2] उपमा रहित, [3] सोना, [4] उत्कृष्ट, [5] पीड़ा, [6] आर्त्तध्यान, [7] रौद्रध्यान, [8] धर्म ध्यान, [9] शुक्ल ध्यान।

२३. सुख दुःख दोनुं वसत है, ज्ञानी के घट मांय।
गिरि[1] सर[2] दीसे दर्पण[3] में, भार भींजवो नांय॥

२४. जो जो पुद्गल फरसना, निश्चय फरसे सोय।
ममता समता भाव से, करमबंध खय होय॥

२५. बांध्या सोही भोगवे, कर्म शुभाशुभ भाव।
फल निर्जरा होत है, यह समाधि चित चाव॥

२६. बांध्या बिन भुगते नहीं, विन भुगत्यां न छुडाय।
आप ही करता भोगता, आप ही दूर कराय॥

२७. पथ[4] कुपथ[5] घट वध करी, रोग हानि वृद्धि थाय।
यूं पुण्य पाप किरिया करी, सुख दुःख जग में पाय॥

२८. सुख दियां सुख होत है, दुःख दियां दुःख होय।
आप हणे नहीं अवर कूं, तो अपने हणे न कोय॥

२९. ज्ञान गरीबी गुरु वचन, नरम वचन निर्दोष।
इनकूं कभी न छांड़िये, श्रद्धा शील संतोष॥

३०. सत मत छोड़ो हो नरां, लक्ष्मी चौगुनी होय।
सुख दुःख रेखा कर्म की, टाली टले न कोय॥

३१. गोधन गज धन रतन धन, कंचन खान सुखान।
जब आवे संतोष धन, सब धन धूल समान॥

३२. शील रतन मोटो रतन, सब रतनां की खान।
तीन लोक की संपदा, रही शील में आन॥

---

[1] पर्वत, [2] तालाब, [3] काच, [4] पथ्य-गुणकारी,
[5] कुपथ्य-अवगुण करने वाला।

३३. शीले सर्प न आभड़े[1], शीले शीतल आग।
शीले अरि करि[2] केसरी[3], भय जावे सब भाग॥

३४. शील रतन के पारखी, मीठा बोले बैन।
सब जग से ऊँचा रहे, जो नीचा राखे नैन॥

३५. तन कर मन कर वचन कर, देत न काहु दुःख।
कर्म रोग पातक झड़े, देखत वां का मुख॥

(१६५)

१. पान खिरंतो इम कहे, सुन तरुवर वनराय।
अब के बिछुड़े कब मिलें, दूर पड़ेंगे जाय॥

२. तब तरुवर उत्तर दियो, सुनो पत्र इक बात।
इस घर एही रीत है, इक आवत इक जात॥

३. बरस दिनों की गांठ को, उच्छव गाय बजाय।
मूरख नर समझे नहीं, बरस गांठ को जाय॥

४. पवन तणो विश्वास, किण कारण तें दृढ कियो।
इनकी एही रीत, आवे के आवे नहीं॥

५. करज बिराणा काढ के, खरच किया बहु दाम।
जब मुद्दत पूरी हुवे, देणा पड़सी दाम॥

६. बिन दियां छूटे नहीं, यह निश्चय कर मान।
हंस हंस के क्यों खरचिये, दाम बिराना जान॥

---

[1] डसे, [2] हाथी, [3] सिंह।

७. जीव हिंसा करतां थकाँ, लागे मिष्ट अज्ञान।
ज्ञानी इम जाने सही, विष मिलियो पकवान ॥

८. काम भोग प्यारा लगे, फल किंपाक समान।
मीठी खाज खुजावताँ, पीछे दुःख की खान ॥

९. जप तप संजम दोहिलो, औषध कड़वी जाण।
सुख कारण पीछे घणो, निश्चय पद निरवाण ॥

१०. डाभ अणी[१] जल विंदुवो, सुख विषयन को चाव।
भवसागर दुःख जल भर्यो, यह संसार स्वभाव ॥

११. चढ़ उत्तंग[२] जहाँ से पतन, शिखर नहीं वो कूप[३]।
जिस सुख अंदर दुःख वसे, सो सुख भी दुःख रूप ॥

१२. जव लग जिसके पुण्य का, पहुँचे नहीं करार।
तव लग उसकूं माफ है, अवगुण करे हजार ॥

१३. पुण्य खीण जब होत है, उदय होत है पाप।
दाभे[४] वन की लाकड़ी, प्रजले आपों आप ॥

१४. पाप छिपायां ना छिपे, छिपे तो मोटा भाग।
दावी दूवी ना रहे, रूई लपेटी आग ॥

१५. वहु वीती थोड़ी रही, अव तो सुरत संभार।
पर भव निश्चय जावणो, वृथा जन्म मत हार ॥

१६. चार कोश गामान्तरे, खरची वाँधे लार।
परभव निश्चय जावणो, करिये धर्म विचार ॥

---

[१] कुश के अग्र भाग पर, [२] ऊंचा, [३] कुआ, [४] जलना।

१७. रज विरज उंची गई, नरमाई के प्राण।
पत्थर ठोकर खात है, करड़ाई के ताण॥

१८. अवगुण उर धरिये नहीं, जो हुवे विरख[1] बबूल।
गुण लीजे 'कालू' कहे, नहीं छाया में शूल।

१९. जैसी जापे वस्तु है, वैसी दे दिखलाय।
वांका बुरा न मानिये, वो लेन कहाँ से जाय॥

२०. गुरु कारीगर सारिखा, टाँची वचन विचार।
पत्थर से प्रतिमा करे, पूजा लहे अपार॥

२१. संतन की सेवा कियाँ, प्रभु रींझत[2] है आप।
जाँ का बाल खिलाइये, ताँ का रींझत बाप॥

२२. भवसागर संसार में, दीपा श्री जिनराज।
उद्यम करी पहुँचे तीरे, बैठ धर्म की जहाज॥

२३. निज आतम कूं दमन कर, पर आतम कूं चीन्ह[3]।
परमातम को भजन कर, सोई मत परवीन॥

२४. समझूं शंके पाप से, अणसमझूं हरषंत।
वे लूखा वे चीकणा, इण विध कर्म बंधंत॥

२५. समझ सार संसार में, समझू टाले दोष।
समझ समझ कर जीव ही, गया अनंता मोक्ष॥

२६. उपशम विषय कषाय नो, संवर तीनूं योग।
किरिया जतन विवेक से, मिटे कुकर्म दुःख रोग॥

---

[1] वृक्ष, [2] खुश होना, [3] पहिचान।

२७. रोग मिटे समता वधे, समकित व्रत आराध।
निर्वैरी सब जीव का, पावे मुक्ति समाध ।।
–इति भूल चूक मिच्छामि दुक्कडं ।।

(१६६)

१. सिद्ध श्री परमात्मा अरिगंजन अरिहंत।
इष्टदेव वंदू सदा, भयभंजन भगवंत ।।

२. अनंत चौवीसी जिन नमूं, सिद्ध अनंता कोड़।
वर्तमान जिनवर सभी, केवली दो कोड़ी नव कोड़ ।।

३. गणधरादिक सर्व साधुजी, समकित व्रत गुणधार।
यथायोग्य वंदन करूँ, जिन आज्ञा अनुसार ।।
(प्रथम एक नवकार गिनना)

४. पंच परमेष्ठी देव को, भजनपूर पहिचान।
कर्म अरि भाजे सभी, शिवसुख मंगल थान ।।

हूं अपराधी अनादि को, जनम जनम गुनाह किया भरपूर के।
लूटीया प्राण छकाय ना, सेविया पाप अठारह क्रूर के ।।
–श्रीमुनिसुव्रत साहिवा ०

आज दिन तक इस भव में और पहिले संख्यात असंख्यात अनंत भवों में कुगुरु कुदेव और कुधर्म की सद्दहणा परूपना फरसना सेवनादिक संबंधी पाप दोष लगा उनका मिच्छामि दुक्कडं। मैंने अज्ञानपन से मिथ्यात्वपन से, अव्रतपन से, कषायपन से, अशुभयोग से प्रमाद करके अपछंदा अविनीतपना किया, श्री अरिहंत भगवंत वीतरागदेव, केवलज्ञानी, गणधरदेव, आचार्यजी महाराज, धर्माचार्यजी महाराज,

उपाध्यायजी महाराज, साधुजी महाराज आर्याजी महाराज, तथा सम्यग्दृष्टि, स्वधर्मी श्रावक और श्राविका इन उत्तम पुरुषों की तथा शास्त्र, सूत्रपाठ, अर्थ, परमार्थ और धर्म संबंधी समस्त पदार्थों की अभक्ति, अविनय, आशातना आदि की, कराई, अनुमोदी, मन वचन काया से, द्रव्य क्षेत्र काल भाव से सम्यक् प्रकार विनय भक्ति आराधना पालना फरसना सेवनादिक यथायोग्य अनुक्रम से नहीं की, नहीं कराई नहीं अनुमोदी तो मुझे धिक्कार धिक्कार वारंवार मिच्छामि दुक्कडं। मेरी भूल चूक अवगुण अपराध सब मुझे माफ करो, मैं मन वचन काया करके खमाता हूँ।

१. मैं अपराधी गुरुदेव को, तीन भुवन को चोर।
ठगूँ विराना माल मैं, हा हा कर्म कठोर ॥
२. कामी कपटी लालची, अपछंदा अविनीत।
अविवेकी क्रोधी कठिन, महापापी 'रणजीत'* ॥
३. जे मैं जीव विराधिया, सेव्या पाप अठार।
नाथ तुमारी साख से वारंवार धिक्कार ॥

पहला पाप प्राणातिपात – मैंने छकायपन से छकाय की विराधना की, पृथ्वी – अप – तेउ – वायु – वनस्पतिकाय, बेइन्द्रिय तेइन्द्रिय चउरिन्द्रिय पंचेन्द्रिय सन्नी असन्नी गर्भज, चौदह प्रकार के सम्मूर्च्छिम आदि त्रस स्थावर जीवों की विराधना मन वचन काय से की, कराई अनुमोदी, उठते बैठते सोते हिलते डुलते शस्त्र वस्त्र मकानादिक उपकरण उठाते धरते लेते देते, वर्तते वर्तावते, अप्पडिलेहणा दुप्पडिलेहणा संबंधी, अप्रमार्ज्जना दुःप्रमार्ज्जना संबंधी न्यूनाधिक विपरीत पडिलेहणा संबंधी और आहार विहार आदि अनेक प्रकार के कर्त्तव्यों में संख्यात, असंख्यात और निगोद आसरी अनंत जीवों के जितने प्राण लूटे उन सब जीवों का मैं पापी अपराधी हूँ, निश्चय करके

---
* पाठक यहां अपना अपना नाम बोलें।

बदले का देनदार हूँ, सव जीव मेरे प्रति माफ करो, मेरी भूल चूक अवगुण अपराध सव माफ करो।

देवसी राई पक्खी चउमासी और सम्वत्सरी संवंधी वारंवार मिच्छामि दुक्कडं, वारंवार मैं खमाता हूँ तुम सव क्षमा करो।

खामेमि सव्वे जीवा, सव्वे जीवा खमंतु मे।
मित्ति में सव्वभूएसु, वेरं मज्भं न केणइ ॥

वह दिन धन्य होगा जिस दिन मैं छः काय के वैर बदले से निवृत्त होऊँगा, समस्त चौरासी लाख जीवा योनि को अभयदान देऊंगा वह दिन मेरा परम कल्याण का होगा ॥दोहा–

सुख दियां सुख होत है, दुःख दियां दुःख होय।
आप हणे नहीं अवर कूँ, आप कूं हणे न कोय ॥

दूजा पाप मृषावाद – झूठ बोलना। क्रोध के वश, मान के वश, माया के वश, लोभ के वश, हास्य करके, भय के वश, मृषा (झूठ) वचन बोला, निंदा विकथा की, कर्कश कठोर मर्म वचन बोला, इत्यादि अनेक प्रकार से मृषावाद झूठ बोला, बोलवाया और अनुमोदा, उनका मन वचन काया से मिच्छामि दुक्कडं ॥दोहा–

थापनमोसा मैं किया, करी विश्वासघात।
परनारी धन चोरीया, प्रकट कह्यो नहीं जात ॥

वह मुझे धिक्कार धिक्कार वारंवार मिच्छामि दुक्कडं। वह दिन धन्य होवेगा जिस दिन सर्व प्रकार से मृषावाद का त्याग करूंगा, वह दिन मेरा परम कल्याणरूप होवेगा।

तीसरा पाप अदत्तादान – विना दी हुई वस्तु चोरी करके लेना। यह वड़ी चोरी लौकिक विरुद्ध है। अल्प चोरी मकान संवंधी अनेक प्रकार के कर्तव्यों में उपयोग सहित या विना उपयोग से अदत्तादान, चोरी मन वचन काया से की, कराई और अनुमोदी तथा धर्म संवंधी

ज्ञान दर्शन चारित्र और तप श्री भगवंत गुरुदेव की विना आज्ञा किया उसका मुझे धिक्कार धिक्कार वारंवार मिच्छामि दुक्कडं। वह दिन मेरा धन्य होगा जिस दिन सर्व प्रकार से अदत्तादान का त्याग करूँगा वह दिन मेरा परम कल्याण का होवेगा।

चौथा मैथुन सेवन करने के लिये मन वचन और काया का योग प्रवर्ताया, नववाड़ सहित ब्रह्मचर्य नहीं पाला, नववाड़ में अशुद्धपन से प्रवृत्ति हुई, मैंने सेवन किया, दूसरों से सेवन करवाया और सेवन करने वाले को अच्छा समझा, उसका मन वचन काया से मुझे धिक्कार धिक्कार बारंवार मिच्छामि दुक्कडं। वह दिन मेरा धन्य होगा जिस दिन मैं नववाड़ सहित ब्रह्मचर्य-शीलरत्न आराधूँगा यानी सर्वथा प्रकार से काम विकार से निवर्तूंगा वह दिन मेरा परम कल्याण का होवेगा।

पांचवा परिग्रह – सचित्त परिग्रह तो दास दासी द्विपद चतुष्पद (पशु) आदि अनेक प्रकार के, और अचित्त परिग्रह सोना चांदी वस्त्र आभूषण आदि अनेक प्रकार के हैं उनकी ममता मूर्च्छा की, क्षेत्र घर आदि नव प्रकार के वाह्य परिग्रह और चौदह प्रकार के आभ्यन्तर परिग्रह को रखा, रखवाया और अनुमोदा तथा रात्रि भोजन अभक्ष्य आहारादि संवंधी पाप दोष सेव्या होय तो उसका मुझे धिक्कार धिक्कार बारंवार मिच्छामि दुक्कडं। वह दिन मेरा धन्य होवेगा जिस दिन सब प्रकार से परिग्रह का त्याग कर संसार के प्रपंच से निवर्तूंगा, वह दिन मेरा परम कल्याण रूप होवेगा।

छठा क्रोध – क्रोध करके अपनी आत्मा को तथा पर आत्मा को दुःखी की।

सातवां मान – अहंकार भाव लाया, तीन गारव और आठ मद आदि किया।

आठवां माया – धर्म संवंधी तथा संसार संवंधी अनेक कर्त्तव्यों में कपट किया।

नवमां लोभ – मूर्च्छा भाव लाया, आशा तृष्णा वाञ्च्छा आदि की।

दसवां राग – मनपसंद वस्तु से स्नेह किया।

ग्यारहवां द्वेष – अपसंद वस्तु देख कर उस पर द्वेष किया।

वारहवां कलह – अप्रशस्त (खराव) वचन बोल कर क्लेश उत्पन्न किया।

तेरहवां अभ्याख्यान – झूठा कलंक दिया।

चौदहवां पैशुन्य – दूसरे की चुगली की।

पंद्रहवाँ परपरिवाद – दूसरे का अवगुणवाद (अवर्णवाद) वोला।

सोलहवाँ रति अरति – पाँच इंद्रिय के २३ विषय और २४० विकार हैं, इनमें मन के पसंद पर राग किया और अपसंद पर द्वेष किया तथा संयम तप आदि पर अरति की तथा आरंभादिक असंयम प्रमाद में रति भाव किया।

सतरहवाँ माया मृषावाद – कपट सहित झूठ वोला।

अठारहवाँ मिथ्यादर्शनशल्य – श्री जिनेश्वर देव के मार्ग में शंका कंखा आदि विपरीत प्ररूपणा की।

इस प्रकार अठारह पापस्थान द्रव्य से क्षेत्र से काल से भाव से जानते अजानते मन वचन और काया से सेवन किया, कराया और अनुमोदा, दिवा वा राई वा एगो वा परिसागओ वा सुत्ते वा जागरमाणे वा इस भव में पहिला संख्यात, असंख्यात, अनंत भवों में भवभ्रमण करते आज दिन तक राग द्वेष विषय कषाय आलस प्रमाद आदि पौद्गलिक प्रपंच परगुणपर्याय की विकल्प भूल की, ज्ञान की विराधना की, दर्शन की विराधना की, चारित्र की विराधना की, चारित्राचारित्र की, तप की विराधना की, शुद्ध श्रद्धा शील संतोष

क्षमा आदि निज स्वरूप की विराधना की, उपशम, विवेक, संवर, सामायिक, पौषध, पडिक्कमणा, ध्यान, मौन आदि व्रत पच्चक्खाण दान शील तप वगैरह की विराधना की, परम कल्याणकारी इन बोलों की आराधना पालनादिक मन वचन और काया से नहीं की, नहीं कराई और नहीं अनुमोदी । छह आवश्यक सम्यक् प्रकार विधि उपयोग सहित आराधा नहीं, पाला नहीं, फरसा नहीं, विधि उपयोग रहित निरादरपने से किया किंतु आदर सत्कार भाव भक्ति सहित नहीं किया, ज्ञान के चौदह, समकित के पांच, बारह व्रत के साठ, कर्मादान के पंद्रह, संलेखणा के पांच एवं निन्नाणवे अतिचार में तथा १२४ अतिचार में तथा साधुजी के १२५ अतिचार में तथा बावन अनाचार का श्रद्धानादिक में विराधना आदि जो कोई अतिक्रम व्यतिक्रम अतिचार आदि सेवन किया, सेवन कराया, अनुमोदा जानते अजानते मन वचन काया से उनका मुझे धिक्कार धिक्कार वारंवार मिच्छामि दुक्कडं । मैंने जीव को अजीव श्रद्धया, प्ररूप्या, अजीव को जीव श्रद्धया प्ररूप्या, धर्म को अधर्म और अधर्म को धर्म श्रद्धया प्ररूप्या तथा साधुजी को असाधु और असाधु को साधु श्रद्धया प्ररूप्या, तथा उत्तम पुरुष साधु मुनिराज महासतियांजी की सेवा भक्ति मान्यता आदि यथा विधि नहीं की, नहीं कराई, नहीं अनुमोदी तथा असाधुओं की सेवा भक्ति मान्यता आदि का पक्ष किया, मुक्तिमार्ग में संसार का मार्ग यावत् पच्चीस मिथ्यात्व में किसी मिथ्यात्व का सेवन किया, सेवन कराया, अनुमोदा मन वचन और काया से, पच्चीस कषाय संबंधी, पच्चीस क्रिया संबंधी, तेतीस आशातना संबंधी, ध्यान के १९ दोष, वंदना के ३२ दोष, सामायिक के ३२ दोष, पौषध के १८ दोष संबंधी मन वचन और काया से जो कोई पाप दोष लगा, लगाया, अनुमोदा उसका मुझे धिक्कार धिक्कार वारंवार मिच्छामि दुक्कडं । महामोहनीय कर्मबंध के तीस स्थानक को मन वचन और काया से सेवन किया, सेवन कराया, अनुमोदा शील की नववाड़ तथा आठ प्रवचन

माता की विराधनादि, श्रावक के इक्कीस गुण और बारह व्रत की विराधनादि मन वचन और काया से की, कराई, अनुमोदी तथा तीन अशुभ लेश्या के लक्षणों की और बोलों की विराधना की चर्चा वार्ता वगैरह में श्री जिनेश्वर देव का मार्ग लोपा, गोपा नहीं माना, अछते की थापना की, छते की थापना नहीं की और अछते का निषेध नहीं किया, छते की थापना और अछते का निषेध करने का नियम नहीं किया, कलुषता की, तथा छ प्रकार के ज्ञानावरणीय बंध का बोल, ऐसे ही छ प्रकार के दर्शनावरणीय बंध का बोल, आठ कर्म की अशुभ प्रकृति बंध का बोल, पचपन कारणों से पाप की बयासी प्रकृति बांधी, बंधाई, अनुमोदी, मन वचन काया करके उनका मुझे धिक्कार धिक्कार बारंबार मिच्छामि दुक्कडं। एक एक बोल से लगा कर कोड़ाकोड़ी यावत् संख्याता असंख्याता अनन्ता अनन्त बोलों में से जानने योग्य बोलों को सम्यक् प्रकार जाना नहीं, श्रद्धचा नहीं, प्ररूप्या नहीं, तथा विपरीतपने से श्रद्धा आदि की, कराई, अनुमोदी, मन वचन काया से उनका मुझे धिक्कार धिक्कार बारंबार मिच्छामि दुक्कडं।

एक एक बोल से यावत् अनन्ता बोलों में छोड़ने योग्य बोल को छोड़ा नहीं, उनको मन वचन काया से सेवन किया, सेवन कराया और अनुमोदा उनका मुझे धिक्कार धिक्कार बारंबार मिक्छामि दुक्कडं। एक एक बोल से लगा कर जाव अनंता अनंत बोलों में आदरने योग्य बोलों को आदरा नहीं, आराधा नहीं, पाला नहीं, फरसा नहीं, विराधना खंडना आदि की, कराई, अनुमोदी, मन वचन काया से उनका मुझे धिक्कार धिक्कार बारंबार मिच्छामि दुक्कडं। श्री जिन भगवंतजी महाराज आपकी आज्ञा में जो जो प्रमाद किया और सम्यक् प्रकार उद्यम नहीं किया, नहीं कराया, नहीं अनुमोदा मन वचन काया करके, तथा अनाज्ञा में उद्यम किया, कराया, अनुमोदा, एक अक्षर के अनन्तवें भाग मात्र दूसरा कोई स्वप्नमात्र में भी श्री भगवंत महाराज आपकी आज्ञा

से न्यूनाधिक विपरीत प्रवर्ता होऊँ तो उनका मुझे धिक्कार धिक्कार बारंवार मिच्छामि दुक्कडं।

१. श्रद्धा अशुद्ध प्ररूपणा, करी फरसना सोय।
अनजाने पक्षपात में, मिच्छा दुक्कड़ं मोय॥

२. सूत्र अर्थ जानूं नहीं, अल्पबुद्धि अनजान।
जिनभाषित सव शास्त्र का, अर्थ पाठ परमाण॥

३. देव गुरु धर्म सूत्र कूं, नव तत्वादिक जोय।
अधिका ओछा जे कह्या, मिच्छा दुक्कडं मोय॥

४. हूं मगसेलीयो[1] हो रह्यो, नहीं ज्ञान रस भींझ।
गुरु सेवा न करी सकूं, किम मुझ कारज सीझ॥

५. जाने देखे जे सुने, देवे सेवे मोय।
अपराधी उन सवन का, वदला देसूं सोय॥

६. गवन करूँ वुगचा रतन, दरव भाव सव कोय।
लोकन में प्रगट करूं, सूई पाई मोय॥

७. जैनधर्म शुद्ध पाय के, वरते विषय कषाय।
एह अचंभा हो रह्या, जल में लागी लाय॥

८. जितनी वस्तु जगत में, नीच नीच में नीच।
सव से मैं पापी वुरो, फसूं मोह के बीच।

९. एक कनक अरु कामिनी, दो मोटी तरवार।
उठ्यो थो जिन भजन कूं, बिच में लीयो मार॥

१०. मैं महापापी छांड के संसार छार, छार ही का विहार करूँ, अगला कुछ धोय कीच फेर कीच वीच रहूं, विषय सुख चाहूँ मन्न, प्रभुता वधारी है। करत

फकीरी ऐसी अमीरी की आश करूं, काहे कूं धिक्कार
सिर पगड़ी उतारी है।

११. त्याग न कर संग्रह करूं, विषय वचन जिम आहार।
तुलसी ए मुझ पतित कूं, बारंबार धिक्कार॥

१२. राग द्वेष दो वीज है, कर्म बंध फल देत।
इनकी फांसी में बंध्यो, छूटूं नहीं अचेत॥

१३. रतन बंध्यो गठड़ी विषे, भाण छिप्यो घन मांय।
सिंह पिंजरा में दियो, जोर चले कछु नांय॥

१४. बुरा बुरा सव को कहूँ, बुरा न दीसे कोय।
जो घट शोधूं आपणो तो मोसूं बुरो न कोय॥

१५. कामी कपटी लालची, कठिन लोह को दाम।
तुम पारस परसंग थी, सुवर्ण थासूं स्वाम॥

१६. मैं जपहीन हूँ तपहीन हूँ, प्रभु हीन संवर समगतं।
हे दयाल! कृपाल करुणानिधि, आयो तुम शरणा-
गतं। प्रभु आयो तुम शरणागतं।

१७. नहीं विद्या नहीं वचन वल, नहीं धीरज गुण ज्ञान।
तुलसीदास गरीव की, पत राखो भगवान्॥

१८. विषय कषाय अनादि को, भरियो रोग अगाध।
वैद्यराज गुरु शरण से, पाऊँ चित्त समाध॥

१९. कहवा में आवे नहीं, अवगुण भरिया अनन्त।
लिखवा में क्यों कर लिखूं, जाणो श्री भगवन्त॥

२०. आठ कर्म प्रवल करी, भमियो जीव अनादि।
आठ कर्म छेदन करी, पावे मुक्ति समाधि॥

२१. पथ कुपथ कारण करी, रोग हानि वृद्धि थाय।
इम पुण्य पाप किरिया करी, सुख दुःख जग में पाय॥

२२. वांध्या विन भुगते नहीं, विन भुगत्यां न छुटाय ।
आपही करता भोगता, आपे दूर कराय ॥

२३. सुसाया से अविवेक हूँ, आंख मींच अंधियार ।
मकड़ी जाल बिछाय के, फसूँ आप धिक्कार ॥

२४. सर्व भक्षी जिम अग्नि हूँ, तपियो विषय कषाय ।
अपच्छंदा अविनीत मैं, धर्मी ठग दुःख दाय ॥

२५. काहा भयो घर छांड के, तजियो न माया संग ।
नाग तजी जिम कांचली, विष नहीं तजियो अंग ॥

२६. आलस विषय कषाय वश, आरंभ परिग्रह काज ।
योनि चौरासी लख भम्यो, अब तारो महाराज ॥

२७. आतम निंदा शुद्ध भणी, गुणवंत वंदन भाव ।
राग द्वेष उपशम करी, सब से खमत खिमाव ॥

२८. पुत्र कुपुत्रज मैं हुओ, अवगुण भरया अनन्त ।
या हित वुद्धि विचार के, माफ करो भगवंत ॥

२९. शासनपति वर्द्धमानजी, तुम लग मेरी दौड़ ।
जैसे समुद्र जहाज विन, सूझत और न ठौर ॥

३०. भव भ्रमण संसार दुःख, ताका वार न पार ।
निर्लोभी सतगुरु विना, कौन उतारे पार ॥

३१. भव सागर संसार में, दीपा श्री जिनराज ।
उद्यम करि पहुँचे तीरे, वैठी धर्म जहाज ॥

३२. पतित उद्धारण नाथजी, अपनो विरुद विचार ।
भूल चूक सब माहरी, खमिये वारंवार ॥

३३. माफ करो सव माहरा, आज तलक ना दोष ।
दीन दयाल देवो मुझे, श्रद्धा शील संतोष ॥

३४. देव अरिहंत गुरु निर्ग्रन्थ, संवर निर्जरा धर्म ।
केवली भाषित सासतर, यही जैन मत मर्म ।।

३५. इस अपार संसार में, शरण नहीं अरु कोय ।
या ते तुम पद कमल ही, भक्त सहायी होय ।।

३६. छूटूँ पिछला पाप से, नवा न बंधूँ कोय ।
श्री गुरुदेव प्रसाद से, सफल मनोरथ होय ।।

३७. आरम्भ परिग्रह तजी करी, समकित व्रत आराध ।
अन्त अवसर आलोय के, अनशन चित्त समाध ।।

३८. तीन मनोरथ ए कह्या, जे ध्यावे नित्य मन्न ।
शक्ति सार वरते सही, पावे शिवसुख धन्न ।।

श्री पंच परमेष्ठी भगवन्त गुरुदेव महाराजजी आपकी आज्ञा है सम्यक् ज्ञान दर्शन चारित्र तप संयम संवर निर्जरा मुक्ति मार्ग यथा शक्ति से शुद्ध उपयोग सहित आराधने पालने फरसने सेवने की आज्ञा है, बारंबार शुभयोग संबंधी सज्झाय ध्यानादिक अभिग्रह नियम पच्चक्खाणादिक करने कराने की समिति गुप्ति प्रमुख सर्व प्रकारे आज्ञा है ।

१. निश्चय चित्त शुद्ध मुख पढ़त, तीन योग थिर थाय ।
दुर्लभ दीसे कायरा, हलुकर्मी चित भाय ।।

२. अक्षर पद हीणो अधिक, भूल चूक कही होय ।
अरिहन्त सिद्ध आतम साख से, मिच्छा दुक्कडं मोय ।।

भूल चूक मिच्छामि दुक्कडं ।

(१९७)

तिथि आदि का विचार

जैन ज्योतिष में पन्द्रह तिथियों के पांच प्रकार बताए गए हैं :— नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता और पूर्णा। इनमें रिक्ता शुभ कार्य में वर्जनीय है, बाकी सब शुभ हैं। कौन से दिन कौन सी तिथि होती है, इसके लिए नीचे का यंत्र देखिये –

१	६	११	नन्दा
२	७	१२	भद्रा
३	८	१३	जया
५	१०	१५	पूर्णा

सिद्धि-योग

नन्दा तिथि को शुक्रवार हो, भद्रा को बुद्धवार हो, जया को मंगलवार हो, रिक्ता को शनिवार और पूर्णा को गुरुवार हो, तो सिद्धि योग माना जाता है। सिद्धि योग में किए हुए शुभ कार्य सफल होते हैं। यन्त्र में स्पष्टतया समझ लीजिए कि कौन-सी तिथि और कौन से वार को सिद्धि-योग होता है।

सिद्धि-योग

१	६	११	शुक्रवार
२	७	१२	बुद्धवार
३	८	१३	मंगलवार
४	९	१४	शनिवार
५	१०	१५	गुरुवार

मृत्यु-योग

१	६	११	रवि, मंगल
२	७	१२	सोम, गुरु
३	८	१३	बुधवार
४	९	१४	शुक्रवार
५	१०	१५	शनिवार

सूचना-- मृत्युयोग अशुभ माना जाता है, इसलिए कोई भी शुभ कार्य इन दिनों में प्रारम्भ नहीं करना चाहिये।

सूर्य-दग्धा तिथि– धन तथा मीन संक्रान्ति की दूज, वृष तथा कुम्भ की चौथ, मेष तथा कर्क की छठ, कन्या तथा मिथुन की आठम, वृश्चिक तथा सिंह की दशमी, मकर तथा तुला संक्रान्ति की बारस सूर्यदग्धा तिथि होती है। इन तिथियों का सभी शुभ कार्यों में निषेध है।

चन्द्र-दग्धा तिथि– धन तथा कुम्भ राशि का चन्द्रमा होने पर दूज, मेष तथा मिथुन राशि का चन्द्रमा होने पर चौथ, तुला तथा सिंह राशि का चन्द्रमा होने पर छठ, मीन तथा मकर राशि का चन्द्रमा होने पर आठम, वृष तथा कर्क राशि का चन्द्रमा होने पर दशमी, वृश्चिक तथा कन्या राशि का चन्द्रमा होने पर बारस चन्द्र-दग्धा तिथि मानी जती है। शुभ कार्य आरम्भ करते समय इनका भी निषेध है।

अमृत-सिद्धि-योग – रविवार को हस्त नक्षत्र हो, गुरुवार को पुष्य हो, बुधवार को अनुराधा हो, शनिवार को रोहिणी हो, सोमवार को मृगशिर हो, शुक्रवार को रेवती हो, और मंगलवार को अश्विनी नक्षत्र हो-तो अमृत सिद्धि योग बनता है। इस योग में किए गए कार्य शीघ्र ही सिद्ध हो जाते हैं।

विजय-योग – विजय योग नित्य प्रति आता है। प्रत्येक दिन के चार प्रहर होते हैं। उनमें पहले दो प्रहर की आखिरी घड़ी और आगे के दो प्रहर की पहली घड़ी, विजय योग की होती है। इस योग में किये हुए कार्य सफल होते हैं। जैन ज्योतिष में इसकी बड़ी महिमा है।

चन्द्रविचार – राशि	**दिशा**
मेष, सिंह, धनु	पूर्व में
वृष, कन्या, मकर	दक्षिण में
मिथुन, तुला, कुम्भ	पश्चिम में
वृश्चिक, कर्क, मीन	उत्तर में

सूचना :– यात्रा में सम्मुख चन्द्रमा हो तो अर्थ का लाभ होता है, दाहिनी तरफ हो तो सुख तथा सम्पत्ति, पीठ पीछे हो तो प्राणों की पीड़ा और बाईं तरफ हो तो धन का क्षय होता है।

दिशा-शूल विचार–सोम और शनिवार	–	पूर्व दिशा में
गुरुवार	–	दक्षिण दिशा में
रवि और शुक्रवार	–	पश्चिम दिशा में
बुध और मंगलवार	–	उत्तर दिशा में

सूचना :– यात्रा में यानि परदेश गमन में दिशा शूल सामने और दाहिने अच्छा नहीं होता है। यदि किसी आवश्यक कार्य के लिए दिशा शूल के होते भी जाना पड़े तो एक प्राचीन कथन के अनुसार नीचे लिखी वस्तुओं का वार के क्रम से सेवन करें।

गुड़ मंगल, वुध खांड़, वृहस्पति राई खाजे,
शुक्र वायवडंग, शनिश्चर दही खाजे,
रवि तंवोल, सोम दर्पण, एत्ता कर दिशा शूल भी जावे।

दिन का चौघड़िया

रवि	सोम	मंगल	वुध	गुरु	शुक्र	शनि
उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चल	काल
चल	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ
लाभ	शुभ	चल	काल	उद्वेग	अमृत	रोग
अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चल	काल	उद्वेग
काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चल
शुभ	चल	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ
रोग	लाभ	शुभ	चल	काल	उद्वेग	अमृत
उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चल	काल

सूचना :– ऊपर के कोष्ठक से यह समझना चाहिये कि जिस दिन जो वार हो, उस दिन उसी वार के नीचे लिखा हुआ चौघड़िया (चार घड़ी का समय) सूर्योदय के समय में वैठता है वह उस वार का दूसरा चौघड़िया समझना चाहिये दूसरे के उतरने के बाद उस छठे वार से छठे वार का चौघड़िया वैठता है, वह उस वार का तीसरा चौघड़िया समझना चाहिये। यही क्रम आगे भी समझना।

उदाहरण के लिए देखिये–रविवार के दिन पहला उद्वेग नामक चौघड़िया है। उसके उतरने के वाद रविवार से छठा वार शुक्र है, जिसका चौघड़िया चल है, सो यह रविवार का दूसरा चौघड़िया हुआ, इसी क्रम से प्रत्येक वार के दिन भर का चौघड़िया जान लेना चाहिये।

एक चौघड़िया डेढ़ घण्टे तक रहता है; अर्थात् सवेरे के छह वजे से लेकर शाम के छह वजे तक वारह घंटे में आठ चौघड़िये व्यतीत होते हैं। इनमें से अमृत,शुभ, और लाभ ये तीनों चौघड़िये उत्तम हैं। तथा उद्वेग, रोग, काल, ये तीनों चौघड़िये अशुभ हैं। चल नामक चौघड़िया मध्यम है। कोई भी शुभ कार्य अच्छे चौघड़ियों में करना अच्छा माना जाता है।

रात्रि का चौघड़िया

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
शुभ	चल	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ
अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चल	काल	उद्वेग
चल	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ
रोग	अमृत	शुभ	चल	काल	उद्वेग	अमृत
काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चल
लाभ	शुभ	चल	काल	उद्वेग	अमृत	रोग
उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चल	काल
शुभ	चल	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ

सूचना :– इस कोष्ठक में पहले कोष्ठक से केवल इतना ही अन्तर है कि एक वार के पहिले चौघड़िये के उतरने के वाद उस वार से पाचवें वार का दूसरा चौघड़िया वैठता है यानि आरम्भ होता है। शेष सव विषय ऊपर दिन के चौघड़िया के अनुसार ही है।

सव कामों में वर्जित ज्वालामुखी योग – प्रतिपदा तिथि (एकम) को मूल नक्षत्र, पंचमी को भरणी, अष्टमी को कृत्तिका, नौमी को रोहिणी, दसमी को अश्लेषा नक्षत्र हो तो ज्वालामुखी योग होता है।

दिशाओं में वर्जित नक्षत्र – रोहिणी नक्षत्र हो तो पूर्व में, श्रवण हो तो पश्चिम में, चित्रा हो तो दक्षिण में, और हस्त हो तो उत्तर दिशा में नहीं जाना चाहिये।

किस दिशा में कौन सा वार लाभप्रद – मंगल और वुधवार पूर्व दिशा में, सोम और शनिवार दक्षिण दिशा में, गुरुवार पश्चिम दिशा में, रविवार और शुक्रवार उत्तर दिशा में यात्रा हेतु लाभ प्रद माना जाता है।



(१९८)

चौबीस तीर्थंकर कल्याणक तप

चैत्र

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक	मतान्तरेण तिथि
२३	वदि ४	च्यवन	
२३	वदि ४	केवल	
८	वदि ५	च्यवन	
१	वदि ८	जन्म	
१	वदि ९	दीक्षा	(८)
१७	सुदि ३	केवल	
१४	सुदि ५	मोक्ष	
२	सुदि ५	मोक्ष	
३	सुदि ५	मोक्ष	
५	सुदि ९	मोक्ष	
५	सुदि ११	केवल	
२४	सुदि १३	जन्म	
६	सुदि १५	केवल	

वैशाख

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक	मतान्तरेण तिथि
१७	वदि १	मोक्ष	
१०	वदि २	मोक्ष	
१७	वदि ५	दीक्षा	
१०	वदि ६	च्यवन	

२१	वदि १०	मोक्ष	
१४	वदि १३	जन्म	
१४	वदि १४	दीक्षा	
१४	वदि १४	केवल	
१७	वदि १४	जन्म	
४	सुदि ४	च्यवन	
१५	सुदि ७	च्यवन	
४	सुदि ८	मोक्ष	
५	सुदि ८	जन्म	
५	सुदि ९	दीक्षा	
२४	सुदि १०	केवल	
२३	सुदि १२	च्यवन	
२	सुदि १३	च्यवन	

जेठ

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक	मतान्तरेण तिथि
११	वदि ६	च्यवन	
२०	वदि ८	जन्म	
२०	वदि ९	मोक्ष	
१६	वदि १३	जन्म	
१६	वदि १३	मोक्ष	
१६	वदि १४	दीक्षा	
१५	सुदि ५	मोक्ष	
१२	सुदि ९	च्यवन	
७	सुदि १२	जन्म	
७	सुदि १३	दीक्षा	

असाढ़

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक	मतान्तरेण तिथि
१	वदि ४	च्यवन	
१३	वदि ७	मोक्ष	
२१	वदि ६	दीक्षा	
२४	सुदि ६	च्यवन	
२२	सुदि ८	मोक्ष	
१२	सुदि १४	मोक्ष	

श्रावण

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक	मतान्तरेण तिथि
११	वदि ३	मोक्ष	
१४	वदि ७	च्यवन	
२१	वदि ८	जन्म	
१७	वदि ६	च्यवन	
५	सुदि २	च्यवन	
२२	सुदि ५	जन्म	
२२	सुदि ६	दीक्षा	
२३	सुदि ८	मोक्ष	
२०	सुदि १५	च्यवन	

भादवा

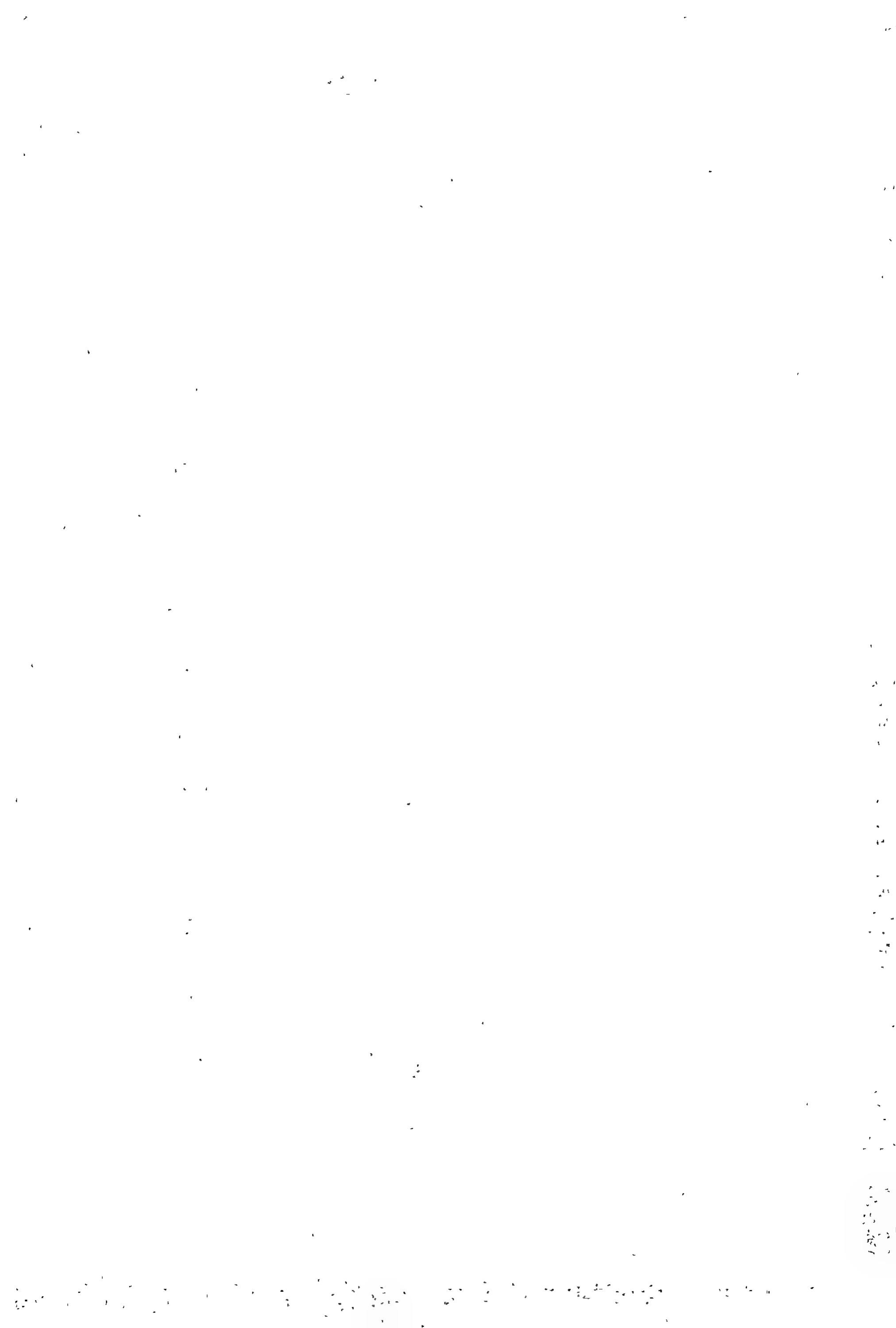
तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक	मतान्तरेण तिथि
१६	वदि ७	च्यवन	
८	वदि ७	मोक्ष	
७	वदि ८	च्यवन	
६	सुदि ६	मोक्ष	

आसोज

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक	मतान्तरेण तिथि
२२	वदि ३०	केवल	
२१	सुदि १४	जन्म	

कार्तिक

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक	मतान्तरेण तिथि
३	वदि ५	केवलज्ञान	
२२	वदि १२	च्यवन	
६	वदि १२	जन्म	
६	वदि १३	दीक्षा	(१२)
२४	वदि ३०	मोक्ष	
६	सुदि ३	केवल	(२)
१८	सुदि १२	केवल	



पोष

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक	मतान्तरेण तिथि
२३	वदि १०	जन्म	
२३	वदि ११	दीक्षा	
८	वदि १२	जन्म	
८	वदि १३	दीक्षा	
१०	वदि १४	केवल	
१३	सुदि ६	केवल	
१६	सुदि ९	केवल	
२	सुदि ११	केवल	
४	सुदि १४	केवल	
१५	सुदि १५	केवल	

माघ

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक	मतान्तरेण तिथि
६	वदि ६	च्यवन	
१०	वदि १२	जन्म	
१०	वदि १२	दीक्षा	
१	वदि १३	मोक्ष	
११	वदि ३०	केवल	
४	सुदि २	जन्म	
१२	सुदि २	केवल	
१५	सुदि ३	जन्म	

१३	सुदि ३	जन्म
१३	सुदि ४	दीक्षा
२	सुदि ८	जन्म
२	सुदि ९	दीक्षा
४	सुदि १२	दीक्षा
१५	सुदि १३	दीक्षा

फाल्गुन

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक	मतान्तरेण तिथि
७	वदि ६	केवल	
७	वदि ७	मोक्ष	
८	वदि ७	केवल	
९	वदि ९	च्यवन	
१	वदि ११	केवल	
२०	वदि १२	केवल	
११	वदि १२	जन्म	
११	वदि १३	दीक्षा	(३०)
१२	वदि १४	जन्म	
१२	वदि ३०	दीक्षा	
१८	सुदि २	च्यवन	(१)
१९	सुदि ४	च्यवन	
३	सुदि ८	च्यवन	
२०	सुदि १२	दीक्षा	
१९	सुदि १२	मोक्ष	

(१६६)

प्रत्याख्यानपारण सूत्र

उग्गए सूरे, नमोक्कारसहियं······पच्चक्खाणं कयं तं पच्चक्खाणं सम्मं मणेण, वायाए, कायेण फासियं, पालियं, तीरियं, किट्टियं, सोहियं, आराहियं। जं च न आराहियं, तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

सूचना – रिक्त स्थान का अभिप्राय यह है कि जो पच्चक्खाण (प्रत्याख्यान) किया हो, उसका नाम बोलें, जैसे कि नमोक्कारसहियं, पोरिसी, एगासणं आदि।

सागारी संथारा करने का हिन्दी पाठ

आहार, शरीर, उपधी, पचखूं पाप अठार।
मरण पाऊँ तो वोसिरे, जीऊँ तो आगार॥

सूचना – जब कोई अचानक संकट-काल आ जाए, या बीमारी आदि की भयंकर स्थिति हो, तो सागारी संथारा ऊपर के पाठ से किया जाता है। रात को सोते समय भी प्रातःकाल उठने तक सागारी संथारा किया जाता है। सागारी संथारा तीन बार नवकार मंत्र पढ़कर पारना चाहिए।

पौषध व्रत लेने का पाठ

एक्कारसं पोसहोववासव्वयं, असण-पाण-खाइमसाइम-पच्चक्खाणं, अबंभ पच्चक्खाणं, मणिसुवण्णाइ-पच्चक्खाणं, माला-वण्णग-विलेवणाइ-पच्चक्खाणं, सत्थ-मूसलाइ-सावज्जं जोगं पच्चक्खाणं।

जाव अहोरत्तं पज्जुवासामि दुविहं तिविहेणं न करेमि, न कारवेमि, मणसा, वयसा, कायसा, तस्स भंते पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि।

सूचना – पौषध लेने और पारने की विधि सामायिक की विधि के अनुसार ही है। गृहस्थोचित वस्त्र कोट, पेंट, पाजामा और पगड़ी

आदि उतार कर, शुद्ध दुपट्टा और धोती आदि धारण कर पौषध व्रत लेना चाहिए। नवकार मन्त्र से लेकर सब पाठ सामायिक ग्रहण करने के अनुसार ही पढ़ने चाहिए। केवल जहाँ सामायिक में 'करेमि भंते' बोला जाता है वहाँ ऊपर लिखित पौषध लेने का पाठ बोलना चाहिए। इसी प्रकार पौषध पारते समय जहाँ सामायिक पारने का 'एयस्स नवमस्स' पाठ बोला जाता है; वहाँ नीचे लिखा पौषध पारने का पाठ बोलना चाहिए।

पौषध व्रत पारने का पाठ

एक्कारसस्स पोसहोववासव्वयस्स पंच अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा, तंजहा –

अप्पडिलेहिय - दुप्पडिलेहिय - सिज्झा संथारए, अप्पमज्झिय-दुप्पमज्झिय सिज्जा संथारए, अप्पडिलेहियं दुप्पडिलेहियं उच्चार पासवण भूमि, अप्पमज्जियं दुप्पमज्जियं उच्चार पासवण भूमि, पोसहोववासस्स सम्मं अणणुपालणया, तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

संवर करने का पाठ

द्रव्य से पांच आस्रव सेवन का पच्चक्खाण, क्षेत्र से······· काल से·······भाव से उपयोगसहित, गुण से निर्जरा के हेतु तथा जब तक पांच नवकार महामन्त्र न पढ़ लूं तब तक दुविहं तिविहेणं न करेमि न कारवेमि, मणसा वयसा कायसा, तस्स भंते! पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि।

सूचना – क्षेत्र और काल के स्थान में जो जगह छोड़ी है, वहाँ क्रमशः जितने क्षेत्र की मर्यादा करनी हो, उतने क्षेत्र का परिमाण और जितने काल का संवर करना हो, उतने काल का परिमाण मूल पाठ में ही कह देना चाहिए। सात बार नवकार मन्त्र पढ़कर संवर खोलना चाहिए।

नोटः-कृपया इस सम्बन्ध में पृष्ठ ७१, ७२, ७३ भी देखें।

(२००)

बारह भावना

१. अनित्य

१. राजा राणा छत्रपति, हाथिन के असवार।
मरना सबको एक दिन, अपनी अपनी वार ॥

२. अशरण

२. दल बल देवी देवता, मात-पिता परिवार।
मरती बिरियां जीवको, कोई न राखन हार ॥

३. संसार

३. दाम बिना निर्धन दुखी, तृष्णा वश धनवान।
कहूँ न सुख संसार में, सब जग देख्यो छान ॥

४. एकत्व

४. आप अकेला अवतरे, मरे अकेला होय।
यों कब हूँ या जीव को, साथी सगा नहिं कोय ॥

५. अन्यत्व

५. जहाँ देह अपनी नहीं, तहाँ न अपना कोय।
घर संपति पर प्रकट ये, पर हैं परिजन लोय ॥

६. अशुचि

६. दिपै चाम चादर मढ़ी, हाड़ पींजरा देह।
भीतर या सम जगत में, और नहीं घिन गेह ॥

७. आस्रव

७. जग वासी घूमें सदा, मोह नींद के जोर।
सब लूटे नहीं दीसता, कर्म चोर चहुँ ओर ॥

८. संवर

८. मोह नींद जब उपशमे, सत गुरु देय जगाय ।
कर्म चोर आवत रुके, तब कुछ बने उपाय ।।

९. निर्जरा

९. ज्ञान दीप तप तेल भर, घर शोधे भ्रम छोर ।
या विधि बिन निकसे नहीं, पैठे पूरब चोर ।।

पंच महाव्रत संचरण, समिति पंच प्रकार ।
प्रबल पंच इन्द्रिय विजय, धार निर्जरा सार ।।

१०. लोक

१०. चौदह राजु उत्तंग नभ, लोक पुरुष संठान ।
तामें जीव अनादि तें, भरमत है बिन ज्ञान ।।

११. बोधि-दुर्लभ

११. तन-धन-कंचन राज सुख, सबहि सुलभ कर जान ।
दुर्लभ है संसार में, एक यथारथ ज्ञान ।।

१२. धर्म

१२. जांचे सुरतरु देय सुख चिन्तत चिन्ता रैन ।
बिन जांचे बिन चिन्तिये, धर्म सदा सुख दैन ।।

अनित्य अशरण संसार है एकत्व पर पंख जाण ।
अशुचि आश्रव संवरा निर्जरा लोक बखाण ।।

बोधि दुर्लभ धर्म ये बारह भावना जाण ।
इनको भावे जो सदा क्यों न लहे निर्वाण ।।

(२०१)

वो दिन धन होसी, जद करस्यूं धर्म विचार ।।टेर।।

१. एक जीव के कारणे कियो आरम्भ वेशुमार।
परिग्रह की सीमा नहीं कोई दिन दिन बढ़े अपार – वो०

२. धर्म ध्यान निपजे नहीं, नहीं कीनो उपकार।
आरंभ परिग्रह छोड़ने, निवृत्त होसूं जिण वार – वो०

३. भव-भव में भटकत फिर्यो, कोई चोरासी मंझार।
साधु या श्रावक पणो, नहीं कीनों अंगीकार – वो०

४. ब्रह्मचर्य व्रत पालसूं, कोई संजम सतरे प्रकार।
पंच महाव्रत धार के, कोई वणसूं जद अणगार – वो०

५. अंत संथारो धारसूं, अट्ठारे पाप परिहार।
अरिहन्त सिद्ध साधु केवली, ए चारों शरणा धार – वो०

६. सब ही जीव खमावसूं, कोई खमशुं वारंवार।
शुद्ध भावे पंडित मरण, कोई करशुं देह विसार – वो०

७. तीन मनोरथ ए कह्या, जो नित चिन्ते नर नार।
इण भव पर भव जीव के, कोई खर्ची वांधे लार।
तीन मनोरथ पूरजो, म्हारे होसी मंगलाचार – वो०

श्रावक के ३ मनोरथ

श्रावक के लिए यह आवश्यक है कि वह प्रतिदिन प्रातः काल सामायिक करते समय अथवा वैसे भी मनोरथों के द्वारा भविष्य के लिए शुभ संकल्प करे। भगवान् महावीर ने स्थानांग सूत्र में ३ मनोरथों का वर्णन किया है।

१. श्रावक पहले मनोरथ में यह विचार करे कि "वह धन्य दिन कब होगा, जब मैं अपने धन संपत्ति रूप परिग्रह का पीड़ित जनता के हित के लिए त्याग करूंगा। यह परिग्रह मेरी आत्मा के लिए सबसे बड़ा बन्धन है। यह ममता का जहर आध्यात्मिक जीवन को दूषित कर रहा है। धन का सच्चा उपयोग संग्रह में अथवा अपने स्वार्थ के पोषण में नहीं है, प्रत्युत जन-हित के लिए अर्पण कर देने में है। अस्तु जिस दिन मैं अपने परिग्रह को जन सेवा में त्याग कर प्रसन्नता अनुभव करूंगा ममता के भार से हल्का हो जाऊंगा, वह दिन मेरे लिए महान कल्याणकारी होगा।"

२. श्रावक दूसरे मनोरथ में यह विचारे कि "वह धन्य दिन कब होगा, जब मैं संसार की मोह, माया और विषय वासना का त्याग करके साधु जीवन स्वीकार करूंगा ? अहिंसा आदि पांच महाव्रतों को धारण कर और परिषह उपसर्गों को समभाव से सहन कर जिस दिन मुनि पद की ऊंची भूमिका में विचरण करूंगा, वह दिन मेरे लिए महान् कल्याणकारी होगा।"

३. श्रावक तीसरे मनोरथ में यह चिन्तन करे कि "वह धन्य दिन कब होगा, जब मैं अपनी संयम यात्रा को सकुशल-निर्विघ्न भाव से पूर्ण कर अन्त समय में आलोचना, निंदना एवं गर्हणा करके संथारा ग्रहण करूंगा ? सब प्रकार की उपधि, आहार और जीवन की ममता का भी त्याग कर जिस दिन मैं पूर्ण रूप से अपने आपको वीतराग भगवान् की उपासना में लगाऊंगा, वह दिन मेरे लिए कल्याणकारी होगा।"

ग्यारह गणधरों के नाम

१ श्री इन्द्रभूतिजी
२. ,, अग्निभूतिजी
३. ,, वायुभूतिजी
४. ,, व्यक्तस्वामी
५. ,, सुधर्मास्वामी
६. श्री मण्डितपुत्रजी
७. ,, मौर्यपुत्रजी
८. ,, अकंपितजी
९. ,, अचलभूतिजी
१०. ,, मेतार्यजी
११. ,, प्रभासजी

सोलह सतियों के नाम

१. श्री ब्राह्मीजी
२. ,, सुन्दरीजी
३. ,, कौशल्याजी
४. ,, सीताजी
५. ,, राजुलमतीजी
६. ,, कुँतीजी
७. ,, द्रौपदीजी
८. ,, चन्दनबालाजी
९. ,, मृगावतीजी
१०. श्री चूलाजी (श्री पुष्प चूलाजी) (श्री चेलनाजी)
११. ,, प्रभावतीजी
१२. ,, सुभद्राजी
१३. ,, दमयंतीजी
१४. ,, सुलसाजी
१५. ,, शिवादेवीजी
१६. ,, पद्मावतीजी

(२०४)

षटद्रव्य की सज्झाय

१. षटद्रव्य ज्यामें कह्यो भिन्न भिन्न आगम सुणत वखान ।
पंचास्तिकाया नव पदारथ, पांच भाख्या ज्ञान ।।
२. चारित्र तेरह कह्या जिनवर, ज्ञान दर्शन प्रधान ।
जो शास्त्र नित सुणो भवियण, आण शुद्ध मन ध्यान ।।
३. चौवीस तीर्थंकर लोक मांहीं, तिरण तारण जहाज ।
नव वासु – नव प्रतिवासुदेवा, वारह चक्रवर्ती जाण ।।
४. वलदेव नव सव हुआ त्रेसठ, घणा गुणांरी खान ।
जो शास्त्र नित सुणो भवियण, आणा शुद्ध मन ध्यान ।।
५. चार देशना दिवी हो जिनवर, कियो पर उपकार ।
पांच अणुव्रत तीन गुणव्रत, चार शिक्षा धार ।।
६. पांच संवर जिनेश भाख्या, दया धर्म प्रधान ।।
जो शास्त्र नित सुणो भवियण, आण शुद्ध मन ध्यान ।।
७. और कहां लग करू जी वर्णन, तीन लोक परमाण ।
सुणत पाप विनाश जावे, पावे पद निरवाण ।।
८. देव विमाणिक मांहे पदवी, कही पंच परधान ।
जो शास्तर नित सुणो भवियण, आण शुद्ध मन ध्यान ।।

(२०५)

श्रावक के २१ गुण

(१) अक्षुद्र (गंभीर) (२) रूपनिधि (सुन्दर) (३) सौम्य (शांत) (४) लोकप्रिय (५) अक्रूर (६) पाप से डरने वाला (७) अशठ (कपट रहित) (८) सुदक्षिण (अवसर का ज्ञाता) (९) लज्जावान (१०) दयालु (११) मध्यस्थ (२१) ईर्ष्या न करने वाला (१३) गुणानुरागी (१४) सत्यवादी (१५) न्याय पक्ष

(२०२)

चौदह-नियम

१. **सचित** – जीव सहित वस्तु अर्थात् कच्चा पानी, फल फूल, मूल, वीज आदि । कोई भी सचित वस्तु, जो छेदन-भेदन होकर तथा अग्नि आदि का शस्त्र पाकर अचित न हुई हो, उसका परिमाण करना ।

२. **द्रव्य** – रोटी, दाल, भात आदि द्रव्य का परिमाण करना ।

३. **विगय** – दूध, दही, घी, तेल आदि ।

४. **उपानत्** – जूते, चप्पल आदि ।

५. **ताम्बूल** – मुखवास, पान, सुपारी आदि ।

६. **वस्त्र** – पहनने-ओढ़ने के सब वस्त्र ।

७. **कुसुम** – सूंघने की वस्तु-फूल, इतर आदि ।

८. **वाहन** – घोड़ा, हाथी, जहाज, मोटर आदि ।

९. **शयन** – पलंग, खाट, बिछौने आदि ।

१०. **विलेपन** – चन्दन, तेल, उवटन आदि ।

११. **ब्रह्मचर्य** – मैथुन का त्याग ।

१२. **दिशा** – ऊंची, नीची, तिरछी, दिशा ।

१३. **स्नान** – स्नान के जल का परिमाण ।

१४. **भक्त** – मिष्टान्न आदि भोजन ।

सूचना – चौदह नियम नित्यप्रति ग्रहण करे । ऊपर लिखित चौदह वस्तुओं की आवश्यकता के अनुसार जितनी मर्यादा रखनी हो, उसके उपरान्त का त्याग कर लेना चाहिये । जितना त्याग, उतनी ही शान्ति । चौदह नियम नियमित रूप से प्रति दिन ग्रहण करने से समुद्र जितना पाप घट कर बूंद के बराबर रह जाता है ।

हिन्दी

(२०३)

चौबीस तीर्थंकरों के नाम

१. श्री ऋषभ देवजी
२. ,, अजितनाथजी
३. ,, संभवनाथजी
४. ,, अभिनंदनजी
५. ,, सुमतिनाथजी
६. ,, पद्मप्रभुजी
७. ,, सुपार्श्वनाथजी
८. ,, चन्द्रप्रभुजी
९. ,, सुविधिनाथजी
१०. ,, शीतलनाथजी
११. ,, श्रेयांसनाथजी
१२. ,, वासुपूज्यजी
१३. श्री विमलनाथजी
१४. ,, अनन्तनाथजी
१५. ,, धर्मनाथजी
१६. ,, शांतिनाथजी
१७. ,, कुंथुनाथजी
१८. ,, अरहनाथजी
१९. ,, मल्लिनाथजी
२०. ,, मुनि सुव्रतजी
२१. ,, नमिनाथजी
२२. ,, अरिष्टनेमिजी
२३. ,, पार्श्वनाथजी
२४. ,, महावीरस्वामीजी

बीस विहरमानों के नाम

१. श्री सीमंधर स्वामी जी
२. ,, युगमंधरस्वामी जी
३. ,, वाहुस्वामीजी
४. ,, सुवाहुस्वामीजी
५. ,, स्वयंप्रभस्वामी
६. ,, अनंतवीर्यस्वामी
७. ,, ऋषभाननस्वामी
८. ,, सूरप्रभस्वामी
९. ,, सुजातस्वामी
१०. ,, वज्रधरस्वामी
११. श्री चंद्राननस्वामी
१२. ,, चंद्रवाहुस्वामी
१३. ,, भुजंगस्वामी
१४. ,, ईश्वरस्वामी
१५. ,, विशालधरस्वामी
१६. ,, नेमीश्वरस्वामी
१७. ,, वीरसेनस्वामी
१८. ,, महाभद्रस्वामी
१९. ,, देवयशस्वामी
२०. ,, अजितवीर्यस्वामी

का ग्राही (१६) दीर्घदृष्टि (१७) विशेषज्ञ (हिताहित का ज्ञाता (१८) वृद्धानुगामी (वृद्धों की परम्परा का पालक) (१६) विनीत (२०) कृतज्ञ (किये हुए उपकार को न भूलने वाला (२१) पर-हित कारी ।

(२०६)

जिनवाणी स्तुति

(सवैया)

१. वीर-हिमाचल तें निकसी, गुरु गौतम के मुख-कुंड ढरी है ।
मोह-महाचल भेद चली, जग की जड़ता-तप दूर हरी है ।।

२. ज्ञान-पयोनिधि मांहि रली, वहु भंग तरंगन तें उछरी है ।
ता शुचि शारद-गंग नदी प्रति, मैं अंजली निज शीश धरी है ।।

३. ज्ञान-सुनीर भरी सरिता, सुरधेनु प्रमोद सुखीर निधानी ।
कर्मज व्याधि हरंत सुधा, अघ-मैल नसन्त शिवाकर मानी ।।

४. वीर जिनागम ज्योति वड़ी, सुरवृक्ष समान महा सुखदानी ।
लोक अलोक प्रकाश भयो, मुनिराज वखानत है जिनवानी ।।

५. शोभित देव विषे मघवा, उडुवृन्द विषे शशि मंगलकारी ।
भूप समूह विषे वली चक्र-पति प्रगटे वल केशव भारी ।।

६. नागन में धरणेन्द्र वड़ो, चमरेन्द्र असुरन में अधिकारी ।
त्यों जिनशासन संघ विषे, मुनिराज दिपै श्रुतज्ञान भंडारी ।।

(२०७)

छन्द

१. कैसे करि केतकी कनेर एक कह्यो जाय ।
आक-दूध गाय-दूध अंतर घनेरो है ।।

२. रीरी होत पीरी पर हौंस करे कंचन की ।
कहां काग-वानी कहां कोयल की टेर है ।।

३. कहां भानु तेज कहां आगियो विचारो कहां ।
पूनम उजारो कहां अमावस अंधेरो है ।।

४. पक्ष छोड़ि पारखी निहारौ नेक नीके करी ।
जैन वैन और वैन अन्तर घनेरो है ।।

५. वीतराग वाणी सांची मुक्ति की निसण्णी[1] जानी ।
सुकृत की खानि ज्ञानी मुख से वखानी है ।।

६. इनको आराध के तिरे हैं अनंत जीव ।
ताको ही जहाज जान श्रद्धा मन आनी है ।।

७. सरधा है सार धार सरधा से खेवो पार ।
श्रद्धा विन जीव ख्वार निश्चै कर मानी है ।।

८. वाणी तो घनेरी पर वीतराग तुल्य नाहीं ।
इसके सिवाय और छोरों-सी कहानी है ।।

---

[1] निसण्णी — सोपान

(२०८)

उपदेश-धारा

१. दया सुखाँ री वेलड़ी, दया सुखाँ री खान ।
अनन्त जीव मुगते गया, दया तणाँ फल जान ।।

२. हिंसा दुखाँ री वेलड़ी, हिंसा दुखाँ री खान ।
अनन्ता जीव नरके गया, हिंसा तणां फल जान ।।

३. जिम सुणो तिम ही करो, तो पहुंचो निरवाण ।
कइ एक हिरदे राखजो, थांने सुण्यांरो परमाण ।।

४. साधु भाव समुचे कह्या, मत कोई लीजो तांण ।
कइ एक हिरदे राखजो थांने सांभलियां रो परमाण ।।

५. चेतो रे भवि प्राणियां, यह संसार असार ।
थिर कोई दीसे नहीं, धन, जोबन, परिवार ।।

६. धर्म करो तमे प्राणियां, धर्म थकी सुख होय ।
धर्म करंता जीव ने, दुखिया न दीठा कोय ।।

७. धर्म करत संसार-सुख, धर्म करत निर्वान ।
धर्मपंथ साधे बिना, नर तिर्यंच समान ।।

८. जहाँ दया तहाँ धर्म है, जहां लोभ तहाँ पाप ।
जहाँ क्रोध तहाँ काल है, जहाँ क्षमा तहाँ आप ।।

९. क्षमा तुल्य कोउ तप नहीं, सुख संतोष समान ।
नहिं तृष्णा सम व्याधि हू, धर्म दया सम जान ।।

१०. दुख में सुमरन सब करे, सुख में करे न कोय ।
जो सुख में सुमरन करे, दुख काहे को होय ।।

(२०६)

आनुपूर्वी

जहां १ है वहां णमो अरिहंताणं कहें।
जहां २ है वहां णमो सिद्धाणं कहें।
जहां ३ है वहां णमो आयरियाणं कहें।
जहां ४ है वहां णमो उवज्झायाणं कहें।
जहां ५ है वहां णमो लोए सव्व साहूणं कहें।

आनुपूर्वी पढ़ने का फल

आनुपूरवी गुणजो जोय छम्मासी तप नो फल होय।
संदेह मत आंणो लीगार निर्मल मने जपो नवकार ।।

जिनवाणी का सार है, मन्त्रराज नवकार।
भाव सहित जपिये सदा यही जैन आचार ।।

मन्त्रराज नवकार हृदय में, शान्ति सुधारस बरसाता।
लौकिक जीवन सुखमय करके, अजर-अमर पद पहुँचाता ।।



3

૧	૩	૪	૨	૫
૩	૧	૪	૨	૫
૧	૪	૩	૨	૫
૪	૧	૩	૨	૫
૩	૪	૧	૨	૫
૪	૩	૧	૨	૫

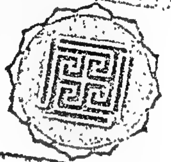
4

૨	૩	૪	૧	૫
૩	૨	૪	૧	૫
૨	૪	૩	૧	૫
૪	૨	૩	૧	૫
૩	૪	૨	૧	૫
૪	૩	૨	૧	૫

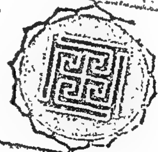
१	२	४	५	३
२	१	४	५	३
१	४	२	५	३
४	१	२	५	३
२	४	१	५	३
४	२	१	५	३

१	२	५	४	३
२	१	५	४	३
१	५	२	४	३
५	१	२	४	३
२	५	१	४	३
५	२	१	४	३









(२१०)

१. शिवमस्तु सर्वजगत: परहित-निरता: भवन्तु भूतगणा: ।
दोषा: प्रयान्तु नाशं, सर्वत्र सुखी भवतु लोक: ।।

(२११)

जैन विश्वगान

१. शिवपुरपथ-परिचायक जय हे, सन्मति युग-निर्माता !
गंगा कल-कल स्वर में गाती, तव गुण-गौरव-गाथा ।
सुर-नर-किन्नर, तव पद-युग में, नित नत करते माथा ।
सब तेरे गुण गाते, सादर शीश झुकाते ।।
हे सद्बुद्धि प्रदाता !

दुख-हारक, सुख-दायक जय हे, सन्मति युग-निर्माता ।
जय हे, जय हे, जय हे, जय जय जय जय हे ।।

२. मंगल-कारक, दया-प्रचारक, खग-पशु-नर-उपकारी ।
भविजन-तारक, कर्म-विदारक, सब जग तव आभारी ।।
जब तक रवि शशि तारे, तब तक गीत तुम्हारे ।
विश्व रहेगा गाता, चिर सुख शांति-विधायक जय हे ।।
सन्मति युग-निर्माता !
जय हे, जय हे, जय हे, जय जय जय जय हे ।।

३. भ्रातृ-भावना भुला परस्पर, लड़ते हैं जो प्राणी ।।
उनके उर में प्रेम बसाती, तेरी मीठी वाणी ।
सब में करुणा जागे, जग से हिंसा भागे ।।
पावें सब सुख साता !

हे दुर्जय, दुख-त्रायक जय हे, सन्मति युग-निर्माता ।
जय हे, जय हे, जय हे, जय जय जय जय हे ।।

(२१२)

अस्वाध्याय के ३४ कारण

(क) आकाश सम्बन्धी	अस्वाध्याय की काल मर्यादा
१. बड़ा तारा टूटे तो	··· एक पहर तक
२. उदय अस्त के समय लाल दिशा	··· जब तक रहे
३. अकाल में मेघ गर्जना हो तो	··· दो प्रहर तक
४. „ में बिजली चमके तो	··· एक प्रहर तक
५. „ में बिजली कड़के तो	··· दो प्रहर तक
६. शुक्ल पक्ष की एकम् दूज व तीज की रातें	··· एक प्रहर रात्रितक
७. आकाश में यक्ष का चिन्ह हो तो	··· जब तक दिखाई दे
८. काली धूअर हो तो	··· जब तक रहे
९. सफेद धूअर हो तो	··· जब तक रहे
१०. आकाश मण्डल धूलि से आच्छादित हो तो	··· जब तक रहे
(ख) औदारिक एवं ग्रहण सम्बन्धी	
११. तिर्यञ्च जीवों के हड्डी, रक्त एवं मांस ६० हाथ के भीतर हों तो	··· जब तक रहे
१२. मनुष्य के हड्डी, रक्त एवं मांस १०० हाथ के भीतर हों तो	··· जब तक रहे
१३. मनुष्य की हड्डी, यदि जली या धुली न हो तो	··· १२ वर्ष तक
१४. अशुचि की दुर्गन्ध	··· जब तक आए या दिखाई दे तब तक ।
१५. श्मशान भूमि	··· सौ हाथ से कम दूर हो तो
१६. चन्द्र ग्रहण खण्ड अवस्था में	··· ८ प्रहर तक
पूर्ण अवस्था में	··· १२ प्रहर तक

१७. सूर्य ग्रहण खण्ड अवस्था में	···	१२ प्रहर तक
पूर्ण अवस्था में	···	१६ प्रहर तक
१८. राजा अथवा गणाधिपति का अवसान होने पर	···	जब तक उत्तराधिकारी घोषित न हो तब तक
१९. युद्ध स्थान के निकट	···	जब तक युद्ध चले तब तक
२०. उपाश्रय अथवा स्वाध्याय स्थान में पंचेन्द्रिय का शव पड़ा होने पर	···	जब तक पड़ा रहे तब तक

(ग) अन्य

२१. आषाढ़ मास की पूर्णिमा	···	१ दिन रात
२२. भाद्रपद मास की पूर्णिमा	···	१ दिन रात
२३. आश्विन मास की पूर्णिमा	···	१ दिन रात
२४. कार्तिक मास की पूर्णिमा	···	१ दिन रात
२५. चैत्र मास की पूर्णिमा	···	१ दिन रात
२६. आषाढ़ पूर्णिमा के बाद की प्रतिपदा	···	१ दिन रात
२७. भाद्रपद पूर्णिमा के बाद की प्रतिपदा	···	१ दिन रात
२८. आश्विन पूर्णिमा के बाद की प्रतिपदा	···	१ दिन रात
२९. कार्तिक पूर्णिमा के बाद की प्रतिपदा	···	१ दिन रात
३०. चैत्र पूर्णिमा के बाद की प्रतिपदा	···	१ दिन रात
३१. प्रातः	···	१ मुहूर्त्त भर
३२. मध्याह्न	···	१ मुहूर्त्त भर
३३. संध्या	···	१ मुहूर्त्त भर
३४. अर्द्ध रात्रि	···	१ मुहूर्त्त भर

नोट :– (१) उपरोक्त अस्वाध्याय के ३४ कारणों के समय को छोड़ कर बाकी समय में स्वाध्याय करना चाहिये। खुले मुँह नहीं बोलना चाहिये एवं दीपक के उजाले में नहीं बांचना चाहिये।

(२) मेघ गर्जनादि में अकाल आर्द्रा नक्षत्र से पूर्व और स्वाति नक्षत्र से बाद का माना गया है।

